॥ श्रीहरिः ॥

584

संक्षिप्त
भविष्यपुराण

[सचित्र, मोटा टाइप, केवल हिन्दी]

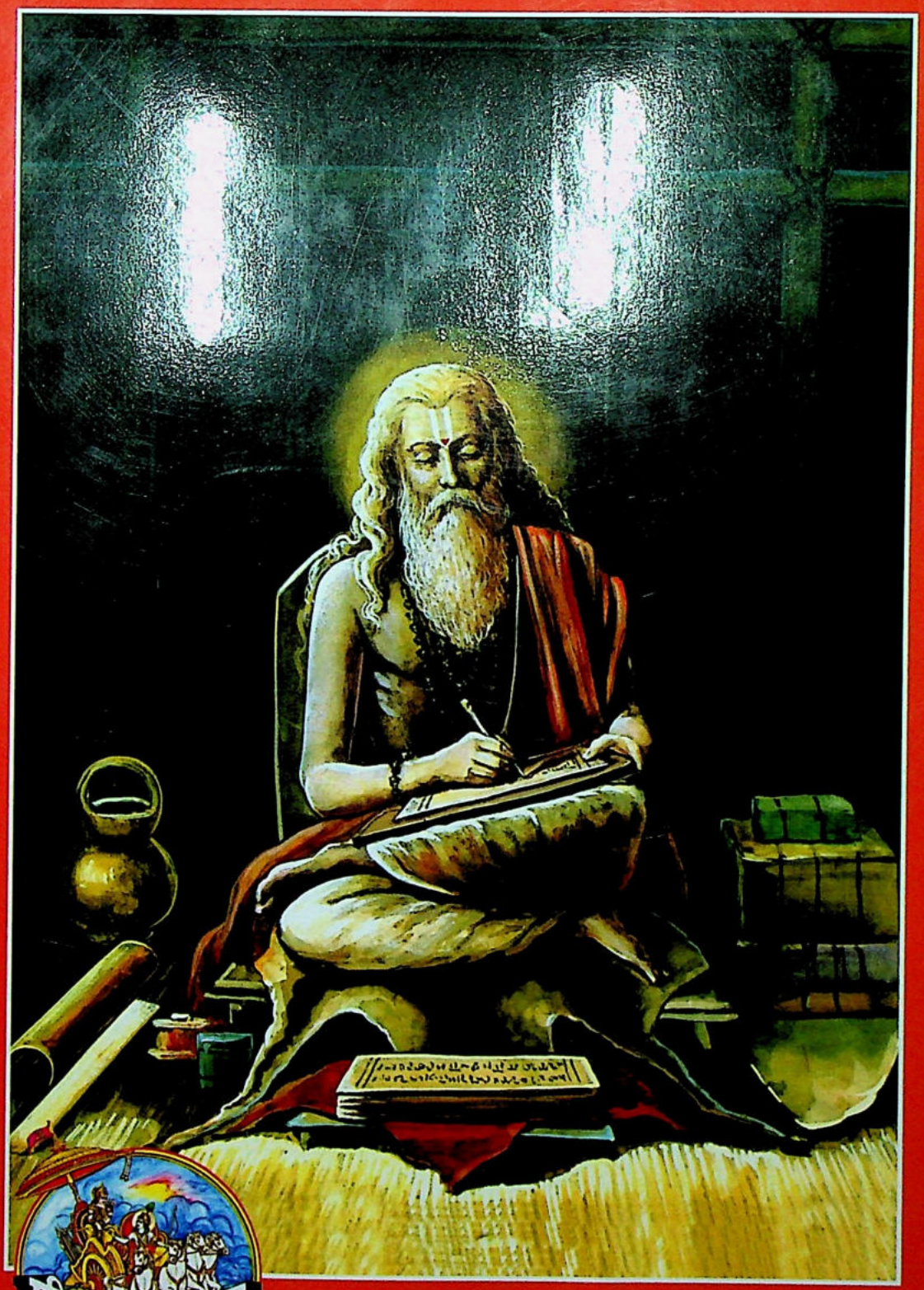

गीताप्रेस गोरखपुर
GITA PRESS, GORAKHPUR [SINCE 1923]

गीताप्रेस, गोरखपुर

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES
FIND ALL AT HTTPS://DSC.GG/DHARMA
Made with
By
Avinash/Shashi
[creator of
hinduism
server]
KAPWING

COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES
FIND ALL AT HTTPS://DSC.GG/DHARMA
Made with
By
Avinash/Shashi
[creator of
hinduism
server]
KAPWING

584

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

कल्याण

संक्षिप्त

भविष्यपुराण

[जनवरी सन् १९९२ ई०]

[वर्ष ६६ संख्या १-२]

गीताप्रेस, गोरखपुर

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

॥ श्रीहरिः ॥

संक्षिप्त
भविष्यपुराण

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

गीताप्रेस, गोरखपुर

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सं० २०७५ बाईसवाँ पुनर्मुद्रण ५,०००
कुल मुद्रण ८२,५००

❖ मूल्य—₹ १८०
(एक सौ अस्सी रुपये)

प्रकाशक एवं मुद्रक—
गीताप्रेस, गोरखपुर—२७३००५
(गोबिन्दभवन-कार्यालय, कोलकाता का संस्थान)
फोन : (०५५१) २३३४७२१, २३३१२५०, २३३१२५१
web : gitapress.org e-mail : booksales@gitapress.org
गीताप्रेस प्रकाशन gitapressbookshop.in से online खरीदें।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

नम्र निवेदन

विषय-वस्तु, वर्णनशैली तथा काव्य-रचनाकी दृष्टिसे भविष्यपुराण उच्चकोटिका ग्रन्थ है। इसमें धर्म, सदाचार, नीति, उपदेश, आख्यान-साहित्य, व्रत, तीर्थ, दान, ज्योतिष एवं आयुर्वेदादिसे सम्बन्धित विषयोंका अद्भुत संयोजन है। इसकी कथाएँ रोचक तथा प्रभावोत्पादक हैं। यह पुराण ब्राह्म, मध्यम, प्रतिसर्ग तथा उत्तर—इन चार मुख्य पर्वोंमें विभक्त है। मध्यमपर्व तीन तथा प्रतिसर्गपर्व चार अवान्तर खण्डोंमें विभक्त है। पर्वोंके अन्तर्गत अध्याय हैं, जिनकी कुल संख्या ४८५ है। यह पुराण भगवान् सूर्यकी महत्ताका सुन्दर प्रतिपादक है। प्रतिसर्गपर्वके द्वितीय खण्डके २३ अध्यायोंमें वेताल-विक्रम-संवादके रूपमें जो कथा-प्रबन्ध है, वह अत्यन्त रमणीय तथा मोहक है। रोचकताके कारण ही यह कथा-प्रबन्ध गुणाढ्यकी 'बृहत्कथा', क्षेमेन्द्रकी 'बृहत्कथा-मञ्जरी, सोमदेवके 'कथा-सरित्सागर' आदिमें वेतालपञ्चविंशतिके रूपमें संगृहीत हुआ है। भविष्यपुराणकी इन्हीं कथाओंका नाम 'वेतालपञ्चविंशति' या 'वेतालपञ्चविंशतिका' है। इसी प्रकार प्रतिसर्गपर्वके द्वितीय खण्डके २४ से २९ अध्यायोंतक उपनिबद्ध 'श्रीसत्यनारायणव्रतकथा' उत्तम कथा-साहित्य है। उत्तरपर्वमें वर्णित व्रतोत्सव तथा दान-माहात्म्यसे सम्बद्ध कथाएँ भी एकसे बढ़कर एक हैं। ब्राह्मपर्व तथा मध्यमपर्वकी सूर्य-सम्बन्धी कथाएँ भी कम रोचक नहीं हैं। आल्हा-ऊदलके इतिहासका प्रसिद्ध आख्यान इसी पुराणके आधारपर प्रचलित है।

भविष्यपुराणकी दूसरी विशेषता यह है कि यह पुराण भारतवर्षके वर्तमान समस्त आधुनिक इतिहासका आधार है। इसके प्रतिसर्गपर्वके तृतीय तथा चतुर्थ खण्डमें इतिहासकी महत्त्वपूर्ण सामग्री विद्यमान है। इतिहास लेखकोंने प्रायः इसीका आधार लिया है। इसमें मध्यकालीन हर्षवर्धन आदि हिन्दू राजाओं और अलाउद्दीन, मुहम्मद तुगलक, तैमूरलंग, बाबर तथा अकबर आदिका प्रामाणिक इतिहास निरूपित है।

इस पुराणकी तीसरी विशेषता यह है कि इसके मध्यमपर्वमें समस्त कर्मकाण्डका निरूपण है। इसमें वर्णित व्रत और दानसे सम्बद्ध विषय भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इतने विस्तारसे व्रतोंका वर्णन न किसी पुराण, धर्मशास्त्रमें मिलता है और न किसी स्वतन्त्र व्रत-संग्रहके ग्रन्थमें। हेमाद्रि, व्रतकल्पद्रुम, व्रतरत्नाकर, व्रतराज आदि परवर्ती व्रत-साहित्यमें मुख्यरूपसे भविष्यपुराणका ही आश्रय लिया गया है।

विषय-वस्तुकी लोकोपयोगिता एवं पाठकोंके बार-बार आग्रहको दृष्टिगत रखते हुए 'कल्याण' के छाछठवें वर्षके विशेषाङ्कके रूपमें पूर्व प्रकाशित 'संक्षिप्त भविष्यपुराणाङ्क' को अब 'संक्षिप्त भविष्यपुराण' के रूपमें पाठकोंके समक्ष प्रस्तुत करते हुए हमें अपार हर्ष हो रहा है। आशा है, गीताप्रेससे प्रकाशित अन्य पुराणोंकी भाँति इस पुराणको भी अपनाकर पाठकगण इससे भरपूर लाभ उठायेंगे। आकर्षक लेमिनेटेड आवरण, मज़बूत जिल्द, ऑफसेटकी सुन्दर छपाई और उपासनायोग्य अनेक चित्र इसकी अन्य विशेषताएँ हैं।

प्रकाशक

CC-0. In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

॥ श्रीहरिः ॥

संक्षिप्त भविष्यपुराणकी विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या
ब्राह्मपर्व	
१-व्यास-शिष्य महर्षि सुमन्तु एवं राजा शतानीकका संवाद, भविष्यपुराणकी महिमा एवं परम्परा, सृष्टि-वर्णन, चारों वेद, पुराण एवं चारों वर्णोंकी उत्पत्ति, चतुर्विध सृष्टि, काल-गणना, युगोंकी संख्या, उनके धर्म तथा संस्कार	११
२-गर्भाधानसे यज्ञोपवीतपर्यन्त संस्कारोंकी संक्षिप्त विधि, अन्नप्रशंसा तथा भोजन-विधिके प्रसंगमें धनवर्धनकी कथा, हाथोंके तीर्थ एवं आचमन-विधि	१९
३-वेदाध्ययन-विधि, ओंकार तथा गायत्री-माहात्म्य, आचार्यादि-लक्षण, ब्रह्मचारिधर्म-निरूपण, अभिवादन-विधि, स्नातककी महिमामें अङ्गिरापुत्रका आख्यान, माता-पिता और गुरुकी महिमा	२२
४-विवाह-संस्कारके उपक्रममें स्त्रियोंके शुभ और अशुभ लक्षणोंका वर्णन तथा आचरणकी श्रेष्ठता	२९
५-गृहस्थाश्रममें धन एवं स्त्रीकी महत्ता, धन-सम्पादन करनेकी आवश्यकता तथा समान कुलमें विवाह-सम्बन्धकी प्रशंसा	३१
६-विवाह-सम्बन्धी तत्त्वोंका निरूपण, विवाहयोग्य कन्याके लक्षण, आठ प्रकारके विवाह, ब्रह्मावर्त, आर्यावर्त आदि उत्तम देशोंका वर्णन	३३
७-धन एवं स्त्रीके तीन आश्रय तथा स्त्री-पुरुषोंके पारस्परिक व्यवहारका वर्णन	३५
८-पतिव्रता स्त्रियोंके कर्तव्य एवं सदाचारका वर्णन, स्त्रियोंके लिये गृहस्थ-धर्मके उत्तम व्यवहारकी आवश्यक बातें	३६
९-पञ्चमहायज्ञोंका वर्णन तथा व्रत-उपवासोंके प्रकरणमें आहारका निरूपण एवं प्रतिपदा तिथिकी उत्पत्ति, व्रत-विधि और माहात्म्य	४३
१०-प्रतिपत्कल्प-निरूपणमें ब्रह्माजीकी पूजा-अर्चाकी महिमा	४६
११-ब्रह्माजीकी रथयात्राका विधान और कार्तिक शुक्ल प्रतिपदाकी महिमा	४८
१२-द्वितीया-कल्पमें महर्षि च्यवनकी कथा एवं पुष्पद्वितीया-व्रतकी महिमा	४९
१३-फल-द्वितीया (अशून्यशयन-व्रत)-का व्रत-विधान और द्वितीया-कल्पकी समाप्ति	५३
१४-तृतीया-कल्पका आरम्भ, गौरी-तृतीया-व्रत-विधान और उसका फल	५४
१५-चतुर्थी-व्रत एवं गणेशजीकी कथा तथा सामुद्रिक शास्त्रका संक्षिप्त परिचय	५५
१६-चतुर्थी-कल्प-वर्णनमें गणेशजीका विघ्न-अधिकार तथा उनकी पूजा-विधि	५६
१७-पुरुषोंके शुभाशुभ लक्षण	५८
१८-राजपुरुषोंके लक्षण	६२
१९-स्त्रियोंके शुभाशुभ लक्षण	६३
२०-विनायक-पूजाका माहात्म्य	६४
२१-चतुर्थी-कल्पमें शिवा, शान्ता तथा सुखा—तीन प्रकारकी चतुर्थीका फल और उनका व्रत-विधान	६४
२२-पञ्चमी-कल्पका आरम्भ, नागपञ्चमीकी कथा, पञ्चमी-व्रतका विधान और फल	६६
२३-सर्पोंके लक्षण, स्वरूप और जाति	६८
२४-विभिन्न तिथियों एवं नक्षत्रोंमें कालसर्पसे डँसे हुए पुरुषके लक्षण, नागोंकी उत्पत्तिकी कथा	७०
२५-सर्पोंके विषका वेग, फैलाव तथा सात धातुओंमें प्राप्त विषके लक्षण और उनकी चिकित्सा	७१
२६-सर्पोंकी भिन्न-भिन्न जातियाँ, सर्पोंके काटनेके लक्षण, पञ्चमी तिथिका नागोंसे सम्बन्ध और पञ्चमी-तिथिमें नागोंके पूजनका फल एवं विधान	७३
२७-षष्ठी-कल्प-निरूपणमें स्कन्द-षष्ठी-व्रतकी महिमा	७५
२८-आचरणकी श्रेष्ठताका प्रतिपादन	७६
२९-भगवान् कार्तिकेय तथा उनके षष्ठी-व्रतकी महिमा	७७
३०-सप्तमी-कल्पमें भगवान् सूर्यके परिवारका निरूपण एवं शाक-सप्तमी-व्रत	७७
३१-श्रीकृष्ण-साम्ब-संवाद तथा भगवान् सूर्यनारायणकी पूजन-विधि	८०
३२-श्रीसूर्यनारायणके नित्यार्चनका विधान	८२
३३-भगवान् सूर्यके पूजन एवं व्रतोद्यापनका विधान, द्वादश आदित्योंके नाम और रथसप्तमी-व्रतकी महिमा	८३
३४-सूर्यदेवके रथ एवं उसके साथ भ्रमण करनेवाले देवता-नाग आदिका वर्णन	८५
३५-भगवान् सूर्यकी महिमा, विभिन्न ऋतुओंमें उनके अलग-अलग वर्ण तथा उनके फल	८७

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

विषय	पृष्ठ-संख्या
३६-भगवान् सूर्यका अभिषेक एवं उनकी रथयात्रा	८८
३७-रथयात्रामें विघ्न होनेपर एवं गोचरमें दुष्ट ग्रहोंके आ जानेपर शान्तिका विधान और तिलकी महिमा	९१
३८-सूर्यनारायणकी रथयात्राका फल	९३
३९-रथसप्तमी तथा भगवान् सूर्यकी महिमाका वर्णन	९४
४०-भगवान् सूर्यद्वारा योगका वर्णन एवं ब्रह्माजीद्वारा दिण्डीको दिया गया क्रियायोगका उपदेश	९५
४१-भगवान् सूर्यके व्रतोंके अनुष्ठान तथा उनके मन्दिरोंमें अर्चन-पूजनकी विधि तथा फल-सप्तमी-व्रतका फल	९८
४२-रहस्य-सप्तमी-व्रतके दिन त्याज्य पदार्थका निषेध तथा व्रतका विधान एवं फल	१००
४३-शंख एवं द्विज, वसिष्ठ एवं साम्ब तथा याज्ञवल्क्य और ब्रह्माके संवादमें आदित्यकी आराधनाका माहात्म्य-कथन, भगवान् सूर्यकी ब्रह्मरूपता	१०१
४४-सूर्यनारायणके प्रिय पुष्प, सूर्यमन्दिरमें मार्जन-लेपन आदिका फल, दीपदानका फल तथा सिद्धार्थ-सप्तमी-व्रतका विधान और फल	१०४
४५-शुभाशुभ स्वप्न और उनके फल	१०६
४६-सिद्धार्थ (सर्षप)-सप्तमी-व्रतके उद्यापनकी विधि	१०७
४७-ब्रह्माद्वारा कहा गया भगवान् सूर्यका नाम-स्तोत्र	१०७
४८-जम्बूद्वीपमें सूर्यनारायणकी आराधनाके तीन प्रमुख स्थान, दुर्वासा मुनिका साम्बको शाप देना	१०८
४९-सूर्यनारायणकी द्वादश मूर्तियोंका वर्णन	११०
५०-देवर्षि नारदद्वारा सूर्यके विराट्रूप तथा उनके प्रभावका वर्णन	१११
५१-भगवान् सूर्यका परिवार	११४
५२-सूर्यभगवान्को नमस्कार एवं प्रदक्षिणा करनेका फल और विजया-सप्तमी-व्रतकी विधि	११७
५३-द्वादश रविवारोंका वर्णन और नन्दादित्य-व्रतकी विधि	११७
५४-भद्रादित्य, सौम्यादित्य और कामदादित्यवार-व्रतोंकी विधिका निरूपण	११८
५५-पुत्रद, जय, जयन्तसंज्ञक आदित्यवार-व्रतोंकी विधि	११९
५६-विजय, आदित्याभिमुख तथा हृदयवार-व्रतोंकी विधि	११९
५७-रोगहा एवं महाश्वेतवार-व्रतकी विधि	१२०
५८-सूर्यदेवकी पूजामें विविध उपचार और फल आदि निवेदन करनेका माहात्म्य	१२१
५९-एक वैश्य तथा ब्राह्मणकी कथा, सूर्यमन्दिरमें पुराण-वाचन एवं भगवान् सूर्यको स्नानादि करानेका फल	१२३
६०-जया-सप्तमी-व्रतका वर्णन	१२५
६१-जयन्ती-सप्तमीका विधान और फल	१२६
६२-अपराजिता-सप्तमी एवं महाजया-सप्तमी-व्रतका वर्णन	१२७
६३-नन्दा-सप्तमी तथा भद्रा-सप्तमी-व्रतका विधान	१२८
६४-तिथियों और नक्षत्रोंके देवता तथा उनके पूजनका फल	१२९
६५-सूर्य-पूजाका माहात्म्य	१३२
६६-त्रिवर्ग-सप्तमीकी महिमा	१३४
६७-कामदा एवं पापनाशिनी-सप्तमी-व्रत-वर्णन	१३५
६८-सूर्यपदद्वय-व्रत, सर्वाप्ति-सप्तमी एवं मार्तण्ड-सप्तमीकी विधि	१३६
६९-अनन्त-सप्तमी तथा अव्यङ्ग-सप्तमीका विधान	१३७
७०-सूर्यपूजामें भाव-शुद्धिकी आवश्यकता एवं त्रिप्राप्ति-सप्तमी-व्रत	१३८
७१-सूर्यमन्दिर-निर्माणका फल तथा यमराजका अपने दूतोंको सूर्यभक्तोंसे दूर रहनेका आदेश, घृत तथा दूधसे अभिषेकका फल	१३९
७२-कौसल्या और गौतमीके संवादरूपमें भगवान् सूर्यका माहात्म्य-निरूपण तथा भगवान् सूर्यके प्रिय पत्र-पुष्पादिका वर्णन	१४०
७३-सूर्य-भक्त सत्राजित्की कथा तथा त्रिविक्रम-व्रतकी विधि	१४१
७४-भोजकोंकी उत्पत्ति तथा उनके लक्षणोंका वर्णन	१४४
७५-भद्र ब्राह्मणकी कथा एवं कार्तिक मासमें सूर्य-मन्दिरमें दीपदानका फल	१४६
७६-यमदूत और नारकीय जीवोंके संवादके प्रसंगमें सूर्य-मन्दिरमें दीपदान करने एवं दीप चुरानेके पुण्य-पापोंका परिणाम	१४७
७७-वैवस्वतके लक्षण और सूर्यनारायणकी महिमा	१४८
७८-भगवान् सूर्यनारायणके सौम्य रूपकी कथा, उनकी स्तुति और परिवार तथा देवताओंका वर्णन	१५०
७९-श्रीसूर्यनारायणके आयुध—व्योमका लक्षण और माहात्म्य	१५२
८०-साम्बद्वारा भगवान् सूर्यकी आराधना, कुष्ठरोगसे मुक्ति तथा सूर्यस्तवराजका कथन	१५४
८१-साम्बको सूर्य-प्रतिमाकी प्राप्ति	१५७
८२-मन्दिर-निर्माण-योग्य भूमि एवं मन्दिरमें प्रतिमाओंके स्थानका निरूपण	१५८
८३-सात प्रकारकी प्रतिमा एवं काष्ठ-प्रतिमाके निर्माणोपयोगी वृक्षोंके लक्षण	१५९
८४-सूर्य-प्रतिमाकी निर्माण-विधि	१६०

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

विषय	पृष्ठ-संख्या
८५-सूर्य-प्रतिष्ठाका मुहूर्त और मण्डप बनानेका विधान	१६१
८६-साम्बोपाख्यानके प्रसंगमें सूर्यकी अभिषेक-विधि	१६२
८७-भगवान् सूर्यकी प्रतिमाके अधिवासन और प्रतिष्ठाका विधान तथा फल	१६३
८८-ध्वजारोपणका विधान और फल	१६५
८९-साम्बोपाख्यानमें मगोंका वर्णन	१६६
९०-अव्यङ्गका लक्षण और उसका माहात्म्य	१६७
९१-साम्बोपाख्यानमें भगवान् सूर्यको अर्घ्य प्रदान करने और धूप दिखानेकी महिमा	१६८
९२-सूर्यमण्डलस्थ पुरुषका वर्णन	१६९
९३-भगवान् व्यासद्वारा योग-ज्ञानका वर्णन	१६९
९४-उत्तम एवं अधम भोजकोंके लक्षण	१७१
९५-भगवान् सूर्यके कालात्मक चक्रका वर्णन	१७२
९६-सूर्यचक्रका निर्माण और सूर्य-दीक्षाकी विधि	१७३
९७-भगवान् आदित्यकी सप्तावरण-पूजन-विधि	१७४
९८-सौरधर्मका वर्णन	१७५
९९-ब्रह्मादि देवताओंद्वारा भगवान् सूर्यकी स्तुति एवं वर-प्राप्ति	१७६
१००-सौर-धर्म-निरूपणमें सूर्यावतारका कथन	१८२
१०१-ब्रह्मादि देवताओंद्वारा सूर्यके विराट्-रूपका दर्शन	१८४
१०२-सूर्योपासनाका फल	१८५
१०३-विभिन्न पुष्पोंद्वारा सूर्य-पूजनका फल	१८६
१०४-सूर्यषष्ठी-व्रतकी महिमा	१८८
१०५-उभयसप्तमी-व्रतका वर्णन	१८९
१०६-निक्षुभार्क-सप्तमी तथा निक्षुभार्क-चतुष्टय-व्रत-माहात्म्य-वर्णन	१९०
१०७-कामप्रद स्त्री-व्रतका वर्णन	१९१
१०८-भगवान् सूर्यके निमित्त गृह एवं रथ आदिके दानका माहात्म्य	१९१
१०९-सौर-धर्ममें सदाचरणका वर्णन	१९२
११०-सौर-धर्मकी महिमाका वर्णन, ब्रह्माकृत सूर्य-स्तुति	१९३
१११-सौर-धर्ममें शान्तिक कर्म एवं अभिषेक-विधि	१९५
११२-विविध स्मृति-धर्मों तथा संस्कारोंका वर्णन	२०७
११३-श्राद्धके विविध भेद तथा वैश्वदेव-कर्मकी महिमा	२०८
११४-मातृ-श्राद्धकी संक्षिप्त विधि	२०९
११५-सौर-धर्ममें शुद्धि-प्रकरण	२१०
११६-श्रद्धाकी महिमा, खखोल्क-मन्त्रका माहात्म्य तथा गौकी महिमा	२११
११७-पञ्चमहायज्ञ एवं अतिथि-माहात्म्य-वर्णन, सौर-धर्ममें दानकी महत्ता और पात्रापात्रका निर्णय तथा पञ्च महापातक	२१३
११८-पातक, उपपातक, यममार्ग एवं यमयातनाका वर्णन	२१६
११९-सप्तमी-व्रतमें दन्तधावन-विधि-वर्णन	२१७
१२०-स्वप्न-फल-वर्णन तथा उदक-सप्तमी-व्रत	२१८
१२१-सूर्यनारायणकी महिमा, अर्घ्य प्रदान करनेका फल तथा आदित्य-पूजनकी विधियाँ	२१९
१२२-भगवान् भास्करके व्योम-पूजनकी विधि तथा आदित्य-माहात्म्य	२२३
१२३-सप्त-सप्तमी तथा द्वादश मास-सप्तमी-व्रतोंका वर्णन	२२५
१२४-अर्कसम्पुटिका-सप्तमीव्रत-विधि, सप्तमी-व्रत-माहात्म्यमें कौथुमिका आख्यान	२२६
१२५-मरिच-सप्तमी-व्रत-वर्णन	२२८
१२६-निम्ब-सप्तमी तथा फलसप्तमी-व्रतका वर्णन	२२८
१२७-ब्राह्मपर्व-श्रवणका माहात्म्य, पुराण-श्रवणकी विधि, पुराणों तथा पुराणवाचक व्यासकी महिमा	२३०

मध्यमपर्व (प्रथम भाग)

१२८-गृहस्थाश्रम एवं धर्मकी महिमा	२३३
१२९-सृष्टि तथा सात ऊर्ध्व एवं सात पाताल लोकोंका वर्णन	२३४
१३०-भूगोल एवं ज्योतिश्चक्रका वर्णन	२३६
१३१-ब्राह्मणोंकी महिमा तथा छब्बीस दोषोंका वर्णन	२३७
१३२-माता, पिता एवं गुरुकी महिमा	२३९
१३३-पुराण-श्रवणकी विधि तथा पुराण-वाचककी महिमा	२४०
१३४-पूर्त-कर्म-निरूपण	२४२
१३५-प्रासाद, उद्यान आदिके निर्माणमें भूमि-परीक्षण तथा वृक्षारोपणकी महिमा	२४४
१३६-देव-प्रतिमा-निर्माण-विधि	२४६
१३७-कुण्ड-निर्माण एवं उनके संस्कारकी विधि और ग्रह-शान्तिका माहात्म्य	२४७
१३८-अग्नि-पूजन-विधि	२४९
१३९-विविध कर्मोंमें अग्निके नाम तथा होम-द्रव्योंका वर्णन	२५०
१४०-यज्ञ-पात्रोंका स्वरूप और पूर्णाहुतिकी विधि	२५१

मध्यमपर्व (द्वितीय भाग)

१४१-यज्ञादि कर्मोंके मण्डल-निर्माणका विधान तथा क्रौञ्चादि पक्षियोंके दर्शनका फल	२५३
१४२-यज्ञादि कर्ममें दक्षिणाका माहात्म्य, विभिन्न कर्मोंमें पारिश्रमिक व्यवस्था और कलश-स्थापनका वर्णन	२५३
१४३-चतुर्विध मास-व्यवस्था एवं मलमास-वर्णन	२५५

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

विषय	पृष्ठ-संख्या
१४४-काल-विभाग, तिथि-निर्णय एवं वर्षभरके विशेष पर्वों तथा तिथियोंके पुण्यप्रद कृत्य	२५६
१४५-गोत्र-प्रवर आदिके ज्ञानकी आवश्यकता	२५९
१४६-वास्तु-मण्डलके निर्माण एवं वास्तु-पूजनकी संक्षिप्त विधि	२५९
१४७-कुशकण्डिका-विधान तथा अग्नि-जिह्वाओंके नाम	२६२
१४८-अधिवासनकर्म एवं यज्ञकर्ममें उपयोज्य उत्तम ब्राह्मण तथा धर्मदेवताका स्वरूप	२६४
१४९-प्रतिष्ठा-मुहूर्त एवं जलाशय आदिकी प्रतिष्ठा-विधि	२६५
मध्यमपर्व (तृतीय भाग)	
१५०-उद्यान-प्रतिष्ठा-विधि	२६८
१५१-गोचर-भूमिके उत्सर्ग तथा लघु उद्यानोंकी प्रतिष्ठा-विधि	२७०
१५२-अश्वत्थ, पुष्करिणी तथा जलाशयके प्रतिष्ठाकी विधि	२७२
१५३-वट, बिल्व तथा पूगीफल आदि वृक्ष-युक्त उद्यानकी प्रतिष्ठा-विधि	२७३
१५४-मण्डप, महायूप और पौंसले आदिकी प्रतिष्ठा-विधि	२७४
१५५-पुष्पवाटिका तथा तुलसीकी प्रतिष्ठा-विधि	२७५
१५६-एकाह-प्रतिष्ठा तथा काली आदि देवियोंकी प्रतिष्ठा-विधि	२७६
१५७-दिव्य, भौम एवं अन्तरिक्षजन्य उत्पात तथा उनकी शान्तिके उपाय	२७७
प्रतिसर्गपर्व (प्रथम खण्ड)	
१५८-सत्ययुगके राजवंशका वर्णन	२८१
१५९-त्रेतायुगके सूर्य एवं चन्द्र-राजवंशोंका वर्णन	२८४
१६०-द्वापरयुगके चन्द्रवंशीय राजाओंका वृत्तान्त	२८६
१६१-म्लेच्छवंशीय राजाओंका वर्णन तथा म्लेच्छ-भाषा आदिका संक्षिप्त परिचय	२८८
१६२-काश्यपके उपाध्याय, दीक्षित आदि दस पुत्रोंका नामोल्लेख, मगधके राजवंश और बौद्ध राजाओंका तथा चौहान और परमार आदि राजवंशोंका वर्णन	२९२
१६३-महाराज विक्रमादित्यके चरित्रका उपक्रम	२९४
प्रतिसर्गपर्व (द्वितीय खण्ड)	
१६४-स्वामी एवं सेवककी परस्पर भक्तिका आदर्श	२९६
१६५-ब्राह्मण-पुत्री महादेवीकी कथा	२९७
१६६-समान-वर्णमें विवाह-सम्बन्धका औचित्य	२९९
१६७-विषयी राजा राज्यके विनाशका कारण बनता है	३००
१६८-किये गये कर्मोंका फल अवश्य भोगना पड़ता है	३०२
१६९-जीवन-दानका आदर्श	३०३
१७०-साधनामें मनोयोगकी महत्ता	३०४
१७१-संतानमें समान-भाव रखें	३०५
१७२-पढ़ो कम, समझो ज्यादा	३०७
१७३-सत्यनारायणव्रत-कथा	३०९
१७४-सत्यनारायणव्रत-कथामें शतानन्द ब्राह्मणकी कथा	३१२
१७५-सत्यनारायणव्रत-कथामें राजा चन्द्रचूडका आख्यान	३१५
१७६-सत्यनारायण-व्रतके प्रसंगमें लकड़हारोंकी कथा	३१६
१७७-सत्यनारायण-व्रतके प्रसंगमें साधु वणिक् एवं जामाताकी कथा	३१७
१७८-सत्यधर्मके आश्रयसे सबका उद्धार	३१९
१७९-पितृशर्मा और उनके वंशज—व्याडि, पाणिनि और वररुचि आदिकी कथा	३२३
१८०-महर्षि पाणिनिका इतिवृत्त	३२४
१८१-बोपदेवके चरित्र-प्रसंगमें श्रीमद्भागवत-माहात्म्य	३२५
१८२-श्रीदुर्गासप्तशतीके आदिचरित्रका माहात्म्य	३२६
१८३-श्रीदुर्गासप्तशतीके मध्यमचरित्रका माहात्म्य	३२७
१८४-श्रीदुर्गासप्तशतीके उत्तरचरित्रकी महिमाके प्रसंगमें योगाचार्य महर्षि पतञ्जलिका चरित्र	३२८
प्रतिसर्गपर्व (तृतीय खण्ड)	
१८५-आल्हा खण्ड (आल्हा-ऊदलकी कथा)-का उपक्रम	३२९
१८६-राजा शालिवाहन तथा ईशामसीहकी कथा	३३०
१८७-राजा भोज और महामदकी कथा	३३२
१८८-देशराज एवं वत्सराज आदि राजाओंका आविर्भाव	३३२
प्रतिसर्गपर्व (चतुर्थ खण्ड)	
१८९-कलियुगमें उत्पन्न आन्ध्रवंशीय राजाओंके वंश-वृक्षका वर्णन	३३४
१९०-राजपूताना तथा दिल्लीनगरके राजवंशका इतिहास	३३६
१९१-ब्राह्मणोंकी उत्पत्तिके प्रसंगमें शुक्लवंश एवं उसके आगे होनेवाले विभिन्न क्षत्रियवंशोंका वर्णन	३३७
१९२-परिहारवंश और बंगालके शूरवंश आदिका वर्णन	३३९
१९३-भगवान्‌से चारों वर्णोंकी उत्पत्ति, चारों युगोंमें भगवान्‌के अवतारों एवं चारों युगोंके मनुष्योंकी आयुका निरूपण	३४१
१९४-दिल्ली नगरपर पठानोंका शासन और तैमूरलंगका उत्पात	३४२
१९५-भगवान् सूर्यके तेजसे आचार्य ईश्वरपुरी, आचार्य रामानन्द और निम्बार्काचार्यका आविर्भाव	३४३
१९६-आचार्य मध्व, श्रीधरस्वामी, विष्णुस्वामी, वाणीभूषण, भट्टोजिदीक्षित तथा वराहमिहिर आदिके आविर्भावकी कथा	३४६

In Public Domain. Digitized by Sarasvya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

विषय	पृष्ठ-संख्या
१९७-वैद्यराज धन्वन्तरि, सुश्रुत और भक्त कवि जयदेवजीका चरित्र	३५०
१९८-चैतन्य महाप्रभु, वाल्मीकि और शंकराचार्यके आविर्भावकी कथा	३५२
१९९-गिरिशर्मा, वनशर्मा तथा पुरीशर्माके आविर्भावका आख्यान	३५५
२००-भारती, नाथशर्मा, क्षेत्रशर्मा तथा ढुंढिराजकी उत्पत्ति-कथा	३५६
२०१-अघोरपंथी भैरव तथा बालशर्माकी उत्पत्तिकी कथामें रावण तथा हनुमान्‌जीका चरित्र	३६०
२०२-रुद्रमाहात्म्य, भवके अंशसे रामानुजाचार्यका आविर्भाव	३६१
२०३-वसुदेवताओंके अंशसे कुबेर आदिकी उत्पत्ति, रामायणकी संक्षिप्त कथा एवं त्रिलोचन भक्तका वृत्तान्त	३६२
२०४-रामानन्दजीके शिष्य नामदेव, भक्त रंकण (राँका) एवं यंकणा (बाँका)-का चरित्र, वरुणदेव और पराम्बाकी महिमा	३६४
२०५-संत कबीर, भक्त नरसी मेहता, पीपा, नानक तथा साधु नित्यानन्दजीके पूर्वजन्मोंकी कथा	३६५
२०६-अश्विनीकुमारोंके अंशसे सधन (सदन कसाई) और रैदासकी उत्पत्ति-कथा	३६७
२०७-यज्ञांश चैतन्यमहाप्रभुका चरित्र एवं अन्य आचार्योंका भी उनके भक्ति-भावसे प्रभावित होना	३६८
२०८-भक्तोंसहित चैतन्यमहाप्रभुकी जगन्नाथपुरी-यात्रा एवं साक्षात् भगवान्‌से वार्तालाप	३७०
२०९-मुनिश्रेष्ठ कण्वके उपाध्याय, दीक्षित तथा पाठक आदि दस पुत्रोंकी उत्पत्ति, चैतन्य महाप्रभु आदि आचार्योंद्वारा शुद्धिपूर्वक वैष्णवधर्मका विस्तार	३७१
२१०-अकबर आदि अन्तिम मुगल शासकोंका चरित्र, तुलसीदास, सूरदास, मीराबाई, तानसेन तथा बीरबल आदिके पूर्वजन्मोंका वृत्तान्त, गुरुण्ड, मौन और सर्वत्र म्लेच्छराज्यका विस्तार	३७४
२११-कलिके द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ चरणोंका वृत्तान्त तथा कल्कि भगवान्‌का अवतार	३७९
२१२-भगवान् कल्किकी विजय, सत्ययुगकी उत्पत्तिकथा, अक्षयनवमीमें आँवलेके पूजनका माहात्म्य, अयोध्यामें महाराज वैवस्वतका प्रतिष्ठित होना तथा प्रतिसर्गपर्वका उपसंहार	३८१
उत्तरपर्व	
२१३-महाराज युधिष्ठिरके पास व्यासादि महर्षियोंका आगमन एवं उनसे उपदेश करनेके लिये युधिष्ठिरकी प्रार्थना	३८३
२१४-भुवनकोशका संक्षिप्त वर्णन	३८४
२१५-नारदजीको विष्णु-मायाका दर्शन	३८६
२१६-संसारके दोषोंका वर्णन	३८८
२१७-विविध प्रकारके पापों एवं पुण्य-कर्मोंका फल	३९२
२१८-व्रतोपवासकी महिमामें शकटव्रतकी कथा	३९६
२१९-तिलकव्रतके माहात्म्यमें चित्रलेखाका चरित्र	३९७
२२०-अशोकव्रत तथा करवीरव्रतका माहात्म्य	३९८
२२१-कोकिलाव्रतका विधान और माहात्म्य	३९९
२२२-बृहत्तपोव्रतका विधान और फल	३९९
२२३-जातिस्मर-भद्रव्रतका फल और विधान तथा स्वर्णष्ठीवीकी कथा	४०१
२२४-यमद्वितीया तथा अशून्यशयन-व्रतकी विधि	४०४
२२५-मधूकतृतीया एवं मेघपाली तृतीयाव्रत	४०५
२२६-पञ्चाग्निसाधन नामक रम्भा-तृतीया तथा गोष्पद-तृतीयाव्रत	४०६
२२७-हरकालीव्रत-कथा	४०८
२२८-ललितातृतीया-व्रतकी विधि	४०९
२२९-अवियोगतृतीया-व्रत	४१०
२३०-उमा-महेश्वर-व्रतकी विधि	४११
२३१-रम्भातृतीया-व्रतका माहात्म्य	४१२
२३२-सौभाग्यशयन-व्रतकी विधि	४१४
२३३-अनन्त-तृतीया तथा रसकल्याणिनी तृतीया-व्रत	४१५
२३४-आर्द्रानन्दकरी तृतीयाव्रत	४१८
२३५-चैत्र, भाद्रपद और माघ शुक्ल तृतीया-व्रतका विधान और फल	४१९
२३६-आनन्तर्य-तृतीयाव्रत	४२०
२३७-अक्षय-तृतीयाव्रतके प्रसंगमें धर्म वणिक्‌का चरित्र	४२३
२३८-शान्तिव्रत	४२४
२३९-सरस्वतीव्रतका विधान और फल	४२४
२४०-श्रीपञ्चमीव्रत-कथा	४२५
२४१-विशोक-षष्ठी-व्रत	४२७
२४२-कमलषष्ठी (फलषष्ठी)-व्रत	४२८
२४३-मन्दारषष्ठी-व्रत	४२८
२४४-ललितषष्ठी-व्रतकी विधि	४२९
२४५-कुमारषष्ठी-व्रतकी कथा	४३०
२४६-विजया-सप्तमीव्रत	४३१
२४७-आदित्य-मण्डलदान-विधि	४३२
२४८-वर्ज्यसप्तमीव्रत	४३२
२४९-कुक्कुट-मर्कटी-व्रतकथा (मुक्ताभरण सप्तमीव्रत-कथा)	४३२
२५०-उभय-सप्तमीव्रत	४३४

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

विषय	पृष्ठ-संख्या
२५१-कल्याणसप्तमी-व्रतकी विधि	४३५
२५२-शर्करासप्तमी-व्रतकी विधि	४३६
२५३-कमलसप्तमी-व्रत	४३७
२५४-शुभसप्तमी-व्रतकी विधि	४३७
२५५-सप्तमी-स्नपनव्रत और उसकी विधि	४३८
२५६-अचलासप्तमी-व्रत-कथा तथा व्रत-विधि	४४०
२५७-बुधाष्टमीव्रत-कथा तथा माहात्म्य	४४२
२५८-श्रीकृष्ण-जन्माष्टमीव्रतकी कथा एवं विधि	४४४
२५९-दूर्वाकी उत्पत्ति एवं दूर्वाष्टमीव्रतका विधान	४४७
२६०-मासिक कृष्णाष्टमी-व्रतोंकी विधि	४४७
२६१-अनघाष्टमी-व्रतकी कथा एवं विधि	४४९
२६२-सोमाष्टमी-व्रत-विधान	४५१
२६३-श्रीवृक्षनवमी-व्रत-कथा	४५१
२६४-ध्वजनवमी-व्रत-कथा	४५२
२६५-उल्का-नवमी-व्रतका विधान और फल	४५३
२६६-दशावतारव्रत-कथा, विधान और फल	४५४
२६७-आशादशमी-व्रत-कथा एवं व्रत-विधान	४५५
२६८-तारकद्वादशीके प्रसंगमें राजा कुशध्वजकी कथा तथा व्रत-विधान	४५७
२६९-अरण्यद्वादशी-व्रतका विधान और फल	४५८
२७०-रोहिणीचन्द्र-व्रत तथा अवियोग-व्रतका विधान	४५८
२७१-गोवत्सद्वादशीका विधान, गौओंका माहात्म्य, मुनियों और राजा उत्तानपादकी कथा	४५९
२७२-देवशयनी एवं देवोत्थानी द्वादशी-व्रतोंका विधान	४६३
२७३-नीराजनद्वादशी-व्रत-कथा एवं व्रत-विधान	४६६
२७४-भीष्मपञ्चक-व्रतकी विधि एवं महिमा	४६७
२७५-मल्लद्वादशी एवं भीमद्वादशी-व्रतका विधान	४६८
२७६-श्रवणद्वादशी-व्रतके प्रसंगमें एक वणिक्‌की कथा	४७०
२७७-विजय-श्रवण-द्वादशीव्रतमें वामनावतारकी कथा तथा व्रत-विधि	४७२
२७८-सम्प्राप्ति-द्वादशी एवं गोविन्द-द्वादशीव्रत	४७४
२७९-अखण्ड-द्वादशी, मनोरथ-द्वादशी एवं तिल-द्वादशी-व्रतोंका विधान	४७४
२८०-सुकृत-द्वादशीके प्रसंगमें सीरभद्र वैश्यकी कथा	४७६
२८१-धरणी-व्रत (अर्चावतार-व्रत)	४७७
२८२-विशोकद्वादशी-व्रत और गुडधेनु आदि दस धेनुओंके दानकी विधि तथा उसकी महिमा	४७९
२८३-विभूतिद्वादशी-व्रतमें राजा पुष्पवाहनकी कथा	४८१
२८४-मदनद्वादशी-व्रतमें मरुद्गणोंका आख्यान	४८४
२८५-अबाधक-व्रत एवं दौर्भाग्य-दौर्गन्ध्यनाशक-व्रतका माहात्म्य	४८६
२८६-धर्मराजका समाराधन-व्रत	४८७
२८७-अनङ्ग-त्रयोदशी-व्रत	४८८
२८८-पाली-व्रत एवं रम्भा (कदली)-व्रत	४८९
२८९-आग्नेयी शिवचतुर्दशी-व्रतके प्रसंगमें महर्षि अङ्गिराका आख्यान	४९०
२९०-अनन्तचतुर्दशी-व्रत-विधान	४९२
२९१-श्रवणिकाव्रत-कथा एवं व्रत-विधि	४९४
२९२-नक्त एवं शिवचतुर्दशी-व्रतकी विधि	४९६
२९३-सर्वफलत्याग-चतुर्दशीव्रत	४९७
२९४-पौर्णमासी-व्रत-विधान एवं अमावास्यामें श्राद्ध-तर्पणकी महिमा	४९८
२९५-वैशाखी, कार्तिकी और माघी पूर्णिमाकी विधि	४९९
२९६-युगादि तिथियोंकी विधि	५००
२९७-सावित्री-व्रतकथा एवं व्रत-विधि	५००
२९८-महाकार्तिकी-व्रतके प्रसंगमें रानी कलिंगभद्राका आख्यान	५०३
२९९-मनोरथपूर्णिमा तथा अशोकपूर्णिमाव्रत-विधि	५०४
३००-अनन्तव्रत-माहात्म्यमें कार्तवीर्यके आविर्भावका वृत्तान्त	५०६
३०१-मास-नक्षत्र-व्रतके माहात्म्यमें साम्भरायणीकी कथा	५०७
३०२-वैष्णव एवं शैव नक्षत्रपुरुष-व्रतोंका विधान	५०९
३०३-भग्नव्रतकी प्रायश्चित्त-विधि तथा पण्यस्त्री-व्रत	५११
३०४-वृन्ताक-त्याग एवं ग्रह-नक्षत्रव्रतकी विधि	५१२
३०५-शनैश्चर-व्रतके प्रसंगमें महामुनि पिप्पलादका आख्यान	५१३
३०६-आदित्यवार नक्त-व्रत तथा संक्रान्ति-व्रतके उद्यापनकी विधि	५१५
३०७-भद्राका चरित्र एवं उसके व्रतकी विधि	५१६
३०८-महर्षि अगस्त्यकी कथा और उनके अर्घ्य-दानकी विधि	५१८
३०९-नवोदित चन्द्र, गुरु एवं शुक्रको अर्घ्य देनेकी विधि	५२१
३१०-प्रकीर्ण-व्रत	५२२
३११-माघ-स्नान-विधि	५२८
३१२-स्नान और तर्पण-विधि	५३०
३१३-रुद्र-स्नानकी विधि	५३२
३१४-ग्रहण-स्नानका माहात्म्य और विधान	५३३
३१५-मरणासन्न (मृत्युके पूर्व) प्राणीके कर्तव्य तथा ध्यानके चतुर्विध भेद	५३४
३१६-इष्टापूर्तकी महिमा	५३६
३१७-दीपदानकी महिमाके प्रसंगमें जातिस्मरा रानी ललिताका आख्यान	५३८

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

विषय	पृष्ठ-संख्या
३१८-वृषोत्सर्गकी महिमा	५४०
३१९-फाल्गुन-पूर्णिमोत्सव	५४१
३२०-दमनकोत्सव, दोलोत्सव तथा रथयात्रोत्सव आदिका वर्णन	५४२
३२१-श्रावणपूर्णिमाको रक्षाबन्धनकी विधि	५४६
३२२-महानवमी (विजयादशमी)-व्रत	५४७
३२३-इन्द्रध्वजोत्सवके प्रसंगमें उपरिचर वसुका वृत्तान्त	५४९
३२४-दीपमालिकोत्सव	५५०
३२५-शान्तिक एवं पौष्टिक कर्मों तथा नवग्रह-शान्तिकी विधिका वर्णन	५५२
३२६-कोटिहोमका विधान	५५८
३२७-महाशान्ति-विधान	५६०
३२८-विनायक-शान्ति	५६२
३२९-नक्षत्रार्चन-विधि (रोगावलिचक्र)	५६३
३३०-अपराधशतशमन-व्रत	५६४
३३१-काञ्चनपुरीव्रत-विधि	५६५
३३२-कन्यादान एवं ब्राह्मणोंकी परिचर्याका माहात्म्य	५६७
३३३-दानकी महिमा और प्रत्यक्ष धेनु-दानकी विधि	५६८
३३४-तिलधेनु-दानकी विधि	५७०
३३५-जलधेनु-दानके प्रसंगमें महर्षि मुद्गलका आख्यान	५७१
३३६-घृतधेनुदान-विधि	५७३
३३७-लवणधेनुदान-विधि	५७४
३३८-सुवर्णधेनुदान-विधि	५७५
३३९-रत्नधेनुदान-विधि	५७५
३४०-उभयमुखी धेनु-दानका माहात्म्य	५७६
३४१-गोसहस्रदान-विधि	५७७
३४२-वृषभदानकी महिमा	५७८
३४३-कपिलादानकी महिमा	५७९
३४४-महिषी एवं मेषी-दानकी विधि	५८१
३४५-भूमिदानकी महिमा	५८२
३४६-सुवर्णरचित भूदानकी विधि	५८३
३४७-हलपंक्तिदान-विधि	५८४
३४८-आपाकदानके प्रसंगमें राजा हव्यवाहनकी कथा	५८५
३४९-गृहदान-विधि	५८७
३५०-अन्नदानकी महिमाके प्रसंगमें राजा श्वेत और एक वैश्यकी कथा	५८८
३५१-स्थालीदानकी महिमामें द्रौपदीके पूर्वजन्मकी कथा	५९१
३५२-दासीदान-विधि	५९२
३५३-प्रपा (पौंसला) और अग्नीष्टिका (अँगीठी)-दानकी महिमा	५९३
३५४-विद्यादानकी महिमा	५९४
३५५-तुलापुरुषदानकी विधि	५९५
३५६-हिरण्यगर्भ-दानकी विधि	५९९
३५७-ब्रह्माण्डदान-विधि	६०१
३५८-कल्पवृक्ष एवं कल्पलतादानकी विधि	६०३
३५९-गजरथ-अश्वरथदान-विधि	६०५
३६०-कालपुरुषदान-विधि	६०७
३६१-सप्तसागरदान-विधि	६०८
३६२-महाभूतघटदान-विधि	६०९
३६३-शय्यादान एवं मृतशय्यादान-विधि	६०९
३६४-आत्मप्रतिकृतिदान-विधि	६१०
३६५-हिरण्याश्वदान-विधि	६११
३६६-हिरण्याश्वरथ-दानकी विधि	६१२
३६७-कृष्णाजिन (मृगछाला)-दान-विधि	६१३
३६८-हेमहस्तिरथ-दानकी विधि	६१३
३६९-विश्वचक्रदान-विधि	६१४
३७०-भुवनप्रतिष्ठाका माहात्म्य, धर्मात्मा रजिकी कथा	६१६
३७१-नक्षत्रदान (नक्षत्रोंमें दानके पदार्थ)	६१८
३७२-तिथिदान (तिथियोंमें दानके पदार्थ)	६१९
३७३-वराहदानका विधान	६२२
३७४-दशविध पर्वतदानोंमें धान्यशैलदानकी विधि और महिमा	६२२
३७५-लवणाचलदान-विधि तथा गुडपर्वतकी महिमाके प्रसंगमें सुलभाका आख्यान	६२५
३७६-सुवर्ण एवं तिलशैलदान-विधि, तिलोंकी महिमा	६२७
३७७-कपास एवं घृतपर्वतोंके दानकी महिमा	६२८
३७८-रत्नाचल और रौप्याचलदानका माहात्म्य	६२९
३७९-शर्कराचल और लवणाचलदानकी महिमा	६३०
३८०-सदाचारधर्मका निरूपण	६३२
३८१-रोहिणीचन्द्रशयन-व्रत	६३८
३८२-श्रीकृष्ण-युधिष्ठिर-संवादका उपसंहार और भगवान्‌का द्वारकागमन	६३९
३८३-भविष्योत्तरपर्वकी संक्षिप्त अनुक्रमणिका	६४०

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

संक्षिप्त भविष्यपुराण

ब्राह्मपर्व

व्यास-शिष्य महर्षि सुमन्तु एवं राजा शतानीकका संवाद, भविष्यपुराणकी महिमा एवं परम्परा, सृष्टि-वर्णन, चारों वेद, पुराण एवं चारों वर्णोंकी उत्पत्ति, चतुर्विध सृष्टि, काल-गणना, युगोंकी संख्या, उनके धर्म तथा संस्कार

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत्॥

'बदरिकाश्रमनिवासी प्रसिद्ध ऋषि श्रीनारायण तथा श्रीनर (अन्तर्यामी नारायणस्वरूप भगवान् श्रीकृष्ण तथा उनके नित्य-सखा नरस्वरूप नरश्रेष्ठ अर्जुन), उनकी लीला प्रकट करनेवाली भगवती सरस्वती और उनकी लीलाओंके वक्ता महर्षि वेदव्यासको नमस्कार कर जय*—आसुरी सम्पत्तियोंका नाश करके अन्तःकरणपर दैवी सम्पत्तियोंको विजय प्राप्त करानेवाले वाल्मीकीय रामायण, महाभारत एवं अन्य सभी इतिहास-पुराणादि सद्ग्रन्थोंका पाठ करना चाहिये।'

जयति पराशरसूनुः सत्यवतीहृदयनन्दनो व्यासः।
यस्यास्यकमलगलितं वाङ्मयममृतं जगत् पिबति॥

'पराशरके पुत्र तथा सत्यवतीके हृदयको आनन्दित करनेवाले भगवान् व्यासकी जय हो, जिनके मुखकमलसे निःसृत अमृतमयी वाणीका यह सम्पूर्ण विश्व पान करता है।'

यो गोशतं कनकशृङ्गमयं ददाति
विप्राय वेदविदुषे च बहुश्रुताय।
पुण्यां भविष्यसुकथां शृणुयात् समग्रां
पुण्यं समं भवति तस्य च तस्य चैव॥

'वेदादि शास्त्रोंके जाननेवाले तथा अनेक विषयोंके मर्मज्ञ विद्वान् ब्राह्मणको स्वर्णजटित सींगोंवाली सैकड़ों गौओंको दान देनेसे जो पुण्य प्राप्त होता है, ठीक उतना ही पुण्य इस भविष्यमहापुराणकी उत्तम कथाओंके श्रवण करनेसे प्राप्त होता है।'

एक समय व्यासजीके शिष्य महर्षि सुमन्तु तथा वसिष्ठ, पराशर, जैमिनि, याज्ञवल्क्य, गौतम, वैशम्पायन, शौनक, अङ्गिरा और भारद्वाजादि महर्षिगण पाण्डववंशमें समुत्पन्न महाबलशाली राजा शतानीककी सभामें गये। राजाने उन ऋषियोंका अर्घ्यादिसे विधिवत् स्वागत-सत्कार किया और उन्हें उत्तम आसनोंपर बैठाया तथा भलीभाँति उनका पूजन कर विनयपूर्वक इस प्रकार प्रार्थना की—'हे महात्माओ! आपलोगोंके आगमनसे मेरा जन्म सफल हो गया। आपलोगोंके स्मरणमात्रसे ही मनुष्य पवित्र हो जाता है, फिर आपलोग मुझे दर्शन देनेके लिये यहाँ पधारे हैं, अतः आज मैं धन्य हो गया। आपलोग कृपा करके मुझे उन

* 'जय' शब्दकी व्याख्या प्रायः कई पुराणोंमें आयी है। भविष्यपुराणके ब्राह्मपर्वके चौथे अध्याय (श्लोक ८६ से ८८)-में इसे विस्तारसे समझाया गया है, वहाँ देखना चाहिये।

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

पवित्र एवं पुण्यमयी धर्मशास्त्रकी कथाओंको सुनायें, जिनके सुननेसे मुझे परमगतिकी प्राप्ति हो।'

ऋषियोंने कहा—हे राजन्! इस विषयमें आप हम सबके गुरु, साक्षात् नारायणस्वरूप भगवान् वेदव्याससे निवेदन करें। वे कृपालु हैं, सभी प्रकारके शास्त्रोंके और विद्याओंके ज्ञाता हैं। जिसके श्रवणमात्रसे मनुष्य सभी पातकोंसे मुक्त हो जाता है, उस 'महाभारत' ग्रन्थके रचयिता भी यही हैं।

राजा शतानीकने ऋषियोंके कथनानुसार सभी शास्त्रोंके जाननेवाले भगवान् वेदव्याससे प्रार्थनापूर्वक जिज्ञासा की—प्रभो! मुझे आप धर्ममयी पुण्य-कथाओंका श्रवण करायें, जिससे मैं पवित्र हो जाऊँ और इस संसार-सागरसे मेरा उद्धार हो जाय।

व्यासजीने कहा—'राजन्! यह मेरा शिष्य सुमन्तु महान् तेजस्वी एवं समस्त शास्त्रोंका ज्ञाता है, यह आपकी जिज्ञासाको पूर्ण करेगा।' मुनियोंने भी इस बातका अनुमोदन किया। तदनन्तर राजा शतानीकने महामुनि सुमन्तुसे उपदेश करनेके लिये प्रार्थना की—हे द्विजश्रेष्ठ! आप कृपाकर उन पुण्यमयी कथाओंका वर्णन करें, जिनके सुननेसे सभी पाप नष्ट हो जाते हैं और शुभ फलोंकी प्राप्ति होती है।

महामुनि सुमन्तु बोले—राजन्! धर्मशास्त्र सबको पवित्र करनेवाले हैं। उनके सुननेसे मनुष्य सभी पापोंसे मुक्त हो जाता है। बताओ, तुम्हारी क्या सुननेकी इच्छा है?

राजा शतानीकने कहा—ब्राह्मणदेव! वे कौनसे धर्मशास्त्र हैं, जिनके सुननेसे मनुष्य पापोंसे मुक्त हो जाता है।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! मनु, विष्णु, यम, अङ्गिरा, वसिष्ठ, दक्ष, संवर्त, शातातप, पराशर, आपस्तम्ब, उशना, कात्यायन, बृहस्पति, गौतम, शङ्ख, लिखित, हारीत तथा अत्रि आदि ऋषियोंद्वारा रचित मन्वादि बहुत-से धर्मशास्त्र हैं। इन धर्मशास्त्रोंको सुनकर एवं उनके रहस्योंको भलीभाँति हृदयङ्गमकर मनुष्य देवलोकमें जाकर परम आनन्दको प्राप्त करता है, इसमें कोई संदेह नहीं है।

शतानीकने कहा—प्रभो! जिन धर्मशास्त्रोंको आपने कहा है, इन्हें मैंने सुना है। अब इन्हें पुनः सुननेकी इच्छा नहीं है। कृपाकर आप चारों वर्णोंके कल्याणके लिये जो उपयुक्त धर्मशास्त्र हो उसे मुझे बतायें।

सुमन्तु मुनि बोले—हे महाबाहो! संसारमें निमग्न प्राणियोंके उद्धारके लिये अठारह महापुराण, श्रीरामकथा तथा महाभारत आदि सद्ग्रन्थ नौकारूपी साधन हैं। अठारह महापुराणों तथा आठ प्रकारके व्याकरणोंको भलीभाँति समझकर सत्यवतीके पुत्र वेदव्यासजीने 'महाभारतसंहिता' की रचना की, जिसके सुननेसे मनुष्य ब्रह्महत्याके पापोंसे मुक्त हो जाता है। इनमें आठ प्रकारके व्याकरण ये हैं—ब्राह्म, ऐन्द्र, याम्य, रौद्र, वायव्य, वारुण, सावित्र्य तथा वैष्णव। ब्रह्म, पद्म, विष्णु, शिव, भागवत, नारदीय, मार्कण्डेय, अग्नि, भविष्य, ब्रह्मवैवर्त, लिङ्ग, वाराह, स्कन्द, वामन, कूर्म, मत्स्य, गरुड तथा ब्रह्माण्ड—ये अठारह महापुराण हैं। ये सभी-चारों वर्णोंके लिये उपकारक हैं। इनमेंसे आप क्या सुनना चाहते हैं?

राजा शतानीकने कहा—हे विप्र! मैंने महाभारत सुना है तथा श्रीरामकथा भी सुनी है, अन्य पुराणोंको भी सुना है, किंतु भविष्यपुराण नहीं सुना है। अतः विप्रश्रेष्ठ! आप भविष्यपुराणको मुझे सुनायें, इस विषयमें मुझे महत् कौतूहल है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! आपने बहुत उत्तम बात पूछी है। मैं आपको भविष्यपुराणकी कथा सुनाता हूँ, जिसके श्रवण करनेसे ब्रह्महत्या आदि बड़े-बड़े पाप नष्ट हो जाते हैं और अश्वमेधादि यज्ञोंका पुण्यफल प्राप्त होता है तथा अन्तमें सूर्यलोककी प्राप्ति होती है, इसमें कोई संदेह नहीं। यह उत्तम पुराण पहले ब्रह्माजीद्वारा कहा गया है। विद्वान् ब्राह्मणको इसका सम्यक् अध्ययन कर अपने शिष्यों तथा चारों वर्णोंके लिये उपदेश करना चाहिये। इस पुराणमें श्रौत एवं स्मार्त सभी धर्मोंका वर्णन हुआ है। यह पुराण परम मङ्गलप्रद, सद्बुद्धिको बढ़ानेवाला, यश एवं कीर्ति प्रदान करनेवाला तथा परमपद—मोक्ष प्राप्त करानेवाला है—

इदं स्वस्त्ययनं श्रेष्ठमिदं बुद्धिविवर्धनम्।
इदं यशस्यं सततमिदं निःश्रेयसं परम्॥

(ब्राह्मपर्व १।७९)

इस भविष्यपुराणमें सभी धर्मोंका संनिवेश हुआ है तथा सभी कर्मोंके गुणों और दोषोंके फलोंका निरूपण किया गया है। चारों वर्णों तथा आश्रमोंके सदाचारका भी वर्णन किया गया है, क्योंकि 'सदाचार ही श्रेष्ठ धर्म है' ऐसा श्रुतियोंने कहा है, इसलिये ब्राह्मणको नित्य आचारका पालन करना चाहिये, क्योंकि सदाचारसे विहीन ब्राह्मण किसी भी प्रकार वेदके फलको प्राप्त नहीं कर सकता। सदा आचारका पालन करनेपर तो वह सम्पूर्ण फलोंका अधिकारी हो जाता है, ऐसा कहा गया है। सदाचारको ही मुनियोंने धर्म तथा तपस्याओंका मूल आधार माना है, मनुष्य भी इसीका आश्रय लेकर धर्माचरण करते हैं। इस प्रकार इस भविष्यमहापुराणमें आचारका वर्णन किया गया है[१]। तीनों लोकोंकी उत्पत्ति, विवाहादि संस्कार-विधि, स्त्री-पुरुषोंके लक्षण, देवपूजाका विधान, राजाओंके धर्म एवं कर्तव्यका निर्णय, सूर्यनारायण, विष्णु, रुद्र, दुर्गा तथा सत्यनारायणका माहात्म्य एवं पूजा-विधान, विविध तीर्थोंका वर्णन, आपद्धर्म तथा प्रायश्चित्त-विधि, संध्याविधि, स्नान, तर्पण, वैश्वदेव, भोजनविधि, जातिधर्म, कुलधर्म, वेदधर्म तथा यज्ञ-मण्डलमें अनुष्ठित होनेवाले विविध यज्ञोंका वर्णन हुआ है।

हे कुरुश्रेष्ठ शतानीक! इस महापुराणको ब्रह्माजीने शंकरको, शंकरने विष्णुको, विष्णुने नारदको, नारदने इन्द्रको, इन्द्रने पराशरको तथा पराशरने व्यासको सुनाया और व्याससे मैंने प्राप्त किया। इस प्रकार परम्परा-प्राप्त इस उत्तम भविष्यमहापुराणको मैं आपसे कहता हूँ, इसे सुनें।

इस भविष्यमहापुराणकी श्लोक-संख्या पचास हजार है[२]। इसे भक्तिपूर्वक सुननेवाला ऋद्धि, वृद्धि तथा सम्पूर्ण सम्पत्तियोंको प्राप्त करता है। ब्रह्माजीद्वारा प्रोक्त इस महापुराणमें पाँच पर्व कहे गये हैं—(१) ब्राह्म, (२) वैष्णव, (३) शैव, (४) त्वाष्ट्र तथा (५) प्रतिसर्गपर्व। पुराणके सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर तथा वंशानुचरित—ये पाँच लक्षण बताये गये हैं तथा इसमें चौदह विद्याओंका भी वर्णन है[३]। चौदह विद्याएँ इस प्रकार हैं—चार

१-आचारः प्रथमो धर्मः श्रुत्युक्तश्च नरोत्तम। तस्मादस्मिन् समायुक्तो नित्यं स्यादात्मवान् द्विजः॥
आचाराद्विच्युतो विप्रो न वेदफलमश्नुते। आचारेण च संयुक्तः सम्पूर्णफलभाक् स्मृतः॥
एवमाचारतो दृष्ट्वा धर्मस्य मुनयो गतिम्। सर्वस्य तपसो मूलमाचारं जगृहुः परम्॥
अन्ये च मानवा राजन्नाचारं संश्रिताः सदा। एवमस्मिन् पुराणे तु आचारस्य तु कीर्तनम्॥ (ब्राह्मपर्व १।८१—८४)

२-वर्तमान समयमें भविष्यपुराणका जो संस्करण उपलब्ध है, उसमें ब्राह्म, मध्यम, प्रतिसर्ग तथा उत्तर नामक चार सर्ग मिलते हैं और श्लोक-संख्या भी पचास हजारके स्थानपर लगभग अट्ठाईस हजार है। इसमें भी कुछ अंश प्रक्षिप्त माने जाते हैं।

३-सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च॥
वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम्। चतुर्दशभिर्विद्याभिर्भूषितं कुरुनन्दन॥ (ब्राह्मपर्व २।४-५)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

वेद (ऋक्, यजुः, साम, अथर्व), छः वेदाङ्ग (शिक्षा, कल्प, निरुक्त, व्याकरण, छन्द, ज्योतिष), मीमांसा, न्याय, पुराण तथा धर्मशास्त्र। आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद तथा अर्थशास्त्र—इन चारोंको मिलानेसे अठारह विद्याएँ होती हैं।

सुमन्तु मुनि पुनः बोले—हे राजन्! अब मैं भूतसर्ग अर्थात् समस्त प्राणियोंकी उत्पत्तिका वर्णन करता हूँ, जिसके सुननेसे सभी पापोंकी निवृत्ति हो जाती है और मनुष्य परम शान्तिको प्राप्त करता है।

हे तात! पूर्वकालमें यह सारा संसार अन्धकारसे व्याप्त था, कोई पदार्थ दृष्टिगत नहीं होता था, अविज्ञेय था, अतर्क्य था और प्रसुप्त-सा था। उस समय सूक्ष्म अतीन्द्रिय और सर्वभूतमय उन परब्रह्म परमात्मा भगवान् भास्करने अपने शरीरसे नानाविध सृष्टि करनेकी इच्छा की और सर्वप्रथम परमात्माने जलको उत्पन्न किया तथा उसमें अपने वीर्यरूप शक्तिका आधान किया। इससे देवता, असुर, मनुष्य आदि सम्पूर्ण जगत् उत्पन्न हुआ। वह वीर्य जलमें गिरनेसे अत्यन्त प्रकाशमान सुवर्णका अण्ड हो गया। उस अण्डके मध्यसे सृष्टिकर्ता चतुर्मुख लोकपितामह ब्रह्माजी उत्पन्न हुए।

नर (भगवान्)-से जलकी उत्पत्ति हुई है, इसलिये जलको नार कहते हैं। वह नार जिसका पहले अयन (स्थान) हुआ, उसे नारायण कहते हैं। ये सदसद्रूप, अव्यक्त एवं नित्यकारण हैं, इनसे जिस पुरुष-विशेषकी सृष्टि हुई, वे लोकमें ब्रह्माके नामसे प्रसिद्ध हुए। ब्रह्माजीने दीर्घकालतक तपस्या की और उस अण्डके दो भाग कर दिये। एक भागसे भूमि और दूसरेसे आकाशकी रचना की, मध्यमें स्वर्ग, आठों दिशाओं तथा वरुणका निवास-स्थान अर्थात् समुद्र बनाया। फिर महदादि तत्त्वोंकी तथा सभी प्राणियोंकी रचना की।

परमात्माने सर्वप्रथम आकाशको उत्पन्न किया और फिर क्रमसे वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी—इन तत्त्वोंकी रचना की। सृष्टिके आदिमें ही ब्रह्माजीने उन सबके नाम और कर्म वेदोंके निर्देशानुसार ही नियत कर उनकी अलग-अलग संस्थाएँ बना दीं। देवताओंके तुषित आदि गण, ज्योतिष्टोमादि सनातन यज्ञ, ग्रह, नक्षत्र, नदी, समुद्र, पर्वत, सम एवं विषम भूमि आदि उत्पन्न कर कालके विभागों (संवत्सर, दिन, मास आदि) और ऋतुओं आदिकी रचना की। काम, क्रोध आदिकी रचना कर विविध कर्मोंके सदसद्विवेकके लिये धर्म और अधर्मकी रचना की और नानाविध प्राणिजगत्की सृष्टि कर उनको सुख-दुःख, हर्ष-शोक आदि द्वन्द्वोंसे संयुक्त किया। जो कर्म जिसने किया था तदनुसार उनकी (इन्द्र, चन्द्र, सूर्य आदि) पदोंपर नियुक्ति हुई। हिंसा, अहिंसा, मृदु, क्रूर, धर्म, अधर्म, सत्य, असत्य आदि जीवोंका जैसा स्वभाव था, वह वैसे ही उनमें प्रविष्ट हुआ, जैसे विभिन्न ऋतुओंमें वृक्षोंमें पुष्प, फल आदि उत्पन्न होते हैं।

इस लोककी अभिवृद्धिके लिये ब्रह्माजीने अपने मुखसे ब्राह्मण, बाहुओंसे क्षत्रिय, ऊरु अर्थात् जंघासे वैश्य और चरणोंसे शूद्रोंको उत्पन्न किया। ब्रह्माजीके चारों मुखोंसे चार वेद उत्पन्न हुए। पूर्व-मुखसे ऋग्वेद प्रकट हुआ, उसे वसिष्ठ-मुनिने ग्रहण किया। दक्षिण-मुखसे यजुर्वेद उत्पन्न हुआ, उसे महर्षि याज्ञवल्क्यने ग्रहण किया। पश्चिम-मुखसे सामवेद निःसृत हुआ, उसे गौतम-ऋषिने धारण किया और उत्तर-मुखसे अथर्ववेद प्रादुर्भूत हुआ, जिसे लोकपूजित महर्षि शौनकने ग्रहण किया। ब्रह्माजीके लोकप्रसिद्ध पञ्चम (ऊर्ध्व)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

मुखसे अठारह पुराण, इतिहास और यमादि स्मृति-शास्त्र उत्पन्न हुए[१]।

इसके बाद ब्रह्माजीने अपने देहके दो भाग किये। दाहिने भागको पुरुष तथा बायें भागको स्त्री बनाया और उसमें विराट् पुरुषकी सृष्टि की। उस विराट् पुरुषने नाना प्रकारकी सृष्टि रचनेकी इच्छासे बहुत कालतक तपस्या की और सर्वप्रथम दस ऋषियोंको उत्पन्न किया, जो प्रजापति कहलाये। उनके नाम इस प्रकार हैं—(१) नारद, (२) भृगु, (३) वसिष्ठ, (४) प्रचेता, (५) पुलह, (६) क्रतु, (७) पुलस्त्य, (८) अत्रि, (९) अङ्गिरा और (१०) मरीचि। इसी प्रकार अन्य महातेजस्वी ऋषि भी उत्पन्न हुए। अनन्तर देवता, ऋषि, दैत्य और राक्षस, पिशाच, गन्धर्व, अप्सरा, पितर, मनुष्य, नाग, सर्प आदि योनियोंके अनेक गण उत्पन्न किये और उनके रहनेके स्थानोंको बनाया। विद्युत्, मेघ, वज्र, इन्द्रधनुष, धूमकेतु (पुच्छल तारे), उल्का, निर्घात (बादलोंकी गड़गड़ाहट)और छोटे-बड़े नक्षत्रोंको उत्पन्न किया। मनुष्य, किंनर, अनेक प्रकारके मत्स्य, वराह, पक्षी, हाथी, घोड़े, पशु, मृग, कृमि, कीट, पतंग आदि छोटे-बड़े जीवोंको उत्पन्न किया। इस प्रकार उन भास्करदेवने त्रिलोकीकी रचना की।

हे राजन्! इस सृष्टिकी रचना कर सृष्टिमें जिन-जिन जीवोंका जो-जो कर्म और क्रम कहा गया है, उसका मैं वर्णन करता हूँ, आप सुनें।

हाथी, व्याल, मृग और विविध पशु, पिशाच, मनुष्य तथा राक्षस आदि जरायुज (गर्भसे उत्पन्न होनेवाले) प्राणी हैं। मत्स्य, कछुवे, सर्प, मगर तथा अनेक प्रकारके पक्षी अण्डज (अण्डेसे उत्पन्न होनेवाले) हैं। मक्खी, मच्छर, जूँ, खटमल आदि जीव स्वेदज हैं अर्थात् पसीनेकी उष्मासे उत्पन्न होते हैं। भूमिको उद्भेदकर उत्पन्न होनेवाले वृक्ष, ओषधियाँ आदि उद्भिज्ज सृष्टि हैं। जो फलके पकनेतक रहें और पीछे सूख जायँ या नष्ट हो जायँ तथा बहुत फूल और फलवाले वृक्ष हैं वे ओषधि कहलाते हैं और जो पुष्पके आये बिना ही फलते हैं, वे वनस्पति हैं तथा जो फूलते और फलते हैं उन्हें वृक्ष कहते हैं। इसी प्रकार गुल्म, वल्ली, वितान आदि भी अनेक भेद होते हैं। ये सब बीजसे अथवा काण्डसे अर्थात् वृक्षकी छोटी-सी शाखा काटकर भूमिमें गाड़ देनेसे उत्पन्न होते हैं। ये वृक्ष आदि भी चेतना-शक्तिसम्पन्न हैं और इन्हें सुख-दुःखका ज्ञान रहता है, परंतु पूर्वजन्मके कर्मोंके कारण तमोगुणसे आच्छन्न रहते हैं, इसी कारण मनुष्योंकी भाँति बातचीत आदि करनेमें समर्थ नहीं हो पाते[२]।

इस प्रकार यह अचिन्त्य चराचर-जगत् भगवान् भास्करसे उत्पन्न हुआ है। जब वह परमात्मा निद्राका आश्रय ग्रहण कर शयन करता है, तब यह संसार उसमें लीन हो जाता है और जब निद्राका त्याग करता है अर्थात् जागता है, तब सब सृष्टि उत्पन्न होती है और समस्त जीव पूर्वकर्मानुसार अपने-अपने कर्मोंमें प्रवृत्त हो जाते हैं। वह अव्यय परमात्मा सम्पूर्ण चराचर संसारको जाग्रत् और शयन दोनों अवस्थाओंद्वारा बार-बार उत्पन्न और विनष्ट करता रहता है।

परमेश्वर कल्पके प्रारम्भमें सृष्टि और कल्पके

१-यत्तन्मुखं महाबाहो पञ्चमं लोकविश्रुतम्। अष्टादश पुराणानि सेतिहासानि भारत॥
निर्गतानि ततस्तस्मान्मुखात् कुरुकुलोद्वह। तथान्याः स्मृतयश्चापि यमाद्या लोकपूजिताः॥ (ब्राह्मपर्व २। ५६-५७)

२-ओषध्यः फलपाकान्ता नानाविधफलोपगाः। अपुष्पा फलवन्तो ये ते वनस्पतयः स्मृताः॥
पुष्पिणः फलिनश्चैव वृक्षास्तूभयतः स्मृताः।
तमसा बहुरूपेण वेष्टिताः कर्महेतुना॥
अन्तःसंज्ञा भवन्त्येते सुखदुःखसमन्विताः। (ब्राह्मपर्व २। ७३—७६)

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

अन्तमें प्रलय करते हैं। कल्प परमेश्वरका दिन है। इस कारण परमेश्वरके दिनमें सृष्टि और रात्रिमें प्रलय होता है। हे राजा शतानीक! अब आप काल-गणनाको सुनें—

अठारह निमेष (पलक गिरनेके समयको निमेष कहते हैं)-की एक काष्ठा होती है अर्थात् जितने समयमें अठारह बार पलकोंका गिरना हो, उतने कालको काष्ठा कहते हैं। तीस काष्ठाकी एक कला, तीस कलाका एक क्षण, बारह क्षणका एक मुहूर्त, तीस मुहूर्तका एक दिन-रात, तीस दिन-रातका एक महीना, दो महीनोंकी एक ऋतु, तीन ऋतुका एक अयन तथा दो अयनोंका एक वर्ष होता है। इस प्रकार सूर्यभगवान्के द्वारा दिन-रात्रिका काल-विभाग होता है। सम्पूर्ण जीव रात्रिको विश्राम करते हैं और दिनमें अपने-अपने कर्ममें प्रवृत्त होते हैं।

पितरोंका दिन-रात मनुष्योंके एक महीनेके बराबर होता है अर्थात् शुक्ल पक्षमें पितरोंकी रात्रि और कृष्ण पक्षमें दिन होता है। देवताओंका एक अहोरात्र (दिन-रात) मनुष्योंके एक वर्षके बराबर होता है अर्थात् उत्तरायण दिन तथा दक्षिणायन रात्रि कही जाती है। हे राजन्! अब आप ब्रह्माजीके रात-दिन और एक-एक युगके प्रमाणको सुनें— सत्ययुग चार हजार वर्षका है, उसके संध्यांशके चार सौ वर्ष तथा संध्याके चार सौ वर्ष मिलाकर इस प्रकार चार हजार आठ सौ दिव्य वर्षोंका एक सत्ययुग होता है*। इसी प्रकार त्रेतायुग तीन हजार वर्षोंका तथा संध्या और संध्यांशके छः सौ वर्ष कुल तीन हजार छः सौ वर्ष, द्वापर दो हजार वर्षोंका संध्या तथा संध्यांशके चार सौ वर्ष कुल दो हजार चार सौ वर्ष तथा कलियुग एक हजार वर्ष तथा संध्या और संध्यांशके दो सौ वर्ष मिलाकर बारह सौ वर्षोंके मानका होता है। ये सब दिव्य वर्ष मिलाकर बारह हजार दिव्य वर्ष होते हैं। यही देवताओंका एक युग कहलाता है।

देवताओंके हजार युग होनेसे ब्रह्माजीका एक दिन होता है और यही प्रमाण उनकी रात्रिका है। जब ब्रह्माजी अपनी रात्रिके अन्तमें सोकर उठते हैं तब सत्-असत्-रूप मनको उत्पन्न करते हैं। वह मन सृष्टि करनेकी इच्छासे विकारको प्राप्त होता है, तब उससे प्रथम आकाशतत्त्व उत्पन्न होता है। आकाशका गुण शब्द कहा गया है। विकारयुक्त आकाशसे सब प्रकारके गन्धको वहन करनेवाले पवित्र वायुकी उत्पत्ति होती है, जिसका गुण स्पर्श है। इसी प्रकार विकारवान् वायुसे अन्धकारका नाश करनेवाला प्रकाशयुक्त तेज उत्पन्न होता है, जिसका गुण रूप है। विकारवान् तेजसे जल, जिसका गुण रस है और जलसे गन्धगुणवाली पृथ्वी उत्पन्न होती है। इसी प्रकार सृष्टिका क्रम चलता रहता है।

* एक संक्रान्तिसे दूसरी सूर्य-संक्रान्तितकके समयको सौर मास कहते हैं। बारह सौर मासोंका एक सौर वर्ष होता है और मनुष्य-मानका यही एक सौर वर्ष देवताओंका एक अहोरात्र होता है। ऐसे ही तीस अहोरात्रोंका एक मास और बारह मासोंका एक दिव्य वर्ष होता है।

दोनों संध्याओंसहित युगोंका मान	दिव्य वर्षोंमें	सौर वर्षोंमें
१-सत्ययुगका मान	४,८००	१७,२८,०००
२-त्रेतायुगका मान	३,६००	१२,९६,०००
३-द्वापरयुगका मान	२,४००	८,६४,०००
४-कलियुगका मान	१,२००	४,३२,०००
महायुग या एक चतुर्युगी—	१२,०००	४३,२०,००० वर्ष

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

पूर्वमें बारह हजार दिव्य वर्षोंका जो एक दिव्य युग बताया गया है, वैसे ही एकहत्तर युग होनेसे एक मन्वन्तर होता है। ब्रह्माजीके एक दिनमें चौदह मन्वन्तर व्यतीत होते हैं।

सत्ययुगमें धर्मके चारों पाद वर्तमान रहते हैं अर्थात् सत्ययुगमें धर्म चारों चरणोंसे (अर्थात् सर्वाङ्गपूर्ण) रहता है। फिर त्रेता आदि युगोंमें धर्मका बल घटनेसे धर्म क्रमसे एक-एक चरण घटता जाता है, अर्थात् त्रेतामें धर्मके तीन चरण, द्वापरमें दो चरण तथा कलियुगमें धर्मका एक ही चरण बचा रहता है और तीन चरण अधर्मके रहते हैं। सत्ययुगके मनुष्य धर्मात्मा, नीरोग, सत्यवादी होते हुए चार सौ वर्षोंतक जीवन धारण करते हैं। फिर त्रेता आदि युगोंमें इन सभी वर्षोंका एक चतुर्थांश न्यून हो जाता है, यथा त्रेताके मनुष्य तीन सौ वर्ष, द्वापरके दो सौ वर्ष तथा कलियुगके एक सौ वर्षतक जीवन धारण करते हैं। इन चारों युगोंके धर्म भी भिन्न-भिन्न होते हैं। सत्ययुगमें तपस्या, त्रेतामें ज्ञान, द्वापरमें यज्ञ और कलियुगमें दान प्रधान धर्म माना गया है।

परम द्युतिमान् परमेश्वरने सृष्टिकी रक्षाके लिये अपने मुख, भुजा, ऊरु और चरणोंसे क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र—इन चार वर्णोंको उत्पन्न किया और उनके लिये अलग-अलग कर्मोंकी कल्पना की। ब्राह्मणोंके लिये पढ़ना-पढ़ाना, यज्ञ करना यज्ञ कराना तथा दान देना और दान लेना—ये छः कर्म निश्चित किये गये हैं। पढ़ना, यज्ञ करना, दान देना तथा प्रजाओंका पालन आदि कर्म क्षत्रियोंके लिये नियत किये गये हैं। पढ़ना, यज्ञ करना, दान देना, पशुओंकी रक्षा करना, खेती-व्यापारसे धनार्जन करना—ये काम वैश्योंके लिये निर्धारित किये गये और इन तीनों वर्णोंकी सेवा करना—यह एक मुख्य कर्म शूद्रोंका नियत किया गया है।

पुरुषकी देहमें नाभिसे ऊपरका भाग अत्यन्त पवित्र माना गया है। उसमें भी मुख प्रधान है। ब्राह्मण ब्रह्माके मुख (उत्तमाङ्ग)-से उत्पन्न हुआ है, इसलिये ब्राह्मण सबसे उत्तम हैं, यह वेदकी वाणी है। ब्रह्माजीने बहुत कालतक तपस्या करके सबसे पहले देवता और पितरोंको हव्य तथा कव्य पहुँचानेके लिये और सम्पूर्ण संसारकी रक्षा करने-हेतु ब्राह्मणको उत्पन्न किया। शिरोभागसे उत्पन्न होने और वेदको धारण करनेके कारण सम्पूर्ण संसारका स्वामी धर्मतः ब्राह्मण ही है। सब भूतों (स्थावर-जङ्गमरूप पदार्थों)-में प्राणी (कीट आदि) श्रेष्ठ हैं, प्राणियोंमें बुद्धिसे व्यवहार करनेवाले पशु आदि श्रेष्ठ हैं। बुद्धि रखनेवाले जीवोंमें मनुष्य श्रेष्ठ हैं और मनुष्योंमें ब्राह्मण, ब्राह्मणोंमें विद्वान्, विद्वानोंमें कृतबुद्धि और कृतबुद्धियोंमें कर्म करनेवाले तथा इनसे ब्रह्मवेत्ता—ब्रह्मज्ञानी श्रेष्ठ हैं। ब्राह्मणका जन्म धर्म-सम्पादन करनेके लिये है और धर्माचरणसे ब्राह्मण ब्रह्मत्व तथा ब्रह्मलोकको प्राप्त करता है।

राजा शतानीकने पूछा—हे महामुने! ब्रह्मलोक और ब्रह्मत्व अति दुर्लभ हैं, फिर ब्राह्मणमें कौनसे ऐसे गुण होते हैं, जिनके कारण वह इन्हें प्राप्त करता है। कृपाकर आप इसका वर्णन करें।

सुमन्तु मुनि बोले—हे राजन्! आपने बहुत ही उत्तम बात पूछी है, मैं आपको वे बातें बताता हूँ, उन्हें ध्यानपूर्वक सुनें।

जिस ब्राह्मणके वेदादि शास्त्रोंमें निर्दिष्ट गर्भाधान, पुंसवन आदि अड़तालीस संस्कार विधिपूर्वक हुए हों, वही ब्राह्मण ब्रह्मलोक और ब्रह्मत्वको प्राप्त करता है। संस्कार ही ब्रह्मत्व-प्राप्तिका मुख्य कारण है, इसमें कोई संदेह नहीं।

राजा शतानीकने पूछा—महात्मन्! वे संस्कार कौनसे हैं, इस विषयमें मुझे महान् कौतूहल हो रहा है। कृपाकर आप इन्हें बतायें।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सुमन्तुजी बोले—राजन्! वेदादि शास्त्रोंमें जिन संस्कारोंका निर्देश हुआ है, उनका मैं वर्णन करता हूँ—गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, अन्नप्राशन, चूडाकर्म, उपनयन, चार प्रकारके वेदव्रत, वेदस्नान, विवाह, पञ्चमहायज्ञ (जिनसे देवता, पितरों, मनुष्य, भूत और ब्रह्मकी तृप्ति होती है), सप्तपाकयज्ञ-संस्था—अष्टकाद्वय, पार्वण, श्रावणी, आग्रहायणी, चैत्री (शूलगव) तथा आश्वयुजी, सप्तहविर्यज्ञ-संस्था—अग्न्याधान, अग्निहोत्र, दर्श-पौर्णमास, चातुर्मास्य, निरूढ-पशुबन्ध, सौत्रामणी और सप्तसोम-संस्था—अग्निष्टोम, अत्यग्निष्टोम, उक्थ्य, षोडशी, वाजपेय, अतिरात्र और आप्तोर्याम—ये चालीस ब्राह्मणके संस्कार हैं। इनके साथ ही ब्राह्मणमें आठ आत्मगुण भी अवश्य होने चाहिये, जिससे ब्रह्मकी प्राप्ति होती है। ये आठ गुण इस प्रकार हैं—

अनसूया दया क्षान्तिरनायासं च मङ्गलम्।
अकार्पण्यं तथा शौचमस्पृहा च कुरूद्वह॥

(ब्राह्मपर्व २। १५५)

'अनसूया (दूसरोंके गुणोंमें दोष-बुद्धि नहीं रखना), दया, क्षमा, अनायास (किसी सामान्य बातके पीछे जानकी बाजी न लगाना), मङ्गल (माङ्गलिक वस्तुओंका धारण), अकार्पण्य (दीन वचन नहीं बोलना और अत्यन्त कृपण न बनना), शौच (बाह्याभ्यन्तरकी शुद्धि) और अस्पृहा—ये आठ आत्मगुण हैं।' इनकी पूरी परिभाषा इस प्रकार है—

गुणीके गुणोंको न छिपाना अर्थात् प्रकट करना, अपने गुणोंको प्रकट न करना तथा दूसरेके दोषोंको देखकर प्रसन्न न होना **अनसूया** है। अपने-परायेमें, मित्र और शत्रुमें अपने समान व्यवहार करना और दूसरेका दुःख दूर करनेकी इच्छा रखना **दया** है। मन, वचन अथवा शरीरसे कोई दुःख भी पहुँचाये तो उसपर क्रोध और वैर न करना **क्षान्ति** है। अभक्ष्य वस्तुका भक्षण न करना, निन्दित पुरुषोंका सङ्ग न करना और सदाचरणमें स्थित रहना **शौच** कहा जाता है। जिन शुभ कर्मोंके करनेसे शरीरको कष्ट होता है, उस कर्मको हठात् नहीं करना चाहिये, यह **अनायास** है। नित्य अच्छे कार्योंको करना और बुरे कर्मोंका परित्याग करना—यह **मङ्गल**-गुण कहलाता है। बड़े कष्ट एवं परिश्रमसे न्यायोपार्जित धनसे उदारतापूर्वक थोड़ा-बहुत नित्य दान करना **अकार्पण्य** है। ईश्वरकी कृपासे प्राप्त थोड़ी-सी सम्पत्तिमें भी संतुष्ट रहना और दूसरेके धनकी किंचित् भी इच्छा न रखना **अस्पृहा** है*। इन आठ गुणों और पूर्वोक्त संस्कारोंसे जो ब्राह्मण संस्कृत हो वह ब्रह्मलोक तथा ब्रह्मत्वको प्राप्त करता है। जिसकी गर्भ-शुद्धि हो, सब संस्कार विधिवत् सम्पन्न हुए हों और वह वर्णाश्रम-धर्मका पालन करता हो तो उसे अवश्य मुक्ति प्राप्त होती है। (अध्याय १-२)

---

* न गुणान् गुणिनो हन्ति न स्तौत्यात्मगुणानपि। प्रहृष्यते नान्यदोषैरनसूया प्रकीर्तिता॥
अपरे बन्धुवर्गे वा मित्रे द्वेष्टरि वा सदा। आत्मवद्वर्तनं यत् स्यात् सा दया परिकीर्तिता॥
वाचा मनसि काये च दुःखेनोत्पादितेन च। न कुप्यति न चाप्रीतिः सा क्षमा परिकीर्तिता॥
अभक्ष्यपरिहारश्च संसर्गश्चाप्यनिन्दितैः। आचारे च व्यवस्थानं शौचमेतत् प्रकीर्तितम्॥
शरीरं पीड्यते येन शुभेनापि च कर्मणा। अत्यन्तं तन्न कुर्वीत अनायासः स उच्यते॥
प्रशस्ताचरणं नित्यमप्रशस्तविवर्जनम्। एतद्धि मङ्गलं प्रोक्तं मुनिभिर्ब्रह्मवादिभिः॥
स्तोकादपि प्रदातव्यमदीनेनान्तरात्मना। अहन्यहनि यत्किंचिदकार्पण्यं तदुच्यते॥
यथोत्पन्नेन संतुष्टः स्वल्पेनाप्यथ वस्तुना। अहिंसया परस्वेषु साऽस्पृहा परिकीर्तिता॥ (ब्राह्मपर्व २। १५७—१६४)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

गर्भाधानसे यज्ञोपवीतपर्यन्त संस्कारोंकी संक्षिप्त विधि, अन्नप्रशंसा तथा भोजन-विधिके प्रसंगमें धनवर्धनकी कथा, हाथोंके तीर्थ एवं आचमन-विधि

राजा शतानीकने कहा—हे मुने! आपने मुझे जातकर्मादि संस्कारोंके विषयमें बताया, अब आप इन संस्कारोंके लक्षण तथा चारों वर्ण एवं आश्रमके धर्म बतलानेकी कृपा करें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, अन्नप्राशन, चूडाकर्म तथा यज्ञोपवीत आदि संस्कारोंके करनेसे द्विजातियोंके बीज-सम्बन्धी तथा गर्भ-सम्बन्धी सभी दोष निवृत्त हो जाते हैं। वेदाध्ययन, व्रत, होम, त्रैविद्य व्रत, देवर्षि-पितृ-तर्पण, पुत्रोत्पादन, पञ्च महायज्ञ और ज्योतिष्टोमादि यज्ञोंके द्वारा यह शरीर ब्रह्म-प्राप्तिके योग्य हो जाता है। अब इन संस्कारोंकी विधिको आप संक्षेपमें सुनें—

पुरुषका जातकर्म-संस्कार नालच्छेदनसे पहिले किया जाता है। इसमें वेदमन्त्रोंके उच्चारणपूर्वक बालकको सुवर्ण, मधु और घृतका प्राशन कराया जाता है। दसवें दिन, बारहवें दिन, अठारहवें दिन अथवा एक मास पूरा होनेपर शुभ तिथि-मुहूर्त और शुभ नक्षत्रमें नामकरण-संस्कार किया जाता है। ब्राह्मणका नाम मङ्गलवाचक रखना चाहिये, जैसे शिवशर्मा। क्षत्रियका बलवाचक जैसे इन्द्रवर्मा। वैश्यका धनयुक्त जैसे धनवर्धन और शूद्रका भी यथाविधि देवदासादि नाम रखना चाहिये। स्त्रियोंका नाम ऐसा रखना चाहिये, जिसके बोलनेमें कष्ट न हो, क्रूर न हो, अर्थ स्पष्ट और अच्छा हो, जिसके सुननेसे मन प्रसन्न हो तथा मङ्गलसूचक एवं आशीर्वादयुक्त हो और जिसके अन्तमें आकार, ईकार आदि दीर्घ स्वर हों। जैसे यशोदादेवी आदि।

जन्मसे बारहवें दिन अथवा चतुर्थ मासमें बालकको घरसे बाहर निकालना चाहिये, इसे निष्क्रमण कहते हैं। छठे मासमें बालकका अन्नप्राशन-संस्कार करना चाहिये। पहले या तीसरे वर्षमें मुण्डन-संस्कार करना चाहिये। गर्भसे आठवें वर्षमें ब्राह्मणका, ग्यारहवें वर्षमें क्षत्रियका और बारहवें वर्षमें वैश्यका यज्ञोपवीत-संस्कार करना चाहिये। परंतु ब्रह्मतेजकी इच्छावाला ब्राह्मण पाँचवें वर्षमें, बलकी इच्छावाला क्षत्रिय छठे वर्षमें और धनकी कामनावाला वैश्य आठवें वर्षमें अपने-अपने बालकोंका उपनयन-संस्कार सम्पन्न करे। सोलह वर्षतक ब्राह्मण, बाईस वर्षतक क्षत्रिय और चौबीस वर्षतक वैश्य गायत्री (सावित्री)-के अधिकारी रहते हैं, इसके अनन्तर यथासमय संस्कार न होनेसे गायत्रीके अधिकारी नहीं रहते और वे 'व्रात्य' कहलाते हैं। फिर जबतक व्रात्यस्तोम नामक यज्ञसे उनकी शुद्धि नहीं की जाती, तबतक उनका शरीर गायत्री-दीक्षाके योग्य नहीं बनता। इन व्रात्योंके साथ आपत्तिमें भी वेदादि शास्त्रोंका पठन-पाठन अथवा विवाह आदिका सम्बन्ध नहीं रखना चाहिये।

त्रैवर्णिक ब्रह्मचारियोंको उत्तरीयके रूपमें क्रमशः कृष्ण (कस्तूरी)-मृगचर्म, रुरु नामक मृगका चर्म और बकरेका चर्म धारण करना चाहिये। इसी प्रकार क्रमशः सन (टाट), अलसी और भेड़के ऊनका वस्त्र धारण करना चाहिये। ब्राह्मण ब्रह्मचारीके लिये तीन लड़ीवाली सुन्दर चिकनी मूँजकी, क्षत्रियके लिये मूर्वा (मुरा)-की और वैश्यके लिये सनकी मेखला कही गयी है। मूँज आदिके प्राप्त न होनेपर क्रमशः कुशा, अश्मन्तक और बल्वज नामक

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

तृणकी मेखलाको तीन लड़ीवाली करके एक, तीन अथवा पाँच ग्रन्थियाँ उसमें लगानी चाहिये। ब्राह्मण कपासके सूतका, क्षत्रिय सनके सूतका और वैश्य भेड़के ऊनका यज्ञोपवीत धारण करे। ब्राह्मण बिल्व, पलाश या प्लक्षका दण्ड, जो सिरपर्यन्त हो उसे धारण करे। क्षत्रिय बड़, खदिर या बेंतके काष्ठका मस्तकपर्यन्त ऊँचा और वैश्य पैलव (पीलू वृक्षकी लकड़ी), गूलर अथवा पीपलके काष्ठका दण्ड नासिकापर्यन्त ऊँचा धारण करे। ये दण्ड सीधे, छिद्ररहित और सुन्दर होने चाहिये। यज्ञोपवीत-संस्कारमें अपना-अपना दण्ड धारणकर भगवान् सूर्यनारायणका उपस्थान करे और गुरुकी पूजा करे तथा नियमके अनुसार सर्वप्रथम माता, बहिन या मौसीसे भिक्षा माँगे। भिक्षा माँगते समय उपनीत ब्राह्मण वटु भिक्षा देनेवालीसे '**भवति! भिक्षां मे देहि**', क्षत्रिय '**भिक्षां भवति! मे देहि**' तथा वैश्य '**भिक्षां देहि मे भवति!**'—इस प्रकारसे '**भवति**' शब्दका प्रयोग करे। भिक्षामें वे सुवर्ण, चाँदी अथवा अन्न ब्रह्मचारीको दें। इस प्रकार भिक्षा ग्रहणकर ब्रह्मचारी उसे गुरुको निवेदित कर दे और गुरुकी आज्ञा पाकर पूर्वाभिमुख हो आचमन कर भोजन करे। पूर्वकी ओर मुख करके भोजन करनेसे आयु, दक्षिण-मुख करनेसे यश, पश्चिम-मुख करनेसे लक्ष्मी और उत्तर-मुख करके भोजन करनेसे सत्यकी अभिवृद्धि होती है। एकाग्रचित्त हो उत्तम अन्नका भोजन करनेके अनन्तर आचमन कर अङ्गों (आँख, कान, नाक)-का जलसे स्पर्श करे। अन्नकी नित्य स्तुति करनी चाहिये और अन्नकी निन्दा किये बिना भोजन करना चाहिये। उसका दर्शन कर संतुष्ट एवं प्रसन्न होना चाहिये। हर्षसे भोजन करना चाहिये। पूजित अन्नके भोजनसे बल और तेजकी वृद्धि होती है और निन्दित अन्नके भोजनसे बल और तेज दोनोंकी हानि होती है*। इसीलिये सर्वदा उत्तम अन्नका भोजन करना चाहिये। उच्छिष्ट (जूठा) किसीको नहीं देना चाहिये तथा स्वयं भी किसीका उच्छिष्ट नहीं खाना चाहिये। भोजन करके जिस अन्नको छोड़ दे उसे फिर ग्रहण न करे अर्थात् बार-बार छोड़-छोड़कर भोजन न करे, एक बार बैठकर तृप्तिपूर्वक भोजन कर लेना चाहिये। जो पुरुष बीच-बीचमें विच्छेद करके लोभवश भोजन करता है, उसके दोनों लोक नष्ट हो जाते हैं, जैसे धनवर्धन वैश्यके हुए थे।

राजा शतानीकने पूछा— महाराज! आप धनवर्धन वैश्यकी कथा सुनाइये। उसने कैसा भोजन किया और उसका क्या परिणाम हुआ?

सुमन्तु मुनिने कहा— राजन्! सत्ययुगकी बात है, पुष्करक्षेत्रमें धन-धान्यसे सम्पन्न धनवर्धन नामक एक वैश्य रहता था। एक दिन वह ग्रीष्म-ऋतुमें मध्याह्नके समय वैश्वदेव-कर्म सम्पन्न कर अपने पुत्र, मित्र तथा बन्धु-बान्धवोंके साथ भोजन कर रहा था। इतनेंमें ही अकस्मात् उसे बाहरसे एक करुण शब्द सुनायी पड़ा। उस शब्दको सुनते ही वह दयावश भोजनको छोड़कर बाहरकी ओर दौड़ा। किंतु जबतक वह बाहर पहुँचा वह आवाज बंद हो गयी। फिर लौटकर उस वैश्यने पात्रमें जो छोड़ा हुआ भोजन था उसे खा लिया। भोजन करते ही उस वैश्यकी मृत्यु हो गयी और इसी अपराधवश परलोकमें भी उसकी दुर्गति हुई। इसलिये छोड़े हुए भोजनको फिर कभी नहीं खाना चाहिये। अधिक भोजन भी नहीं करना चाहिये। इससे शरीरमें

* तथान्नं पूजयेन्नित्यमद्याच्चैतदकुत्सयन्। दर्शनात् तस्य हृष्येद् वै प्रसीदेच्चापि भारत॥
पूजितं त्वशनं नित्यं बलमोजश्च यच्छति॥
अपूजितं तु तद्भुक्तमुभयं नाशयेदिदम्। (ब्राह्मपर्व ३। ३७—३९)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

अत्यधिक रसकी उत्पत्ति होती है, जिससे प्रतिश्याय (जुकाम, मन्दाग्नि, ज्वर) आदि अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं। अजीर्ण हो जानेसे स्नान, दान, तप, होम, तर्पण, पूजा आदि कोई भी पुण्य कर्म ठीकसे सम्पन्न नहीं हो पाते। अति भोजन करनेसे अनेक रोग उत्पन्न होते हैं—आयु घटती है, लोकमें निन्दा होती है तथा अन्तमें सद्गति भी नहीं होती। उच्छिष्ट मुखसे कहीं नहीं जाना चाहिये। सदा पवित्रतासे रहना चाहिये। पवित्र मनुष्य यहाँ सुखसे रहता है और अन्तमें स्वर्गमें जाता है।

राजाने पूछा—मुनीश्वर! ब्राह्मण किस कर्मके करनेसे पवित्र होता है? इसका आप वर्णन करें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! जो ब्राह्मण विधिपूर्वक आचमन करता है, वह पवित्र हो जाता है और सत्कर्मोंका अधिकारी हो जाता है। आचमनकी विधि यह है कि हाथ-पाँव धोकर पवित्र स्थानमें आसनके ऊपर पूर्व अथवा उत्तरकी ओर मुख करके बैठे। दाहिने हाथको जानुके भीतर रखकर दोनों चरण बराबर रखे तथा शिखामें ग्रन्थि लगाये और फिर उष्णता एवं फेनसे रहित शीतल एवं निर्मल जलसे आचमन करे। खड़े-खड़े, बात करते, इधर-उधर देखते हुए, शीघ्रतासे और क्रोधयुक्त होकर आचमन न करे।

हे राजन्! ब्राह्मणके दाहिने हाथमें पाँच तीर्थ कहे गये हैं—(१) देवतीर्थ, (२) पितृतीर्थ, (३) ब्राह्मतीर्थ, (४) प्राजापत्यतीर्थ और (५) सौम्यतीर्थ। अब आप इनके लक्षणोंको सुनें—अँगूठेके मूलमें ब्राह्मतीर्थ, कनिष्ठाके मूलमें प्राजापत्यतीर्थ, अङ्गुलियोंके अग्रभागमें देवतीर्थ, तर्जनी और अङ्गुष्ठके बीचमें पितृतीर्थ और हाथके मध्य-भागमें सौम्यतीर्थ

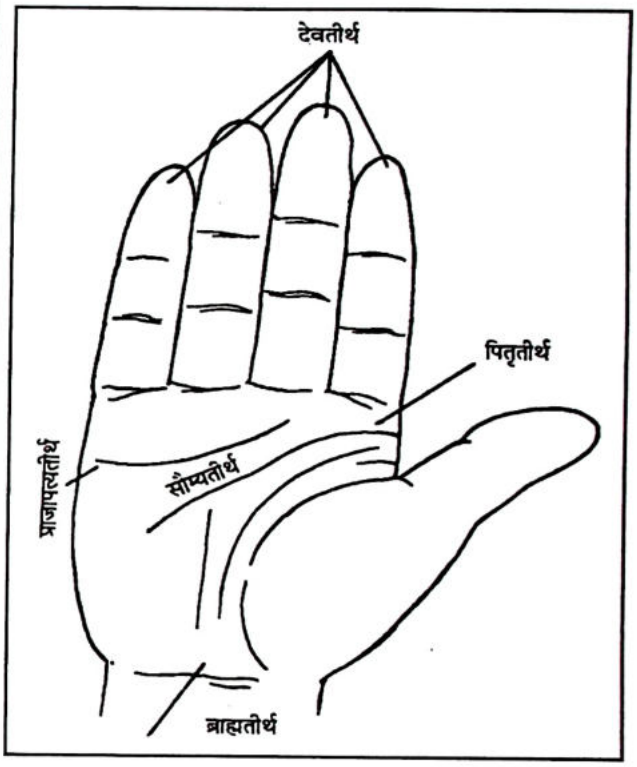

कहा जाता है, जो देवकर्ममें प्रशस्त माना गया है*। देवार्चा, ब्राह्मणको दक्षिणा आदि कर्म देवतीर्थसे; तर्पण, पिण्डदानादि कर्म पितृतीर्थसे; आचमन ब्राह्मतीर्थसे; विवाहके समय लाजाहोमादि और सोमपान प्राजापत्यतीर्थसे; कमण्डलुग्रहण, दधिप्राशनादि कर्म सौम्यतीर्थसे करे। ब्राह्मतीर्थसे उपस्पर्शन सदा श्रेष्ठ माना गया है।

अङ्गुलियोंको मिलाकर एकाग्रचित्त हो, पवित्र जलसे बिना शब्द किये तीन बार आचमन करनेसे महान् फल होता है और देवता प्रसन्न होते हैं। प्रथम आचमनसे ऋग्वेद, द्वितीयसे यजुर्वेद और तृतीयसे सामवेदकी तृप्ति होती है तथा आचमन करके जलयुक्त दाहिने अँगूठेसे मुखका स्पर्श करनेसे अथर्ववेदकी तृप्ति होती है। ओष्ठके मार्जनसे इतिहास और पुराणोंकी तृप्ति होती है। मस्तकमें अभिषेक करनेसे भगवान्

* अङ्गुष्ठमूलोत्तरतो येयं रेखा महीपते॥
ब्राह्मं तीर्थं वदन्त्येतद्वसिष्ठाद्या द्विजोत्तमाः। कायं कनिष्ठिकामूले अङ्गुल्यग्रे तु दैवतम्॥
तर्जन्यङ्गुष्ठयोरन्तः पित्र्यं तीर्थमुदाहृतम्। करमध्ये स्थितं सौम्यं प्रशस्तं देवकर्मणि॥ (ब्राह्मपर्व ३।६३—६५)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

रुद्र प्रसन्न होते हैं। शिखाके स्पर्शसे ऋषिगण, दोनों आँखोंके स्पर्शसे सूर्य, नासिकाके स्पर्शसे वायु, कानोंके स्पर्शसे दिशाएँ, भुजाके स्पर्शसे यम, कुबेर, वरुण, इन्द्र तथा अग्निदेव तृप्त होते हैं। नाभि और प्राणोंकी ग्रन्थियोंके स्पर्श करनेसे सभी तृप्त हो जाते हैं। पैर धोनेसे विष्णुभगवान्, भूमिमें जल छोड़नेसे वासुकि आदि नाग तथा बीचमें जो जलबिन्दु गिरते हैं, उनसे चार प्रकारके भूतग्रामकी तृप्ति होती है।

अङ्गुष्ठ और तर्जनीसे नेत्र, अङ्गुष्ठ तथा अनामिकासे नासिका, अङ्गुष्ठ एवं मध्यमासे मुख, अङ्गुष्ठ और कनिष्ठकासे कान, सब अङ्गुलियोंसे भुजाओंका, अङ्गुष्ठसे नाभिमण्डल तथा सभी अङ्गुलियोंसे सिरका स्पर्श करना चाहिये। अङ्गुष्ठ अग्निरूप है, तर्जनी वायुरूप, मध्यमा प्रजापतिरूप, अनामिका सूर्यरूप और कनिष्ठिका इन्द्ररूप है[१]।

इस विधिसे ब्राह्मणके आचमन करनेपर सम्पूर्ण जगत्, देवता और लोक तृप्त हो जाते हैं। ब्राह्मण सदा पूजनीय है, क्योंकि वह सर्वदेवमय है।

ब्राह्मतीर्थ, प्राजापत्यतीर्थ अथवा देवतीर्थसे आचमन करे, परंतु पितृतीर्थसे कभी भी आचमन नहीं करना चाहिये। आचमनका जल हृदयतक जानेसे ब्राह्मणकी, कण्ठतक जानेसे क्षत्रियकी और वैश्यकी जलके प्राशनसे तथा शूद्रकी जलके स्पर्शमात्रसे शुद्धि हो जाती है।

दाहिने हाथके नीचे और बायें कंधेपर यज्ञोपवीत रहनेसे द्विज उपवीती (सव्य) कहलाता है, इसके विलोम रहनेसे अर्थात् यज्ञोपवीतके दाहिने कंधेसे बायीं ओर रहनेसे प्राचीनावीती (अपसव्य) तथा गलेमें मालाकी तरह यज्ञोपवीत रहनेसे निवीती कहा जाता है।

मेखला, मृगछाला, दण्ड, यज्ञोपवीत और कमण्डलु—इनमें कोई भी चीज भग्न हो जाय तो उसे जलमें विसर्जित कर मन्त्रोच्चारणपूर्वक दूसरा धारण करना चाहिये। उपवीती (सव्य) होकर और दाहिने हाथको जानु अर्थात् घुटनेके भीतर रखकर जो ब्राह्मण आचमन करता है वह पवित्र हो जाता है। ब्राह्मणके हाथकी रेखाओंको गङ्गा आदि नदियोंके समान पवित्र समझना चाहिये और अङ्गुलियोंके जो पर्व हैं, वे हिमालय आदि देवपर्वत माने जाते हैं। इसलिये ब्राह्मणका दाहिना हाथ सर्वदेवमय है और इस विधिसे आचमन करनेवाला अन्तमें स्वर्गलोकको प्राप्त करता है[२]। (अध्याय ३)

वेदाध्ययन-विधि, ओंकार तथा गायत्री-माहात्म्य, आचार्यादि-लक्षण, ब्रह्मचारिधर्म-निरूपण, अभिवादन-विधि, स्नातककी महिमामें अङ्गिरापुत्रका आख्यान, माता-पिता और गुरुकी महिमा

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! ब्राह्मणका केशान्त (समावर्तन)-संस्कार सोलहवें वर्षमें, क्षत्रियका बाईसवें वर्षमें तथा वैश्यका पचीसवें वर्षमें करना चाहिये। स्त्रियोंके संस्कार अमन्त्रक करने चाहिये। केशान्त-संस्कार होनेके अनन्तर चाहे तो गुरु-गृहमें रहे अथवा अपने घरमें आकर विवाह कर अग्निहोत्र ग्रहण करे। स्त्रियोंके लिये मुख्य संस्कार विवाह है।

१- अङ्गुष्ठोऽग्निर्महाबाहो प्रोक्तो वायुः प्रदेशिनी॥
अनामिका तथा सूर्यः कनिष्ठा मघवा विभो। प्रजापतिर्मध्यमा ज्ञेया तस्माद् भरतसत्तम॥ (ब्राह्मपर्व ३। ८४-८५)

२- यास्त्वेताः करमध्ये तु रेखा विप्रस्य भारत॥
गङ्गाद्याः सरितः सर्वा ज्ञेया भरतसत्तम। यान्यङ्गुलिषु पर्वाणि गिरयस्तानि विद्धि वै॥
सर्वदेवमयो राजन् करो विप्रस्य दक्षिणः। (ब्राह्मपर्व ३। ९२—९४)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

राजन्! यहाँतक मैंने उपनयनका विधान बतलाया। अब आगेका कर्म बताते हैं, उसे आप सुनें। शिष्यका यज्ञोपवीत कर गुरु पहले उसको शौच, आचार, संध्योपासन, अग्निकार्य सिखाये और वेदका अध्ययन कराये। शिष्य भी आचमन कर उत्तराभिमुख हो ब्रह्माञ्जलि बाँधकर एकाग्रचित्त हो प्रसन्न-मनसे वेदाध्ययनके लिये बैठे। पढ़नेके आरम्भ तथा अन्तमें गुरुके चरणोंकी वन्दना करे। पढ़नेके समय दोनों हाथोंकी जो अञ्जलि बाँधी जाती है, उसे 'ब्रह्माञ्जलि' कहा जाता है। शिष्य गुरुका दाहिना चरण दाहिने हाथसे और बायाँ चरण बायें हाथसे छूकर उनको प्रणाम करे। वेदके पढ़नेके समय आदिमें और अन्तमें ओंकारका उच्चारण न करनेसे सब निष्फल हो जाता है। पहलेका पढ़ा हुआ विस्मृत हो जाता है और आगेका विषय याद नहीं होता।

पूर्वदिशामें अग्रभागवाले कुशाके आसनपर बैठकर पवित्री धारण करे तथा तीन बार प्राणायामसे पवित्र होकर ओंकारका उच्चारण करे। प्रजापतिने तीनों वेदोंके प्रतिनिधिभूत अकार, उकार और मकार—इन तीन वर्णोंको तीनों वेदोंसे निकाला है, इनसे ओंकार बनता है। **भूर्भुवः स्वः**—ये तीनों व्याहृतियाँ और गायत्रीके तीन पाद तीनों वेदोंसे निकले हैं। इसलिये जो ब्राह्मण ओंकार तथा व्याहृतिपूर्वक त्रिपदा गायत्रीका दोनों संध्याओंमें जप करता है, वह वेदपाठके पुण्यको प्राप्त करता है और जो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अपनी क्रियासे हीन होते हैं, उनकी साधु पुरुषोंमें निन्दा होती है तथा परलोकमें भी वे कल्याणके भागी नहीं होते, इसलिये अपने कर्मका त्याग नहीं करना चाहिये। प्रणव, तीन व्याहृतियाँ और त्रिपदा गायत्री—ये सब मिलकर जो मन्त्र गायत्री-मन्त्र होता है, वह ब्रह्माका मुख है। जो इस गायत्री-मन्त्रका श्रद्धा-भक्तिसे तीन वर्षतक नित्य नियमसे विधिपूर्वक जप करता है, वह वायुकी तरह वेगसम्पन्न होकर आकाशके स्वरूपको धारणकर ब्रह्मतत्त्वको प्राप्त करता है। एकाक्षर 'ॐ' परब्रह्म है, प्राणायाम परम तप है। सावित्री (गायत्री)-से बढ़कर कोई मन्त्र नहीं है और मौनसे सत्य बोलना श्रेष्ठ है। तपस्या, हवन, दान, यज्ञादि क्रियाएँ स्वरूपतः नाशवान् हैं, किंतु प्रणव-स्वरूप एकाक्षर ब्रह्म ओंकारका कभी नाश नहीं होता। विधियज्ञों (दर्श-पौर्णमास आदि)-से जपयज्ञ (प्रणवादि-जप) सदा ही श्रेष्ठ है। उपांशु-जप (जिस जपमें केवल ओठ और जीभ चलते हैं, शब्द न सुनायी पड़े) लाख गुना और उपांशु-जपसे मानस-जप हजार गुना अधिक फल देनेवाला होता है। जो पाकयज्ञ (पितृकर्म, हवन, बलिवैश्वदेव) विधि-यज्ञके बराबर हैं, वे सभी जप-यज्ञकी सोलहवीं कलाके बराबर भी नहीं हैं। ब्राह्मणको सब सिद्धि जपसे प्राप्त हो जाती है और कुछ करे या न करे, पर ब्राह्मणको गायत्री-जप अवश्य करना चाहिये।

सूर्योदयसे पूर्व जब तारे दिखायी देते रहें तभीसे प्रातः-संध्या आरम्भ कर देनी चाहिये और सूर्योदयपर्यन्त गायत्री-जप करता रहे। इसी प्रकार सूर्यास्तसे पहिले ही सायं-संध्या आरम्भ करे और तारोंके दिखायी देनेतक गायत्री-जप करता रहे। प्रातः-संध्यामें खड़े होकर जप करनेसे रात्रिके पाप नष्ट होते हैं और सायं-संध्याके समय बैठकर गायत्री-जप करनेसे दिनके पाप नष्ट होते हैं। इसलिये दोनों कालोंकी संध्या अवश्य करनी चाहिये। जो दोनों संध्याओंको नहीं करता उसे सम्पूर्ण द्विजातिके विहित कर्मोंसे बहिष्कृत कर देना चाहिये। घरके बाहर एकान्त-स्थानमें, अरण्य या नदी-सरोवर आदिके तटपर गायत्रीका जप करनेसे बहुत लाभ होता है। मन्त्रोंके जप, संध्याके मन्त्र और जो

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

ब्रह्म-यज्ञादि नित्यकर्म हैं, इनके मन्त्रोंके उच्चारणमें अनध्यायका विचार नहीं करना चाहिये अर्थात् नित्यकर्ममें अनध्याय नहीं होता।

यज्ञोपवीतके अनन्तर समावर्तन-संस्कारतक शिष्य गुरुके घरमें रहे। भूमिपर शयन करे, सब प्रकारसे गुरुकी सेवा करे और वेदाध्ययन करता रहे। सब कुछ जानते हुए भी जडवत् रहे। आचार्यका पुत्र, सेवा करनेवाला, ज्ञान देनेवाला, धार्मिक, पवित्र, विश्वासी, शक्तिमान्, उदार, साधुस्वभाव तथा अपनी जातिवाला—ये दस अध्यापनके योग्य हैं। बिना पूछे किसीसे कुछ न कहे, अन्यायसे पूछनेवालेको कुछ न बताये। जो अनुचित ढंगसे पूछता है और जो अनुचित ढंगसे उत्तर देता है, वे दोनों नरकमें जाते हैं और जगत्में सबके अप्रिय होते हैं। जिसको पढ़ानेसे धर्म या अर्थकी प्राप्ति न हो और वह कुछ सेवा-शुश्रूषा भी न करे, ऐसेको कभी न पढ़ाये, क्योंकि ऐसे विद्यार्थीको दी गयी विद्या ऊषरमें बीज-वपनके समान निष्फल होती है। विद्याके अधिष्ठातृ-देवताने ब्राह्मणसे कहा—'मैं तुम्हारी निधि हूँ, मेरी भलीभाँति रक्षा करो, मुझे ब्राह्मणों (अध्यापकों)-के गुणोंमें दोष-बुद्धि रखनेवालेको और द्वेष करनेवालेको न देना, इससे मैं बलवती रहूँगी। जो ब्राह्मण जितेन्द्रिय, पवित्र, ब्रह्मचारी और प्रमादसे रहित हो उसे मुझे देना।'

जो गुरुकी आज्ञाके बिना वेद-शास्त्र आदिको स्वयं ग्रहण करता है, वह अति भयंकर रौरव नरकको प्राप्त होता है। जो लौकिक, वैदिक अथवा आध्यात्मिक ज्ञान दे, उसे सर्वप्रथम प्रणाम करना चाहिये। जो केवल गायत्री जानता हो, पर शास्त्रकी मर्यादामें रहे वह सबसे उत्तम है, किंतु सभी वेदादि शास्त्रोंको जानते हुए भी मर्यादामें न रहे और भक्ष्याभक्ष्यका कुछ भी विचार न करे तथा सभी वस्तुओंको बेचे, वह अधम है।

गुरुके आगे, शय्या अथवा आसनपर न बैठे। यदि पहिलेसे बैठा हो तो गुरुको आते देख नीचे उतर जाय और उनका अभिवादन करे। वृद्धजनोंको आते देख छोटोंके प्राण उच्छ्वसित हो जाते हैं, इसलिये नम्रतापूर्वक खड़े होकर उन्हें प्रणाम करनेसे वे प्राण पुनः अपने स्थानपर आ जाते हैं। प्रतिदिन बड़ोंकी सेवा और उन्हें प्रणाम करनेवाले पुरुषके आयु, विद्या, यश और बल —ये चारों निरन्तर बढ़ते रहते हैं—

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि सम्यग्वर्धन्ते आयुः प्रज्ञा यशो बलम्॥

(ब्राह्मपर्व ४।५०)

अभिवादनके समय दूसरेकी स्त्रीको और जिससे किसी प्रकारका सम्बन्ध न हो उसे भवती (आप), सुभगे अथवा भगिनी (बहन) कहकर सम्बोधित करे। चाचा, मामा, ससुर, ऋत्विक् और गुरु—इनको अपना नाम लेते हुए प्रणाम करना चाहिये। मौसी, मामी, सास, बुआ (पिताकी बहन) और गुरुकी पत्नी—ये सब मान्य एवं पूज्य हैं। बड़े भाईकी सवर्णा स्त्री (भाभी)-का जो नित्य आदर करता है और उसे माताके समान समझता है, वह विष्णुलोकको प्राप्त करता है। पिताकी बहन, माताकी बहन और अपनी बड़ी बहन—ये तीनों माताके समान ही हैं। फिर भी अपनी माता—इन सबकी अपेक्षा श्रेष्ठ है। पुत्र, मित्र और भानजा (बहनका लड़का) इनको अपने समान समझना चाहिये। धन-सम्पत्ति, बन्धु, अवस्था, कर्म और विद्या—ये पाँचों महत्त्वके कारण हैं—इनमें उत्तरोत्तर एकसे दूसरा बड़ा है अर्थात् विद्या सर्वश्रेष्ठ है।

वित्तं बन्धुर्वयः कर्म विद्या भवति पञ्चमी।
एतानि मान्यस्थानानि गरीयो यद्यदुत्तरम्॥

(ब्राह्मपर्व ४।७०)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

रथ आदि यानपर चढ़े हुए, अतिवृद्ध, रोगी, भारयुक्त, स्त्री, स्नातक (जिसका समावर्तन-संस्कार हो गया हो), राजा और वर (दूल्हा) यदि सामनेसे आते हों तो इन्हें मार्ग पहले देना चाहिये। ये सभी यदि एक साथ आते हों तो स्नातक और राजा मान्य हैं। इन दोनोंमेंसे भी स्नातक विशेष मान्य है[१]।

जो ब्राह्मण शिष्यका उपनयन कराकर रहस्य (यज्ञ, विद्या और उपनिषद्) तथा कल्पसहित वेदाध्ययन कराता है, उसे आचार्य कहते हैं। जो जीविकाके निमित्त वेदका एक भाग अथवा वेदाङ्ग पढ़ाता है, वह उपाध्याय कहलाता है। जो निषेक अर्थात् गर्भाधानादि संस्कारोंको रीतिसे कराता है और अन्नादिसे पोषण करता है, उस ब्राह्मणको गुरु कहते हैं। जो अग्निष्टोम, अग्निहोत्र, पाक-यज्ञादि कर्मोंका वरण लेकर जिसके निमित्त करता है, वह उसका ऋत्विक् कहलाता है। जो पुरुष वेद-ध्वनिसे दोनों कान भर देता है, उसे माता-पिताके समान समझकर उससे कभी द्वेष नहीं करना चाहिये।

उपाध्यायसे दस गुना गौरव आचार्यका और आचार्यसे सौ गुना पिताका तथा पितासे हजार गुना गौरव माताका होता है—

उपाध्यायान्दशाचार्य आचार्याणां शतं पिता।
सहस्रेण पितुर्माता गौरवेणातिरिच्यते॥

(ब्राह्मपर्व ४।७९)

जन्म देनेवाला और वेद पढ़ानेवाला—ये दोनों पिता हैं, किंतु इनमें भी वेदाध्ययन करानेवाला श्रेष्ठ है, क्योंकि ब्राह्मणका मुख्य जन्म तो वेद पढ़नेसे ही होता है। इसलिये उपाध्याय आदि जितने पूज्य हैं, उनमें सबसे अधिक गौरव महागुरुका ही होता है।

राजा शतानीकने पूछा—हे मुने! आपने उपाध्याय आदिके लक्षण बताये, अब महागुरु किसे कहते हैं? यह भी बतानेकी कृपा करें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! जो ब्राह्मण जयोपजीवी हो अर्थात् अष्टादशपुराण, रामायण, विष्णुधर्म, शिवधर्म, महाभारत (भगवान् श्रीकृष्ण-द्वैपायन व्यासद्वारा रचित महाभारत जो पञ्चम वेदके नामसे भी विख्यात है) तथा श्रौत एवं स्मार्त-धर्म (विद्वान् लोग इन सभीको 'जय' नामसे अभिहित करते हैं)-का ज्ञाता हो, वह महागुरु कहलाता है[२]। वह सभी वर्णोंके लिये पूज्य है। जो शास्त्रद्वारा थोड़ा या बहुत उपकार करे, उसको भी उस उपकारके बदले गुरु मानना चाहिये। अवस्थामें चाहे छोटा क्यों न हो, पढ़ानेसे वह बालक वृद्धका भी पिता हो सकता है। राजन्! इस विषयमें एक प्राचीन आख्यान सुनो—

पूर्वकालमें अङ्गिरा मुनिके पुत्र बृहस्पति (बालक होनेपर भी) बड़े वृद्धोंको पढ़ाते थे और पढ़ानेके समय 'हे पुत्रो! पढ़ो' ऐसा कहते थे। बालकद्वारा 'पुत्र' सम्बोधन सुनकर उनको बड़ा क्षोभ हुआ और वे देवताओंके पास गये तथा उन्होंने सारा वृत्तान्त बतलाया। तब देवताओंने कहा—पितृगणो! उस बालकने न्यायोचित बात ही कही है, क्योंकि

१-चक्रिणो दशमीस्थस्य रोगिणो भारिणः स्त्रियाः। स्नातकस्य तु राज्ञश्च पन्था देयो वरस्य च॥
एषां समागमे तात पूज्यौ स्नातकपार्थिवौ। आभ्यां समागमे राजन् स्नातको नृपमानभाक्॥
(ब्राह्मपर्व ४।७२-७३)

२-जयोपजीवी यो विप्रः स महागुरुरुच्यते। अष्टादशपुराणानि रामस्य चरितं तथा॥
विष्णुधर्मादयो धर्माः शिवधर्माश्च भारत। कार्ष्णं वेदं पञ्चमं तु यन्महाभारतं स्मृतम्॥
श्रौता धर्माश्च राजेन्द्र नारदोक्ता महीपते। जयेति नाम एतेषां प्रवदन्ति मनीषिणः॥
(ब्राह्मपर्व ४।८६—८८)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

जो अज्ञ हो अर्थात् कुछ न जानता हो वही सच्चे अर्थमें बालक है, किंतु जो मन्त्रको देनेवाला है (वेदोंको पढ़ानेवाला है), उपदेशक है, वह युवा आदि होनेपर भी पिता होता है। अवस्था अधिक होनेसे, केश श्वेत होनेसे और बहुत वित्त तथा बन्धु-बान्धवोंके होनेसे कोई बड़ा नहीं होता, बल्कि इस विषयमें ऋषियोंने यह व्यवस्था की है कि जो विद्यामें अधिक हो, वही सबसे महान् (वृद्ध) है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रोंमें क्रमशः ज्ञान, बल, धन तथा जन्मसे बड़प्पन होता है। सिरके बाल श्वेत हो जानेसे कोई वृद्ध नहीं होता, यदि कोई युवा भी वेदादि शास्त्रोंका भलीभाँति ज्ञान प्राप्त कर ले तो उसीको वृद्ध (महान्) समझना चाहिये। जैसे काष्ठसे बना हाथी, चमड़ेसे मढ़ा मृग किसी कामका नहीं, उसी प्रकार वेदसे हीन ब्राह्मणका जन्म निष्फल है। मूर्खको दिया हुआ दान जैसे निष्फल होता है, वैसे ही वेदकी ऋचाओंको न जाननेवाले ब्राह्मणका जन्म निष्फल होता है। ऐसा ब्राह्मण नाममात्रका ब्राह्मण होता है। वेदोंका स्वयं कथन है कि जो हमें पढ़कर हमारा अनुष्ठान न करे, वह पढ़नेका व्यर्थ क्लेश उठाता है, इसलिये वेद पढ़कर वेदमें कहे हुए कर्मोंका जो अनुष्ठान करता है अर्थात् तदनुकूल आचरण करता है, उसीका वेद पढ़ना सफल है। जो वेदादि शास्त्रोंको जानकर धर्मका उपदेश करते हैं, वही उपदेश ठीक है, किंतु जो मूर्ख वेदादि शास्त्रोंको जाने बिना धर्मका उपदेश करते हैं, वे बड़े पापके भागी होते हैं। शौचरहित (अपवित्र), वेदसे रहित तथा नष्टव्रत ब्राह्मणको जो अन्न दिया जाता है, वह अन्न रोदन करता है कि 'मैंने ऐसा कौन-सा पाप किया था जो ऐसे मूर्ख ब्राह्मणके हाथ पड़ा'। तथा वही अन्न यदि जयोपजीवीको दिया जाय तो प्रसन्नतासे नाच उठता है और कहता है कि 'मेरा अहोभाग्य है, जो मैं ऐसे पात्रके हाथ आया।' विद्या और तपके अभ्याससे सम्पन्न ब्राह्मणके घरमें आनेपर सभी अन्नादि ओषधियाँ अति प्रसन्न होती हैं और कहती हैं कि अब हमारी भी सद्गति हो जायगी। व्रत, वेद और जपसे हीन ब्राह्मणको दान नहीं देना चाहिये, क्योंकि पत्थरकी नाव नदीके पार नहीं उतार सकती। इसलिये श्रोत्रियको हव्य-कव्य देनेसे देवता और पितरोंकी तृप्ति होती है। घरके समीप रहनेवाले मूर्ख ब्राह्मणसे दूर रहनेवाले विद्वान् ब्राह्मणको ही बुलाकर दान देना चाहिये। परंतु घरके समीप रहनेवाला ब्राह्मण यदि गायत्री भी जानता हो तो उसका परित्याग न करे। परित्याग करनेसे रौरव नरककी प्राप्ति होती है, क्योंकि ब्राह्मण चाहे निर्गुण हो या गुणवान्, परंतु यदि वह गायत्री जानता है तो वह परमदेव-स्वरूप है। जैसे अन्नसे रहित ग्राम, जलसे रहित कूप केवल नामधारक हैं, वैसे ही विद्याध्ययनसे रहित ब्राह्मण भी केवल नाममात्रका ब्राह्मण है।

प्राणियोंके कल्याणके लिये अहिंसा तथा प्रेमसे ही अनुशासन करना श्रेष्ठ है। धर्मकी इच्छा करनेवाले शासकको सदा मधुर तथा नम्र वचनोंका प्रयोग करना चाहिये। जिसके मन, वचन शुद्ध और सत्य हैं, वह वेदान्तमें कहे गये मोक्ष आदि फलोंको प्राप्त करता है। आर्त होनेपर भी ऐसा वचन कभी न कहे जिससे किसीकी आत्मा दुःखी हो और सुननेवालोंको अच्छा न लगे। दूसरेका अपकार करनेकी बुद्धि नहीं करनी चाहिये। पुरुषको जैसा आनन्द मीठी वाणीसे मिलता है, वैसा आनन्द न चन्द्रकिरणोंसे मिलता है, न चन्दनसे, न शीतल छायासे और न शीतल जलसे*। ब्राह्मणको

* न तथा शशी न सलिलं न चन्दनरसो न शीतलच्छाया। प्रह्लादयति च पुरुषं यथा मधुरभाषिणी वाणी॥ (ब्राह्मपर्व ४। १२८)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

चाहिये कि सम्मानकी इच्छाको भयंकर विषके समान समझकर उससे डरता रहे और अपमानको अमृतके समान स्वीकार करे, क्योंकि जिसकी अवमानना होती है, उसकी कुछ हानि नहीं होती, वह सुखी ही रहता है और जो अवमानना करता है, वह विनाशको प्राप्त होता है। इसलिये तपस्या करता हुआ द्विज नित्य वेदका अभ्यास करे, क्योंकि वेदाभ्यास ही ब्राह्मणका परम तप है।

ब्राह्मणके तीन जन्म होते हैं—एक तो माताके गर्भसे, दूसरा यज्ञोपवीत होनेसे और तीसरा यज्ञकी दीक्षा लेनेसे। यज्ञोपवीतके समय गायत्री माता और आचार्य पिता होता है। वेदकी शिक्षा देनेसे आचार्यको पिता कहते हैं, क्योंकि यज्ञोपवीत होनेके पूर्व किसी भी वैदिक कर्मके करनेका अधिकारी वह नहीं होता। श्राद्धमें पढ़े जानेवाले वेदमन्त्रोंको छोड़कर (अनुपनीत द्विज) वेदमन्त्रका उच्चारण न करे, क्योंकि जबतक वेदारम्भ न हो जाय, तबतक वह शूद्रके समान माना गया है। यज्ञोपवीत सम्पन्न हो जानेपर वटुको व्रतका उपदेश ग्रहण करना चाहिये और तभीसे विधिपूर्वक वेदाध्ययन करना चाहिये। यज्ञोपवीतके समय जो-जो मेखला-चर्म, दण्ड और यज्ञोपवीत तथा वस्त्र जिस-जिसके लिये कहा गया है वह-वह ही धारण करे। अपनी तपस्याकी वृद्धिके लिये ब्रह्मचारी जितेन्द्रिय होकर गुरुके पास रहे और नियमोंका पालन करता रहे। नित्य स्नानकर पवित्र हो देवता, ऋषियों तथा पितरोंका तर्पण करे। पुष्प, फल, जल, समिधा, मृत्तिका, कुशा और अनेक प्रकारके काष्ठोंका संग्रह रखे। मद्य, मांस, गन्ध, पुष्पमाला, अनेक प्रकारके रस और स्त्रियोंका परित्याग करे। प्राणियोंकी हिंसा, शरीरमें उबटन, अंजन लगाना, जूता और छत्र धारण करना, गीत सुनना, नाच देखना, जुआ खेलना, झूठ बोलना, निन्दा करना, स्त्रियोंके समीप बैठना और काम, क्रोध तथा लोभादिके वशीभूत होना—इत्यादि बातें ब्रह्मचारीके लिये निषिद्ध हैं। उसे संयमपूर्वक एकाकी रहना चाहिये। वह जल, पुष्प, गौका गोबर, मृत्तिका और कुशा तथा आवश्यकतानुसार भिक्षा नित्य लाये। जो पुरुष अपने कर्मोंमें तत्पर हों और वेदादि शास्त्रोंको पढ़ें तथा यज्ञादिमें श्रद्धावान् हों ऐसे गृहस्थोंके घरसे ही ब्रह्मचारीको भिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। गुरुके कुलमें और अपने पारिवारिक बन्धु-बान्धवोंके घरोंसे भिक्षा न माँगे। यदि भिक्षा अन्यत्र न मिले तो इनके घरसे भी भिक्षा ग्रहण करे, किंतु जो महापातकी हों उनकी भिक्षा न ले। नित्य समिधा लाकर सायंकाल और प्रातःकाल हवन करे। भिक्षा माँगनेके समय वाणी संयमित रखे। ब्रह्मचारीके लिये भिक्षाका अन्न मुख्य है। एकका अन्न नित्य न ले। भिक्षावृत्तिसे रहना उपवासके बराबर माना गया है। यह धर्म केवल ब्राह्मणके लिये कहा गया है, क्षत्रिय और वैश्यके धर्ममें कुछ भेद है।

ब्रह्मचारी गुरुके सम्मुख हाथ जोड़कर खड़ा रहे, जब गुरुकी आज्ञा हो तब बैठे, परंतु आसनपर न बैठे। गुरुके उठनेसे पूर्व उठे, सोनेके पश्चात् सोये, गुरुके सम्मुख अति नम्रतासे बैठे, परोक्षमें गुरुका नाम उच्चारण न करे, किसी भी बातमें गुरुका अनुकरण अर्थात् नकल न करे। गुरुकी निन्दा न करे और जहाँ निन्दा होती हो, आलोचना होती हो वहाँसे उठकर चला जाय अथवा कान बंद कर ले—

परीवादस्तथा निन्दा गुरोर्यत्र प्रवर्तते।
कर्णौ तत्र पिधातव्यौ गन्तव्यं वा ततोऽन्यतः॥

(ब्राह्मपर्व ४। १७१)

वाहनपर चढ़ा हुआ गुरुका अभिवादन न करे अर्थात् वाहनसे उतरकर प्रणाम करे। गुरुके साथ

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shardha Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

एक वाहन, शिला, नौकायन आदिपर बैठ सकता है। गुरुके गुरु तथा श्रेष्ठ सम्बन्धीजनों एवं गुरुपुत्रके साथ गुरुके समान ही व्यवहार करे। गुरुकी सवर्णा स्त्रीको गुरुके समान ही समझे, परंतु गुरुपत्नीके उबटन लगाना, स्नानादि कराना, चरण दबाना आदि क्रियाएँ निषिद्ध हैं। माता, बहन या बेटीके साथ एक आसनपर न बैठे, क्योंकि बलवान् इन्द्रियोंका समूह विद्वान्‌को भी अपनी ओर खींच लेता है[१]। जिस प्रकार भूमिको खोदते-खोदते जल मिल जाता है, उसी प्रकार सेवा-शुश्रूषा करते-करते गुरुसे विद्या मिल जाती है। मुण्डन कराये हो, जटाधारी हो अथवा शिखी (बड़ी शिखासे युक्त) हो, चाहे जैसा भी ब्रह्मचारी हो उसको गाँवमें रहते हुए सूर्योदय और सूर्यास्त नहीं होना चाहिये अर्थात् जलके तट अथवा निर्जन स्थानपर जाकर दोनों संध्याओंमें संध्या-वन्दन करना चाहिये। जिसके सोते-सोते सूर्योदय अथवा सूर्यास्त हो जाय वह महान् पापका भागी होता है और बिना प्रायश्चित्त (कृच्छ्रव्रत)-के शुद्ध नहीं होता।

माता, पिता, भाई और आचार्यका विपत्तिमें भी अनादर न करे। आचार्य ब्रह्माकी मूर्ति हैं, पिता प्रजापतिकी, माता पृथ्वीकी तथा भाई आत्ममूर्ति है। इसलिये इनका सदा आदर करना चाहिये। प्राणियोंकी उत्पत्तिमें तथा पालन-पोषणमें माता-पिताको जो क्लेश सहन करना पड़ता है, उस क्लेशका बदला वे सौ वर्षोंमें भी सेवा करके नहीं चुका पाते[२]। इसलिये माता-पिता और गुरुकी सेवा नित्य करनी चाहिये। इन तीनोंके संतुष्ट हो जानेसे सब प्रकारके तपोंका फल प्राप्त हो जाता है, इनकी शुश्रूषा ही परम तप कहा गया है। इन तीनोंकी आज्ञाके बिना किसी अन्य धर्मका आचरण नहीं करना चाहिये। ये ही तीनों लोक हैं, ये ही तीनों आश्रम हैं, ये ही तीनों वेद हैं और ये ही तीनों अग्नियाँ हैं। माता गार्हपत्य नामक अग्नि है, पिता दक्षिणाग्नि-स्वरूप है और गुरु आहवनीय अग्नि है। जिसपर ये तीनों प्रसन्न हो जायँ, वह तीनों लोकोंपर विजय प्राप्त कर लेता है और दीप्यमान होते हुए देवलोकमें देवताओंकी भाँति सुख-भोग करता है।

त्रिषु तुष्टेषु चैतेषु त्रींल्लोकाञ्जयते गृही।
दीप्यमानः स्ववपुषा देववद्दिवि मोदते॥

(ब्राह्मपर्व ४। २०१)

पिताकी भक्तिसे इहलोक, माताकी भक्तिसे मध्यलोक और गुरुकी सेवासे इन्द्रलोक प्राप्त होता है। जो इन तीनोंकी सेवा करता है, उसके सभी धर्म सफल हो जाते हैं और जो इनका आदर नहीं करता, उसकी सभी क्रियाएँ निष्फल होती हैं। जबतक ये तीनों जीवित रहते हैं, तबतक इनकी नित्य सेवा-शुश्रूषा और इनका हित करना चाहिये। इन तीनोंकी सेवा-शुश्रूषारूपी धर्ममें पुरुषका सम्पूर्ण कर्तव्य पूरा हो जाता है, यही साक्षात् धर्म है, अन्य सभी उपधर्म कहे गये हैं।

उत्तम विद्या अधम पुरुषमें हो तो भी उससे ग्रहण कर लेनी चाहिये। इसी प्रकार चाण्डालसे भी मोक्षधर्मकी शिक्षा, नीच कुलसे भी उत्तम स्त्री, विषसे भी अमृत, बालकसे भी सुन्दर

१- मात्रा स्वस्रा दुहित्रा वा न विविक्तासनो भवेत्। बलवानिन्द्रियग्रामो विद्वांसमपि कर्षति॥ (ब्राह्मपर्व ४। १८४)

२-आचार्यो ब्रह्मणो मूर्तिः पिता मूर्तिः प्रजापतेः। माताप्यथादितेर्मूर्तिर्भ्राता स्यान्मूर्तिरात्मनः॥
यन्मातापितरौ क्लेशं सहेते सम्भवे नृणाम्। न तस्य निष्कृतिः शक्या कर्तुं वर्षशतैरपि॥

(ब्राह्मपर्व ४। १९५-१९६)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

उपदेशात्मक बात, शत्रुसे भी सदाचार और अपवित्र स्थानसे भी सुवर्ण ग्रहण कर लेना चाहिये*। उत्तम स्त्री, रत्न, विद्या, धर्म, शौच, सुभाषित तथा अनेक प्रकारके शिल्प जहाँसे भी प्राप्त हों, ग्रहण कर लेने चाहिये। गुरुके शरीर-त्यागपर्यन्त जो गुरुकी सेवा करता है, वह श्रेष्ठ ब्रह्मलोकको प्राप्त करता है। पढ़नेके समय गुरुको कुछ देनेकी इच्छा न करे, किंतु पढ़नेके अनन्तर गुरुकी आज्ञा पाकर भूमि, सुवर्ण, गौ, घोड़ा, छत्र, उपानह, धान्य, शाक तथा वस्त्र आदि अपनी शक्तिके अनुसार गुरु-दक्षिणाके रूपमें देने चाहिये। जब गुरुका देहान्त हो जाय, तब गुणवान् गुरुपुत्र, गुरुकी स्त्री और गुरुके भाइयोंके साथ गुरुके समान ही व्यवहार करना चाहिये। इस प्रकार जो अविच्छिन्न-रूपसे ब्रह्मचारिधर्मका आचरण करता है, वह ब्रह्मलोकको प्राप्त करता है।

सुमन्तु मुनि पुनः बोले—हे राजन्! इस प्रकार मैंने ब्रह्मचारिधर्मका वर्णन किया। ब्राह्मणका उपनयन वसन्तमें, क्षत्रियका ग्रीष्ममें और वैश्यका शरद्-ऋतुमें प्रशस्त माना गया है। अब गृहस्थधर्मका वर्णन सुनें।

(अध्याय ४)

विवाह-संस्कारके उपक्रममें स्त्रियोंके शुभ और अशुभ लक्षणोंका वर्णन तथा आचरणकी श्रेष्ठता

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! गुरुके आश्रममें ब्रह्मचर्यव्रतका पालन करते हुए स्नातकको वेदाध्ययन कर गृहस्थाश्रममें प्रवेश करना चाहिये। घर आनेपर उस ब्रह्मचारीको पहले पुष्प-माला पहनाकर, शय्यापर बिठाकर उसका मधुपर्कविधिसे पूजन करना चाहिये। तब गुरुसे आज्ञा प्राप्तकर उसे शुभ लक्षणोंसे युक्त सजातीय कन्यासे विवाह करना चाहिये।

राजा शतानीकने पूछा—हे मुनीश्वर! आप प्रथम स्त्रियोंके लक्षणोंका वर्णन करें और यह भी बतायें कि किन लक्षणोंसे युक्त कन्या शुभ होती है।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! पूर्वकालमें ऋषियोंके पूछनेपर ब्रह्माजीने स्त्रियोंके जो उत्तम लक्षण कहे हैं, उन्हें मैं संक्षेपमें बतलाता हूँ, आप ध्यान देकर सुनें।

ब्रह्माजीने कहा—ऋषिगणो! जिस स्त्रीके चरण लाल कमलके समान कान्तिवाले अत्यन्त कोमल तथा भूमिपर समतल-रूपसे पड़ते हों अर्थात् बीचमें ऊँचे न रहें, वे चरण उत्तम एवं सुख-भोग प्रदान करनेवाले होते हैं। जिस स्त्रीके चरण रूखे, फटे हुए, मांसरहित और नाड़ियोंसे युक्त हों, वह स्त्री दरिद्रा और दुर्भगा होती है। यदि पैरकी अंगुलियाँ परस्पर मिली हों, सीधी, गोल, स्निग्ध और सूक्ष्म नखोंसे युक्त हों तो ऐसी स्त्री अत्यन्त ऐश्वर्यको प्राप्त करनेवाली और राजमहिषी होती है। छोटी अंगुलियाँ आयुको बढ़ाती हैं, परंतु छोटी और विरल अंगुलियाँ धनका नाश करनेवाली होती हैं।

जिस स्त्रीके हाथकी रेखाएँ गहरी, स्निग्ध और रक्तवर्णकी होती हैं, वह सुख भोगनेवाली होती है, इसके विपरीत टेढ़ी और टूटी हुई हों तो वह दरिद्र होती है। जिसके हाथमें कनिष्ठाके मूलसे तर्जनीतक पूरी रेखा चली जाय तो ऐसी

* श्रद्दधानः शुभां विद्यामाददीतावरादपि। अन्त्यादपि परं धर्मं स्त्रीरत्नं दुष्कुलादपि॥
विषादप्यमृतं ग्राह्यं बालादपि सुभाषितम्। अमित्रादपि सद्वृत्तममेध्यादपि काञ्चनम्॥
(ब्राह्मपर्व ४। २०७-२०८)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

स्त्री सौ वर्षतक जीवित रहती है और यदि न्यून हो तो आयु कम होती है। जिस स्त्रीके हाथकी अँगुलियाँ गोल, लम्बी, पतली, मिलानेपर छिद्ररहित, कोमल तथा रक्तवर्णकी हों, वह स्त्री अनेक सुख-भोगोंको प्राप्त करती है। जिसके नख बन्धुजीव-पुष्पके समान लाल एवं ऊँचे और स्निग्ध हों तो वह ऐश्वर्यको प्राप्त करती है तथा रूखे, टेढ़े, अनेक प्रकारके रंगवाले अथवा श्वेत या नीले-पीले नखोंवाली स्त्री दुर्भाग्य और दारिद्र्यको प्राप्त होती है। जिस स्त्रीके हाथ फटे हुए, रूखे और विषम अर्थात् ऊँचे-नीचे एवं छोटे-बड़े हों वह कष्ट भोगती है। जिस स्त्रीकी अँगुलियोंके पर्वोंमें समान रेखा हो अथवा यवका चिह्न होता है, उसे अपार सुख तथा अक्षय धन-धान्य प्राप्त होता है। जिस स्त्रीका मणिबन्ध सुस्पष्ट तीन रेखाओंसे सुशोभित होता है, वह चिरकालतक अक्षय भोग और दीर्घ आयुको प्राप्त करती है।

जिस स्त्रीकी ग्रीवामें चार अङ्गुलके परिमापमें स्पष्ट तीन रेखाएँ हों तो वह सदा रत्नोंके आभूषण धारण करनेवाली होती है। दुर्बल ग्रीवावाली स्त्री निर्धन, दीर्घ ग्रीवावाली बन्धकी, ह्रस्वग्रीवावाली मृतवत्सा होती है और स्थूल ग्रीवावाली दुःख-संताप प्राप्त करती है। जिसके दोनों कंधे और कृकाटिका (गरदनका उठा हुआ पिछला भाग) ऊँचे न हों, वह स्त्री दीर्घ आयुवाली तथा उसका पति भी चिरकालतक जीता है।

जिस स्त्रीकी नासिका न बहुत मोटी, न पतली, न टेढ़ी, न अधिक लम्बी और न ऊँची होती है वह श्रेष्ठ होती है। जिस स्त्रीकी भौंहें ऊँची, कोमल, सूक्ष्म तथा आपसमें मिली हुई न हों, ऐसी स्त्री सुख प्राप्त करती है। धनुषके समान भौंहें सौभाग्य प्रदान करनेवाली होती हैं। स्त्रियोंके काले, स्निग्ध, कोमल और लम्बे घुँघराले केश उत्तम होते हैं।

हंस, कोयल, वीणा, भ्रमर, मयूर तथा वेणु (वंशी) के समान स्वरवाली स्त्रियाँ अपार सुख-सम्पत्ति प्राप्त करती हैं और दास-दासियोंसे युक्त होती हैं। इसके विपरीत फूटे हुए काँसेके स्वरके समान स्वरवाली या गर्दभ और कौवेके सदृश स्वरवाली स्त्रियाँ रोग, व्याधि, भय, शोक तथा दरिद्रताको प्राप्त करती हैं। हंस, गाय, वृषभ, चक्रवाक तथा मदमस्त हाथीके समान चालवाली स्त्रियाँ अपने कुलको विख्यात बनानेवाली और राजाकी रानी होती हैं। श्वान, सियार और कौवेके समान गतिवाली स्त्री निन्दनीय होती है। मृगके समान गतिवाली दासी तथा द्रुतगामिनी स्त्री बन्धकी होती है। स्त्रियोंका फलिनी, गोरोचन, स्वर्ण, कुंकुम अथवा नये-नये निकले हुए दूर्वाङ्कुरके सदृश रंग उत्तम होता है। जिन स्त्रियोंके शरीर तथा अङ्ग कोमल, रोम और पसीनेसे रहित तथा सुगन्धित होते हैं, वे स्त्रियाँ पूज्य होती हैं।

कपिलवर्णवाली, अधिकाङ्गी, रोगिणी, रोमोंसे रहित, अत्यन्त छोटी (बौनी), वाचाल तथा पिंगल-वर्णवाली कन्यासे विवाह नहीं करना चाहिये। नक्षत्र, वृक्ष, नदी, म्लेच्छ, पर्वत, पक्षी, साँप आदि और दासीके नामपर जिसका नाम हो तथा डरावने नामवाली कन्यासे विवाह नहीं करना चाहिये। जिसके सब अङ्ग ठीक हों, सुन्दर नाम हो, हंस या हाथीकी-सी गति हो, जो सूक्ष्म रोम, केश और दाँतोंवाली तथा कोमलाङ्गी हो, ऐसी कन्यासे विवाह करना उत्तम होता है। गौ तथा धन-धान्यादिसे अत्यधिक समृद्ध होनेपर भी इन दस कुलोंमें विवाहका सम्बन्ध स्थापित नहीं करना चाहिये—जो संस्कारोंसे रहित हों, जिनमें पुरुष-संतति न होती हो, जो वेदके पठन-पाठनसे रहित हों, जिनमें स्त्री-पुरुषोंके शरीरोंपर बहुत लम्बे केश हों, जिनमें

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

अर्श (बवासीर), क्षय (राजयक्ष्मा), मन्दाग्नि, मिरगी, श्वेत दाग और कुष्ठ-जैसे रोग होते हों।

ब्रह्माजीने ऋषियोंसे पुनः कहा—ये सब उत्तम लक्षण जिस कन्यामें हों और जिसका आचरण भी अच्छा हो उस कन्यासे विवाह करना चाहिये। स्त्रीके लक्षणोंकी अपेक्षा उसके सदाचारको ही अधिक प्रशस्त कहा गया है। जो स्त्री सुन्दर शरीर तथा शुभ लक्षणोंसे युक्त भी है, किंतु यदि वह सदाचारसम्पन्न (उत्तम आचरणयुक्त) नहीं है तो वह प्रशस्त नहीं मानी गयी है। अतः स्त्रियोंमें आचरणकी मर्यादाको अवश्य देखना चाहिये*। ऐसे सल्लक्षणों तथा सदाचारसे सम्पन्न सुकन्यासे विवाह करनेपर ऋद्धि, वृद्धि तथा सत्कीर्ति प्राप्त होती है। (अध्याय ५)

गृहस्थाश्रममें धन एवं स्त्रीकी महत्ता, धन-सम्पादन करनेकी आवश्यकता तथा समान कुलमें विवाह-सम्बन्धकी प्रशंसा

राजा शतानीकने सुमन्तु मुनिसे पूछा—भगवन्! स्त्रियोंके लक्षणोंको तो मैंने सुना, अब उनके सद्वृत्त (सदाचार)-को भी मैं सुनना चाहता हूँ, उसे आप बतलानेकी कृपा करें।

सुमन्तु मुनि बोले—महाबाहु शतानीक! ब्रह्माजीने ऋषियोंको स्त्रियोंके सद्वृत्त भी बतलाये हैं, उन्हें मैं आपको सुनाता हूँ, आप ध्यानपूर्वक सुनें। जब ऋषियोंने स्त्रियोंके सद्वृत्तके विषयमें ब्रह्माजीसे प्रश्न किया तब ब्रह्माजी कहने लगे—मुनीश्वरो! सर्वप्रथम गृहस्थाश्रममें प्रवेश करनेवाला व्यक्ति यथाविधि विद्याध्ययन करके सत्कर्मोंद्वारा धनका उपार्जन करे, तदनन्तर सुन्दर लक्षणोंसे युक्त और सुशील कन्यासे शास्त्रोक्त विधिसे विवाह करे। धनके बिना गृहस्थाश्रम केवल विडम्बना है। इसलिये धन-सम्पादन करनेके अनन्तर ही गृहस्थाश्रममें प्रवेश करना चाहिये। मनुष्यके लिये घोर नरककी यातना सहनी अच्छी है, किंतु घरमें क्षुधासे तड़पते हुए स्त्री-पुत्रोंको देखना अच्छा नहीं है। फटे और मैले-कुचैले वस्त्र पहने, अति दीन और भूखे स्त्री-पुत्रोंको देखकर जिनका हृदय विदीर्ण नहीं होता, वे वज्रके समान अति कठोर हैं। उनके जीवनको धिक्कार है, उनके लिये तो मृत्यु ही परम उत्सव है अर्थात् ऐसे पुरुषका मर जाना ही श्रेष्ठ है। अतः स्त्रीग्रहण करनेवाले अर्थहीन पुरुषके त्रिवर्ग (धर्म, अर्थ, काम)-की सिद्धि कहाँ सम्भव है? वह स्त्री-सुख न प्राप्त कर यातना ही भोगता है। जैसे स्त्रीके बिना गृहस्थाश्रम नहीं हो सकता, उसी प्रकार धन-विहीन व्यक्तियोंको भी गृहस्थ बननेका अधिकार नहीं है। कुछ लोग संतानको ही त्रिवर्गका साधन मानते हैं अर्थात् संतानसे ही धर्म, अर्थ और कामकी प्राप्ति होती है, ऐसा समझते हैं; परंतु नीतिविशारदोंका यह अभिमत है कि धन और उत्तम स्त्री—ये दोनों त्रिवर्ग-साधनके हेतु हैं। धर्म भी दो प्रकारका कहा गया है—इष्ट धर्म और पूर्त धर्म। यज्ञादि करना इष्ट धर्म है और वापी, कूप, तालाब आदि बनवाना पूर्त धर्म है। ये दोनों धनसे ही सम्पन्न होते हैं।

दरिद्रीके बन्धु भी उससे लज्जा करते हैं और धनाढ्यके अनेक बन्धु हो जाते हैं। धन ही त्रिवर्गका

* लक्षणेभ्यः प्रशस्तं तु स्त्रीणां सद्वृत्तमुच्यते। सद्वृत्तयुक्ता या स्त्री सा प्रशस्ता न च लक्षणैः॥ (ब्राह्मपर्व ५।११०)

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shandu Peeth

मूल है। धनवान्‌में विद्या, कुल, शील अनेक उत्तम गुण आ जाते हैं और निर्धनमें विद्यमान होते हुए भी ये गुण नष्ट हो जाते हैं। शास्त्र, शिल्प, कला और अन्य भी जितने कर्म हैं, उन सबका तथा धर्मका साधन भी धन ही है। धनके बिना पुरुषका जन्म अजागल-स्तनवत् व्यर्थ ही है।

पूर्वजन्ममें किये गये पुण्योंसे ही इस जन्ममें प्रभूत धनकी प्राप्ति होती है और धनसे पुण्य होता है। इसलिये धन और पुण्यका अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है अर्थात् ये एक-दूसरेके कारक हैं। पुण्यसे धनार्जन होता है और धनसे पुण्यार्जन होता है—

प्राक्पुण्यैर्विपुला सम्पद्धर्मकामादिहेतुजा।
भूयो धर्मेण सामुत्र तया ताविति च क्रमः॥

(ब्राह्मपर्व ६। २३)

—इसलिये विद्वान् मनुष्यको इसी रीतिसे त्रिवर्ग-साधन करना चाहिये। स्त्रीरहित तथा निर्धन पुरुषका त्रिवर्ग-साधनमें अधिकार नहीं है। अतः भार्या-ग्रहणसे पूर्व उत्तम रीतिसे अर्थार्जन अवश्य कर लेना चाहिये। न्यायोपार्जित धनकी प्राप्ति होनेपर दार-परिग्रह करना चाहिये। अपने कुलके अनुरूप, धन, क्रिया आदिसे प्रसिद्ध, अनिन्दित, सुन्दर तथा धर्मकी साधनभूता कन्याको प्राप्त करना चाहिये। जबतक विवाह नहीं होता है, तबतक पुरुष अर्ध-शरीर ही होता है। इसलिये यथाक्रम उचित अवसर प्राप्त हो जानेपर विवाह करना चाहिये। जैसे एक पहियेका रथ अथवा एक पंखवाला पक्षी किसी कार्यमें सफल नहीं हो पाता, वैसे ही स्त्रीहीन पुरुष भी प्रायः सभी धर्मकृत्योंमें असफल ही रहता है—

एकचक्रो रथो यद्वदेकपक्षो यथा खगः।
अभार्योऽपि नरः तद्वदयोग्यः सर्वकर्मसु॥

(ब्राह्मपर्व ६। ३०)

पत्नी-परिग्रहसे धर्म तथा अर्थ दोनोंमें बहुत लाभ होता है और इससे आपसमें प्रीति उत्पन्न होती है, सत्प्रीतिसे कामरूपी तृतीय पुरुषार्थ भी प्राप्त हो जाता है, ऐसा विद्वानोंका कहना है। विवाह-सम्बन्ध तीन प्रकारका होता है—नीच कुलमें, समान कुलमें और उत्तम कुलमें। नीच कुलमें विवाह करनेसे निन्दा होती है। उत्तम कुलवालेके साथ विवाह करनेसे वे अनादर करते हैं। अपनेसे बड़े लोगोंके साथ बनाया गया विवाह-सम्बन्ध, नीचके साथ बनाये गये विवाह-सम्बन्धके प्रायः समान ही होता है। इस कारण अपने समान कुलमें ही विवाह करना चाहिये। मनस्वी लोग विजातीय सम्बन्ध भी ठीक नहीं मानते। यह वैसा ही सम्बन्ध होता है जैसे कोयल और शुकका। जिस सम्बन्धमें प्रतिदिन स्नेहकी अभिवृद्धि होती रहती है और विपत्ति-सम्पत्तिके समय भी प्राणतक भी देनेमें विचार न किया जाय, वह सम्बन्ध उत्तम कहलाता है। परंतु यह बात उनमें ही होती है जो कुल, शील, विद्या और धन आदिमें समान होते हैं। मनुष्योंके स्नेह और कृतज्ञताकी परीक्षा विपत्तिमें ही होती है। इसलिये विवाह और परामर्श समानके साथ ही करना चाहिये, अपनेसे बड़े तथा छोटेके साथ नहीं। इसीमें अच्छी मित्रता रहती है। (अध्याय ६)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

नर-नारायण, सरस्वतीदेवी और व्यासदेवकी वन्दना

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

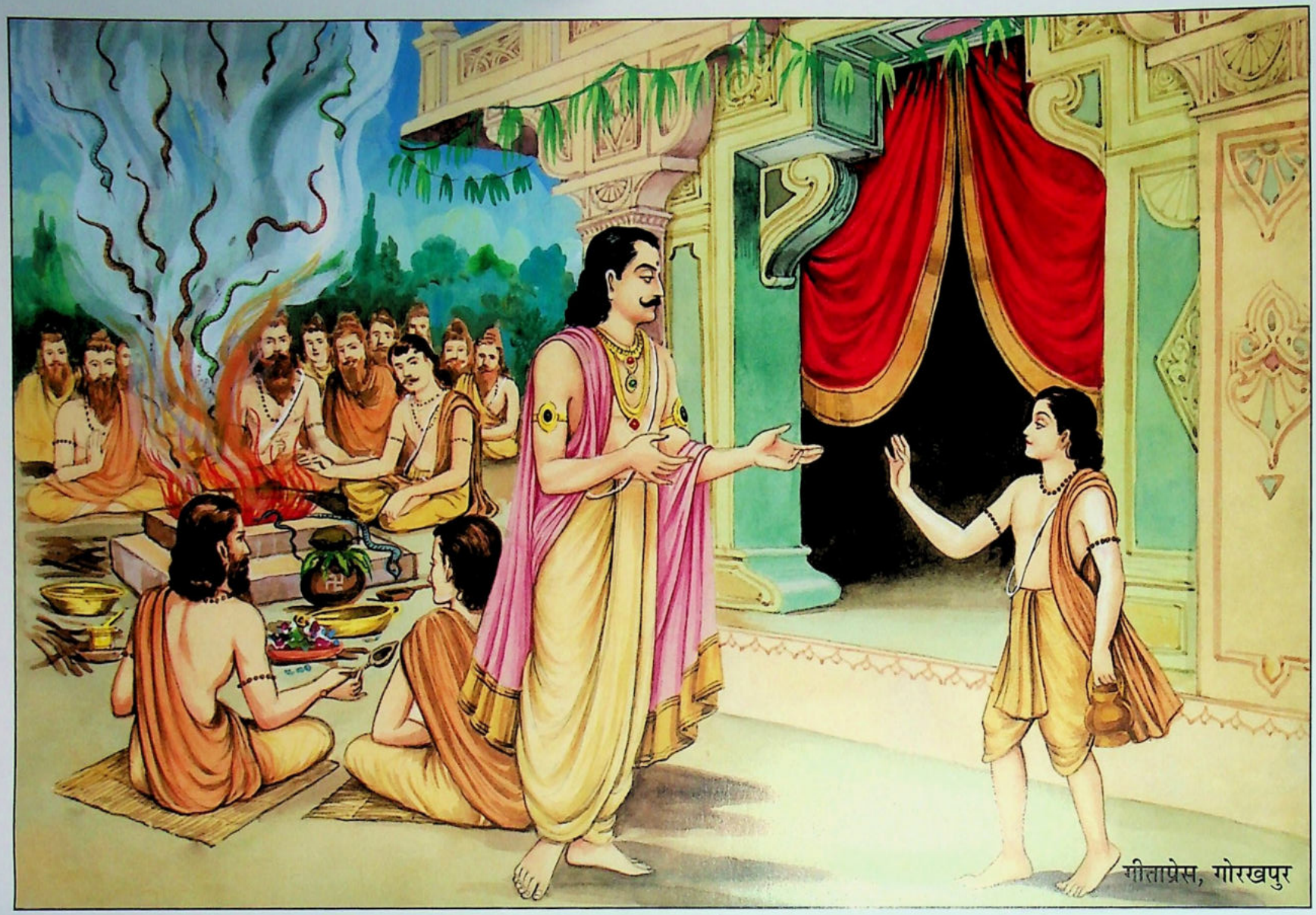

जनमेजयका सर्प-यज्ञ

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भगवान् कार्तिकेय

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

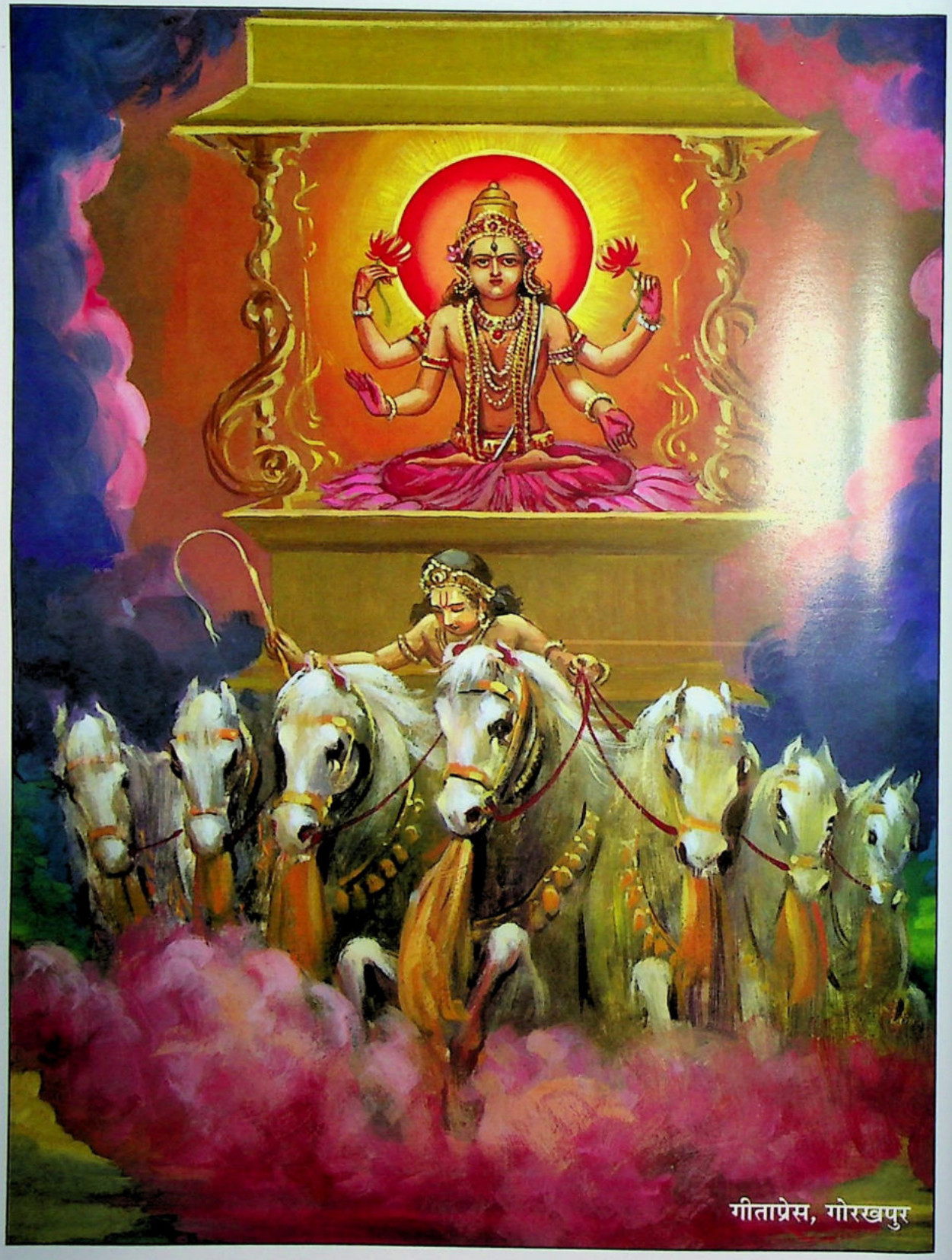

सप्ताश्ववाहन भगवान् सूर्य

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सत्यनारायण भगवान् विष्णु

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

यमराज

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

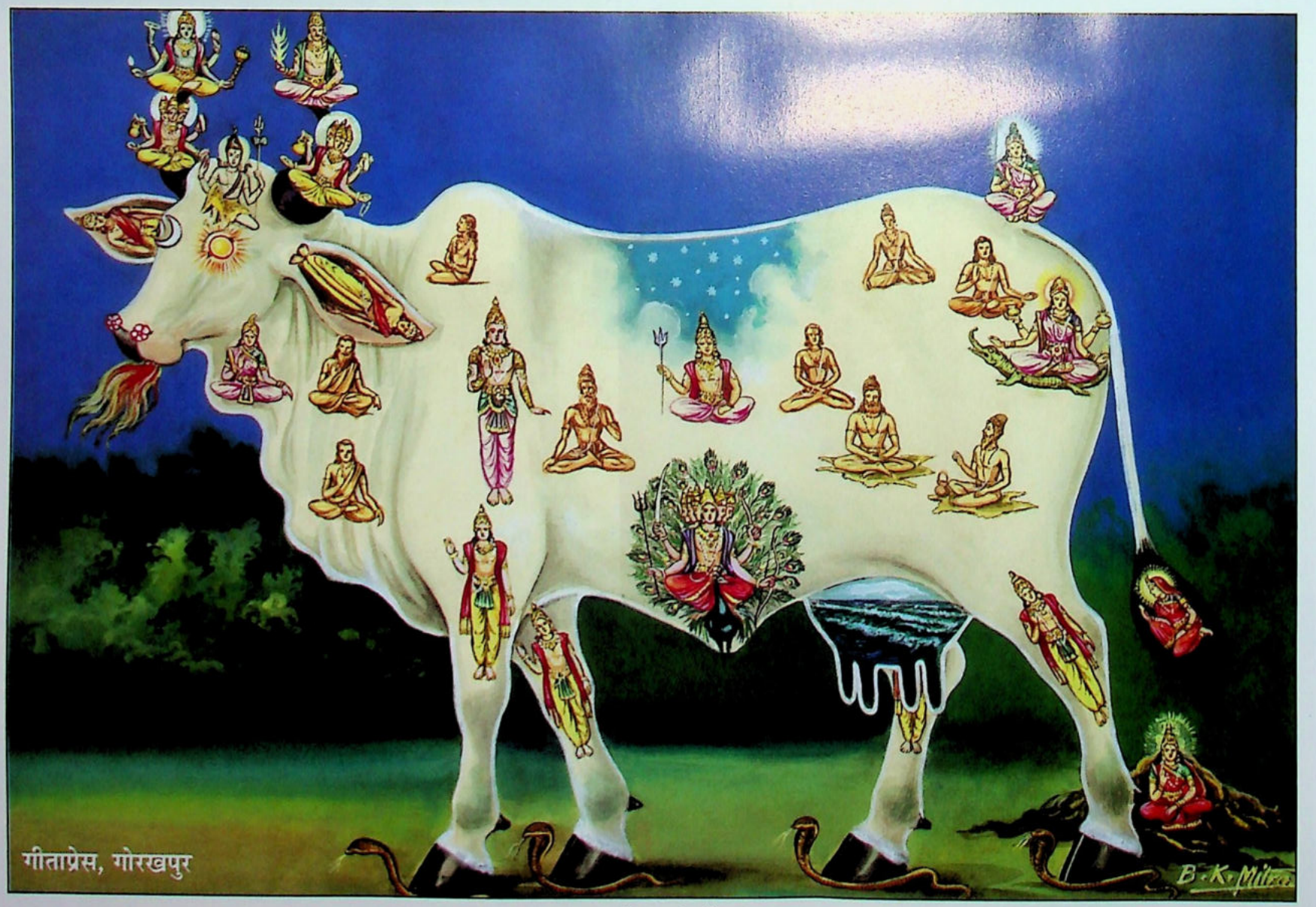

सर्वदेवमयी गौ

Hinduism Discord Server https://disc.gg/dharmadrishti | Public Domain Digitized by Sarvagya Shiva Peeth MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

परम आराध्य उमामहेश्वर

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

विवाह-सम्बन्धी तत्त्वोंका निरूपण, विवाहयोग्य कन्याके लक्षण, आठ प्रकारके विवाह, ब्रह्मावर्त, आर्यावर्त आदि उत्तम देशोंका वर्णन

ब्रह्माजी बोले—मुनीश्वरो! जो कन्या माताकी सपिण्ड अर्थात् माताकी सात पीढ़ीके अन्तर्गतकी न हो तथा पिताके समान गोत्रकी न हो, वह द्विजातियोंके विवाह-सम्बन्ध तथा संतानोत्पादनके लिये प्रशस्त मानी गयी है[१]। जिस कन्याके भाई न हो और जिसके पिताके सम्बन्धमें कोई जानकारी न हो, ऐसी कन्यासे पुत्रिका-धर्मकी[२] आशंकासे बुद्धिमान् पुरुषको विवाह नहीं करना चाहिये। धर्मसाधनके लिये चारों वर्णोंको अपने-अपने वर्णकी कन्यासे विवाह करना श्रेष्ठ कहा गया है।

चारों वर्णोंके इस लोक और परलोकमें हिताहितके साधन करनेवाले आठ प्रकारके विवाह कहे गये हैं, जो इस प्रकार हैं—

ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य, आसुर, गान्धर्व, राक्षस तथा पैशाच। अच्छे शील-स्वभाववाले उत्तम कुलके वरको स्वयं बुलाकर उसे अलंकृत और पूजित कर कन्या देना 'ब्राह्म-विवाह' है। यज्ञमें सम्यक् प्रकारसे कर्म करते हुए ऋत्विज्को अलंकृत कर कन्या देनेको 'दैव-विवाह' कहते हैं। वरसे एक या दो जोड़े गाय-बैल धर्मार्थ लेकर विधिपूर्वक कन्या देनेको 'आर्ष-विवाह' कहते हैं। 'तुम दोनों एक साथ गृहस्थ-धर्मका पालन करो' यह कहकर पूजन करके जो कन्यादान किया जाता है, वह 'प्राजापत्य-विवाह' कहलाता है। कन्याके पिता आदिको और कन्याको भी यथाशक्ति धन आदि देकर स्वच्छन्दतापूर्वक कन्याका ग्रहण करना 'आसुर-विवाह' है। कन्या और वरकी परस्पर इच्छासे जो विवाह होता है, उसे 'गान्धर्व-विवाह' कहते हैं। मार-पीट करके रोती-चिल्लाती कन्याका अपहरण करके लाना 'राक्षस-विवाह' है। सोयी हुई, मदसे मतवाली या जो कन्या पागल हो गयी हो उसे गुप्तरूपसे उठा ले आना यह 'पैशाच' नामक अधम कोटिका विवाह है।

ब्राह्म-विवाहसे उत्पन्न धर्माचारी पुत्र दस पीढ़ी आगे और दस पीढ़ी पीछेके कुलोंका तथा इक्कीसवाँ अपना भी उद्धार करता है। दैव-विवाहसे उत्पन्न पुत्र सात पीढ़ी आगे तथा सात पीढ़ी पीछे इस प्रकार चौदह पीढ़ियोंका उद्धार करनेवाला होता है। आर्ष-विवाहसे उत्पन्न पुत्र तीन अगले तथा तीन पिछले कुलोंका उद्धार करता है तथा प्राजापत्य-विवाहसे उत्पन्न पुत्र छः पीछेके तथा छः आगेके कुलोंको तारता है। ब्राह्मादि आद्य चार विवाहोंसे उत्पन्न पुत्र ब्रह्मतेजसे सम्पन्न, शीलवान्, रूप, सत्त्वादि गुणोंसे युक्त, धनवान्, पुत्रवान्, यशस्वी, धर्मिष्ठ और दीर्घजीवी होते हैं। शेष चार विवाहोंसे उत्पन्न पुत्र क्रूर-स्वभाव, धर्मद्वेषी और मिथ्यावादी होते हैं। अनिन्दित विवाहोंसे संतान भी अनिन्द्य ही होती है और निन्दित विवाहोंकी संतान भी निन्दित होती है। इसलिये आसुर आदि निन्दित विवाह नहीं करना चाहिये। कन्याका पिता वरसे यत्किंचित् भी धन न ले। वरका धन लेनेसे वह अपत्यविक्रयी अर्थात् संतानका बेचनेवाला हो जाता है। जो पति या पिता आदि सम्बन्धी वर्ग मोहवश कन्याके धन आदिसे अपना जीवन चलाते हैं, वे अधोगतिको प्राप्त होते हैं। आर्ष-विवाहमें जो गो-मिथुन लेनेकी बात कही गयी है, वह भी ठीक नहीं है, क्योंकि चाहे थोड़ा ले या अधिक, वह कन्याका मूल्य ही गिना जाता है, इसलिये

१-असपिण्डा च या मातुरसगोत्रा च या पितुः। सा प्रशस्ता द्विजातीनां दारकर्मणि मैथुने॥ (ब्राह्मपर्व ७। १, मनु० ३। ५)
२-पिता जिसके पुत्रसे अपने पिण्ड-पानीकी आशा करता है उसे पुत्रिका कहते हैं।

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth

वरसे कुछ भी लेना नहीं चाहिये। जिन कन्याओंके निमित्त वर-पक्षसे दिया हुआ वस्त्राभूषणादि पिता-भ्राता आदि नहीं लेते, प्रत्युत कन्याको ही देते हैं, वह विक्रय नहीं है। यह कुमारियोंका पूजन है, इसमें कोई हिंसादि दोष नहीं है। इस प्रकार उत्तम विवाह करके उत्तम देशमें निवास करना चाहिये, इससे बहुत यशकी प्राप्ति होती है।

ऋषियोंने पूछा—ब्रह्मन्! वह कौन-सा देश है, जहाँ निवास करनेसे धर्म और यशकी वृद्धि होती है?

ब्रह्माजी बोले—मुनीश्वरो! जिस देशमें धर्म अपने चारों चरणोंके साथ रहे, जहाँ विद्वान् लोग निवास करते हों और सारे व्यवहार शास्त्रोक्त-रीतिसे सम्पन्न होते हों, वही देश उत्तम और निवास करने योग्य है।

ऋषियोंने पूछा—महाराज! विद्वान् जिस शास्त्रोक्त आचरणको ग्रहण करते हैं और धर्मशास्त्रमें जैसी विधि निर्दिष्ट की गयी है उसे हमें बतलायें, हमें इस विषयमें महान् कौतूहल हो रहा है।

ब्रह्माजी बोले—राग-द्वेषसे रहित सज्जन एवं विद्वान् जिस धर्मका नित्य अपने शुद्ध अन्तःकरणसे आचरण करते हैं, उसे आप सुनें—

इस संसारमें किसी वस्तुकी कामना करना श्रेष्ठ नहीं है। वेदोंका अध्ययन करना और वेदविहित कर्म करना भी काम्य है। संकल्पसे कामना उत्पन्न होती है। वेद पढ़ना, यज्ञ करना, व्रत-नियम, धर्म आदि कर्म सब संकल्पमूलक ही हैं। इसीलिये सभी यज्ञ, दान आदि कर्म संकल्पपठनपूर्वक किये जाते हैं। ऐसी कोई भी क्रिया नहीं है, जिसमें काम न हो। जो कोई भी जो कुछ करता है वह इच्छासे ही करता है[१]।

श्रुति, स्मृति, सदाचार और अपने आत्माकी प्रसन्नता—इन चार बातोंसे धर्मका निर्णय होता है। श्रुति तथा स्मृतिमें कहे गये धर्मके आचरणसे इस लोकमें बहुत यश प्राप्त होता है और परलोकमें इन्द्रलोककी प्राप्ति होती है। श्रुति वेदको कहते हैं और स्मृति धर्मशास्त्रका नाम है। इन दोनोंसे सभी बातोंका विचार करें, क्योंकि धर्मकी जड़ ये ही हैं, जो धर्मके मूल इन दोनोंका तर्क आदिके द्वारा अपमान करता है, उसे सत्पुरुषोंको तिरस्कृत कर देना चाहिये, क्योंकि वह वेदनिन्दक होनेसे नास्तिक ही है[२]।

जिनके लिये मन्त्रोंद्वारा गर्भाधानसे श्मशानतक संस्कारकी विधि कही गयी है, उन्हीं लोगोंको वेद तथा जपमें अधिकार है। सरस्वती तथा दृषद्वती—इन दो देवनदियोंके बीचका जो देश है वह देवताओंद्वारा बनाया गया है, उसे ब्रह्मावर्त कहते हैं। उस देशमें चारों वर्ण और उपवर्णोंमें जो आचार परम्परासे चला आया है, उसका नाम सदाचार है। कुरुक्षेत्र, मत्स्यदेश, पाञ्चाल और शूरसेन देश (मथुरा)—ये ब्रह्मर्षियोंके द्वारा सेवित हैं, परंतु ब्रह्मावर्तसे कुछ न्यून हैं। इन देशोंमें

१- कामकी गणना चार पुरुषार्थोंमें है। भोगकी कामनाके विरुद्ध योग, यज्ञ, जप-तप, धर्मसंस्थापन और गति-मुक्तिकी कामना ही शुभ कामना है। गीता (७। ११)-में भी भगवान् 'धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ॥' कहकर मनको इन्हीं सत्कर्मोंकी ओर प्रेरित करनेकी आज्ञा देते हैं। यह एक प्रकारसे निष्कामताकी जननी है। वैदिक कर्मयोगको भी भविष्यपुराणमें सकाम कहनेका यही भाव है।

२- निगमो धर्ममूलं स्यात् स्मृतिशीले तथैव च। तथाचारश्च साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव च॥
श्रुतिस्मृत्युदितं धर्ममनुतिष्ठन् सदा नरः। प्राप्य चेह परां कीर्तिं याति शक्रसलोकताम्॥
श्रुतिस्तु वेदो विज्ञेयो धर्मशास्त्रं तु वै स्मृतिः। ते सर्वार्थेषु मीमांस्ये ताभ्यां धर्मो हि निर्बभौ॥
योऽवमन्येत ते चोभे हेतुशास्त्राश्रयाद् द्विजः। स साधुभिर्बहिष्कार्यो नास्तिको वेदनिन्दकः॥
वेदः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः। एतच्चतुर्विधं विप्राः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम्॥ (ब्राह्मपर्व ७। ५२, ५४—५७)

In Public Domain. Digitzed by Sarvadha Shanta Peeth

उत्पन्न हुए ब्राह्मणोंसे सब देशके मनुष्य अपना-अपना आचार सीखते हैं[१]। हिमालय और विन्ध्यपर्वतके बीच, विनशनसे पूर्व और प्रयागसे पश्चिम जो देश है उसे मध्यदेश कहते हैं। इन्हीं दोनों पर्वतोंके बीच पूर्व समुद्रसे पश्चिम समुद्रतक जो देश है वह आर्यावर्त कहलाता है[२]। जिस देशमें कृष्णसार मृग अपनी इच्छासे नित्य विचरण करें, वह देश यज्ञ करने योग्य होता है। इन शुभ देशोंमें ब्राह्मणको निवास करना चाहिये। इससे भिन्न म्लेच्छ देश हैं। हे मुनीश्वरो! इस प्रकार मैंने यह देशव्यवस्था आप सबको संक्षेपमें सुनायी है। (अध्याय ७)

धन एवं स्त्रीके तीन आश्रय तथा स्त्री-पुरुषोंके पारस्परिक व्यवहारका वर्णन

ब्रह्माजी बोले—मुनीश्वरो! उत्तम रीतिसे विवाह सम्पन्न कर गृहस्थको जो करना चाहिये, उसका मैं वर्णन करता हूँ।

सर्वप्रथम गृहस्थको उत्तम देशमें ऐसा आश्रय ढूँढ़ना चाहिये, जहाँ वह अपने धन तथा स्त्रीकी भलीभाँति रक्षा कर सके। बिना आश्रयके इन दोनोंकी रक्षा नहीं हो सकती। ये दोनों—धन एवं स्त्री—त्रिवर्गके हेतु हैं, इसलिये इनकी प्रयत्नपूर्वक रक्षा अवश्य करनी चाहिये। पुरुष, स्थान और घर—ये तीनों आश्रय कहलाते हैं। इन तीनोंसे धन आदिका रक्षण और अर्थोपार्जन होता है। कुलीन, नीतिमान्, बुद्धिमान्, सत्यवादी, विनयी, धर्मात्मा और दृढव्रती पुरुष आश्रयके योग्य होता है। जहाँ धर्मात्मा पुरुष रहते हों, ऐसे नगर अथवा ग्राममें निवास करना चाहिये। ऐसे स्थानमें गुरुजनोंकी अनुमति लेकर अथवा उस ग्राम आदिमें बसनेवाले श्रेष्ठजनोंकी सहमति प्राप्त कर रहनेके लिये अविवादित स्थलमें घर बनाना चाहिये, परंतु किसी पड़ोसीको कष्ट नहीं देना चाहिये। नगरके द्वार, चौक, यज्ञशाला, शिल्पियोंके रहनेके स्थान, जुआ खेलने तथा मांस-मद्यादि बेचनेके स्थान, पाखण्डियों और राजाके नौकरोंके रहनेके स्थान, देवमन्दिरके मार्ग तथा राजमार्ग और राजाके महल—इन स्थानोंसे दूर, रहनेके लिये अपना घर बनाना चाहिये। स्वच्छ, मुख्य मार्गवाला, उत्तम व्यवहारवाले लोगोंसे आवृत तथा दुष्टोंके निवाससे दूर—ऐसे स्थानमें गृहका निर्माण करना चाहिये। गृहके भूमिकी ढाल पूर्व अथवा उत्तरकी ओर हो। रसोईघर, स्नानागार, गोशाला, अन्तःपुर तथा शयन-कक्ष और पूजाघर आदि सब अलग-अलग बनाये जायँ। अन्तःपुरकी रक्षाके लिये वृद्ध, जितेन्द्रिय एवं विश्वस्त व्यक्तियोंको नियुक्त करना चाहिये। स्त्रियोंकी रक्षा न करनेसे वर्णसंकर उत्पन्न होते हैं और अनेक प्रकारके दोष भी होते देखे गये हैं। स्त्रियोंको कभी स्वतन्त्रता न दे और न उनपर विश्वास करे। किंतु व्यवहारमें विश्वस्तके समान ही चेष्टा दिखानी चाहिये। विशेषरूपसे उसे पाकादि क्रियाओंमें ही नियुक्त करना चाहिये। स्त्रीको किसी भी समय खाली नहीं बैठना चाहिये।

दरिद्रता, अति-रूपवत्ता, असत्-जनोंका सङ्ग, स्वतन्त्रता, पेयादि द्रव्यका पान करना तथा अभक्ष्य-भक्षण करना, कथा, गोष्ठी आदि प्रिय लगना, काम न करना, जादू-टोना करनेवाली, भिक्षुकी, कुट्टिनी, दाई, नटी आदि दुष्ट स्त्रियोंके सङ्ग उद्यान, यात्रा, निमन्त्रण आदिमें जाना, अत्यधिक तीर्थयात्रा करना अथवा देवताके दर्शनोंके लिये घूमना, पतिके

१-एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः। स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवाः॥ (ब्राह्मपर्व ७।५३)
२-आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्रात्तु पश्चिमात्। तयोरेवान्तरं गिर्योरार्यावर्तं विदुर्बुधाः॥ (ब्राह्मपर्व ७।६५)

CC-0. In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shandu Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

साथ बहुत वियोग होना, कठोर व्यवहार करना, पुरुषोंसे अत्यधिक वार्तालाप करना, अति क्रूर, अति सौम्य, अति निडर होना, ईर्ष्यालु तथा कृपण होना और किसी अन्य स्त्रीके वशीभूत हो जाना—ये सब स्त्रीके दोष उसके विनाशके हेतु हैं। ऐसी स्त्रियोंके अधीन यदि पुरुष हो जाता है तो वह भी निन्दनीय हो जाता है। यह पुरुषकी ही अयोग्यता है कि उसके भृत्य बिगड़ जाते हैं। स्वामी यदि कुशल न हो तो भृत्य और स्त्री बिगड़ जाते हैं, इसलिये समयके अनुसार यथोचित रीतिसे ताडन और शासनसे जिस भाँति हो इनकी रक्षा करनी चाहिये। नारी पुरुषका आधा शरीर है, उसके बिना धर्म-क्रियाओंकी साधना नहीं हो सकती। इस कारण स्त्रीका सदा आदर करना चाहिये। उसके प्रतिकूल नहीं करना चाहिये।

स्त्रीके पतिव्रता होनेके प्रायः तीन कारण देखे जाते हैं—(१) पर-पुरुषमें विरक्ति, (२) अपने पतिमें प्रीति तथा (३) अपनी रक्षामें समर्थता[१]।

उत्तम स्त्रीको साम तथा दाननीतिसे अपने अधीन रखे। मध्यम स्त्रीको दान और भेदसे और अधम स्त्रीको भेद और दण्डनीतिसे वशीभूत करे। परंतु दण्ड देनेके अनन्तर भी साम-दान आदिसे उसको प्रसन्न कर ले। भर्ताका अहित करनेवाली और व्यभिचारिणी स्त्री कालकूट विषके समान होती है, इसलिये उसका परित्याग कर देना चाहिये। उत्तम कुलमें उत्पन्न पतिव्रता, विनीत और भर्ताका हित चाहनेवाली स्त्रीका सदा आदर करना चाहिये। इस रीतिसे जो पुरुष चलता है वह त्रिवर्गकी प्राप्ति करता है और लोकमें सुख पाता है।

ब्रह्माजी बोले—मुनीश्वरो! मैंने संक्षेपमें पुरुषोंको स्त्रियोंके साथ कैसे व्यवहार करना चाहिये, यह बताया। अब पुरुषोंके साथ स्त्रियोंको कैसा व्यवहार करना चाहिये, उसे बता रहा हूँ आप सब सुनें—

पतिकी सम्यक् आराधना करनेसे स्त्रियोंको पतिका प्रेम प्राप्त होता है तथा फिर पुत्र तथा स्वर्ग आदि भी उसे प्राप्त हो जाते हैं, इसलिये स्त्रीको पतिकी सेवा करना आवश्यक है। सम्पूर्ण कार्य विधिपूर्वक किये जानेपर ही उत्तम फल देते हैं और विधि-निषेधका ज्ञान शास्त्रसे जाना जाता है। स्त्रियोंका शास्त्रमें अधिकार नहीं है और न ग्रन्थोंके धारण करनेमें अधिकार है। इसलिये स्त्रीद्वारा शासन अनर्थकारी माना जाता है[२]। स्त्रीको दूसरेसे विधि-निषेध जाननेकी अपेक्षा रहती है। पहले तो उसे भर्ता सब धर्मोंका निर्देश करता है और भर्ताके मरनेके अनन्तर पुत्र उसे विधवा एवं पतिव्रताके धर्म बतलाये। बुद्धिके विकल्पोंको छोड़कर अपने बड़े पुरुष जिस मार्गपर चले हों, उसीपर चलनेमें उसका सब प्रकारसे कल्याण है। पतिव्रता स्त्री ही गृहस्थके धर्मोंका मूल है। (अध्याय ८-९)

पतिव्रता स्त्रियोंके कर्तव्य एवं सदाचारका वर्णन, स्त्रियोंके लिये गृहस्थ-धर्मके उत्तम व्यवहारकी आवश्यक बातें[३]

ब्रह्माजी बोले—मुनीश्वरो! गृहस्थ-धर्मका मूल पतिव्रता स्त्री है, पतिव्रता स्त्री पतिका आराधन किस विधिसे करे, उसका अब मैं वर्णन करता हूँ। आप सब इसे ध्यानपूर्वक सुनें।

१. सतीत्वे प्रायशः स्त्रीणां प्रदृष्टं कारणत्रयम्। परपुंसामसम्प्रीतिः प्रिये प्रीतिः स्वरक्षणे॥ (ब्राह्मपर्व ८। ६६)

२. शास्त्राधिकारो न स्त्रीणां न ग्रन्थानां च धारणे। तस्मादिहान्ये मन्यन्ते तच्छासनमनर्थकम्॥ (ब्राह्मपर्व ९। ६)

३. इस प्रकरणमें आगेके कुछ अंश—गोरक्षा, व्यापार, कृषि और लोक-संचालन आदि विषय प्रायः वार्ताशास्त्रसे सम्बन्धित हैं, जो लगभग नष्टप्राय हो गये हैं। इनका संक्षिप्त विवरण भविष्यपुराणमें मिलता है, जिसके कुछ अंश यहाँ दिये जा रहे हैं।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagna Sharda Peeth

आराधना करने योग्य पतिके आराधनकी विधि यह है कि उसकी चित्तवृत्तिको भलीभाँति जानकर उसके अनुकूल चलना और सदा उसका हित चाहते रहना अर्थात् पतिके चित्तके अनुकूल चलना और यथोचित व्यवहार करना, यह पतिव्रताका मुख्य धर्म है—

आराध्यानां हि सर्वेषामयमाराधने विधिः।
चित्तज्ञानानुवृत्तिश्च हितैषित्वं च सर्वदा॥

(ब्राह्मपर्व १०।१)

पतिके माता-पिता, बहिन, ज्येष्ठ भाई, चाचा, आचार्य, मामा तथा वृद्ध स्त्रियों आदिका उसे आदर करना चाहिये और जो सम्बन्धमें अपनेसे छोटे हों, उनको स्नेहपूर्वक आज्ञा देनी चाहिये। जहाँ भी अपनेसे बड़े सास-ससुर या गुरु विद्यमान हों या अपना पति उपस्थित हो वहाँ उनके अनुकूल ही आचरण करना चाहिये; क्योंकि यही चरित्र स्त्रियोंके लिये प्रशस्त माना गया है। हास-परिहास करनेवाले पतिके मित्र और देवर आदिके साथ भी एकान्तमें बैठकर हास-परिहास नहीं करना चाहिये। किसी पुरुषके साथ एकान्तमें बैठना, स्वच्छन्दता और अत्यधिक हास-परिहास करना प्रायः कुलीन स्त्रियोंके पातिव्रत-धर्मको नष्ट करनेके कारण बनते हैं। सहसा दुष्टके संसर्गमें आकर युवकोंके साथ हास-परिहास करना उचित नहीं होता, क्योंकि स्वतन्त्र स्त्रियोंकी निर्भीकता एकान्तमें बुरे आचरणके लिये सफल हो जाती है। अतः उत्तम स्त्रीको ऐसा नहीं करना चाहिये। इस रीतिसे स्त्रीका शील नहीं बिगड़ता और कुलकी निन्दा भी नहीं होती। बुरे संकेत करनेवाले और बुरे भावोंको प्रकट करनेवाले पुरुषोंको भाई या पिताके समान देखते हुए स्त्रीको चाहिये कि उनका सर्वथा परित्याग कर दे। दुष्ट पुरुषोंका अनुचित आग्रह स्वीकार करना, उनके साथ वार्तालाप करना, हासयुक्त संकेत अथवा कुदृष्टिपर ध्यान देना, दूसरे पुरुषके हाथसे कुछ लेना या उसे देना सर्वथा परित्याज्य है। घरके द्वारपर बैठने या खड़ा होने, राजमार्गकी ओर देखने, किसी अपरिचित देश या घरमें जाने, उद्यान और प्रदर्शनी आदिमें रुचि रखनेसे स्त्रीको बचना चाहिये। बहुत पुरुषोंके मध्यसे निकलना, ऊँचे स्वरसे बोलना, हँसी-मजाक करना एवं अपनी दृष्टि, वाणी तथा शरीरसे चापल्य प्रकट करना, खँखारना तथा सीत्कारी भरना, दुष्ट स्त्री, भिक्षुकी, तान्त्रिक, मान्त्रिक आदिमें आसक्ति और उनके मण्डलोंमें निवास करनेकी इच्छा—ये सब बातें पतिव्रता स्त्रीके लिये त्याज्य हैं। इस प्रकारके आचरण तो प्रायः दुष्टोंके लिये ही उचित होते हैं, कुलीन स्त्रियोंके लिये नहीं। इन निन्दनीय बातोंसे अपनी रक्षा करते हुए स्त्रियोंको चाहिये कि वे अपने पातिव्रत-धर्म तथा कुलकी मर्यादाकी रक्षा करें।

उत्तम स्त्री पतिको मन, वचन तथा कर्मसे देवताके समान समझे और उसकी अर्धाङ्गिनी बनकर सदा उसके हित करनेमें तत्पर रहे। देवता और पितरोंके कृत्य तथा पतिके स्नान, भोजन एवं अभ्यागतोंके स्वागत-सत्कार आदिमें बड़ी ही सावधानी और समयका ध्यान रखे। वह पतिके मित्रोंको मित्र तथा शत्रुओंको शत्रुके समान समझे। अधर्म और अनर्थसे दूर रहकर पतिको भी उससे बचाये। पतिको क्या प्रिय है और कौन-सा भोजनादि पदार्थ उसके लिये हितकर है तथा कैसे पतिके साथ विचारों आदिमें समानता आये इस बातको सर्वदा उसे ध्यानमें रखना चाहिये, साथ ही उसे सेवकोंको असंतुष्ट नहीं रखना चाहिये।

रहनेका घर और शरीर—ये दो गृहणियोंके लिये मुख्य हैं। इसलिये प्रयत्नपूर्वक वह सर्वप्रथम अपने घर तथा शरीरको सुसंस्कृत (पवित्र) रखे।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

शरीरसे भी अधिक स्वच्छ और भूषित घरको रखे। तीनों कालोमें पूजा-अर्चना करे और व्यवहारकी सभी वस्तुओंको यथाविधि साफ रखे। प्रातः, मध्याह्न और सायंकालके समय घरका मार्जन कर स्वच्छ करे। गोशाला आदिको स्वच्छ करवा ले। दास-दासियोंको भोजन आदिसे संतुष्ट कर उन्हें अपने-अपने कार्योंमें लगाये। स्त्रीको उचित है कि वह प्रयोगमें आनेवाले शाक, कन्द, मूल, फल आदिके बीजोंका अपने-अपने समयपर संग्रह कर ले और समयपर इन्हें खेत आदिमें बुआ दे। ताँबे, काँसे, लोहे, काष्ठ और मिट्टीसे बने हुए अनेक प्रकारके बर्तनोंका घरमें संग्रह रखे। जल रखने तथा जल निकालने और जल पीनेके कलशादि पात्र, शाक-भाजी आदिसे सम्बद्ध विभिन्न पात्र, घी, तेल, दूध, दही आदिसे सम्बद्ध बर्तन, मूसल, ओखली, झाड़ू, चलनी, सँड़सी, सिल, लोढ़ा, चक्की, चिमटा, कड़ाही, तवा, तराजू, बाट, पिटार, संदूक, पलंग तथा चौकी आदि गृहस्थीके प्रयोगमें आनेवाले आवश्यक उपकरणोंकी प्रयत्नपूर्वक व्यवस्था करनी चाहिये। उसे चाहिये कि वह हींग, जीरा, पिप्पल, राई, मरिच, धनिया तथा सोंठ आदि अनेक प्रकारके मसाले, लवण, अनेक प्रकारके क्षार-पदार्थ, सिरका, अचार आदि, अनेक प्रकारकी दालें, सब प्रकारके तेल, सूखा काष्ठ, विविध प्रकारके दूध-दहीसे बने पदार्थ और अनेक प्रकारके कन्द आदि जो-जो भी वस्तु नित्य तथा नैमित्तिक कार्योंमें अपेक्षित हों, उन्हें अपनी सामर्थ्यके अनुसार प्रयत्नपूर्वक पहलेसे ही संग्रह करना चाहिये, जिससे समयपर उन्हें ढूँढ़ना न पड़े। जिस वस्तुकी भविष्यमें आवश्यकता पड़े, उसे पहलेसे ही संग्रहमें रखना चाहिये। सूखे-गीले, पिसे, बिना पिसे तथा कच्चे और पक्के अन्नादि पदार्थोंका अच्छी तरह हानि-लाभ विचारकर ही संग्रह करना चाहिये।

पतिव्रता नारी गुरु, बालक, वृद्ध, अभ्यागत और पतिकी सेवामें आलस्य न करे। पतिकी शय्या स्वयं बिछाये। देवर आदिके द्वारा पहिने हुए वस्त्र, माला तथा आभूषणोंको वह कभी न तो धारण करे और न इनके शय्या, आसन आदिपर बैठे। गौका इतना दूध निकाले कि जिसमें बछड़े भूखे न रह जायँ। दहीसे घी बनाये। वर्षा, शरद् और वसन्त-ऋतुमें गायको दो बार दुहना चाहिये, शेष ऋतुओंमें एक ही बार दुहे। चरवाहे, ग्वाले आदिको चरवाहीके बदले रुपये अथवा अनाज दे। गोदोहक बछड़ोंका भाग अपने प्रयोगमें न ला सकें, यह देखता रहे, साथ ही यह भी ध्यान रखे कि दूध दुहनेवाला समयपर दूध दुह रहा है या नहीं, क्योंकि दोहनके यथोचित समयपर ही गायको दुहना चाहिये। समयका अतिक्रमण अच्छा नहीं होता। जब गाय ब्याय जाय, तब एक महीनेतक उसका दूध नहीं निकालना चाहिये, उसे बछड़ेको ही पीने देना चाहिये। फिर एक महीनेतक एक थनका, तदनन्तर एक महीनेतक दो थनका और फिर तीन थनका दूध निकालना चाहिये। एक या दो थन बछड़ेके लिये अवश्य छोड़ना चाहिये। यथासमय तिलकी खली, कोमल हरी घास, नमक तथा जल आदिसे बछड़ोंका पालन करना चाहिये। बूढ़ी, गर्भिणी, दूध देनेवाली, बछड़ेवाली तथा बछियावाली—इन पाँचों गायोंका घास आदिके द्वारा समानरूपसे बराबर पालन-पोषण करते रहना चाहिये। किसीको भी न्यून तथा अधिक न समझे। गौके गलेमें घंटी अवश्य बाँधनी चाहिये। एक तो घंटी बाँधनेसे गौकी शोभा होती है, दूसरे उसके शब्दोंसे कोई जीव-जन्तु डरकर उसके पास नहीं आते, इससे उसकी रक्षा भी होती है और गौ कहीं चली जाय तो उसके शब्दसे उसे ढूँढ़ा भी जा सकता है। हिंसक

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

पशुओं और सर्पोंसे रहित, घास और जलसे युक्त, छायादार घने वृक्षोंवाले तथा पशुओंके रोगसे रहित स्थानपर गायोंके रहनेके लिये गोष्ठ या गोशाला बनानी चाहिये। कृषि-कार्यमें लगे सेवकोंके लिये देश-काल और उनके कार्यके अनुरूप भोजन तथा वेतनका प्रबन्ध करना चाहिये। खेत, खलिहान अथवा वाटिका आदिमें जहाँ भी सेवक कामपर लगे हों वहाँ बार-बार जाकर उनके कार्य एवं कार्यके प्रति उनके मनोयोगकी जानकारी करनी चाहिये। उनमेंसे जो योग्य हो, अच्छा कार्य करता हो, उसका अधिक सत्कार करे और उसके लिये भोजन, आवास आदिकी औरोंसे विशेष व्यवस्था करे। समय-समयपर सब प्रकारके अन्न और कन्द-मूलके बीजोंका संग्रह करे तथा यथासमय उनकी बुआई कर दे।

घरका मूल है स्त्री और गृहस्थाश्रमका मूल है अन्न। इसलिये भोज्यादि अन्न पदार्थोंमें घरकी स्त्रीको मुक्तहस्त नहीं होना चाहिये अर्थात् अन्नको वह वृथा नष्ट न करे, सदा सँजोकर रखे। उसे मितव्ययी होना चाहिये। अन्नादिमें मुक्तहस्त होना गृहिणियोंके लिये अच्छा नहीं माना जाता। वह संचय करनेमें और खर्च करनेमें मधुमक्खी, वल्मीक और अंजनके समान हानि-लाभ देखकर अन्नको थोड़ा-सा समझकर उसकी अवज्ञा न करे। क्योंकि थोड़ा-थोड़ा ही मधु एकत्र करती हुई मधुमक्खी कितना एकत्र कर लेती है? इसी प्रकार दीमक जरा-जरा-सी मिट्टी लाकर कितना ऊँचा वल्मीक बना लेती है? किंतु इसके विपरीत बहुत-सा बनाया गया अंजन भी नित्य थोड़ा-थोड़ा आँखमें डालते रहनेसे कुछ दिनोंमें समाप्त हो जाता है। इसी रीतिसे सभी वस्तुओंका संग्रह और खर्च हो जाता है। इसमें थोड़ी वस्तुकी अवज्ञा नहीं करनी चाहिये। घरके सभी कार्य स्त्री-पुरुषके एकमत होनेपर ही अच्छे होते हैं।

जगत्में ऐसे भी हजारों पुरुष हैं, जिनके सब कार्योंमें स्त्रीकी प्रधानता रहती है। यदि स्त्री बुद्धिमान् और सुशील हो तो कुछ हानि नहीं होती, किंतु इसके विपरीत होनेपर अनेक प्रकारके दुःख होते हैं। इसलिये स्त्रीकी योग्यता-अयोग्यताको ठीकसे समझकर बुद्धिमान् पुरुषको उसे कार्यमें नियुक्त करना चाहिये। इस प्रकार योग्यतासे कार्यमें नियुक्त की गयी स्त्रीको चाहिये कि वह सौभाग्यवश या अपने उद्यम आदिसे अपने पतिकी भलीभाँति सेवा कर उसे अपने अनुकूल बनाये।

ब्रह्माजी बोले—हे मुनीश्वरो! घरमें स्त्री प्रातःकाल सबसे पहले उठे और अपने कार्यमें प्रवृत्त हो जाय तथा रात्रिमें सबसे पीछे भोजन करे और सबके बादमें सोये। पति तथा ससुर आदिके उपस्थित न रहनेपर स्त्रीको घरकी देहली पार नहीं करनी चाहिये। वह बड़े सबेरे ही जग जाय। स्त्री पतिके समीप बैठकर ही सब सेवकोंको कामकी आज्ञा दे, बाहर न जाय। जब पति भी जग उठे तब वहाँके सभी आवश्यक कार्य करके, घरके अन्य कार्योंको भी प्रमादरहित होकर करे। रात्रिके पहले ही उत्तम वस्त्राभूषणोंको उतारकर घरके कार्योंको करने योग्य साधारण वस्त्रोंको पहनकर तत्तत् समयमें करने योग्य कार्योंको यथाक्रम करना चाहिये। उसे चाहिये कि सबसे पहले रसोई, चूल्हा आदिको भलीभाँति लीप-पोतकर स्वच्छ करे। रसोईके पात्रोंको माँज-धो और पोंछकर वहाँ रखे तथा अन्य भी सब रसोईकी सामग्री वहाँ एकत्र करे। रसोई-घर न तो अधिक गुप्त (बंद) हो और न एकदम खुला ही हो। स्वच्छ, विस्तीर्ण और जिसमेंसे धुआँ निकल जाय ऐसा होना चाहिये। रसोई-घरके भोजन पकानेवाले पात्रोंको तथा दूध-दहीके पात्रोंको सीपी, रस्सी अथवा वृक्षकी छालसे खूब रगड़कर अंदर-बाहरसे

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

अच्छी तरह धो लेना चाहिये। रात्रिमें धुएँ-आगके द्वारा तथा दिनमें धूपमें उन्हें सुखा लेना चाहिये, जिससे उन पात्रोंमें रखा जानेवाला दूध-दही आदि खराब न होने पाये। बिना शोधित पात्रोंमें रखा दूध-दही विकृत हो जाता है। दूध-दही, घी तथा बने हुए पाकादिको सावधानीसे रखना चाहिये और उसका निरीक्षण करते रहना चाहिये।

स्नानादि आवश्यक कृत्य करके उसे अपने हाथसे पतिके लिये भोजन बनाना चाहिये। उसे यह विचार करना चाहिये कि मधुर, क्षार, अम्ल आदि रसोंमें कौन-कौन-सा भोजन पतिको प्रिय है, किस भोजनसे अग्निकी वृद्धि होती है, क्या पथ्य है और कौन भोजन कालके अनुरूप होगा, क्या अपथ्य है, उत्तम स्वास्थ्य किस भोजनसे प्राप्त होगा और कौन भोजन कालके अनुरूप होगा आदि बातोंका भलीभाँति विचारकर और निर्णयकर उसे वैसा ही भोजन प्रीतिपूर्वक बनाना चाहिये। रसोई-घरमें सदासे काम करनेवाले, विश्वस्त तथा आहारका परीक्षण करनेवाले व्यक्तिको ही सूपकारके रूपमें नियुक्त करना चाहिये। रसोईके स्थानमें किसी अन्य दुष्ट स्त्री-पुरुषोंको न आने दे। इस विधिसे भोजन बनाकर सब पदार्थोंको स्वच्छ पात्रोंसे आच्छादित कर देना चाहिये, फिर रसोई-घरसे बाहर आकर पसीने आदिको पोंछकर, स्वच्छ होकर, गन्ध, ताम्बूल, माला-वस्त्र आदिसे अपनेको थोड़ा-सा भूषित करे। फिर भोजनके निमित्त यथोचित समयपर विनयपूर्वक पतिको बुलाये। सब प्रकारके व्यञ्जन परोसे, जो देश-कालके विपरीत न हो और जिनका परस्पर विरोध भी न हो, जैसे दूध और लवणका है। जिस पदार्थमें पतिकी अधिक रुचि देखे उसे और परसे। इस प्रकार पतिको प्रीतिपूर्वक भोजन कराये।

सपत्नियोंको अपनी बहिनके समान तथा उनकी संतानोंको अपनी संतानसे भी अधिक प्रिय समझे। उनके भाई-बन्धुओंको अपने भाइयोंके समान ही समझे। भोजन, वस्त्र, आभूषण, ताम्बूल आदि जबतक सपत्नियोंको न दे दे, तबतक स्वयं भी ग्रहण न करे। यदि सपत्नीको अथवा किसी आश्रित जनको कुछ रोग हो जाय तो उसकी चिकित्साके लिये ओषधि आदिकी भलीभाँति व्यवस्था कराये। नौकर, बन्धु और सपत्नीको दुःखी देख स्वयं भी उन्हींके समान दुःखी होवे और उनके सुखमें सुख माने। सभी कार्योंसे अवकाश मिलनेपर सो जाय और रात्रिमें उठकर अनावश्यक धन-व्यय कर रहे पतिको एकान्तमें धीरे धीरे समझाये। घरका सब वृत्तान्त पतिको एकान्तमें बताये, परंतु सपत्नियोंके दोषोंको न कहे, किंतु यदि कोई उनका व्यभिचार आदि बड़ा दोष देखें, जिसे गुप्त रखनेसे कोई अनर्थ हो तो ऐसा दोष पतिको अवश्य बता देना चाहिये। दुर्भगा, निःसंतान तथा पतिद्वारा तिरस्कृत सपत्नियोंको सदा आश्वासन दे। उन्हें भोजन, वस्त्र, आभूषण आदिसे दुःखी न होने दे। यदि किसी नौकर आदिपर पति कोप करे तो उसे भी आश्वस्त करना चाहिये, परंतु यह अवश्य विचार कर लेना चाहिये कि इसे आश्वासन देनेसे कोई हानि नहीं होनेवाली है।

इस प्रकार स्त्री अपने पतिकी सम्पूर्ण इच्छाओंको पूर्ण करे। अपने सुखके लिये जो अभीष्ट हो, उसका भी परित्याग कर पतिके अनुकूल ही सब कार्य करे; क्योंकि स्त्रियोंके देवता पति, वर्णोंके देवता ब्राह्मण हैं तथा ब्राह्मणोंके देवता अग्नि हैं और प्रजाओंका देवता राजा है।

स्त्रियोंके त्रिवर्ग-प्राप्तिके दो मुख्य उपाय हैं—प्रथम सब प्रकारसे पतिको प्रसन्न रखना और द्वितीय आचरणकी पवित्रता। पतिके चित्तके अनुकूल चलनेसे जैसी प्रीति पतिकी स्त्रीपर होती

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

है वैसी प्रीति रूपसे, यौवनसे और अलंकारादि आभूषणोंसे नहीं होती*। क्योंकि प्रायः यह देखा जाता है कि उत्तम रूप और युवावस्थावाली स्त्रियाँ भी पतिके विपरीत आचरण करनेसे दौर्भाग्यको प्राप्त करती हैं और अति कुरूप तथा हीन अवस्थावाली स्त्रियाँ भी पतिके चित्तके अनुकूल चलनेसे उनकी अत्यन्त प्रिय हो जाती हैं। इसलिये पतिके चित्तका अभिप्राय भलीभाँति समझना और उसके अनुकूल आचरण करना यही स्त्रियोंके लिये सब सुखोंका हेतु है तथा यही समस्त श्रेष्ठ योग्यताओंका कारण है। इसके बिना तो स्त्रीके अन्य सभी गुण बन्ध्यत्वको प्राप्त हो जाते हैं अर्थात् निष्फल हो जाते हैं और अनर्थके कारण बन जाते हैं। इसलिये स्त्रीको अपनी योग्यता (परचित्तज्ञता) सर्वथा बढ़ाते रहना चाहिये।

पतिके आनेका समय जानकर उनके आनेके पूर्व ही वह घरको स्वच्छकर बैठनेके लिये उत्तम आसन बिछा दे तथा पतिदेवके आनेपर स्वयं अपने हाथसे उनके चरण धोकर उन्हें आसनपर बैठाये और पंखा हाथमें लेकर धीरे-धीरे डुलाये तथा सावधान होकर उनकी आज्ञा प्राप्त करनेकी प्रतीक्षा करे। ये सब काम दासी आदिसे न करवाये। पतिके स्नान, आहार, पानादिमें स्पृहा दिखाये। पतिके संकेतोंको समझकर सावधानीपूर्वक सभी कार्योंको करे और भोजनादि निवेदित करे। अपने बन्धु-बान्धवों तथा पतिके बन्धुओं और सपत्नीके साथ स्वागत-सत्कार पतिके इच्छानुसार करे अर्थात् जिसपर पतिकी रुचि न देखे उससे अधिक शिष्टाचार न करे। स्त्रियोंके लिये सभी अवस्थाओंमें स्वकुलकी अपेक्षा पतिकुल ही विशेष पूज्य होता है; क्योंकि कोई भी कुलीन पुरुष अपनी कन्यासे उपकारकी आशा भी नहीं रखता और जो रखता है वह अनुचित ही है। कन्याका विवाह करनेके बाद फिर उससे अपनी आजीविकाकी इच्छा करना यह महात्मा और कुलीन पुरुषोंकी रीति नहीं है, अतः स्त्रीके सम्बन्धियोंको चाहिये कि वे केवल मित्रताके लिये, प्रीतिके लिये ही सम्बन्ध बढ़ानेकी इच्छा करें और प्रसंगवश यथाशक्ति उसे कुछ देते भी रहें। उससे कोई वस्तु लेनेकी इच्छा न रखें। कन्याके मायकेवालोंको कन्याके स्वामीकी रक्षाका प्रयत्न सर्वथा करना चाहिये, उनके परस्पर प्रीति-सम्बन्धकी चर्चा सर्वत्र करनी चाहिये और अपनी मिथ्या प्रशंसा नहीं करनी चाहिये। साधु-पुरुषोंका व्यवहार अपने सम्बन्धियोंके प्रति ऐसा ही होता है।

जो स्त्री इस प्रकारके सद्वृत्तको भलीभाँति जानकर व्यवहार करती है, वह पति और उसके बन्धु-बान्धवोंको अत्यन्त मान्य होती है। पतिकी प्रिय, साधु वृत्तवाली तथा सम्बन्धियोंमें प्रसिद्धिको प्राप्त होनेपर भी स्त्रीको लोकापवादसे सर्वदा डरते रहना चाहिये; क्योंकि सीता आदि उत्तम पतिव्रताओंको भी लोकापवादके कारण अनेक कष्ट भोगने पड़े थे। भोग्य होनेके कारण, गुण-दोषोंका ठीक-ठीक निर्णय न कर पानेसे तथा प्रायः अविनयशीलताके कारण स्त्रियोंके व्यवहारको समझना अत्यन्त दुष्कर है। ठीक प्रकारसे दूसरेकी मनोवृत्तिको न समझनेके कारण तथा कपट-दृष्टिके कारण एवं स्वच्छन्द हो जानेसे ऐसी बहुत ही कम स्त्रियाँ हैं जो कलंकित नहीं हो जातीं। दैवयोग अथवा कुयोगसे या व्यवहारकी अनभिज्ञतासे शुद्ध हृदयवाली स्त्री भी लोकापवादको प्राप्त हो

* भर्ताधिदेवता नार्या वर्णा ब्राह्मणदेवताः। ब्राह्मणा ह्यग्निदेवास्तु प्रजा राजन्यदेवताः॥
तासां त्रिवर्गसंसिद्धौ प्रदिष्टं कारणद्वयम्। भर्तुर्यदनुकूलत्वं यच्च शीलमविप्लुतम्॥
न तथा यौवनं लोके नापि रूपं न भूषणम्। यथा प्रियानुकूलत्वं सिद्धं शश्वदनौषधम्॥ (ब्राह्मपर्व १३। ३५—३७)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

जाती है। स्त्रियोंका यह दौर्भाग्य ही दुःख भोगनेका कारण है। इसका कोई प्रतीकार नहीं, यदि है तो इसकी ओषधि है उत्तम चरित्रका आचरण और लोक-व्यवहारको ठीकसे समझना।

ब्रह्माजी बोले—मुनीश्वरो! उत्तम आचरणवाली स्त्री भी यदि बुरा सङ्ग करे या अपनी इच्छासे जहाँ चाहे चली जाय तो उसे अवश्य कलंक लगता है और झूठा दोष लगनेसे कुल भी कलंकित हो जाता है। उत्तम कुलकी स्त्रियोंके लिये यह आवश्यक है कि वे किसी भी भाँति अपने कुल—मातृकुल, पितृकुल एवं संततिको कलंक न लगने दें। ऐसी कुलीन स्त्रीसे ही धर्म, अर्थ तथा काम—इस त्रिवर्गकी सिद्धि हो सकती है। इसके विपरीत बुरे आचरणवाली स्त्रियाँ अपने कुलोंको नरकमें डालती हैं और चरित्रको ही अपना आभूषण माननेवाली स्त्रियाँ नरकमें गिरे हुओंको भी निकाल लेती हैं। जिन स्त्रियोंका चित्त पतिके अनुकूल है और जिनका उत्तम आचरण है, उनके लिये रत्न, सुवर्ण आदिके आभूषण भारस्वरूप ही हैं अर्थात् स्त्रियोंके यथार्थ आभूषण ये दो हैं—पतिकी अनुकूलता और उत्तम आचरण। जो स्त्री पतिकी और लोककी अपने यथोचित व्यवहारादिसे आराधना करती है अर्थात् पतिके अनुकूल चलती है और लोकव्यवहारको ठीक-ठीक समझकर तदनुकूल आचरण करती है, वह स्त्री धर्म, अर्थ तथा कामकी अबाधसिद्धि प्राप्त कर लेती है—

भर्तृचित्तानुकूलत्वं यासां शीलमविच्युतम्।
तासां रत्नसुवर्णादि भार एव न मण्डनम्॥
लोकज्ञाने परा कोटिः पत्यौ भक्तिश्च शाश्वती।
शुद्धान्वयानां नारीणां विद्यादेतत्कुलव्रतम्॥
तस्माल्लोकश्च भर्ता च सम्यगाराधितौ यया।
धर्ममर्थं च कामं च सैवाप्नोति निरत्यया॥

(ब्राह्मपर्व १३। ६४—६६)

जिस स्त्रीका पति परदेशमें गया हो, उस स्त्रीको अपने पतिकी मङ्गलकामनाके सूचक सौभाग्य-सूत्र आदि स्वल्प आभूषण ही पहनने चाहिये, विशेष शृंगार नहीं करना चाहिये। उसे पतिद्वारा प्रारम्भ किये कार्योंका प्रयत्नपूर्वक सम्पादन करते रहना चाहिये। वह देहका अधिक संस्कार न करे। रात्रिको सास आदि पूज्य स्त्रियोंके समीप सोये। बहुत अधिक खर्च न करे। व्रत, उपवास आदिके नियमोंका पालन करती रहे। दैवज्ञ आदि श्रेष्ठजनोंसे पतिके कुशल-क्षेमका वृत्तान्त जाननेकी कोशिश करे और परदेशमें उसके कल्याणकी कामनासे तथा शीघ्र आगमनकी अभिलाषासे नित्य देवताओंका पूजन करे। अत्यन्त उज्ज्वल वेष न बनाये और न सुगन्धित तैलादि द्रव्योंका प्रयोग करे। उसे सम्बन्धियोंके घर नहीं जाना चाहिये। यदि किसी आवश्यक कार्यवश जाना ही पड़ जाय तो अपनेसे बड़ोंकी आज्ञा लेकर पतिके विश्वसनीय जनोंके साथ जाय। किंतु वहाँ अधिक समयतक न रहे, शीघ्र वापस लौट आये। वहाँ स्नान आदि व्यवहारोंको न करे। प्रवाससे पतिके लौट आनेपर प्रसन्न-मनसे सुन्दर वस्त्राभूषणोंसे अलंकृत होकर पतिका यथोचित भोजनादिसे सत्कार करे और देवताओंसे पतिके लिये माँगी गयी मनौतियोंको पूजादिद्वारा यथाविधि सम्पन्न करे।

इस प्रकार मन, वाणी तथा कर्मोंसे सभी अवस्थाओंमें पतिका हित-चिन्तन करती रहे, क्योंकि पतिके अनुकूल रहना स्त्रियोंके लिये विशेष धर्म है। अपने सौभाग्यपर अहंकार न करे और उद्धत कार्योंको भी न करे तथा अत्यन्त विनम्रभावसे रहे। इस प्रकारसे पतिकी सेवा करते हुए जो स्त्री पतिके कार्योंमें प्रमाद नहीं करती, पूज्यजनोंका सदा आदर करती रहती है, नौकरोंका भरण-पोषण करती है, नित्य सद्गुणोंकी अभिवृद्धिके लिये प्रयत्नशील रहती

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

है तथा सब प्रकारसे अपने शीलकी रक्षा करती रहती है, वह स्त्री इस लोक तथा परलोकमें उत्तम सुख एवं उत्तम कीर्ति प्राप्त करती है[१]।

जिस स्त्रीपर पति अति क्रोधयुक्त हो और उसका आदर न करे, वह स्त्री दुर्भगा कहलाती है। उसे चाहिये कि वह नित्य व्रत-उपवासादि क्रियाओंमें संलग्न रहे और पतिके बाह्य कार्योंमें विशेषरूपसे सहयोग करे। जातिसे कोई स्त्री दुर्भगा अथवा सुभगा (सौभाग्यशालिनी) नहीं होती। वह अपने व्यवहारसे ही पतिकी प्रिय और अप्रिय हो जाती है। उत्तम स्त्री पतिके चित्तका अभिप्राय न जाननेसे, उसके प्रतिकूल चलनेसे और लोकविरुद्ध आचरण करनेसे दुर्भगा हो जाती है एवं उसके अनुकूल चलनेसे सुभगा हो जाती है। मनोवृत्तिके अनुकूल कार्य करनेसे पराया भी प्रिय हो जाता है और मनोऽनुकूल कार्य न करनेसे अपना जन भी शीघ्र शत्रु बन जाता है। इसलिये स्त्रीको मन, वचन तथा अपने कार्योंद्वारा सभी अवस्थाओंमें पतिके अनुसार ही प्रिय आचरण करना चाहिये। इस प्रकार कहे गये स्त्री-वृत्तको भलीभाँति समझकर जो स्त्री पतिकी सेवा करती है, वह पतिको अपना बना लेती है और पतिकी सेवासे सभी सुखों तथा त्रिवर्गको भी प्राप्त कर लेती है[२]।

(अ० १०—१५)

पञ्चमहायज्ञोंका वर्णन तथा व्रत-उपवासोंके प्रकरणमें आहारका निरूपण एवं प्रतिपदा तिथिकी उत्पत्ति, व्रत-विधि और माहात्म्य

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! इस प्रकार स्त्रियोंके लक्षण और सदाचारका वर्णन करके ब्रह्माजी अपने लोक तथा ऋषिगण भी अपने-अपने आश्रमोंकी ओर चले गये। अब गृहस्थोंको कैसा आचरण करना चाहिये, उसे मैं बताता हूँ, आप ध्यानपूर्वक सुनें—

गृहस्थोंको वैवाहिक अग्निमें विधिपूर्वक गृह्यकर्मोंको करना चाहिये तथा पञ्चमहायज्ञोंका भी सम्पादन करना चाहिये। गृहस्थोंके यहाँ जीव-हिंसा होनेके पाँच स्थान हैं—ओखली, चक्की, चूल्हा, झाड़ू तथा जल रखनेके स्थान। इस हिंसा दोषसे मुक्ति पानेके लिये गृहस्थोंको पञ्चमहायज्ञों —(१) ब्रह्मयज्ञ, (२) पितृयज्ञ, (३) दैवयज्ञ, (४) भूतयज्ञ तथा (५) अतिथियज्ञको नित्य अवश्य करना चाहिये। अध्ययन करना तथा अध्यापन करना यह ब्रह्मयज्ञ है, तर्पणादि कर्म पितृयज्ञ है। देवताओंके लिये हवनादि कर्म दैवयज्ञ है। बलिवैश्वदेव कर्म भूतयज्ञ है तथा अतिथि एवं अभ्यागतोंका स्वागत-सत्कार करना अतिथियज्ञ है—

१- एवमाराध्य भर्तारं तत्कार्येष्वप्रमादिनी। पूज्यानां पूजने नित्यं भृत्यानां भरणेषु च॥
गुणानामर्जने नित्यं शीलवत्परिरक्षणे। प्रेत्य चेह च निर्द्वन्द्वं सुखमाप्नोत्यनुत्तमम्॥

(ब्राह्मपर्व १४। ३१-३२)

२- न कापि दुर्भगा नाम सुभगा नाम जातितः। व्यवहाराद्भवत्येष निर्देशो रिपुमित्रवत्॥
भर्तृचित्तापरिज्ञानादननुष्ठानतोऽपि वा। वृत्तैर्लोकविरुद्धैश्च यान्ति दुर्भगतां स्त्रियः॥
आनुकूल्यान्मनोवृत्तेः परोऽपि प्रियतां व्रजेत्। प्रातिकूल्यान्निजोऽप्याशु प्रियः प्रद्वेषतामियात्॥
तस्मात् सर्वास्ववस्थासु मनोवाक्कायकर्मभिः। प्रियं समाचरेन्नित्यं तच्चित्तानुविधायिनी॥
एवमेव यथोद्दिष्टं स्त्रीवृत्तं यानुतिष्ठति। पतिमाराध्य सम्पूर्णं त्रिवर्गं साधिगच्छति॥

(ब्राह्मपर्व १५। १६—१९, ३२)

[वर्तमान समयमें पाश्चात्त्य सभ्यताके प्रभावसे देशमें दूषित और उच्छृङ्खलतापूर्ण वातावरण बन गया है। स्त्रियोंसे सम्बद्ध भविष्यपुराणका यह उल्लेख रामायण, महाभारत, स्मृतियों तथा अन्य पुराणोंमें भी उपलब्ध है। आजके विश्वकी सभी समस्याओंका एकमात्र मुख्य कारण आचारका पतन है, इसका प्रभाव संततियोंपर भी पड़ता है। अतः सभीको सदाचरणपर विशेष ध्यान देनेकी आवश्यकता है।]

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth

अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः पितृयज्ञश्च तर्पणम्।
होमो दैवो बलिर्भौतस्तथाऽन्योऽतिथिपूजनम्॥

(ब्राह्मपर्व १६।७)

—इन पाँच नियमोंका पालन करनेवाला गृहस्थी घरमें रहता हुआ भी पञ्चसूना-दोषोंसे लिप्त नहीं होता। यदि समर्थ होते हुए भी वह इन पाँच यज्ञोंको नहीं करता है तो उसका जीवन ही व्यर्थ है।

राजा शतानीकने पूछा—जिस ब्राह्मणके घरमें अग्निहोत्र नहीं होता, वह मृतकके समान होता है—यह आपने कहा है, परंतु फिर वह देवपूजा आदि कार्योंको क्यों करे? और यदि ऐसी बात है तो देवता, पितर उससे कैसे संतुष्ट होंगे, इसका आप निराकरण करें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! जिन ब्राह्मणोंके घरमें अग्निहोत्र न हो उनका उद्धार व्रत, उपवास, नियम, दान तथा देवताकी स्तुति, भक्ति आदिसे होता है। जिस देवताकी जो तिथि हो, उसमें उपवास करनेसे वे देवता उसपर विशेषरूपसे प्रसन्न होते हैं—

व्रतोपवासनियमैर्नानादानैस्तथा नृप।
देवादयो भवन्त्येव प्रीतास्तेषां न संशयः॥
विशेषादुपवासेन तिथौ किल महीपते।
प्रीता देवादयस्तेषां भवन्ति कुरुनन्दन॥

(ब्राह्मपर्व १६।१३-१४)

राजाने फिर कहा—महाराज! अब आप अलग-अलग तिथियोंमें किये जानेवाले व्रतों, तिथि-व्रतोंमें किये जानेवाले भोजनों तथा उपवासकी विधियोंका वर्णन करें, जिनके श्रवणसे तथा जिनका आचरण कर संसारसागरसे मैं मुक्त हो जाऊँ तथा मेरे सभी पाप दूर हो जायँ। साथ ही संसारके जीवोंका भी कल्याण हो जाय।

सुमन्तु मुनि बोले—मैं तिथियोंमें विहित कृत्योंका वर्णन करता हूँ, जिनके सुननेसे पाप कट जाते हैं और उपवासके फलोंकी प्राप्ति हो जाती है।

प्रतिपदा तिथिको दूध तथा द्वितीयाको लवणरहित भोजन करे। तृतीयाके दिन तिलान्न भक्षण करे। इसी प्रकार चतुर्थीको दूध, पञ्चमीको फल, षष्ठीको शाक, सप्तमीको बिल्वाहार करे। अष्टमीको पिष्ट, नवमीको अनग्निपाक, दशमी और एकादशीको घृताहार करे। द्वादशीको खीर, त्रयोदशीको गोमूत्र, चतुर्दशीको यवान्न भक्षण करे। पूर्णिमाको कुशाका जल पीये तथा अमावास्याको हविष्य-भोजन करे। यह सब तिथियोंके भोजनकी विधि है। इस विधिसे जो पूरे एक पक्ष भोजन करता है, वह दस अश्वमेध-यज्ञोंका फल प्राप्त करता है और मन्वन्तरतक स्वर्गमें आनन्द भोगता है। यदि तीन-चार मासतक इस विधिसे भोजन करे तो वह सौ अश्वमेध और सौ राजसूय-यज्ञोंका फल प्राप्त करता है तथा स्वर्गमें अनेक मन्वन्तरोंतक सुख-भोग करता है। पूरे आठ महीने इस विधिसे भोजन करे तो हजार यज्ञोंका फल पाता है और चौदह मन्वन्तरपर्यन्त स्वर्गमें वहाँके सुखोंका उपभोग करता है। इसी प्रकार यदि एक वर्षपर्यन्त नियमपूर्वक इस भोजन-विधिका पालन करता है तो वह सूर्यलोकमें कई मन्वन्तरोंतक आनन्दपूर्वक निवास करता है। इस उपवास-विधिमें चारों वर्णों तथा स्त्री-पुरुषों—सभीका अधिकार है। जो इन तिथि-व्रतोंका आरम्भ आश्विनकी नवमी, माघकी सप्तमी, वैशाखकी तृतीया तथा कार्तिककी पूर्णिमासे करता है, वह लम्बी आयु प्राप्त कर अन्तमें सूर्यलोकको प्राप्त होता है। पूर्वजन्ममें जिन पुरुषोंने व्रत, उपवास आदि किया, दान दिया, अनेक प्रकारसे ब्राह्मणों, साधु-संतों एवं तपस्वियोंको संतुष्ट किया, माता-पिता और गुरुकी सेवा-शुश्रूषा की, विधिपूर्वक तीर्थयात्रा की, वे पुरुष स्वर्गमें दीर्घ कालतक रहकर जब

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

पृथ्वीपर जन्म लेते हैं, तब उनके चिह्न—पुण्य-फल प्रत्यक्ष ही दिखलायी पड़ते हैं। यहाँ उन्हें हाथी, घोड़े, पालकी, रथ, सुवर्ण, रत्न, कंकण, केयूर, हार, कुण्डल, मुकुट, उत्तम वस्त्र, श्रेष्ठ सुन्दर स्त्री तथा अच्छे सेवक प्राप्त होते हैं। वे आधि-व्याधिसे मुक्त होकर दीर्घायु होते हैं। पुत्र-पौत्रादिका सुख देखते हैं और वन्दीजनोंके स्तुति-पाठद्वारा जगाये जाते हैं। इसके विपरीत जिसने व्रत, दान, उपवास आदि सत्कर्म नहीं किया वह काना, अंधा, लूला, लँगड़ा, गूँगा, कुबड़ा तथा रोग और दरिद्रतासे पीड़ित रहता है। संसारमें आज भी इन दोनों प्रकारके पुरुष प्रत्यक्ष दिखायी देते हैं। यही पुण्य और पापकी प्रत्यक्ष परीक्षा है।

राजाने कहा—प्रभो! आपने अभी संक्षेपमें तिथियोंको बताया है। अब यह विस्तारसे बतलानेकी कृपा करें कि किस देवताकी किस तिथिमें पूजा करनी चाहिये और व्रत आदि किस विधिसे करने चाहिये जिनके करनेसे मैं पवित्र हो जाऊँ और द्वन्द्वरहित होकर यज्ञके फलोंको प्राप्त कर सकूँ*।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! तिथियोंका रहस्य, पूजाका विधान, फल, नियम, देवता तथा अधिकारी आदिके विषयमें मैं बताता हूँ, यह सब आजतक मैंने किसीको नहीं बतलाया, इसे आप सुनें—

सबसे पहले मैं संक्षेपमें सृष्टिका वर्णन करता हूँ। प्रथम परमात्माने जल उत्पन्नकर उसमें तेज प्रविष्ट किया, उससे एक अण्ड उत्पन्न हुआ, उससे ब्रह्मा उत्पन्न हुए। उन्होंने सृष्टिकी इच्छासे उस अण्डके एक कपालसे भूमि और दूसरेसे आकाशकी रचना की। तदनन्तर दिशा, उपदिशा, देवता, दानव आदि रचे और जिस दिन यह सब काम किया उसका नाम प्रतिपदा तिथि रखा। ब्रह्माजीने इसे सर्वोत्तम माना और सभी तिथियोंके प्रारम्भमें इसका प्रतिपादन किया इसलिये इसका नाम प्रतिपदा हुआ। इसीके बाद सभी तिथियाँ उत्पन्न हुईं।

अब मैं इसके उपवास-विधि और नियमोंका वर्णन करता हूँ। कार्तिक-पूर्णिमा, माघ-सप्तमी तथा वैशाख शुक्ल तृतीयासे इस प्रतिपदा तिथिके नियम एवं उपवासोंको विधिपूर्वक प्रारम्भ करना चाहिये। यदि प्रतिपदा तिथिसे नियम ग्रहण करना है तो प्रतिपदासे पूर्व चतुर्दशी तिथिको भोजनके अनन्तर व्रतका संकल्प लेना चाहिये। अमावास्याको त्रिकाल स्नान करे, भोजन न करे और गायत्रीका जप करता रहे। प्रतिपदाके दिन प्रातःकाल गन्ध-माल्य आदि उपचारोंसे श्रेष्ठ ब्राह्मणोंकी पूजा करे और उन्हें यथाशक्ति दूध दे तथा बादमें 'ब्रह्माजी मुझपर प्रसन्न हों'—ऐसा कहे। स्वयं भी बादमें गायका दूध पिये। इस विधिसे एक वर्षतक व्रत कर अन्तमें गायत्रीसहित ब्रह्माजीका पूजन कर व्रत समाप्त करे।

इस विधानसे व्रत करनेपर व्रतीके सब पाप दूर हो जाते हैं और उसकी आत्मा शुद्ध हो जाती है। वह दिव्य शरीर धारणकर विमानमें बैठकर देवलोकमें देवताओंके साथ आनन्द प्राप्त करता है और जब इस पृथ्वीपर सत्ययुगमें जन्म लेता है तो दस जन्मतक वेदविद्याका पारगामी विद्वान्, धनवान्, दीर्घ आयुष्य, आरोग्यवान्, अनेक भोगोंसे सम्पन्न, यज्ञ करनेवाला, महादानी ब्राह्मण होता है। विश्वामित्रमुनिने ब्राह्मण होनेके लिये बहुत समयतक घोर तपस्या की, किंतु उन्हें ब्राह्मणत्व प्राप्त नहीं हो सका। अतः उन्होंने नियमसे इसी प्रतिपदाका व्रत किया। इससे थोड़ेसे समयमें ब्रह्माजीने उन्हें ब्राह्मण बना दिया। क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि कोई इस तिथिका व्रत

* नित्य, नैमित्तिक और काम्य—ये तीन प्रकारके कर्म होते हैं। यहाँ काम्य-कर्मोंका प्रकरण चल रहा है। इन्हीं कर्मोंको निष्कामभावसे भगवत्प्रीत्यर्थ करनेपर जन्म-मरणके बन्धनसे मुक्ति भी मिल जाती है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

करे तो वह सब पापोंसे मुक्त होकर दूसरे जन्ममें ब्राह्मण होता है। हैहय, तालजंघ, तुरुष्क, यवन, शक आदि म्लेच्छ जातिवाले भी इस व्रतके प्रभावसे ब्राह्मण हो सकते हैं। यह तिथि परम पुण्य और कल्याण करनेवाली है। जो इसके माहात्म्यको पढ़ता अथवा सुनता है वह ऋद्धि, वृद्धि और सत्कीर्ति पाकर अन्तमें सद्गति प्राप्त करता है[१]। (अध्याय १६)

प्रतिपत्कल्प-निरूपणमें ब्रह्माजीकी पूजा-अर्चाकी महिमा

राजा शतानीकने कहा—ब्रह्मन्! आप प्रतिपदा तिथिमें किये जानेवाले कृत्य, ब्रह्माजीके पूजनकी विधि और उसके फलका विस्तारपूर्वक वर्णन करें।

सुमन्तु मुनि बोले—हे राजन्! पूर्वकल्पमें स्थावर-जङ्गमात्मक सम्पूर्ण जगत्के नष्ट हो जानेपर सर्वत्र जल-ही-जल हो गया। उस समय देवताओंमें श्रेष्ठ चतुर्मुख ब्रह्माजी प्रकट हुए और उन्होंने अनेक लोकों, देवगणों तथा विविध प्राणियोंकी सृष्टि की। प्रजापति ब्रह्मा देवताओंके पिता तथा अन्य जीवोंके पितामह हैं, इसलिये इनकी सदा पूजा करनी चाहिये। ये ही जगत्की सृष्टि, पालन तथा संहार करनेवाले हैं। इनके मनसे रुद्रका, वक्षःस्थलसे विष्णुका आविर्भाव हुआ। इनके चारों मुखोंसे अपने छः अङ्गोंके साथ चारों वेद प्रकट हुए। सभी देवता, दैत्य, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, नाग आदि इनकी पूजा करते हैं। यह सम्पूर्ण जगत् ब्रह्ममय है और ब्रह्ममें स्थित है, अतः ब्रह्माजी सबसे पूज्य हैं। राज्य, स्वर्ग और मोक्ष—ये तीनों पदार्थ इनकी सेवा करनेसे प्राप्त हो जाते हैं। इसलिये सदा प्रसन्नचित्तसे यावज्जीवन नियमसे ब्रह्माजीकी पूजा करनी चाहिये। जो ब्रह्माजीकी सदा भक्तिसे पूजा करता है, वह मनुष्य-स्वरूपमें साक्षात् ब्रह्मा ही है। ब्रह्माजीकी पूजासे अधिक पुण्य किसीमें न समझकर सदा ब्रह्माजीका पूजन करते रहना चाहिये। जो ब्रह्माजीका मन्दिर बनवाकर उसमें विधिपूर्वक ब्रह्माजीकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा करता है, वह यज्ञ, तप, तीर्थ, दान आदिके फलोंसे करोड़ों गुना अधिक फल प्राप्त करता है। ऐसे पुरुषके दर्शन और स्पर्शसे इक्कीस पीढ़ीका उद्धार हो जाता है। ब्रह्माजीकी पूजा करनेवाला पुरुष बहुत कालतक ब्रह्मलोकमें निवास करता है। वहाँ निवास करनेके पश्चात् वह ज्ञानयोगके माध्यमसे मुक्त हो जाता है अथवा भोग चाहनेपर मनुष्यलोकमें चक्रवर्ती राजा या वेद-वेदाङ्गपारङ्गत कुलीन ब्राह्मण होता है। किसी अन्य कठोर तप और यज्ञोंकी आवश्यकता नहीं है, केवल ब्रह्माजीकी पूजासे ही सभी पदार्थ प्राप्त हो सकते हैं। जो ब्रह्माजीके मन्दिरमें छोटे जीवोंकी रक्षा करता हुआ सावधानीपूर्वक धीरे-धीरे झाड़ू देता है तथा उपलेपन करता है, वह चान्द्रायण-व्रतका फल प्राप्त करता है। एक पक्षतक ब्रह्माजीके मन्दिरमें जो झाड़ू लगाता है, वह सौ करोड़ युगसे भी अधिक ब्रह्मलोकमें पूजित होता है और अनन्तर सर्वगुणसम्पन्न, चारों वेदोंका ज्ञाता धर्मात्मा राजाके रूपमें पृथ्वीपर आता है। भक्तिपूर्वक ब्रह्माजीका पूजन न करनेतक ही मनुष्य संसारमें भटकता है। जिस तरह मानवका मन विषयोंमें मग्न होता है, वैसे ही यदि ब्रह्माजीमें मन निमग्न रहे तो ऐसा कौन पुरुष होगा जो मुक्ति नहीं प्राप्त कर सकता[२]। ब्रह्माजीके जीर्ण एवं खण्डित

१- इसका वर्णन ठीक इसी प्रकार वराहपुराणमें इससे भी अधिक विस्तारसे मिलता है और मुहूर्त-चिन्तामणि एवं अन्य ज्योतिषग्रन्थोंमें भी रमणीयतापूर्वक प्रपञ्चित है। व्रतकल्पद्रुम, व्रतरत्नाकर, व्रतराज आदिमें भी संगृहीत है।

२- समासक्तं यथा चित्तं जन्तोर्विषयगोचरे। यद्येवं ब्रह्मणि न्यस्तं को न मुच्येत बन्धनात्॥ (ब्राह्मपर्व १७। ४०)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

मन्दिरका उद्धार करनेवाला प्राणी मुक्ति प्राप्त करता है। ब्रह्माजीके समान न कोई देवता है न गुरु, न ज्ञान है और न कोई तप ही है।

प्रतिपदा आदि सभी तिथियोंमें भक्तिपूर्वक ब्रह्माजीकी पूजा कर पूर्णिमाके दिन विशेषरूपसे पूजा करनी चाहिये तथा शङ्ख, घण्टा, भेरी आदि वाद्य-ध्वनियोंके साथ आरती एवं स्तुति करनी चाहिये। इस प्रकार व्यक्ति जितने पर्वोंपर आरती करता है, उतने हजार युगतक ब्रह्मलोकमें निवास और आनन्दका उपभोग करता है। कपिला गौके पञ्चगव्य और कुशाके जलसे वेदमन्त्रोंके द्वारा ब्रह्माजीको स्नान कराना ब्राह्म-स्नान कहलाता है। अन्य स्नानोंसे सौ गुना पुण्य इसमें अधिक होता है। यज्ञ एवं अग्निहोत्रादिके लिये ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यको कपिला गौ रखनी चाहिये। ब्रह्माजीकी मूर्तिका कपिला गायके घृतसे अभ्यङ्ग करना चाहिये, इससे करोड़ों वर्षोंके किये गये पापोंका विनाश होता है। यदि प्रतिपदाके दिन कोई एक बार भी घीसे स्नान कराता है तो उसके इक्कीस पीढ़ीका उद्धार हो जाता है। सुवर्ण-वस्त्रादिसे अलंकृत दस हजार सवत्सा गौ वेदज्ञ ब्राह्मणोंको देनेसे जो पुण्य होता है, वही पुण्य ब्रह्माजीको दुग्धसे स्नान करानेसे प्राप्त होता है। एक बार भी दूधसे ब्रह्माजीको स्नान करानेवाला पुरुष सुवर्णके विमानमें विराजमान हो ब्रह्मलोकमें पहुँच जाता है। दहीसे स्नान करानेपर विष्णुलोककी प्राप्ति होती है। शहदसे स्नान करानेपर वीरलोक (इन्द्रलोक)-की प्राप्ति होती है। ईखके रससे स्नान करानेपर सूर्यलोककी प्राप्ति होती है। शुद्धोदकसे स्नान करानेपर सभी पापोंसे मुक्त होकर ब्रह्मलोकमें निवास करता है। वस्त्रसे छने हुए जलसे ब्रह्माजीको स्नान करानेपर वह सदा तृप्त रहता है और सम्पूर्ण विश्व उसके वशीभूत हो जाता है। सर्वौषधियोंसे स्नान करानेपर ब्रह्मलोक, चन्दनके जलसे स्नान करानेपर रुद्रलोक, कमलके पुष्प, नीलकमल, पाटला (लोध्र-लाल), कनेर आदि सुगन्धित पुष्पोंसे स्नान करानेपर ब्रह्मलोकमें पूजित होता है। कपूर और अगरके जलसे स्नान करानेपर या गायत्रीमन्त्रसे सौ बार जलको अभिमन्त्रित कर उस जलसे स्नान करानेपर ब्रह्मलोककी प्राप्ति होती है। शीतल जल या कपिला गायके धारोष्ण दुग्धसे स्नान करानेके अनन्तर घृतसे स्नान करानेसे सभी पापोंसे मनुष्य मुक्त हो जाता है। इन तीनों स्नानोंको सम्पन्न कर भक्तिपूर्वक पूजा करनेसे पूजकको अश्वमेधयज्ञका फल प्राप्त होता है। मिट्टीके घड़ेकी अपेक्षा ताँबेके घटसे ब्रह्माजीको स्नान करानेपर सौगुना, चाँदीके घटसे लाखगुना फल होता है और सुवर्ण-कलशसे स्नान करानेपर कोटिगुना फल प्राप्त होता है। ब्रह्माजीके दर्शनसे उनका स्पर्श करना श्रेष्ठ है, स्पर्शसे पूजन और पूजनसे घृतस्नान अधिक फलदायक है। सभी वाचिक और मानसिक पाप घृतस्नान करानेसे नष्ट हो जाते हैं।

राजन्! इस विधिसे स्नान कराकर भक्तिपूर्वक ब्रह्माजीकी पूजा इस प्रकार करनी चाहिये—पवित्र वस्त्र पहनकर, आसनपर बैठ सम्पूर्ण न्यास करना चाहिये। प्रथम चार हाथ विस्तृत स्थानमें एक अष्टदल-कमलका निर्माण करे। उसके मध्य नाना वर्णयुक्त द्वादशदल-यन्त्र लिखे और पाँच रंगोंसे उसको भरे। इस प्रकार यन्त्र-निर्माणकर गायत्रीके वर्णोंसे न्यास करे।

गायत्रीके अक्षरोंद्वारा शरीरमें न्यास कर देवताके शरीरमें भी न्यास करना चाहिये। प्रणवयुक्त गायत्री-मन्त्रके द्वारा अभिमन्त्रित केसर, अगर,

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

चन्दन, कपूर आदिसे समन्वित जलसे सभी पूजाद्रव्योंका मार्जन करना चाहिये। अनन्तर पूजा करनी चाहिये। प्रणवका उच्चारण कर पीठस्थापन और प्रणवसे ही तेज:स्वरूप ब्रह्माजीका आवाहन करना चाहिये। पद्मपर विराजमान, चार मुखोंसे युक्त चराचर विश्वकी सृष्टि करनेवाले श्रीब्रह्माजीका ध्यान कर पूजा करनी चाहिये। जो पुरुष प्रतिपदा तिथिके दिन भक्तिपूर्वक गायत्री-मन्त्रसे ब्रह्माजीका पूजन करता है, वह चिरकालतक ब्रह्मलोकमें निवास करता है। (अध्याय १७)

ब्रह्माजीकी रथयात्राका विधान और कार्तिक शुक्ल प्रतिपदाकी महिमा

सुमन्तु मुनिने कहा— हे राजा शतानीक! कार्तिक मासमें जो ब्रह्माजीकी रथयात्राका उत्सव करता है, वह ब्रह्मलोकको प्राप्त करता है। कार्तिककी पूर्णिमाको मृगचर्मके आसनपर सावित्रीके साथ ब्रह्माजीको रथमें विराजमान करे और विविध वाद्य-ध्वनिके साथ रथयात्रा निकाले। विशिष्ट उत्सवके साथ ब्रह्माजीको रथपर बैठाये और रथके आगे ब्रह्माजीके परम भक्त ब्राह्मण शाण्डिलीपुत्रको स्थापित कर उनकी पूजा करे। ब्राह्मणोंके द्वारा स्वस्ति एवं पुण्याहवाचन कराये। उस रात्रि जागरण करे। नृत्य-गीत आदि उत्सव एवं विविध क्रीडाएँ ब्रह्माजीके सम्मुख प्रदर्शित करे।

इस प्रकार रात्रिमें जागरण कर प्रतिपदाके दिन प्रात:काल ब्रह्माजीका पूजन करना चाहिये। ब्राह्मणोंको भोजन कराना चाहिये, अनन्तर पुण्य शब्दोंके साथ रथयात्रा प्रारम्भ करनी चाहिये।

चारों वेदोंके ज्ञाता उत्तम ब्राह्मण उस रथको खींचें और रथके आगे वेद पढ़ते हुए ब्राह्मण चलते रहें। ब्रह्माजीके दक्षिण-भागमें सावित्री तथा वाम-भागमें भोजककी स्थापना करे। रथके आगे शङ्ख, भेरी, मृदङ्ग आदि विविध वाद्य बजते रहें। इस प्रकार सारे नगरमें रथको घुमाना चाहिये और नगरकी प्रदक्षिणा करनी चाहिये, अनन्तर उसे अपने स्थानपर ले आना चाहिये। आरती करके ब्रह्माजीको उनके मन्दिरमें स्थापित करे। इस रथयात्राको सम्पन्न करनेवाले, रथको खींचनेवाले तथा इसका दर्शन करनेवाले सभी ब्रह्मलोकको प्राप्त करते हैं। दीपावलीके दिन ब्रह्माजीके मन्दिरमें दीप प्रज्वलित करनेवाला ब्रह्मलोकको प्राप्त करता है। दूसरे दिन प्रतिपदाको ब्रह्माजीकी पूजा करके स्वयं भी वस्त्र-आभूषणसे अलंकृत होना चाहिये। यह प्रतिपदा तिथि ब्रह्माजीको बहुत प्रिय है। इसी तिथिसे बलिके राज्यका आरम्भ हुआ है। इस दिन ब्रह्माजीका पूजनकर ब्राह्मण-भोजन करानेसे विष्णुलोककी प्राप्ति होती है। चैत्र मासमें कृष्णप्रतिपदाके दिन (होली जलानेके दूसरे दिन) चाण्डालका स्पर्शकर स्नान करनेसे सभी आधि-व्याधियाँ दूर हो जाती हैं। उस दिन गौ, महिष आदिको अलंकृतकर उन्हें मण्डपके नीचे रखना चाहिये तथा ब्राह्मणोंको भोजन कराना चाहिये। चैत्र, आश्विन और कार्तिक इन तीनों महीनोंकी प्रतिपदा श्रेष्ठ है, किंतु इनमें कार्तिककी प्रतिपदा विशेष श्रेष्ठ है। इस दिन किया हुआ स्नान-दान आदि सौ गुने फलको देता है। राजा बलिको इसी दिन राज्य मिला था, इसलिये कार्तिककी प्रतिपदा श्रेष्ठ मानी जाती है। (अध्याय १८)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

द्वितीया-कल्पमें महर्षि च्यवनकी कथा एवं पुष्पद्वितीया-व्रतकी महिमा

सुमन्तु मुनि बोले—द्वितीया तिथिको च्यवन-ऋषिने इन्द्रके सम्मुख यज्ञमें अश्विनीकुमारोंको सोमपान कराया था।

राजाने पूछा—महाराज! इन्द्रके सम्मुख किस विधिसे अश्विनीकुमारोंको उन्होंने सोमरस पिलाया? क्या च्यवन-ऋषिकी तपस्याके प्रभावकी प्रबलतासे इन्द्र कुछ भी करनेमें समर्थ नहीं हुए?

सुमन्तु मुनिने कहा—सत्ययुगकी पूर्वसंध्यामें गङ्गाके तटपर समाधिस्थ हो च्यवनमुनि बहुत दिनोंसे तपस्यामें रत थे। एक समय अपनी सेना और अन्तःपुरके परिजनोंको साथ लेकर महाराज शर्याति गङ्गा-स्नानके लिये वहाँ आये। उन्होंने च्यवन-ऋषिके आश्रमके* समीप आकर गङ्गा-स्नान सम्पन्न किया तथा देवताओंकी आराधना की और पितरोंका तर्पण किया। तदनन्तर जब वे अपने नगरकी ओर जानेको उद्यत हुए तो उसी समय उनकी सभी सेनाएँ व्याकुल हो गयीं और मूत्र तथा विष्ठा उनके अचानक ही बंद हो गये, आँखोंसे कुछ भी नहीं दिखायी दिया। सेनाकी यह दशा देखकर राजा घबड़ा उठे। राजा शर्याति प्रत्येक व्यक्तिसे पूछने लगे—यह तपस्वी च्यवनमुनिका पवित्र आश्रम है, किसीने कुछ अपराध तो नहीं किया? उनके इस प्रकार पूछनेपर किसीने कुछ भी नहीं कहा।

सुकन्याने अपने पितासे कहा—महाराज! मैंने एक आश्चर्य देखा, जिसका मैं वर्णन कर रही हूँ। अपनी सहेलियोंके साथ मैं वन-विहार कर रही थी कि एक ओरसे मुझे यह शब्द सुनायी पड़ा—'सुकन्ये! तुम इधर आओ, तुम इधर आओ।' यह सुनकर मैं अपनी सखियोंके साथ उस शब्दकी ओर गयी। वहाँ जाकर मैंने एक बहुत ऊँचा वल्मीक देखा।

उसके अंदरके छिद्रोंमें दीपकके समान देदीप्यमान दो पदार्थ मुझे दिखलायी पड़े। उन्हें देखकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ कि ये पद्मरागमणिके समान क्या चमक रहे हैं। मैंने अपनी मूर्खता और चञ्चलतासे कुशाके अग्रभागसे वल्मीकके प्रकाशयुक्त छिद्रोंको बींध दिया, जिससे वह तेज शान्त हो गया।

यह सुनकर राजा बहुत व्याकुल हो गये और अपनी कन्या सुकन्याको लेकर वहाँ गये जहाँ च्यवनमुनि तपस्यामें रत थे। च्यवन-ऋषिको वहाँ

* अन्य पुराणोंमें तथा महाभारतके अनुसार यह आश्रम सोनभद्र और वधूसरा नदीके संगमपर था, जो आज देवकुण्डके नामसे प्रसिद्ध है। प्रायः पुराणोंमें यह श्लोक भी प्राप्त होता है—

मगधे तु गया पुण्या नदी पुण्या पुनःपुना। च्यवनस्य आश्रमं पुण्यं पुण्यं राजगृहं वनम्॥

तथा—

वधूसरेति सरिता च्यवनस्याश्रमं प्रति।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

समाधिस्थ होकर बैठे हुए इतने दिन व्यतीत हो गये थे कि उनके ऊपर वल्मीक बन गया था। जिन तेजस्वी छिद्रोंको सुकन्याने कुशके अग्रभागसे बींध दिया था, वे उस महातपस्वीके प्रकाशमान नेत्र थे। राजा वहाँ पहुँचकर अतिशय दीनताके साथ विनती करने लगे।

राजा बोले—महाराज! मेरी कन्यासे बहुत बड़ा अपराध हो गया है। कृपाकर क्षमा करें।

च्यवनमुनिने कहा—अपराध तो मैंने क्षमा किया, परंतु अपनी कन्याका मेरे साथ विवाह कर दो, इसीमें तुम्हारा कल्याण है। मुनिका वचन सुनकर राजाने शीघ्र ही सुकन्याका च्यवन-ऋषिसे विवाह कर दिया। सभी सेनाएँ सुखी हो गयीं और मुनिको प्रसन्नकर सुखपूर्वक राजा अपने नगरमें आकर राज्य करने लगे। सुकन्या भी विवाहके बाद भक्तिपूर्वक मुनिकी सेवा करने लगी। राजवस्त्र, आभूषण उसने उतार दिये और वृक्षकी छाल तथा मृगचर्म धारण कर लिया। इस प्रकार मुनिकी सेवा करते हुए कुछ समय व्यतीत हो गया और वसन्त-ऋतु आयी। किसी दिन मुनिने संतान-प्राप्तिके लिये अपनी पत्नी सुकन्याका आह्वान किया। इसपर सुकन्याने अतिशय विनयभावसे विनती की।

सुकन्या बोली—महाराज! आपकी आज्ञा मैं किसी प्रकार भी टाल नहीं सकती, किंतु इसके लिये आपको युवावस्था तथा सुन्दर वस्त्र-आभूषणोंसे अलंकृत कमनीय स्वरूप धारण करना चाहिये।

च्यवनमुनिने उदास होकर कहा—न मेरा उत्तम रूप है और न तुम्हारे पिताके समान मेरे पास धन है, जिससे सभी भोग-सामग्रियोंको मैं एकत्र कर सकूँ।

सुकन्या बोली—महाराज! आप अपने तपके प्रभावसे सब कुछ करनेमें समर्थ हैं। आपके लिये यह कौन-सी बड़ी बात है?

च्यवनमुनिने कहा—राजपुत्रि! इस कामके लिये मैं अपनी तपस्या व्यर्थ नहीं करूँगा। इतना कहकर वे पहलेकी तरह तपस्या करने लगे। सुकन्या भी उनकी सेवामें तत्पर हो गयी।

इस प्रकार बहुत काल व्यतीत होनेके बाद अश्विनीकुमार उसी मार्गसे चले जा रहे थे कि उनकी दृष्टि सुकन्यापर पड़ी।

अश्विनीकुमारोंने कहा—भद्रे! तुम कौन हो? और इस घोर वनमें अकेली क्यों रहती हो?

सुकन्याने कहा—मैं राजा शर्यातिकी सुकन्या नामकी पुत्री हूँ। मेरे पति च्यवन-ऋषि यहाँ तपस्या कर रहे हैं, उन्हींकी सेवाके लिये मैं यहाँ उनके समीप रहती हूँ। कहिये, आपलोग कौन हैं?

अश्विनीकुमारोंने कहा—हम देवताओंके वैद्य अश्विनीकुमार हैं। इस वृद्ध पतिसे तुम्हें क्या सुख मिलेगा? हम दोनोंमें किसी एकका वरण कर लो।

सुकन्याने कहा—देवताओ! आपका ऐसा कहना ठीक नहीं। मैं पतिव्रता हूँ और सब प्रकारसे अनुरक्त होकर दिन-रात अपने पतिकी सेवा करती हूँ।

अश्विनीकुमारोंने कहा—यदि ऐसी बात है तो हम तुम्हारे पतिदेवको अपने उपचारके द्वारा अपने समान स्वस्थ एवं सुन्दर बना देंगे और जब हम तीनों गङ्गामें स्नानकर बाहर निकलें फिर जिसे तुम पतिरूपमें वरण करना चाहो कर लेना।

सुकन्याने कहा—मैं बिना पतिकी आज्ञाके कुछ नहीं कह सकती।

अश्विनीकुमारोंने कहा—तुम अपने पतिसे पूछ आओ, तबतक हम यहीं प्रतीक्षामें रहेंगे। सुकन्याने च्यवनमुनिके पास जाकर उन्हें सम्पूर्ण वृत्तान्त बतलाया। अश्विनीकुमारोंकी बात स्वीकार कर च्यवनमुनि सुकन्याको लेकर उनके पास आये।

च्यवनमुनिने कहा—अश्विनीकुमारो! आपकी

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

शर्त हमें स्वीकार है। आप हमें उत्तम रूपवान् बना दें, फिर सुकन्या चाहे जिसे वरण करे। च्यवनमुनिके इतना कहनेपर अश्विनीकुमार च्यवनमुनिको लेकर गङ्गाजीके जलमें प्रविष्ट हो गये और कुछ देर बाद तीनों ही बाहर निकले। सुकन्याने देखा कि ये तीनों तो समान रूप, समान अवस्था तथा समान वस्त्राभूषणोंसे अलंकृत हैं, फिर इनमें मेरे पति च्यवनमुनि कौन हैं? वह कुछ निश्चित न कर सकी और व्याकुल हो अश्विनीकुमारोंकी प्रार्थना करने लगी।

सुकन्या बोली—देवो! अत्यन्त कुरूप पतिदेवका भी मैंने परित्याग नहीं किया था। अब तो आपकी कृपासे उनका रूप आपके समान सुन्दर हो गया है, फिर मैं कैसे उनका परित्याग कर सकती हूँ। मैं आपकी शरण हूँ, मुझपर कृपा कीजिये।

सुकन्याकी इस प्रार्थनासे अश्विनीकुमार प्रसन्न हो गये और उन्होंने देवताओंके चिह्नोंको धारण

कर लिया। सुकन्याने देखा कि तीन पुरुषोंमेंसे दोकी पलकें गिर नहीं रही हैं और उनके चरण भूमिको स्पर्श नहीं कर रहे हैं, किंतु जो तीसरा पुरुष है, वह भूमिपर खड़ा है और उसकी पलकें भी गिर रही हैं। इन चिह्नोंको देखकर सुकन्याने निश्चित कर लिया कि ये तीसरे पुरुष ही मेरे स्वामी च्यवनमुनि हैं। तब उसने उनका वरण कर लिया। उसी समय आकाशसे उसपर पुष्प-वृष्टि होने लगी और देवगण दुन्दुभि बजाने लगे।

च्यवनमुनिने अश्विनीकुमारोंसे कहा—देवो! आप लोगोंने मुझपर बहुत उपकार किया है, जिसके फलस्वरूप मुझे उत्तम रूप और उत्तम पत्नी प्राप्त हुई। अब मैं आपलोगोंका क्या प्रत्युपकार करूँ, क्योंकि जो उपकार करनेवालेका प्रत्युपकार नहीं करता, वह क्रमसे इक्कीस नरकोंमें जाता है*, इसलिये आपका मैं क्या प्रिय करूँ, आप लोग कहें।

अश्विनीकुमारोंने उनसे कहा—महात्मन्! यदि आप हमारा प्रिय करना ही चाहते हैं तो अन्य देवताओंकी तरह हमें भी यज्ञभाग दिलवाइये। च्यवनमुनिने यह बात स्वीकार कर ली, फिर वे उन्हें विदाकर अपनी भार्या सुकन्याके साथ अपने आश्रममें आ गये।

राजा शर्यातिको जब यह सारा वृत्तान्त ज्ञात हुआ तो वे भी रानीको साथ लेकर सुन्दर रूप-प्राप्त महातेजस्वी च्यवन-ऋषिको देखने आश्रममें आये। राजाने च्यवनमुनिको प्रणाम किया और उन्होंने भी राजाका स्वागत किया। सुकन्याने अपनी माताका आलिङ्गन किया। राजा शर्याति अपने जामाता महामुनि च्यवनका उत्तम रूप देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए।

च्यवनमुनिने राजासे कहा—राजन्! एक महायज्ञकी सामग्री एकत्र कीजिये, हम आपसे यज्ञ करायेंगे। च्यवनमुनिकी आज्ञा प्राप्तकर राजा शर्याति अपनी राजधानी लौट आये और यज्ञ-सामग्री एकत्रकर यज्ञकी तैयारी करने लगे। मन्त्री,

* उपकारं वरिष्ठं यो न करोत्युपकारिणः॥ एकविंशत् स गच्छेच्च नरकाणि क्रमेण वै। (ब्राह्मपर्व १९।५०-५१)

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

पुरोहित और आचार्यको बुलाकर यज्ञकार्यके लिये उन्हें नियुक्त किया। च्यवनमुनि भी अपनी पत्नी सुकन्याको लेकर यज्ञ-स्थलमें पधारे।

सभी ऋषिगणोंको आमन्त्रण देकर यज्ञमें बुलाया गया। विधिपूर्वक यज्ञ प्रारम्भ हुआ। ऋत्विक् अग्निकुण्डमें स्वाहाकारके साथ देवताओंको आहुति देने लगे। सभी देवता अपना-अपना यज्ञ-भाग लेने वहाँ आ पहुँचे। च्यवनमुनिके कहनेसे अश्विनीकुमार भी वहाँ आये। देवराज इन्द्र उनके आनेका प्रयोजन समझ गये।

इन्द्र बोले—मुने! ये दोनों अश्विनीकुमार देवताओंके वैद्य हैं, इसलिये ये यज्ञ-भागके अधिकारी नहीं हैं, आप इन्हें आहुतियाँ प्रदान न करवायें।

च्यवनमुनिने इन्द्रसे कहा—ये देवता हैं और इनका मेरे ऊपर बड़ा उपकार है, ये मेरे ही

आमन्त्रणपर यहाँ पधारे हैं, इसलिये मैं इन्हें अवश्य यज्ञ-भाग दूँगा। यह सुनकर इन्द्र क्रुद्ध हो उठे और कठोर स्वरमें कहने लगे।

इन्द्र बोले—यदि तुम मेरी बात नहीं मानोगे तो वज्रसे तुमपर मैं प्रहार करूँगा। इन्द्रकी ऐसी वाणी सुनकर च्यवनमुनि किंचित् भी भयभीत नहीं हुए और उन्होंने अश्विनीकुमारोंको यज्ञ-भाग दे ही दिया, तब तो इन्द्र अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे और उन्होंने ज्यों ही च्यवनमुनिपर प्रहार करनेके लिये अपना वज्र उठाया त्यों ही च्यवनमुनिने अपने तपके प्रभावसे इन्द्रका स्तम्भन कर दिया। इन्द्र हाथमें वज्र लिये खड़े ही रह गये।

च्यवनमुनिने अश्विनीकुमारोंको यज्ञ-भाग देकर अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर ली और यज्ञको पूर्ण किया। उसी समय वहाँ ब्रह्माजी उपस्थित हुए।

ब्रह्माजीने च्यवनमुनिसे कहा—महामुने! आप इन्द्रको स्तम्भन-मुक्त कर दें। अश्विनीकुमारोंको यज्ञ-भाग दे दें। इन्द्रने भी स्तम्भनसे मुक्त करनेके लिये प्रार्थना की।

इन्द्रने कहा—मुने! आपके तपकी प्रसिद्धिके लिये ही मैंने इन अश्विनीकुमारोंको यज्ञमें भाग लेनेसे रोका था, अब आजसे सब यज्ञोंमें अन्य देवताओंके साथ अश्विनीकुमारोंको भी यज्ञ-भाग मिला करेगा और इनको देवत्व भी प्राप्त होगा। आपके इस तपके प्रभावको जो सुनेगा अथवा पढ़ेगा, वह भी उत्तम रूप एवं यौवनको प्राप्त करेगा। इतना कहकर देवराज इन्द्र देवलोकको चले गये और च्यवनमुनि सुकन्या तथा राजा शर्यातिके साथ आश्रमपर लौट आये।

वहाँ उन्होंने देखा कि बहुत उत्तम-उत्तम महल बन गये हैं, जिनमें सुन्दर उपवन और वापी आदि विहारके लिये बने हुए हैं। भाँति-भाँतिकी शय्याएँ बिछी हुई हैं, विविध रत्नोंसे जटित आभूषणों तथा उत्तम-उत्तम वस्त्रोंके ढेर लगे हैं। यह देखकर सुकन्यासहित च्यवनमुनि अत्यन्त प्रसन्न हो गये और उन्होंने यह सब देवराज इन्द्रद्वारा प्रदत्त समझकर उनकी प्रशंसा की।

महामुनि सुमन्तु राजा शतानीकसे बोले—राजन्! इस प्रकार द्वितीया तिथिके दिन अश्विनीकुमारोंको

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

देवत्व तथा यज्ञ-भाग प्राप्त हुआ था। अब आप इस द्वितीया तिथिके व्रतका विधान सुनें—

शतानीक बोले—जो पुरुष उत्तम रूपकी इच्छा करे वह कार्तिक मासके शुक्ल पक्षकी द्वितीयासे व्रतको आरम्भ करे और वर्षपर्यन्त संयमित होकर पुष्प-भोजन करे। जो उत्तम हविष्य-पुष्प उस ऋतुमें हों उनका आहार करे। इस प्रकार एक वर्ष व्रत कर सोने-चाँदीके पुष्प बनाकर अथवा कमलपुष्पोंको ब्राह्मणोंको देकर व्रत सम्पन्न करे। इससे अश्विनीकुमार संतुष्ट होकर उत्तम रूप प्रदान करते हैं। व्रती उत्तम विमानोंमें बैठकर स्वर्गमें जाकर कल्पपर्यन्त विविध सुखोंका उपभोग करता है। फिर मर्त्यलोकमें जन्म लेकर वेद-वेदाङ्गोंका ज्ञाता, महादानी, आधि-व्याधियोंसे रहित, पुत्र-पौत्रोंसे युक्त, उत्तम पत्नीवाला ब्राह्मण होता है अथवा मध्यदेशके उत्तम नगरमें राजा होता है।

राजन्! इस पुष्पद्वितीया-व्रतका विधान मैंने आपको बतलाया। ऐसी ही फल-द्वितीया भी होती है, जिसे अशून्यशयना-द्वितीया भी कहते हैं। फल-द्वितीयाको जो श्रद्धापूर्वक व्रत करता है, वह ऋद्धि-सिद्धिको प्राप्तकर अपनी भार्यासहित आनन्द प्राप्त करता है। (अध्याय १९)

फल-द्वितीया (अशून्यशयन-व्रत)-का व्रत-विधान और द्वितीया-कल्पकी समाप्ति

राजा शतानीकने कहा—मुने! कृपाकर आप फल-द्वितीयाका विधान कहें, जिसके करनेसे स्त्री विधवा नहीं होती और पति-पत्नीका परस्पर वियोग भी नहीं होता।

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! मैं फल-द्वितीयाका विधान कहता हूँ, इसीका नाम अशून्यशयना-द्वितीया भी है। इस व्रतको विधिपूर्वक करनेसे स्त्री विधवा नहीं होती और स्त्री-पुरुषका परस्पर वियोग भी नहीं होता। क्षीरसागरमें लक्ष्मीके साथ भगवान् विष्णुके शयन करनेके समय यह व्रत होता है। श्रावण मासके कृष्ण पक्षकी द्वितीयाके दिन लक्ष्मीके साथ श्रीवत्सधारी भगवान् श्रीविष्णुका पूजन कर हाथ जोड़कर इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिये—

श्रीवत्सधारिञ्छ्रीकान्त श्रीवत्स श्रीपतेऽव्यय।
गार्हस्थ्यं मा प्रणाशं मे यातु धर्मार्थकामदम्॥
गावश्च मा प्रणश्यन्तु मा प्रणश्यन्तु मे जनाः॥
जामयो मा प्रणश्यन्तु मत्तो दाम्पत्यभेदतः।
लक्ष्म्या वियुज्येऽहं देव न कदाचिद्यथा भवान्॥
तथा कलत्रसम्बन्धो देव मा मे वियुज्यताम्।
लक्ष्म्या न शून्यं वरद यथा ते शयनं सदा॥
शय्या ममाप्यशून्यास्तु तथा तु मधुसूदन*।

(ब्राह्मपर्व २०।७—११)

इस प्रकार विष्णुकी प्रार्थना करके व्रत करना चाहिये। जो फल भगवान्‌को प्रिय हैं, उन्हें भगवान्‌की शय्यापर समर्पित करना चाहिये और स्वयं भी रात्रिके समय उन्हीं फलोंको खाकर दूसरे दिन ब्राह्मणोंको दक्षिणा देनी चाहिये।

राजा शतानीकने पूछा—महामुने! भगवान् विष्णुको कौन-से फल प्रिय हैं, आप उन्हें बतायें। दूसरे दिन ब्राह्मणोंको क्या दान देना चाहिये? उसे भी कहें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! उस ऋतुमें जो भी फल हों और पके हों, उन्हींको भगवान् विष्णुके लिये समर्पित करना चाहिये। कड़ुवे-कच्चे तथा

* हे श्रीवत्स-चिह्नको धारण करनेवाले लक्ष्मीके स्वामी शाश्वत भगवान् विष्णु! धर्म, अर्थ और कामको पूर्ण करनेवाला मेरा गृहस्थ-आश्रम कभी नष्ट न हो। मेरी गौएँ भी नष्ट न हों न कभी मेरे परिवारके लोग कष्टमें पड़ें एवं न नष्ट हों। मेरे घरकी स्त्रियाँ भी कभी विपत्तियोंमें न पड़ें और हम पति-पत्नीमें भी कभी मतभेद उत्पन्न न हो। हे देव! मैं लक्ष्मीसे कभी वियुक्त न होऊँ और पत्नीसे भी कभी मुझे वियोगकी प्राप्ति न हो। प्रभो! जैसे आपकी शय्या कभी लक्ष्मीसे शून्य नहीं होती, उसी प्रकार मेरी शय्या भी कभी शोभारहित एवं लक्ष्मी तथा पत्नीसे शून्य न हो।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

खट्टे फल उनकी सेवामें नहीं चढ़ाने चाहिये। भगवान् विष्णुको खजूर, नारिकेल, मातुलुङ्ग अर्थात् बिजौरा आदि मधुर फलोंको समर्पित करना चाहिये। भगवान् मधुर फलोंसे प्रसन्न होते हैं। दूसरे दिन ब्राह्मणोंको भी इसी प्रकारके मधुर फल, वस्त्र, अन्न तथा सुवर्णका दान देना चाहिये।

इस प्रकार जो पुरुष चार मासतक व्रत करता है, उसका तीन जन्मोंतक गार्हस्थ्य जीवन नष्ट नहीं होता और न तो ऐश्वर्यकी कमी होती है। जो स्त्री इस व्रतको करती है वह तीन जन्मोंतक न विधवा होती है न दुर्भगा और न पतिसे पृथक् ही रहती है।

इस व्रतके दिन अश्विनीकुमारोंकी भी पूजा करनी चाहिये। राजन्! इस प्रकार मैंने द्वितीया-कल्पका वर्णन किया है। (अध्याय २०)

तृतीया-कल्पका आरम्भ, गौरी-तृतीया-व्रत-विधान और उसका फल

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! जो स्त्री सब प्रकारका सुख चाहती है, उसे तृतीयाका व्रत करना चाहिये। उस दिन नमक नहीं खाना चाहिये। इस विधिसे उपवासपूर्वक जीवनपर्यन्त इस व्रतका अनुष्ठान करनेवाली स्त्रीको भगवती गौरी संतुष्ट होकर रूप-सौभाग्य तथा लावण्य प्रदान करती हैं। इस व्रतका विधान जो स्वयं गौरीने धर्मराजसे कहा है, उसीका वर्णन मैं करता हूँ, उसे आप सुनें—

भगवती गौरीने धर्मराजसे कहा—धर्मराज! स्त्री-पुरुषोंके कल्याणके लिये मैंने इस सौभाग्य प्राप्त करानेवाले व्रतको बनाया है। जो स्त्री इस व्रतको नियमपूर्वक करती है, वह सदैव अपने पतिके साथ रहकर उसी प्रकार आनन्दका उपभोग करती है, जैसे भगवान् शिवके साथ मैं आनन्दित रहती हूँ। उत्तम पतिकी प्राप्तिके लिये कन्याको यह व्रत करना चाहिये। व्रतमें नमक न खाये। सुवर्णकी गौरी-प्रतिमा स्थापित करके भक्तिपूर्वक एकाग्रचित्त हो गौरीका पूजन करे। गौरीके लिये नाना प्रकारके नैवेद्य अर्पित करने चाहिये। रात्रिमें लवणरहित भोजन करके स्थापित गौरी-प्रतिमाके समक्ष ही शयन करे। दूसरे दिन ब्राह्मणोंको भोजन कराकर दक्षिणा दे। इस प्रकार जो कन्या व्रत करती है, वह उत्तम पतिको प्राप्त करती है तथा चिरकालतक श्रेष्ठ भोगोंको भोगकर अन्तमें पतिके साथ उत्तम लोकोंको जाती है।

यदि विधवा इस व्रतको करती है तो वह स्वर्गमें अपने पतिको प्राप्त करती है और बहुत समयतक वहाँ रहकर पतिके साथ वहाँके सुखोंका उपभोग करती है एवं पूर्वोक्त सभी सुखोंको भी प्राप्त करती है। देवी इन्द्राणीने पुत्र-प्राप्तिके लिये इस व्रतका अनुष्ठान किया था, इसके प्रभावसे उन्हें जयन्त नामका पुत्र प्राप्त हुआ। अरुन्धतीने उत्तम स्थान प्राप्त करनेके लिये इस व्रतका नियम-पालन किया था, जिसके प्रभावसे वे पतिसहित सबसे ऊपरका स्थान प्राप्त कर सकी थीं। वे आजतक आकाशमें अपने पति महर्षि वसिष्ठके साथ दिखायी देती हैं। चन्द्रमाकी पत्नी रोहिणीने अपनी समस्त सपत्नियोंको जीतनेके लिये बिना लवण खाये इस व्रतको किया तो वे अपनी सभी सपत्नियोंमें प्रधान तथा अपने पति चन्द्रमाकी अत्यन्त प्रिय पत्नी हो गयीं। देवी पार्वतीकी अनुकम्पासे उन्हें अचल सौभाग्य प्राप्त हुआ।

इस प्रकार यह तृतीया तिथि-व्रत सारे संसारमें पूजित है और उत्तम फल देनेवाला है। वैशाख, भाद्रपद तथा माघ मासकी तृतीया अन्य मासोंकी तृतीयासे अधिक उत्तम है, जिसमें माघ मास तथा भाद्रपद मासकी तृतीया स्त्रियोंको विशेष फल देनेवाली है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

वैशाख मासकी तृतीया सामान्यरूपसे सबके लिये है। यह साधारण तृतीया है। माघ मासकी तृतीयाको गुड़ तथा लवणका दान करना स्त्री-पुरुषोंके लिये अत्यन्त श्रेयस्कर है। भाद्रपद मासकी तृतीयामें गुड़के बने अपूपों (मालपूआ)-का दान करना चाहिये। भगवान् शङ्करकी प्रसन्नताके लिये माघ मासकी तृतीयाको मोदक और जलका दान करना चाहिये। वैशाख मासकी तृतीयाको चन्दनमिश्रित जल तथा मोदकके दानसे ब्रह्मा तथा सभी देवता प्रसन्न होते हैं। देवताओंने वैशाख मासकी तृतीयाको अक्षय तृतीया कहा है। इस दिन अन्न-वस्त्र-भोजन-सुवर्ण और जल आदिका दान करनेसे अक्षय फलकी प्राप्ति होती है। इसी विशेषताके कारण इस तृतीयाका नाम अक्षय तृतीया है। इस तृतीयाके दिन जो कुछ भी दान किया जाता है, वह अक्षय हो जाता है और दान देनेवाला सूर्यलोकको प्राप्त करता है। इस तिथिको जो उपवास करता है वह ऋद्धि-वृद्धि और श्रीसे सम्पन्न हो जाता है।

(अध्याय २१)

चतुर्थी-व्रत एवं गणेशजीकी कथा तथा सामुद्रिक शास्त्रका संक्षिप्त परिचय

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! तृतीया-कल्पका वर्णन करनेके अनन्तर अब मैं चतुर्थी-कल्पका वर्णन करता हूँ। चतुर्थी-तिथिमें सदा निराहार रहकर व्रत करना चाहिये। ब्राह्मणको तिलका दान देकर स्वयं भी तिलका भोजन करना चाहिये। इस प्रकार व्रत करते हुए दो वर्ष व्यतीत होनेपर भगवान् विनायक प्रसन्न होकर व्रतीको अभीष्ट फल प्रदान करते हैं। उसका भाग्योदय हो जाता है और वह अपार धन-सम्पत्तिका स्वामी हो जाता है तथा परलोकमें भी अपने पुण्य-फलोंका उपभोग करता है। पुण्य समाप्त होनेके पश्चात् इस लोकमें पुनः आकर वह दीर्घायु, कान्तिमान्, बुद्धिमान्, धृतिमान्, वक्ता, भाग्यवान्, अभीष्ट कार्यों तथा असाध्य कार्योंको भी क्षणभरमें ही सिद्ध कर लेनेवाला और हाथी, घोड़े, रथ, पत्नी-पुत्रसे युक्त हो सात जन्मोंतक राजा होता है।

राजा शतानीकने पूछा—मुने! गणेशजीने किसके लिये विघ्न उत्पन्न किया था, जिसके कारण उन्हें विघ्नविनायक कहा गया। आप विघ्नेश तथा उनके द्वारा विघ्न उत्पन्न करनेके कारणको मुझे बतानेका कष्ट करें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! एक बार अपने लक्षणशास्त्रके अनुसार स्वामिकार्तिकेयने पुरुषों और स्त्रियोंके श्रेष्ठ लक्षणोंकी रचना की, उस समय गणेशजीने विघ्न किया। इसपर कार्तिकेय क्रुद्ध हो उठे और उन्होंने गणेशका एक दाँत उखाड़ लिया और उन्हें मारनेके लिये उद्यत हो उठे। उस समय भगवान् शङ्करने उनको रोककर पूछा कि तुम्हारे क्रोधका क्या कारण है?

कार्तिकेयने कहा—पिताजी! मैं पुरुषोंके लक्षण बनाकर स्त्रियोंके लक्षण बना रहा था, उसमें इसने विघ्न किया, जिससे स्त्रियोंके लक्षण मैं नहीं बना सका। इस कारण मुझे क्रोध हो आया। यह सुनकर महादेवजीने कार्तिकेयके क्रोधको शान्त किया और हँसते हुए उन्होंने पूछा।

शङ्कर बोले—पुत्र! तुम पुरुषके लक्षण जानते हो तो बताओ, मुझमें पुरुषके कौन-से लक्षण हैं?

कार्तिकेयने कहा—महाराज! आपमें ऐसा लक्षण है कि संसारमें आप कपालीके नामसे प्रसिद्ध होंगे। पुत्रका यह वचन सुनकर महादेवजीको क्रोध हो आया और उन्होंने उनके उस लक्षण-

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

ग्रन्थको उठाकर समुद्रमें फेंक दिया और स्वयं अन्तर्धान हो गये।

बादमें शिवजीने समुद्रको बुलाकर कहा कि तुम स्त्रियोंके आभूषणस्वरूप विलक्षण लक्षणोंकी रचना करो और कार्तिकेयने जो पुरुष-लक्षणके विषयमें कहा है उसको कहो।

समुद्रने कहा—जो मेरे द्वारा पुरुष-लक्षणका शास्त्र कहा जायगा, वह मेरे ही नाम 'सामुद्रिक शास्त्र' से प्रसिद्ध होगा। स्वामिन्! आपने जो आज्ञा मुझे दी है, वह निश्चित ही पूरी होगी।

शङ्करजीने पुनः कहा—कार्तिकेय! इस समय तुमने जो गणेशका दाँत उखाड़ लिया है उसे दे दो। निश्चय ही जो कुछ यह हुआ है, होना ही था। दैवयोगसे यह गणेशके बिना सम्भव नहीं था, इसलिये उनके द्वारा यह विघ्न उपस्थित किया गया। यदि तुम्हें लक्षणकी अपेक्षा हो तो समुद्रसे ग्रहण कर लो, किंतु स्त्री-पुरुषोंका यह श्रेष्ठ लक्षण-शास्त्र 'सामुद्र-शास्त्र' इस नामसे ही प्रसिद्ध होगा। गणेशको तुम दाँत-युक्त कर दो।

कार्तिकेयने भगवान् देवदेवेश्वरसे कहा—आपके कहनेसे मैं दाँत तो विनायकके हाथमें दे देता हूँ, किंतु इन्हें इस दाँतको सदैव धारण करना पड़ेगा। यदि इस दाँतको फेंककर ये इधर-उधर घूमेंगे तो यह फेंका गया दाँत इन्हें भस्म कर देगा। ऐसा कहकर कार्तिकेयने उनके हाथमें दाँत दे दिया। भगवान् देवदेवेश्वरने गणेशको कार्तिकेयकी इस बातको माननेके लिये सहमत कर लिया।

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! आज भी भगवान् शङ्करके पुत्र विघ्नकर्ता महात्मा विनायककी प्रतिमा हाथमें दाँत लिये देखी जा सकती है। देवताओंकी यह रहस्यपूर्ण बात मैंने आपसे कही। इसको देवता भी नहीं जान पाये थे। पृथ्वीपर इस रहस्यको जानना तो दुर्लभ ही है। प्रसन्न होकर मैंने इस रहस्यको आपसे तो कह दिया है, किंतु गणेशकी यह अमृतकथा चतुर्थी-तिथिके संयोगपर ही कहनी चाहिये। जो विद्वान् हो, उसे चाहिये कि वह इस कथाको वेदपारङ्गत श्रेष्ठ द्विजों, अपनी क्षत्रियोचित वृत्तिमें लगे हुए क्षत्रियों, वैश्यों और गुणवान् शूद्रोंको सुनाये। जो इस चतुर्थी-व्रतका पालन करता है, उसके लिये इस लोक तथा परलोकमें कुछ भी दुर्लभ नहीं रहता। उसकी दुर्गति नहीं होती और न कहीं वह पराजित होता है। भरतश्रेष्ठ! निर्विघ्नरूपसे वह सभी कार्योंको सम्पन्न कर लेता है, इसमें संदेह नहीं है। उसे ऋद्धि-वृद्धि-ऐश्वर्य भी प्राप्त हो जाता है।

(अध्याय २२)

चतुर्थी-कल्प-वर्णनमें गणेशजीका विघ्न-अधिकार तथा उनकी पूजा-विधि

राजा शतानीकने सुमन्तु मुनिसे पूछा—विप्रवर! गणेशजीको गणोंका राजा किसने बनाया और बड़े भाई कार्तिकेयके रहते हुए ये कैसे विघ्नोंके अधिकारी हो गये?

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! आपने बहुत अच्छी बात पूछी है। जिस कारण ये विघ्नकारक हुए हैं और जिन विघ्नोंको करनेसे इस पदपर इनकी नियुक्ति हुई, वह मैं कह रहा हूँ, उसे आप एकाग्रचित्त होकर सुनें। पहले कृतयुगमें प्रजाओंकी जब सृष्टि हुई तो बिना विघ्न-बाधाके देखते-ही-देखते सब कार्य सिद्ध हो जाते थे। अतः प्रजाको बहुत अहंकार हो गया। क्लेशरहित एवं अहंकारसे परिपूर्ण प्रजाको देखकर ब्रह्माने बहुत सोच-विचार करके प्रजा-समृद्धिके लिये विनायकको विनियोजित किया

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

अतः ब्रह्माके प्रयाससे भगवान् शङ्करने गणेशको उत्पन्न किया और उन्हें गणोंका अधिपति बनाया।

राजन्! जो प्राणी गणेशकी बिना पूजा किये ही कार्य आरम्भ करता है, उसके लक्षण मुझसे सुनिये—वह व्यक्ति स्वप्नमें अत्यन्त गहरे जलमें अपनेको डूबते, स्नान करते हुए या केश मुड़ाये देखता है। काषाय वस्त्रसे आच्छादित तथा हिंसक व्याघ्रादि पशुओंपर अपनेको चढ़ता हुआ देखता है। अन्त्यज, गर्दभ तथा ऊँट आदिपर चढ़कर परिजनोंसे घिरा वह अपनेको जाता हुआ देखता है। जो मानव केकड़ेपर बैठकर अपनेको जलकी तरंगोंके बीच गया हुआ देखता है और पैदल चल रहे लोगोंसे घिरकर यमराजके लोकको जाता हुआ अपनेको स्वप्नमें देखता है, वह निश्चित ही अत्यन्त दुःखी होता है।

जो राजकुमार स्वप्नमें अपने चित्त तथा आकृतिको विकृत रूपमें अवस्थित, करवीरके फूलोंकी मालासे विभूषित देखता है, वह उन भगवान् विघ्नेशके द्वारा विघ्न उत्पन्न कर देनेके कारण पूर्ववंशानुगत प्राप्त राज्यको प्राप्त नहीं कर पाता। कुमारी कन्या अपने अनुरूप पतिको नहीं प्राप्त कर पाती। गर्भिणी स्त्री संतानको नहीं प्राप्त कर पाती है। श्रोत्रिय ब्राह्मण आचार्यत्वका लाभ नहीं प्राप्त कर पाता और शिष्य अध्ययन नहीं कर पाता। वैश्यको व्यापारमें लाभ नहीं प्राप्त होता है और कृषकको कृषि-कार्यमें पूरी सफलता नहीं मिलती। इसलिये राजन्! ऐसे अशुभ स्वप्नोंको देखनेपर भगवान् गणपतिकी प्रसन्नताके लिये विनायक-शान्ति करनी चाहिये।

शुक्ल पक्षकी चतुर्थीके दिन, बृहस्पतिवार और पुष्य-नक्षत्र होनेपर गणेशजीको सर्वौषधि और सुगन्धित द्रव्य-पदार्थोंसे उपलिप्त करे तथा उन भगवान् विघ्नेशके सामने स्वयं भद्रासनपर बैठकर ब्राह्मणोंसे स्वस्तिवाचन कराये। तदनन्तर भगवान् शङ्कर, पार्वती और गणेशकी पूजा करके सभी पितरों तथा ग्रहोंकी पूजा करे। चार कलश स्थापित कर उनमें सप्तमृत्तिका, गुग्गुल और गोरोचन आदि द्रव्य तथा सुगन्धित पदार्थ छोड़े। सिंहासनस्थ गणेशजीको स्नान कराना चाहिये। स्नान कराते समय इन मन्त्रोंका उच्चारण करे—

सहस्राक्षं शतधारमृषिभिः पावनं कृतम्।
तेन त्वामभिषिञ्चामि पावमान्यः पुनन्तु ते॥
भगं ते वरुणो राजा भगं सूर्यो बृहस्पतिः।
भगमिन्द्रश्च वायुश्च भगं सप्तर्षयो ददुः॥
यत्ते केशेषु दौर्भाग्यं सीमन्ते यच्च मूर्धनि।
ललाटे कर्णयोरक्ष्णोरापस्तद्घ्नन्तु ते सदा॥

(ब्राह्मपर्व २३। १९—२१)

इन मन्त्रोंसे स्नान कराकर हवन आदि कार्य करे। अनन्तर हाथमें पुष्प, दूर्वा तथा सर्षप (सरसों) लेकर गणेशजीकी माता पार्वतीको तीन बार पुष्पाञ्जलि प्रदान करनी चाहिये। मन्त्र उच्चारण करते हुए इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिये—

रूपं देहि यशो देहि भगं भगवति देहि मे।
पुत्रान् देहि धनं देहि सर्वान् कामांश्च देहि मे।
अचलां बुद्धिं मे देहि धरायां ख्यातिमेव च॥

(ब्राह्मपर्व २३। २८)

अर्थात् 'हे भगवति! आप मुझे रूप, यश, तेज, पुत्र तथा धन दें, आप मेरी सभी कामनाओंको पूर्ण करें। मुझे अचल बुद्धि प्रदान करें और इस पृथ्वीपर प्रसिद्धि दें।'

प्रार्थनाके पश्चात् ब्राह्मणोंको तथा गुरुको भोजन कराकर उन्हें वस्त्र-युगल तथा दक्षिणा समर्पित करे। इस प्रकार भगवान् गणेश तथा ग्रहोंकी पूजा करनेसे सभी कर्मोंका फल प्राप्त होता है और अत्यन्त श्रेष्ठ लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है। सूर्य, कार्तिकेय और विनायकका पूजन एवं तिलक करनेसे सभी सिद्धियोंकी प्राप्ति होती है। (अध्याय २३)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

पुरुषोंके शुभाशुभ लक्षण

राजा शतानीकने पूछा—विप्रेन्द्र! स्त्री और पुरुषके जो लक्षण कार्तिकेयने बनाये थे और जिस ग्रन्थको क्रोधमें आकर भगवान् शिवने समुद्रमें फेंक दिया था, वह कार्तिकेयको पुनः प्राप्त हुआ या नहीं? इसे आप मुझे बतायें।

सुमन्तु मुनिने कहा—राजेन्द्र! कार्तिकेयने स्त्री-पुरुषका जैसा लक्षण कहा है, वैसा ही मैं कह रहा हूँ। व्योमकेश भगवान्के सुपुत्र कार्तिकेयने जब अपनी शक्तिके द्वारा क्रौंचपर्वतको विदीर्ण किया, उस समय ब्रह्माजी उनपर प्रसन्न हो उठे। उन्होंने कार्तिकेयसे कहा कि हम तुमपर प्रसन्न हैं, जो चाहो वह वर मुझसे माँग लो। उस तेजस्वी कुमार कार्तिकेयने नतमस्तक होकर उन्हें प्रणाम किया और कहा कि विभो! स्त्री-पुरुषके विषयमें मुझे अत्यधिक कौतूहल है। जो लक्षण-ग्रन्थ पहले मैंने बनाया था उसे तो पिता देवदेवेश्वरने क्रोधमें आकर समुद्रमें फेंक दिया। वह मुझे भूल भी गया है। अतः उसको सुननेकी मेरी इच्छा है। आप कृपा करके उसीका वर्णन करें।

ब्रह्माजी बोले—तुमने अच्छी बात पूछी है। समुद्रने जिस प्रकारसे उन लक्षणोंको कहा है, उसी प्रकार मैं तुम्हें सुना रहा हूँ। समुद्रने स्त्री-पुरुषोंके उत्तम, मध्यम तथा अधम—तीन प्रकारके लक्षण बतलाये हैं।

शुभाशुभ लक्षण देखनेवालेको चाहिये कि वह शुभ मुहूर्तमें मध्याह्नके पूर्व पुरुषके लक्षणोंको देखे। प्रमाणसमूह, छायागति, सम्पूर्ण अङ्ग, दाँत, केश, नख, दाढ़ी-मूँछका लक्षण देखना चाहिये। पहले आयुकी परीक्षा करके ही लक्षण बताने चाहिये। आयु कम हो तो सभी लक्षण व्यर्थ हैं। अपनी अङ्गुलियोंसे जो पुरुष एक सौ आठ यानी चार हाथ बारह अङ्गुलका होता है, वह उत्तम होता है। सौ अङ्गुलका होनेपर मध्यम और नब्बे अङ्गुलका होनेपर अधम माना जाता है—लम्बाईके प्रमाणका यही लक्षण आचार्य समुद्रने कहा है।

हे कुमार! अब मैं पुरुषके अङ्गोंका लक्षण कहता हूँ। जिसका पैर कोमल, मांसल, रक्तवर्ण, स्निग्ध, ऊँचा, पसीनेसे रहित और नाड़ियोंसे व्याप्त न हो अर्थात् नाड़ियाँ दिखायी नहीं पड़ती हों तो वह पुरुष राजा होता है। जिसके पैरके तलवेमें अंकुशका चिह्न हो, वह सदा सुखी रहता है। कछुवेके समान ऊँचे चरणवाला, कमलके सदृश कोमल और परस्पर मिली हुई अङ्गुलियोंवाला, सुन्दर पार्ष्णि—एड़ीसे युक्त, निगूढ टखनेवाला, सदा गर्म रहनेवाला, प्रस्वेदशून्य, रक्तवर्णके नखोंसे अलंकृत चरणवाला पुरुष राजा होता है। सूर्पके समान रूखा, सफेद नखोंसे युक्त, टेढ़ी-रूखी नाड़ियोंसे व्याप्त, विरल अङ्गुलियोंसे युक्त चरणवाले पुरुष दरिद्र और दुःखी होते हैं। जिसका चरण आगमें पकायी गयी मिट्टीके समान वर्णका होता है, वह ब्रह्महत्या करनेवाला, पीले चरणवाला अगम्या-गमन करनेवाला, कृष्णवर्णके चरणवाला मद्यपान करनेवाला तथा श्वेतवर्णके चरणवाला अभक्ष्य पदार्थ भक्षण करनेवाला होता है। जिस पुरुषके पैरोंके अँगूठे मोटे होते हैं वे भाग्यहीन होते हैं। विकृत अँगूठेवाले सदा पैदल चलनेवाले और दुःखी होते हैं। चिपटे, विकृत तथा टूटे हुए अँगूठेवाले अतिशय निन्दित होते हैं एवं टेढ़े, छोटे और फटे हुए अँगूठेवाले कष्ट भोगते हैं। जिस पुरुषके पैरकी तर्जनी अँगुली अँगूठेसे बड़ी हो, उसको स्त्री-सुख प्राप्त होता है। कनिष्ठा अँगुलीके बड़ी होनेपर स्वर्णकी प्राप्ति होती है। चपटी, विरल, सूखी अँगुली होनेपर पुरुष धनहीन

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

होता है और सदा दुःख भोगता है। रुक्ष और श्वेत नख होनेपर दुःखकी प्राप्ति होती है। खराब नख होनेपर पुरुष शीलरहित और कामभोगरहित होता है। रोमसे युक्त जंघा होनेपर भाग्यहीन होता है। जंघे छोटे होनेपर ऐश्वर्य प्राप्त होता है, किंतु बन्धनमें रहता है। मृगके समान जंघा होनेपर राजा होता है। लम्बी, मोटी तथा मांसल जंघावाला ऐश्वर्य प्राप्त करता है। सिंह तथा बाघके समान जंघावाला धनवान् होता है। जिसके घुटने मांसरहित होते हैं, वह विदेशमें मरता है, विकट जानु होनेपर दरिद्र होता है। नीचे घुटने होनेपर स्त्री-जित होता है और मांसल जानु होनेपर राजा होता है। हंस, भास पक्षी, शुक, वृष, सिंह, हाथी तथा अन्य श्रेष्ठ पशु-पक्षियोंके समान गति होनेपर व्यक्ति राजा अथवा भाग्यवान् होता है। ये आचार्य समुद्रके वचन हैं, इनमें संदेह नहीं है।

जिस पुरुषका रक्त कमलके समान होता है वह धनवान् होता है। कुछ लाल और कुछ काला रुधिरवाला मनुष्य अधम और पापकर्मको करनेवाला होता है। जिस पुरुषका रक्त मूँगेके समान रक्त और स्निग्ध होता है, वह सात द्वीपोंका राजा होता है। मृग अथवा मोरके समान पेट होनेपर उत्तम पुरुष होता है। बाघ, मेढक और सिंहके समान पेट होनेपर राजा होता है। मांससे पुष्ट, सीधा और गोल पार्श्ववाला व्यक्ति राजा होता है। बाघके समान पीठवाला व्यक्ति सेनापति होता है। सिंहके समान लम्बी पीठवाला व्यक्ति बन्धनमें पड़ता है। कछुवेके समान पीठवाला पुरुष धनवान् तथा सौभाग्य-सम्पन्न होता है। चौड़ा, मांससे पुष्ट और रोमयुक्त वक्षःस्थलवाला पुरुष, शतायु, धनवान् और उत्तम भोगोंको प्राप्त करता है। सूखी, रूखी, विरल हाथकी अँगुलियोंवाला पुरुष धनहीन और सदा दुःखी रहता है।

जिसके हाथमें मत्स्यरेखा होती है, उसका कार्य सिद्ध होता है और वह धनवान् तथा पुत्रवान् होता है। जिसके हाथमें तुला अथवा वेदीका चिह्न होता है, वह पुरुष व्यापारमें लाभ करता है। जिसके हाथमें सोमलताका चिह्न होता है, वह धनी होता है और यज्ञ करता है। जिसके हाथमें पर्वत और वृक्षका चिह्न होता है, उसकी लक्ष्मी स्थिर होती है और वह अनेक सेवकोंका स्वामी होता है। जिसके हाथमें बर्छी, बाण, तोमर, खड्ग और धनुषका चिह्न होता है, वह युद्धमें विजयी होता है। जिसके हाथमें ध्वजा और शङ्खका चिह्न होता है, वह जहाजसे व्यापार करता है और धनवान् होता है। जिसके हाथमें श्रीवत्स, कमल, वज्र, रथ और कलशका चिह्न होता है, वह शत्रुरहित राजा होता है। दाहिने हाथके अँगूठेमें यवका चिह्न रहनेपर पुरुष सभी विद्याओंका ज्ञाता तथा प्रवक्ता होता है। जिस पुरुषके हाथमें कनिष्ठाके नीचेसे तर्जनीके मध्यतक रेखा चली जाती है और बीचमें अलग नहीं रहती है तो वह पुरुष सौ वर्षोंतक जीवित रहता है। जिसका पेट साँपके समान लम्बा होता है वह दरिद्री और अधिक भोजन करनेवाला होता है। विस्तीर्ण, फैली हुई, गम्भीर और गोल नाभिवाला व्यक्ति सुख भोगनेवाला और धन-धान्यसे सम्पन्न होता है। नीची और छोटी नाभिवाला व्यक्ति विविध क्लेशोंको भोगनेवाला होता है। बलिके नीचे नाभि हो और वह विषम हो तो धनकी हानि होती है। दक्षिणावर्त नाभि बुद्धि प्रदान करती है और वामावर्त नाभि शान्ति प्रदान करती है। सौ दलोंवाले कमलकी कर्णिकाके समान नाभिवाला पुरुष राजा होता है। पेटमें एक बलि होनेपर शस्त्रसे मारा जाता है, दो बलि होनेपर स्त्री-भोगी होता है, तीन बलि होनेपर राजा अथवा आचार्य होता है। चार बलि होनेपर

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

अनेक पुत्र होते हैं, सीधी बलि होनेपर धनका उपभोग करता है।

जिनके स्कन्ध कठोर एवं मांसल तथा समान हों वे राजा होते हैं और सुखी रहते हैं। जिसका वक्ष:स्थल बराबर, उन्नत, मांसल और विस्तृत होता है वह राजाके समान होता है। इसके विपरीत कड़े रोमवाले तथा नसें दिखायी पड़नेवाले वक्ष:स्थल प्राय: निर्धनोंके ही होते हैं। दोनों वक्ष:स्थल समान होनेपर पुरुष धनवान् होता है, पुष्ट होनेपर शूरवीर होता है, छोटे होनेपर धनहीन तथा छोटा-बड़ा होनेपर अकिंचन होता है और शस्त्रसे मारा जाता है। विषम हनुवाला धनहीन तथा उन्नत हनु (ठुड्डी)- वाला भोगी होता है। चिपटी ग्रीवावाला धनहीन होता है। महिषके समान ग्रीवावाला शूरवीर होता है। मृगके समान ग्रीवावाला डरपोक होता है। समान ग्रीवावाला राजा होता है। तोता, ऊँट, हाथी और बगुलेके समान लम्बी तथा शुष्क ग्रीवावाला धनहीन होता है। छोटी ग्रीवावाला धनवान् और सुखी होता है। पुष्ट, दुर्गन्धरहित, सम एवं थोड़े रोमोंसे युक्त काँखवाले धनी होते हैं, जिसकी भुजाएँ ऊपरको खिंची रहती हैं, वह बन्धनमें पड़ता है। छोटी भुजा रहनेपर दास होता है, छोटी-बड़ी भुजा होनेपर चोर होता है, लम्बी भुजा होनेपर सभी गुणोंसे युक्त होता है और जानुओंतक लम्बी भुजा होनेपर राजा होता है। जिसके हाथका तल गहरा होता है उसे पिताका धन नहीं प्राप्त होता, वह डरपोक होता है। ऊँचे करतलवाला पुरुष दानी, विषम करतलवाला पुरुष मिश्रित फलवाला, लाखके समान रक्तवर्णवाला करतल होनेपर राजा होता है। पीले करतलवाला पुरुष अगम्यागमन करनेवाला, काला और नीला करतलवाला मद्यादि द्रव्योंका पान करनेवाला होता है। रूखे करतलवाला पुरुष निर्धन होता है। जिनके हाथकी रेखाएँ गहरी और स्निग्ध होती हैं वे धनवान् होते हैं। इसके विपरीत रेखावाले दरिद्र होते हैं। जिनकी अँगुलियाँ विरल होती हैं, उनके पास धन नहीं ठहरता और गहरी तथा छिद्रहीन अँगुली रहनेपर धनका संचयी रहता है।

ब्रह्माजी पुन: बोले—कार्तिकेय! चन्द्रमण्डलके समान मुखवाला व्यक्ति धर्मात्मा होता है और जिसका मुख सूँडकी आकृतिका होता है वह भाग्यहीन होता है। टेढ़ा, टूटा हुआ, विकृत और सिंहके समान मुखवाला चोर होता है। सुन्दर और कान्तियुक्त श्रेष्ठ हाथीके समान भरा हुआ सम्पूर्ण मुखवाला व्यक्ति राजा होता है। बकरे अथवा बंदरके समान मुखवाला व्यक्ति धनी होता है। जिसका मुख बड़ा होता है उसका दुर्भाग्य रहता है। छोटा मुखवाला कृपण, लम्बा मुखवाला धनहीन और पापी होता है। चौखूँटा मुखवाला धूर्त, स्त्रीके मुखके समान मुखवाला और निम्न मुखवाला पुरुष पुत्रहीन होता है या उसका पुत्र उत्पन्न होकर नष्ट हो जाता है। जिसके कपोल कमलके दलके समान कोमल और कान्तिमान् होते हैं, वह धनवान् एवं कृषक होता है। सिंह, बाघ और हाथीके समान कपोलवाला व्यक्ति विविध भोग-सम्पत्तियोंवाला और सेनाका स्वामी होता है। जिसका नीचेका ओठ रक्तवर्णका होता है, वह राजा होता है और कमलके समान अधरवाला धनवान् होता है। मोटा और रूखा होंठ होनेपर दु:खी होता है।

जिसके कान मांसरहित हों वह संग्राममें मारा जाता है। चिपटा कान होनेपर रोगी, छोटा होनेपर कृपण, शङ्खके समान कान होनेपर राजा, नाड़ियोंसे व्याप्त होनेपर क्रूर, केशोंसे युक्त होनेपर दीर्घजीवी, बड़ा, पुष्ट तथा लम्बा कान होनेपर भोगी तथा देवता और ब्राह्मणकी पूजा करनेवाला एवं राजा होता है। जिसकी नाक शुककी चोंचके समान हो

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

वह सुख भोगनेवाला और शुष्क नाकवाला दीर्घजीवी होता है। पतली नाकवाला राजा, लम्बी नाकवाला भोगी, छोटी नाकवाला धर्मशील, हाथी, घोड़ा, सिंह या सुईकी भाँति तीखी नाकवाला व्यापारमें सफल होता है। कुन्द-पुष्पकी कलीके समान उज्ज्वल दाँतवाला राजा तथा हाथीके समान दाँतवाला एवं चिकने दाँतवाला गुणवान् होता है। भालू और बंदरके समान दाँतवाले नित्य भूखसे व्याकुल रहते हैं। कराल, रूखे, अलग-अलग और फूटे हुए दाँतवाले दुःखसे जीवन व्यतीत करनेवाले होते हैं। बत्तीस दाँतवाले राजा, एकतीस दाँतवाले भोगी, तीस दाँतवाले सुख-दुःख भोगनेवाले तथा उनतीस दाँतवाले पुरुष दुःख ही भोगते हैं। काली या चित्रवर्णकी जीभ होनेपर व्यक्ति दासवृत्तिसे जीवन व्यतीत करता है। रूखी और मोटी जीभवाला क्रोधी, श्वेतवर्णकी जीभवाला पवित्र आचरणसे सम्पन्न होता है। निम्न, स्निग्ध, अग्रभाग रक्तवर्ण और छोटी जिह्वावाला विद्वान् होता है। कमलके पत्तेके समान पतली, लम्बी न बहुत मोटी और न बहुत चौड़ी जिह्वा रहनेपर राजा होता है। काले रंगका तालुवाला अपने कुलका नाशक, पीले तालुवाला सुख-दुःख भोग करनेवाला, सिंह और हाथीके तालुके समान तथा कमलके समान तालुवाला राजा होता है, श्वेत तालुवाला धनवान् होता है। रूखा, फटा हुआ तथा विकृत तालुवाला मनुष्य अच्छा नहीं माना जाता।

हंसके समान स्वरवाले तथा मेघके समान गम्भीर स्वरवाले पुरुष धन्य माने गये हैं। क्रौंचके समान स्वरवाले राजा, महान् धनी तथा विविध सुखोंका भोग करनेवाले होते हैं। चक्रवाकके समान जिनका स्वर होता है ऐसे व्यक्ति धन्य तथा धर्मवत्सल राजा होते हैं। घड़े एवं दुन्दुभिके समान स्वरवाले पुरुष राजा होते हैं। रूखे, ऊँचे, क्रूर, पशुओंके समान तथा घर्घरयुक्त स्वरवाले पुरुष दुःखभागी होते हैं। नीलकण्ठ पक्षीके समान स्वरवाले भाग्यवान् होते हैं। फूटे काँसेके बर्तनके समान तथा टूटे-फूटे स्वरवाले अधम कहे गये हैं।

दाडिमके पुष्पके समान नेत्रवाला राजा, व्याघ्रके समान नेत्रवाला क्रोधी, केकड़ेके समान आँखवाला झगड़ालू, बिल्ली और हंसके समान नेत्रवाला पुरुष अधम होता है। मयूर एवं नकुलके समान आँखवाले मध्यम माने जाते हैं। शहदके समान पिङ्गल वर्णके नेत्रवालेको लक्ष्मी कभी भी त्याग नहीं करती। गोरोचन, गुंजा और हरतालके समान पिङ्गल नेत्रवाला बलवान् और धनेश्वर होता है। अर्धचन्द्रके समान ललाट होनेपर राजा होता है। बड़ा ललाट होनेपर धनवान् होता है। छोटा ललाट होनेपर धर्मात्मा होता है। ललाटके बीच जिस स्त्री तथा पुरुषके पाँच आड़ी रेखा होती है वह सौ वर्षोंतक जीवित रहता है और ऐश्वर्य भी प्राप्त करता है। चार रेखा होनेपर अस्सी वर्ष, तीन रेखा होनेपर सत्तर वर्ष, दो रेखा होनेपर साठ वर्ष, एक रेखा होनपर चालीस वर्ष और एक भी रेखा न होनेपर पचीस वर्षकी आयुवाला होता है। इन रेखाओंके द्वारा हीन, मध्यम और पूर्ण आयुकी परीक्षा करनी चाहिये। छोटी रेखा होनेपर व्याधियुक्त तथा अल्पायु और लम्बी-लम्बी रेखाएँ होनेपर दीर्घायु होता है। जिसके ललाटमें त्रिशूल अथवा पट्टिशका चिह्न होता है, वह बड़ा प्रतापी, कीर्तिसम्पन्न राजा होता है। छत्रके समान सिर होनेपर राजा, लम्बा सिर होनेपर दुःखी, दरिद्र, विषम होनेपर समान तथा गोल सिर होनेपर सुखी, हाथीके समान सिर होनेपर राजाके समान होता है। जिनके केश अथवा रोम मोटे, रूखे, कपिल और आगेसे फटे हुए होते हैं, वे अनेक प्रकारके दुःख भोगते हैं। बहुत गहरे और कठोर केश दुःखदायी होते

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

हैं। विरल, स्निग्ध, कोमल, भ्रमर अथवा अंजनके समान अतिशय कृष्ण केशवाला पुरुष अनेक प्रकारके सुखका भोग करता है और राजा होता है। (अध्याय २४—२६)

राजपुरुषोंके लक्षण

कार्तिकेयजीने कहा—ब्रह्मन्! आप राजाओंके शरीरके अङ्गोंके लक्षणोंको बतानेकी कृपा करें।

ब्रह्माजी बोले—मैं मनुष्योंमें राजाओंके अङ्गोंके लक्षणोंको संक्षेपमें बताता हूँ। यदि ये लक्षण साधारण पुरुषोंमें भी प्रकट हों तो वे भी राजाके समान होते हैं, इन्हें आप सुनें—

जिस पुरुषके नाभि, स्वर और संधिस्थान—ये तीन गम्भीर हों, मुख, ललाट और वक्षःस्थल—ये तीन विस्तीर्ण हों, वक्षःस्थल, कक्ष, नासिका, नख, मुख और कृकाटिका—ये छः उन्नत अर्थात् ऊँचे हों, उपस्थ, पीठ, ग्रीवा और जंघा—ये चार ह्रस्व हों, नेत्रोंके प्रान्त, हाथ, पैर, तालु, ओष्ठ, जिह्वा तथा नख—ये सात रक्तवर्णके हों, हनु, नेत्र, भुजा, नासिका तथा दोनों स्तनोंका अन्तर—ये पाँच दीर्घ हों और दन्त, केश, अङ्गुलियोंके पर्व, त्वचा तथा नख—ये पाँच सूक्ष्म हों, वह सप्तद्वीपवती पृथ्वीका राजा होता है। जिसके नेत्र कमलदलके समान और अन्तमें रक्तवर्णके होते हैं, वह लक्ष्मीका स्वामी होता है। शहदके समान पिङ्गल नेत्रवाला पुरुष महात्मा होता है। सूखी आँखवाला डरपोक, गोल और चक्रके समान घूमनेवाली आँखवाला चोर, केकड़ेके समान आँखवाला क्रूर होता है। नील कमलके समान नेत्र होनेपर विद्वान्, श्यामवर्णके नेत्र होनेपर सौभाग्यशाली, विशाल नेत्र होनेपर भाग्यवान्, स्थूल नेत्र होनेपर राजमन्त्री और दीन नेत्र होनेपर दरिद्र होता है। भौंहें विशाल होनेपर सुखी, ऊँची होनेपर अल्पायु और विषम या बहुत लम्बी होनेपर दरिद्र और दोनों भौंहोंके मिले हुए होनेपर धनहीन होता है। मध्यभागमें नीचेकी ओर झुकी भौंहवाले परदाराभिगामी होते हैं। बालचन्द्रकलाके समान भौंहें होनेपर राजा होता है। ऊँचा और निर्मल ललाट होनेपर उत्तम पुरुष होता है, नीचा ललाट होनेपर स्तुति किया जानेवाला और धनसे युक्त होता है, कहीं ऊँचा और कहीं नीचा ललाट होनेपर दरिद्र तथा सीपके समान ललाट होनेपर आचार्य होता है। स्निग्ध, हास्ययुक्त और दीनतासे रहित मुख शुभ होता है, दैन्यभावयुक्त तथा आँसुओंसे युक्त आँखोंवाला एवं रूखे चेहरेवाला श्रेष्ठ नहीं है। उत्तम पुरुषका हास्य कम्पनरहित धीरे-धीरे होता है। अधम व्यक्ति बहुत शब्दके साथ हँसता है। हँसते समय आँखको मूँदनेवाला व्यक्ति पापी होता है। गोल सिरवाला पुरुष अनेक गौओंका स्वामी तथा चिपटा सिरवाला माता-पिताको मारनेवाला होता है। घण्टेकी आकृतिके समान सिरवाला सदा कहीं-न-कहीं यात्रा करता रहता है। निम्न सिरवाला अनेक अनर्थोंको करनेवाला होता है।

इस प्रकार पुरुषोंके शुभ और अशुभ लक्षणोंको मैंने आपसे कहा। अब स्त्रियोंके लक्षण बतलाता हूँ। (अध्याय २७)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

स्त्रियोंके शुभाशुभ लक्षण

ब्रह्माजी बोले—कार्तिकेय! स्त्रियोंके जो लक्षण मैंने पहले नारदजीको बतलाये थे, उन्हीं शुभाशुभ लक्षणोंको बताता हूँ। आप सावधान होकर सुनें—शुभ मुहूर्तमें कन्याके हाथ, पैर, अँगुली, नख, हाथकी रेखा, जंघा, कटि, नाभि, ऊरु, पेट, पीठ, भुजा, कान, जिह्वा, ओठ, दाँत, कपोल, गला, नेत्र, नासिका, ललाट, सिर, केश, स्वर, वर्ण और भौंरी—इन सबके लक्षण देखे।

जिसकी ग्रीवामें रेखा हो और नेत्रोंका प्रान्तभाग कुछ लाल हो, वह स्त्री जिस घरमें जाती है, उस घरकी प्रतिदिन वृद्धि होती है। जिसके ललाटमें त्रिशूलका चिह्न होता है, वह कई हजार दासियोंकी स्वामिनी होती है। जिस स्त्रीकी राजहंसके समान गति, मृगके समान नेत्र, मृगके समान ही शरीरका वर्ण, दाँत बराबर और श्वेत होते हैं, वह उत्तम स्त्री होती है। मेढकके समान कुक्षिवाली एक ही पुत्र उत्पन्न करती है और वह पुत्र राजा होता है। हंसके समान मृदु वचन बोलनेवाली, शहदके समान पिङ्गल वर्णवाली स्त्री धन-धान्यसे सम्पन्न होती है, उसे आठ पुत्र होते हैं। जिस स्त्रीके लम्बे कान, सुन्दर नाक और भौंह धनुषके समान टेढ़ी होती है, वह अतिशय सुखका भोग करती है। तन्वी, श्यामवर्णा, मधुरभाषिणी, शङ्खके समान अतिशय स्वच्छ दाँतोंवाली, स्निग्ध अङ्गोंसे समन्वित स्त्री अतिशय ऐश्वर्यको प्राप्त करती है। विस्तीर्ण जंघाओंवाली, वेदीके समान मध्यभागवाली, विशाल नेत्रोंवाली स्त्री रानी होती है। जिस स्त्रीके वाम स्तनपर, हाथमें, कानमें ऊपर या गलेपर तिल अथवा मसा होता है, उस स्त्रीको प्रथम पुत्र उत्पन्न होता है। जिस स्त्रीका पैर रक्तवर्ण हो, ठेहुने बहुत ऊँचे न हों, छोटी एड़ी हो, परस्पर मिली हुई सुन्दर अँगुलियाँ हों, लाल नेत्र हों—ऐसी स्त्री अत्यन्त सुख भोग करती है। जिसके पैर बड़े-बड़े हों, सभी अङ्गोंमें रोम हों, छोटे और मोटे हाथ हों, वह दासी होती है। जिस स्त्रीके पैर उत्कट हों, मुख विकृत हो, ऊपरके ओठके ऊपर रोम हो वह शीघ्र अपने पतिको मार देती है। जो स्त्री पवित्र, पतिव्रता, देवता, गुरु और ब्राह्मणोंकी भक्त होती है, वह मानुषी कहलाती है। नित्य स्नान करनेवाली, सुगन्धित द्रव्य लगानेवाली, मधुर वचन बोलनेवाली, थोड़ा खानेवाली, कम सोनेवाली और सदा पवित्र रहनेवाली स्त्री देवता होती है। गुप्तरूपसे पाप करनेवाली, अपने पापको छिपानेवाली, अपने हृदयके अभिप्रायको किसीके आगे प्रकट न करनेवाली स्त्री मार्जारी-संज्ञक होती है। कभी हँसनेवाली, कभी क्रीडा करनेवाली, कभी क्रोध करनेवाली, कभी प्रसन्न रहनेवाली तथा पुरुषोंके मध्य रहनेवाली स्त्री गर्दभी-श्रेणीकी होती है। पति और बान्धवोंके द्वारा कहे गये हितकारी वचनको न माननेवाली, अपनी इच्छाके अनुसार विहार करनेवाली स्त्री आसुरी कही जाती है। बहुत खानेवाली, बहुत बोलनेवाली, खोटे वचन बोलनेवाली, पतिको मारनेवाली स्त्री राक्षसी-संज्ञक होती है। शौच, आचार और रूपसे रहित, सदा मलिन रहनेवाली, अतिशय भयंकर स्त्री पिशाची कहलाती है। अतिशय चञ्चल स्वभाववाली, चपल नेत्रोंवाली, इधर-उधर देखनेवाली, लोभी नारी वानरी-संज्ञक होती है। चन्द्रमुखी, मदमत्त हाथीके समान चलनेवाली, रक्तवर्णके नखोंवाली, शुभ लक्षणोंसे युक्त हाथ-पैरवाली स्त्री विद्याधरी-श्रेणीकी होती है। वीणा, मृदङ्ग, वंशी आदि वाद्योंके शब्दोंको सुनने तथा पुष्पों और विविध सुगन्धित द्रव्योंमें अभिरुचि रखनेवाली स्त्री गान्धर्वी-श्रेणीकी होती है।

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! ब्रह्माजी इस प्रकार स्त्री और पुरुषोंके लक्षणोंको स्वामिकार्तिकेयको बतलाकर अपने लोकको चले गये।

(अध्याय २८)

विनायक-पूजाका माहात्म्य

शतानीकने कहा—मुने! अब आप मुझे भगवान् गणेशकी आराधनाके विषयमें बतलायें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! भगवान् गणेशकी आराधनामें किसी तिथि, नक्षत्र या उपवासादिकी अपेक्षा नहीं होती। जिस किसी भी दिन श्रद्धा-भक्तिपूर्वक भगवान् गणेशकी पूजा की जाय तो वह अभीष्ट फलोंको देनेवाली होती है। कामना-भेदसे अलग-अलग वस्तुओंसे गणपतिकी मूर्ति बनाकर उसकी पूजा करनेसे मनोवाञ्छित फलकी प्राप्ति होती है। '**महाकर्णाय**[१] **विद्महे, वक्रतुण्डाय धीमहि, तन्नो दन्तिः प्रचोदयात्।**'—यह गणेश-गायत्री है। इसका जप करना चाहिये।

शुक्ल पक्षकी चतुर्थीको उपवास कर जो भगवान् गणेशका पूजन करता है, उसके सभी कार्य सिद्ध हो जाते हैं और सभी अनिष्ट दूर हो जाते हैं। श्रीगणेशजीके अनुकूल होनेसे सभी जगत् अनुकूल हो जाता है। जिसपर एकदन्त भगवान् गणपति संतुष्ट होते हैं, उसपर देवता, पितर, मनुष्य आदि सभी प्रसन्न रहते हैं[२]। इसलिये सम्पूर्ण विघ्नोंको निवृत्त करनेके लिये श्रद्धा-भक्तिपूर्वक गणेशजीकी आराधना करनी चाहिये।

(अध्याय २९-३०)

चतुर्थी-कल्पमें शिवा, शान्ता तथा सुखा—तीन प्रकारकी चतुर्थीका फल और उनका व्रत-विधान

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! चतुर्थी तिथि तीन प्रकारकी होती है—शिवा, शान्ता और सुखा। अब मैं इनका लक्षण कहता हूँ, उसे सुनें—

भाद्रपद मासकी शुक्ला चतुर्थीका नाम 'शिवा' है, इस दिन जो स्नान, दान, उपवास, जप आदि सत्कर्म किया जाता है, वह गणपतिके प्रसादसे सौ गुना हो जाता है। इस चतुर्थीको गुड़, लवण और घृतका दान करना चाहिये, यह शुभकर माना गया है और गुड़के अपूपों (मालपूआ)-से ब्राह्मणोंको भोजन कराना चाहिये तथा उनकी पूजा करनी चाहिये। इस दिन जो स्त्री अपने सास और ससुरको गुड़के पूए तथा नमकीन पूए खिलाती है वह गणपतिके अनुग्रहसे सौभाग्यवती होती है। पतिकी कामना करनेवाली कन्या विशेषरूपसे इस चतुर्थीका व्रत करे और गणेशजीकी पूजा करे। राजन्! यह शिवा-चतुर्थीका विधान है।

माघ मासकी शुक्ला चतुर्थीको 'शान्ता' कहते हैं। यह शान्ता तिथि नित्य शान्ति प्रदान करनेके कारण 'शान्ता' कही गयी है। इस दिन किये हुए स्नान-दानादि सत्कर्म गणेशजीकी कृपासे हजार गुना फलदायक हो जाते हैं। इस शान्ता नामक चतुर्थी तिथिको उपवास कर गणेशजीका पूजन तथा हवन करे और लवण, गुड़, शाक एवं गुड़के पूए ब्राह्मणोंको दानमें दे। विशेषरूपसे

१-परम्परासे प्रचलित गणेश-गायत्रीमें 'एकदन्ताय' पाठ है।

२-एकदन्ते जगन्नाथे गणेशे तुष्टिमागते। पितृदेवमनुष्याद्याः सर्वे तुष्यन्ति भारत॥ (ब्राह्मपर्व ३०। ८)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

स्त्रियाँ अपने ससुर आदि पूज्य जनोंका पूजन करें एवं उन्हें भोजन करायें। इस व्रतके करनेसे अखण्ड सौभाग्यकी प्राप्ति होती है, समस्त विघ्न दूर होते हैं और गणेशजीकी कृपा प्राप्त होती है।

किसी भी महीनेके भौमवारयुक्त शुक्ला चतुर्थीको 'सुखा' कहते हैं। यह व्रत स्त्रियोंको सौभाग्य, उत्तम रूप और सुख देनेवाला है। भगवान् शङ्कर एवं माता पार्वतीके संयुक्त तेजसे भूमिद्वारा रक्तवर्णके मङ्गलकी उत्पत्ति हुई। भूमिका पुत्र होनेसे वह भौम कहलाया और कुज, रक्त, वीर, अङ्गारक आदि नामोंसे प्रसिद्ध हुआ। वह शरीरके अङ्गोंकी रक्षा करनेवाला तथा सौभाग्य आदि देनेवाला है, इसीलिये अङ्गारक कहलाया। जो पुरुष अथवा स्त्री भौमवारयुक्त शुक्ला चतुर्थीको उपवास करके भक्तिपूर्वक प्रथम गणेशजीका, तदनन्तर रक्त चन्दन, रक्त पुष्प आदिसे भौमका पूजन करते हैं, उन्हें सौभाग्य और उत्तम रूप-सम्पत्तिकी प्राप्ति होती है।

प्रथम संकल्पकर स्नान करे, अनन्तर गणेश-स्मरणपूर्वक हाथमें शुद्ध मृत्तिका लेकर इस मन्त्रको पढ़े—

इह त्वं वन्दिता पूर्वं कृष्णेनोद्धरता किल।
तस्मान्मे दह पाप्मानं यन्मया पूर्वसंचितम्॥

(ब्राह्मपर्व ३१। २४)

इसके बाद मृत्तिकाको गङ्गाजलसे मिश्रितकर सूर्यके सामने करे, तदनन्तर अपने सिर आदि अङ्गोंमें लगाये और फिर जलके मध्य खड़ा होकर इस मन्त्रको पढ़कर नमस्कार करे—

त्वमापो योनिः सर्वेषां दैत्यदानवद्यौकसाम्।
स्वेदाण्डजोद्भिदां चैव रसानां पतये नमः॥

(ब्राह्मपर्व ३१। २७)

अनन्तर सभी तीर्थों, नदियों, सरोवरों, झरनों और तालाबोंमें मैंने स्नान किया—इस प्रकार भावना करता हुआ गोते लगाकर स्नान करे, फिर पवित्र होकर घरमें आकर दूर्वा, पीपल, शमी तथा गौका स्पर्श करे। इनके स्पर्श करनेके मन्त्र इस प्रकार हैं —

दूर्वा स्पर्श करनेका मन्त्र

त्वं दूर्वेऽमृतनामासि सर्वदेवैस्तु वन्दिता॥
वन्दिता दह तत्सर्वं दुरितं यन्मया कृतम्।

(ब्राह्मपर्व ३१। ३१-३२)

शमी स्पर्श करनेका मन्त्र

पवित्राणां पवित्रा त्वं काश्यपी प्रथिता श्रुतौ।
शमी शमय मे पापं नूनं वेत्सि धराधरान्॥

(ब्राह्मपर्व ३१। ३३)

पीपल-वृक्ष स्पर्श करनेका मन्त्र

नेत्रस्पन्दादिजं दुःखं दुःस्वप्नं दुर्विचिन्तनम्।
शक्तानां च समुद्योगमश्वत्थ त्वं क्षमस्व मे॥

(ब्राह्मपर्व ३१। ३४)

गौको स्पर्श करनेका मन्त्र

सर्वदेवमयी देवि मुनिभिस्तु सुपूजिता।
तस्मात् स्पृशामि वन्दे त्वां वन्दिता पापहा भव॥

(ब्राह्मपर्व ३१। ३६)

श्रद्धापूर्वक पहले गौकी प्रदक्षिणा कर उपर्युक्त मन्त्रको पढ़े और गौका स्पर्श करे। जो गौकी प्रदक्षिणा करता है, उसे सम्पूर्ण पृथ्वीकी प्रदक्षिणाका फल प्राप्त होता है।

इस प्रकार इनको स्पर्शकर, हाथ-पैर धोकर, आसनपर बैठकर आचमन करे। अनन्तर खदिर (खैर)-की समिधाओंसे अग्नि प्रज्वलित कर घृत, दुग्ध, यव, तिल तथा विविध भक्ष्य पदार्थोंसे मन्त्र पढ़ते हुए हवन करे। आहुति इन मन्त्रोंसे दे—**ॐ शर्वाय स्वाहा, ॐ शर्वपुत्राय स्वाहा, ॐ क्षोण्युत्सङ्गभवाय स्वाहा, ॐ कुजाय स्वाहा, ॐ ललिताङ्गाय स्वाहा** तथा **ॐ लोहिताङ्गाय स्वाहा।** इन प्रत्येक मन्त्रोंसे १०८ या अपनी शक्तिके अनुसार आहुति दे। अनन्तर सुवर्ण, चाँदी, चन्दन या देवदारुके

CC-0. Dr. Manish Roy. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth

काष्ठकी मङ्गलकी मूर्ति बनाकर ताँबे अथवा चाँदीके पात्रमें उसे स्थापित करे। घी, कुंकुम, रक्त चन्दन, रक्त पुष्प, नैवेद्य आदिसे उसकी पूजा करे अथवा अपनी शक्तिके अनुसार पूजा करे। अथवा ताम्र, मृत्तिका या बाँससे बने पात्रमें कुंकुम, केसर आदिसे मूर्ति अङ्कितकर पूजा करे। '**अग्निर्मूर्धा०** *' इत्यादि वैदिक मन्त्रोंसे सभी उपचारोंको समर्पित कर वह मूर्ति ब्राह्मणको दे दे और यथाशक्ति घी, दूध, चावल, गेहूँ, गुड़ आदि वस्तु भी ब्राह्मणको दे। धन रहनेपर कृपणता नहीं करनी चाहिये, क्योंकि कंजूसी करनेसे फल नहीं प्राप्त होता।

इस प्रकार चार बार भौमयुक्त चतुर्थीका व्रत कर श्रद्धापूर्वक दस अथवा पाँच तोले सोनेकी मङ्गल और गणपतिकी मूर्ति बनवाये। उसे बीस पल या दस पलके सोने, चाँदी अथवा ताम्र आदिके पात्रमें भक्तिपूर्वक स्थापित करे। सभी उपचारोंसे पूजा करनेके बाद दक्षिणाके साथ सत्पात्र ब्राह्मणको उसे दे, इससे इस व्रतका सम्पूर्ण फल प्राप्त होता है। राजन्! इस प्रकार इस उत्तम तिथिको मैंने कहा। इस दिन जो व्रत करता है, वह चन्द्रमाके समान कान्तिमान्, सूर्यके समान तेजस्वी एवं प्रभावान् तथा वायुके समान बलवान् होता है और अन्तमें महागणपतिके अनुग्रहसे भौमलोकमें निवास करता है। इस तिथिके माहात्म्यको जो व्यक्ति भक्तिपूर्वक पढ़ता-सुनता है, वह महापातकादिसे मुक्त होकर श्रेष्ठ सम्पत्तियोंको प्राप्त करता है। (अध्याय ३१)

पञ्चमी-कल्पका आरम्भ, नागपञ्चमीकी कथा, पञ्चमी-व्रतका विधान और फल

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! अब मैं पञ्चमी-कल्पका वर्णन करता हूँ। पञ्चमी तिथि नागोंको अत्यन्त प्रिय है और उन्हें आनन्द देनेवाली है। इस दिन नागलोकमें विशिष्ट उत्सव होता है। पञ्चमी तिथिको जो व्यक्ति नागोंको दूधसे स्नान कराता है, उसके कुलमें वासुकि, तक्षक, कालिय, मणिभद्र, ऐरावत, धृतराष्ट्र, कर्कोटक तथा धनञ्जय—ये सभी बड़े-बड़े नाग अभय दान देते हैं—उसके कुलमें सर्पका भय नहीं रहता। एक बार माताके शापसे नागलोग जलने लग गये थे। इसीलिये उस दाहकी व्यथाको दूर करनेके लिये पञ्चमीको गायके दूधसे नागोंको आज भी लोग स्नान कराते हैं, इससे सर्प-भय नहीं रहता।

राजाने पूछा—महाराज! नागमाताने नागोंको क्यों शाप दिया था और फिर वे कैसे बच गये? इसका आप विस्तारपूर्वक वर्णन करें।

सुमन्तु मुनिने कहा—एक बार राक्षसों और देवताओंने मिलकर समुद्रका मन्थन किया। उस समय समुद्रसे अतिशय श्वेत उच्चैःश्रवा नामका एक अश्व निकला, उसे देखकर नागमाता कद्रूने अपनी सपत्नी (सौत) विनतासे कहा कि देखो, यह अश्व श्वेतवर्णका है, परंतु इसके बाल काले दीख पड़ते हैं। तब विनताने कहा कि न तो यह अश्व सर्वश्वेत है, न काला है और न लाल। यह सुनकर कद्रूने कहा—'मेरे साथ शर्त करो कि यदि मैं इस अश्वके बालोंको कृष्णवर्णका दिखा दूँ तो तुम मेरी दासी हो जाओगी और यदि नहीं दिखा सकी तो मैं तुम्हारी दासी हो जाऊँगी।' विनताने यह शर्त स्वीकार कर ली। दोनों क्रोध करती हुई अपने-अपने स्थानको चली गयीं। कद्रूने अपने पुत्र नागोंको बुलाकर सब वृत्तान्त उन्हें सुना दिया और कहा कि 'पुत्रो! तुम अश्वके बालके समान सूक्ष्म होकर उच्चैःश्रवाके

* अग्निर्मूर्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम्। अपाꣳरेताꣳसि जिन्वति॥ (यजुर्वेद ३। १२)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

शरीरमें लिपट जाओ, जिससे यह कृष्णवर्णका दिखायी देने लगे। ताकि मैं अपनी सौत विनताको जीतकर उसे अपनी दासी बना सकूँ।' माताके इस वचनको सुनकर नागोंने कहा —'माँ! यह छल तो हमलोग नहीं करेंगे, चाहे तुम्हारी जीत हो या हार। छलसे जीतना बहुत बड़ा अधर्म है।' पुत्रोंका यह वचन सुनकर कद्रूने क्रुद्ध होकर कहा—तुमलोग मेरी आज्ञा नहीं मानते हो, इसलिये मैं तुम्हें शाप देती हूँ कि 'पाण्डवोंके वंशमें उत्पन्न राजा जनमेजय जब सर्प-सत्र करेंगे, तब उस यज्ञमें तुम सभी अग्निमें जल जाओगे।' इतना कहकर कद्रू चुप हो गयी। नागगण माताका शाप सुनकर बहुत घबड़ाये और वासुकिको साथमें लेकर ब्रह्माजीके पास पहुँचे तथा ब्रह्माजीको अपना सारा वृत्तान्त सुनाया। इसपर ब्रह्माजीने कहा कि वासुके! चिन्ता मत करो। मेरी बात सुनो—यायावर-वंशमें बहुत बड़ा तपस्वी जरत्कारु नामका ब्राह्मण उत्पन्न होगा। उसके साथ तुम अपनी जरत्कारु नामवाली बहिनका विवाह कर देना और वह जो भी कहे, उसका वचन स्वीकार करना। उसे आस्तीक नामका विख्यात पुत्र उत्पन्न होगा, वह जनमेजयके सर्पयज्ञको रोकेगा और तुमलोगोंकी रक्षा करेगा। ब्रह्माजीके इस वचनको सुनकर नागराज वासुकि आदि अतिशय प्रसन्न हो, उन्हें प्रणाम कर अपने लोकमें आ गये।

सुमन्तु मुनिने इस कथाको सुनाकर कहा— राजन्! यह यज्ञ तुम्हारे पिता राजा जनमेजयने किया था। यही बात श्रीकृष्णभगवान्‌ने भी युधिष्ठिरसे कही थी कि 'राजन्! आजसे सौ वर्षके बाद सर्पयज्ञ होगा, जिसमें बड़े-बड़े विषधर और दुष्ट नाग नष्ट हो जायँगे। करोड़ों नाग जब अग्निमें दग्ध होने लगेंगे, तब आस्तीक नामक ब्राह्मण सर्पयज्ञ रोककर नागोंकी रक्षा करेगा।' ब्रह्माजीने पञ्चमीके दिन वर दिया था और आस्तीक मुनिने पञ्चमीको ही नागोंकी रक्षा की थी, अतः पञ्चमी तिथि नागोंको बहुत प्रिय है*।

पञ्चमीके दिन नागोंकी पूजा कर यह प्रार्थना करनी चाहिये कि जो नाग पृथ्वीमें, आकाशमें, स्वर्गमें, सूर्यकी किरणोंमें, सरोवरोंमें, वापी, कूप, तालाब आदिमें रहते है, वे सब हमपर प्रसन्न हों, हम उनको बार-बार नमस्कार करते हैं—

सर्वे नागाः प्रीयन्तां मे ये केचित् पृथिवीतले॥
ये च हेलिमरीचिस्था येऽन्तरे दिवि संस्थिताः।
ये नदीषु महानागा ये सरस्वतिगामिनः।
ये च वापीतडागेषु तेषु सर्वेषु वै नमः॥

(ब्राह्मपर्व ३२। ३३-३४)

इस प्रकार नागोंको विसर्जित कर ब्राह्मणोंको भोजन कराना चाहिये और स्वयं अपने कुटुम्बियोंके साथ भोजन करना चाहिये। प्रथम मीठा भोजन करना चाहिये, अनन्तर अपनी अभिरुचिके अनुसार भोजन करे।

इस प्रकार नियमानुसार जो पञ्चमीको नागोंका पूजन करता है, वह श्रेष्ठ विमानमें बैठकर नागलोकको जाता है और बादमें द्वापरयुगमें बहुत पराक्रमी, रोगरहित तथा प्रतापी राजा होता है। इसलिये घी, खीर तथा गुग्गुलसे इन नागोंकी पूजा करनी चाहिये।

राजाने पूछा—महाराज! क्रुद्ध सर्पके काटनेसे मरनेवाला व्यक्ति किस गतिको प्राप्त होता है और जिसके माता-पिता, भाई, पुत्र आदि सर्पके काटनेसे मरे हों, उनके उद्धारके लिये कौन-सा व्रत, दान अथवा उपवास करना चाहिये, यह आप बतायें।

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! सर्पके काटनेसे जो मरता है, वह अधोगतिको प्राप्त होता है तथा

* पञ्चम्यां तत्र भविता ब्रह्मा प्रोवाच लेलिहान्।
तस्मादियं महाबाहो पञ्चमी दयिता सदा। नागानामानन्दकरी दत्ता वै ब्रह्मणा पुरा॥ (ब्राह्मपर्व ३२। ३२)

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

निर्विष सर्प होता है और जिसके माता-पिता आदि सर्पके काटनेसे मरते हैं, वह उनकी सद्गतिके लिये भाद्रपदके शुक्ल पक्षकी पञ्चमी तिथिको उपवास कर नागोंकी पूजा करे[१]। यह तिथि महापुण्या कही गयी है। इस प्रकार बारह महीनेतक चतुर्थी तिथिके दिन एक बार भोजन करना चाहिये और पञ्चमीको व्रत कर नागोंकी पूजा करनी चाहिये। पृथ्वीपर नागोंका चित्र अङ्कित कर अथवा सोना, काष्ठ या मिट्टीका नाग बनाकर पञ्चमीके दिन करवीर, कमल, चमेली आदि पुष्प, गन्ध, धूप और विविध नैवेद्योंसे उनकी पूजा कर घी, खीर, और लड्डू उत्तम पाँच ब्राह्मणोंको खिलाये। अनन्त, वासुकि, शंख, पद्म, कम्बल, कर्कोटक, अश्वतर, धृतराष्ट्र, शंखपाल, कालिय, तक्षक और पिंगल—इन बारह नागोंकी बारह महीनोंमें क्रमशः पूजा करे।

इस प्रकार वर्षपर्यन्त व्रत एवं पूजनकर व्रतकी पारणा करनी चाहिये। बहुत-से ब्राह्मणोंको भोजन कराना चाहिये। विद्वान् ब्राह्मणको सोनेका नाग बनाकर उसे देना चाहिये। यह उद्यापनकी विधि है। राजन्! आपके पिता जनमेजयने भी अपने पिता परीक्षित्के उद्धारके लिये यह व्रत किया था और सोनेका बहुत भारी नाग तथा अनेक गौएँ ब्राह्मणोंको दी थीं। ऐसा करनेपर वे पितृ-ऋणसे मुक्त हुए थे और परीक्षित्ने भी उत्तम लोकको प्राप्त किया था। आप भी इसी प्रकार सोनेका नाग बनाकर उनकी पूजा कर उन्हें ब्राह्मणको दान करें, इससे आप भी पितृ-ऋणसे मुक्त हो जायँगे। राजन्! जो कोई भी इस नागपञ्चमी-व्रतको करेगा, साँपसे डँसे जानेपर भी वह शुभलोकको प्राप्त होगा और जो व्यक्ति श्रद्धापूर्वक इस कथाको सुनेगा, उसके कुलमें कभी भी साँपका भय नहीं होगा। इस पञ्चमी-व्रतके करनेसे उत्तम लोककी प्राप्ति होती है। (अध्याय ३२)

सर्पोंके लक्षण, स्वरूप और जाति[२]

राजा शतानीकने पूछा—मुने! सर्पोंके कितने रूप हैं, क्या लक्षण हैं, कितने रंग हैं और उनकी कितनी जातियाँ हैं? इसका आप वर्णन करें।

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! इस विषयमें सुमेरु पर्वतपर महर्षि कश्यप और गौतमका जो संवाद हुआ था, उसका मैं वर्णन करता हूँ। महर्षि कश्यप किसी समय अपने आश्रममें बैठे थे। उस समय वहाँ उपस्थित महर्षि गौतमने उन्हें प्रणामकर विनयपूर्वक पूछा—महाराज! सर्पोंके लक्षण, जाति, वर्ण और स्वभाव किस प्रकारके हैं, उनका आप वर्णन करें तथा उनकी उत्पत्ति किस प्रकार हुई है यह भी बतायें। वे विष किस प्रकार छोड़ते हैं, विषके कितने वेग हैं, विषकी कितनी नाड़ियाँ हैं, साँपोंके दाँत कितने प्रकारके होते हैं, सर्पिणीको गर्भ कब होता है और वह कितने दिनोंमें प्रसव करती है, स्त्री-पुरुष और नपुंसक सर्पका क्या लक्षण है, ये क्यों काटते हैं, इन सब बातोंको आप कृपाकर मुझे बतायें।

कश्यपजी बोले—मुने! आप ध्यान देकर सुनें। मैं सर्पोंके सभी भेदोंका वर्णन करता हूँ। ज्येष्ठ और आषाढ़ मासमें सर्पोंको मद होता है। उस समय वे मैथुन करते हैं। वर्षा-ऋतुके चार महीनेतक

१-वर्तमानमें नागपञ्चमी प्रायः सभी पञ्चाङ्गों तथा व्रतके निबन्ध-ग्रन्थोंके अनुसार श्रावण शुक्ल पञ्चमीको होती है। यहाँ या तो पाठ अशुद्ध है या कालान्तरमें कभी भाद्रपदमें नागपञ्चमी मनायी जाती रही होगी।

२-शिवतत्त्व-रत्नाकर और अभिलषितार्थ-चिन्तामणि तथा आयुर्वेद-ग्रन्थों—सुश्रुत, चरक, वाग्भट्टके चिकित्साख्यानोंमें भी इस विषयका वर्णन मिलता है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सर्पिणी गर्भ धारण करती है, कार्तिकमें दो सौ चालीस अंडे देती है और उनमेंसे कुछको स्वयं प्रतिदिन खाने लगती है। प्रकृतिकी कृपासे कुछेक अंडे इधर-उधर ढुलककर बच जाते हैं। सोनेकी तरह चमकनेवाले अंडोंमें पुरुष, स्वर्णकेतक वर्णके समान आभावाले और लम्बी रेखाओंसे युक्त अंडोंसे स्त्री तथा शिरीषपुष्पके समान रंगवाले अंडोंके बीच नपुंसक सर्प होता है। उन अंडोंको सर्पिणी छः महीनेतक सेती है। अनन्तर अंडोंके फूटनेपर उनसे सर्प निकलते हैं और वे बच्चे अपनी मातासे स्नेह करते हैं। अंडेके बाहर निकलनेके सात दिनमें बच्चोंका कृष्णवर्ण हो जाता है। सर्पकी आयु एक सौ बीस वर्षकी होती है और इनकी मृत्यु आठ प्रकारसे होती है—मोरसे, मनुष्यसे, चकोर पक्षीसे, बिल्लीसे, नकुलसे, शूकरसे, वृश्चिकसे और गौ, भैंस, घोड़े, ऊँट आदि पशुओंके खुरोंसे दब जानेपर। इनसे बचनेपर सर्प एक सौ बीस वर्षतक जीवित रहते हैं। सात दिनके बाद दाँत उगते हैं और इक्कीस दिनमें विष हो जाता है। साँप काटनेके तुरंत बाद अपने जबड़ेसे तीक्ष्ण विषका त्याग करता है और फिर विष इकट्ठा हो जाता है। सर्पिणीके साथ घूमनेवाला सर्प बालसर्प कहा जाता है। पचीस दिनमें वह बच्चा भी विषके द्वारा दूसरे प्राणियोंके प्राण हरनेमें समर्थ हो जाता है। छः महीनेमें कंचुक-(केंचुल-) का त्याग करता है। साँपके दो सौ चालीस पैर होते हैं, परंतु वे पैर गायके रोयेंके समान बहुत सूक्ष्म होते हैं, इसीलिये दिखायी नहीं देते। चलनेके समय निकल आते हैं और अन्य समय भीतर प्रविष्ट हो जाते हैं। उनके शरीरमें दो सौ बीस अङ्गुलियाँ और दो सौ बीस संधियाँ होती हैं। अपने समयके बिना जो सर्प उत्पन्न होते हैं उनमें कम विष रहता है और वे पचहत्तर वर्षसे अधिक जीते भी नहीं हैं। जिस साँपके दाँत लाल, पीले एवं सफेद हों और विषका वेग भी मंद हो, वे अल्पायु और बहुत डरपोक होते हैं।

साँपको एक मुँह, दो जीभ, बत्तीस दाँत और विषसे भरी हुई चार दाढ़ें होती हैं। उन दाढ़ोंके नाम मकरी, कराली, कालरात्री और यमदूती है। इनके क्रमशः ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और यम—ये चार देवता हैं। यमदूती नामकी दाढ़ सबसे छोटी होती है। इससे साँप जिसे काटता है वह तत्क्षण मर जाता है। इसपर मन्त्र, तन्त्र, ओषधि आदिका कुछ भी असर नहीं होता। मकरी दाढ़का चिह्न शस्त्रके समान, करालीका काकके पैरके समान तथा कालरात्रीका हाथके समान चिह्न होता है और यमदूती कूर्मके समान होती है। ये क्रमशः एक, दो, तीन और चार महीनोंमें उत्पन्न होती हैं और क्रमशः वात, पित्त, कफ और संनिपात इनमें होता है। क्रमशः गुड़युक्त भात, कषाययुक्त अन्न, कटु पदार्थ, संनिपातमें दिया जानेवाला पथ्य इनके द्वारा काटे गये व्यक्तिको देना चाहिये। श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण—इन चार दाढ़ोंके क्रमशः रंग हैं। इनके वर्ण क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र हैं। सर्पोंके दाढ़ोंमें सदा विष नहीं रहता। दाहिने नेत्रके समीप विष रहनेका स्थान है। क्रोध करनेपर वह विष पहले मस्तकमें जाता है, मस्तकसे धमनी और फिर नाड़ियोंके द्वारा दाढ़में पहुँच जाता है।

आठ कारणोंसे साँप काटता है—दबनेसे, पहलेके वैरसे, भयसे, मदसे, भूखसे, विषका वेग होनेसे, संतानकी रक्षाके लिये तथा कालकी प्रेरणासे। जब सर्प काटते ही पेटकी ओर उलट जाता है और उसकी दाढ़ टेढ़ी हो जाती है, तब उसे दबा हुआ समझना चाहिये। जिसके काटनेसे बहुत बड़ा घाव हो जाय, उसको अत्यन्त द्वेषसे काटा है, ऐसा समझना चाहिये। एक दाढ़का चिह्न हो जाय, किंतु वह भी भलीभाँति दिखायी न पड़े तो भयसे काटा हुआ

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

समझना चाहिये। इसी प्रकार रेखाकी तरह दाढ़ दिखायी दे तो मदसे काटा हुआ, दो दाढ़ दिखायी दे और बड़ा घाव भर जाय तो भूखसे काटा हुआ, दो दाढ़ दिखायी दे और घावमें रक्त हो जाय तो विषके वेगसे काटा हुआ, दो दाढ़ दिखायी दे, किंतु घाव न रहे तो संतानकी रक्षाके लिये काटा हुआ मानना चाहिये। काकके पैरकी तरह तीन दाढ़ गहरे दिखायी दें या चार दाढ़ दिखायी दें तो कालकी प्रेरणासे काटा हुआ जानना चाहिये। यह असाध्य है, इसकी कोई भी चिकित्सा नहीं है*।

सर्पके काटनेके दंष्ट, दंष्टानुपीत और दंष्टोद्धत—ये तीन भेद हैं। सर्पके काटनेके बाद ग्रीवा यदि झुके तो दंष्ट तथा काटकर पार करे तो दंष्टानुपीत कहते हैं। इसमें तिहाई विष चढ़ता है और काटकर सब विष उगल दे तथा स्वयं निर्विष होकर उलट जाय—पीठके बल उलटा हो जाय, उसका पेट दिखायी दे तो उसे दंष्टोद्धत कहते हैं।

(अध्याय ३३)

विभिन्न तिथियों एवं नक्षत्रोंमें कालसर्पसे डँसे हुए पुरुषके लक्षण, नागोंकी उत्पत्तिकी कथा

कश्यप मुनि बोले—गौतम! अब मैं कालसर्पसे काटे हुए पुरुषका लक्षण कहता हूँ, जिस पुरुषको कालसर्प काटता है, उसकी जिह्वा भंग हो जाती है, हृदयमें दर्द होता है, नेत्रोंसे दिखायी नहीं देता, दाँत और शरीर पके हुए जामुनके फलके समान काले पड़ जाते हैं, अङ्गोंमें शिथिलता आ जाती है, विष्ठाका परित्याग होने लगता है, कंधे, कमर और ग्रीवा झुक जाते हैं, मुख नीचेकी ओर लटक जाता है, आँखें चढ़ जाती हैं, शरीरमें दाह और कम्प होने लगता है, बार-बार आँखें बंद हो जाती हैं, शस्त्रसे शरीरमें काटनेपर खून नहीं निकलता। बेतसे मारनेपर भी शरीरमें रेखा नहीं पड़ती, काटनेका स्थान कटे हुए जामुनके समान नीले रंगका, फूला हुआ, रक्तसे परिपूर्ण और कौएके पैरके समान हो जाता है, हिचकी आने लगती है, कण्ठ अवरुद्ध हो जाता है, श्वासकी गति बढ़ जाती है, शरीरका रंग पीला पड़ जाता है। ऐसी अवस्थाको कालसर्पसे काटा हुआ समझना चाहिये। उसकी मृत्यु आसन्न समझनी चाहिये।

घाव फूल जाय, नीले रंगका हो जाय, अधिक पसीना आने लगे, नाकसे बोलने लगे, ओठ लटक जाय, हृदयमें कम्पन होने लगे तो कालसर्पसे काटा हुआ समझना चाहिये। दाँत पीसने लगे, नेत्र उलट जायँ, लम्बी श्वास आने लगे, ग्रीवा लटक जाय, नाभि फड़कने लगे तो कालसर्पसे काटा हुआ जानना चाहिये। दर्पण या जलमें अपनी छाया न दीखे, सूर्य तेजहीन दिखायी पड़े, नेत्र लाल हो जायँ, सम्पूर्ण शरीर कष्टके कारण काँपने लगे तो उसे कालसर्पसे काटा हुआ समझना चाहिये, उसकी शीघ्र ही मृत्यु सम्भाव्य है।

अष्टमी, नवमी, कृष्णा चतुर्दशी और नागपञ्चमीके दिन जिसको साँप काटता है, उसके प्रायः प्राण नहीं बचते। आर्द्रा, आश्लेषा, मघा, भरणी, कृत्तिका, विशाखा, तीनों पूर्वा, मूल, स्वाती और

* सभी सर्पोंकी दवाके रूपमें मन्त्र-शास्त्रोंमें विशेषकर गारुडोपनिषद्में गरुड-मन्त्र और सर्पोंकी मणियाँ उनके विषकी अचूक ओषधियाँ हैं। कुछ अन्य ओषधियाँ भी अचूक होती हैं जो सर्पोंको निर्विष एवं स्तम्भित बना देती हैं। डुंडुभ सर्पके काट लेनेपर किसी भी अन्य सर्पका विष नहीं चढ़ता। नर्मदा नदीका नाम लेनेसे भी साँप भागते हैं—

नर्मदायै नमः प्रातर्नर्मदायै नमो निशि। नमोऽस्तु नर्मदे तुभ्यं त्राहि मां विषसर्पतः॥ (विष्णुपु० ४। ३। १३)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

शतभिषा नक्षत्रमें जिसको साँप काटता है वह भी नहीं जीता। इन नक्षत्रोंमें विष पीनेवाला व्यक्ति भी तत्काल मर जाता है। पूर्वोक्त तिथि और नक्षत्र दोनों मिल जायँ तथा खण्डहरमें, श्मशानमें और सूखे वृक्षके नीचे जिसे साँप काटता है वह नहीं जीता।

मनुष्यके शरीरमें एक सौ आठ मर्म-स्थान हैं, उनमें भी शंख अर्थात् ललाटकी हड्डी, आँख, भ्रूमध्य, वस्ति, अण्डकोशका ऊपरी भाग, कक्ष, कंधे, हृदय, वक्षःस्थल, तालु, ठोढ़ी और गुदा—ये बारह मुख्य मर्म-स्थान हैं। इनमें सर्प काटनेसे अथवा शस्त्राघात होनेपर मनुष्य जीवित नहीं रहता।

अब सर्प काटनेके बाद जो वैद्यको बुलाने जाता है उस दूतका लक्षण कहता हूँ। उत्तम जातिका हीन वर्ण दूत और हीन जातिका उत्तम वर्ण दूत भी अच्छा नहीं होता। वह दूत हाथमें दंड लिये हुए हों, दो दूत हों, कृष्ण अथवा रक्तवस्त्र पहने हों, मुख ढके हों, सिरपर एक वस्त्र लपेटे हो, शरीरमें तेल लगाये हो, केश खोले हो, जोरसे बोलता हुआ आये, हाथ-पैर पीटे तो ऐसा दूत अत्यन्त अशुभ है। जिस रोगीका दूत इन लक्षणोंसे युक्त वैद्यके समीप जाता है, वह रोगी अवश्य ही मर जाता है।

कश्यपजी बोले—गौतम! अब मैं भगवान् शिवके द्वारा कथित नागोंकी उत्पत्तिके विषयमें कहता हूँ। पूर्वकालमें ब्रह्माजीने अनेक नागों एवं ग्रहोंकी सृष्टि की। अनन्त नाग सूर्य, वासुकि चन्द्रमा, तक्षक भौम, कर्कोटक बुध, पद्म बृहस्पति, महापद्म शुक्र, कुलिक और शंखपाल शनैश्चर ग्रहके रूप हैं। रविवारके दिन दसवाँ और चौदहवाँ यामार्ध, सोमवारको आठवाँ और बारहवाँ, भौमवारको छठा और दसवाँ, बुधवारको नवाँ, बृहस्पतिको दूसरा और छठा, शुक्रको चौथा, आठवाँ और दसवाँ, शनिवारको पहिला, सोलहवाँ, दूसरा और बारहवाँ प्रहरार्ध अशुभ है। इन समयोंमें सर्पके काटनेसे व्यक्ति जीवित नहीं रहता। (अध्याय ३४)

सर्पोंके विषका वेग, फैलाव तथा सात धातुओंमें प्राप्त विषके लक्षण और उनकी चिकित्सा

कश्यपजी बोले—गौतम! यदि यह ज्ञात हो जाय कि सर्पने अपने यमदूती नामक दाढ़से काटा है तो उसकी चिकित्सा न करे। उस व्यक्तिको मरा हुआ ही समझे*। दिनमें और रातमें दूसरा और सोलहवाँ प्रहरार्ध साँपोंसे सम्बन्धित नागोदय नामक वेला कही गयी है। उसमें साँप काटे तो कालके द्वारा काटा गया समझना चाहिये और उसकी चिकित्सा नहीं करनी चाहिये। पानीमें बाल डुबोनेपर और उसे उठानेपर बालके अग्रभागसे जितना जल गिरता है, उतनी ही मात्रामें विष सर्प प्रविष्ट कराता है। वह विष सम्पूर्ण शरीरमें फैल जाता है। जितनी देरमें हाथ पसारना और समेटना होता है, उतने ही सूक्ष्म समयमें काटनेके बाद विष मस्तकमें पहुँच जाता है। हवासे आगकी लपट फैलनेके समान रक्तमें पहुँचनेपर विषकी बहुत वृद्धि हो जाती है। जैसे जलमें तेलकी बूँद फैल जाती है, वैसे ही त्वचामें पहुँचकर विष दूना हो जाता है। रक्तमें चौगुना, पित्तमें आठ गुना, कफमें सोलह गुना, वातमें तीस गुना, मज्जामें साठ गुना और प्राणोंमें पहुँचकर वही विष अनन्त

* गारुडोपनिषद् एवं तार्क्ष्योपनिषद्में यमदूतीके नामसे भी मन्त्र पढ़े गये हैं, यहाँ मध्यम नियमका वर्णन है। वैसे भगवत्कृपासे कुछ भी असाध्य नहीं है।

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth

गुना हो जाता है। इस प्रकार सारे शरीरमें विषके व्याप्त हो जाने तथा श्रवणशक्ति बंद हो जानेपर वह जीव श्वास नहीं ले पाता और उसका प्राणान्त हो जाता है। यह शरीर पृथ्वी आदि पञ्चभूतोंसे बना है, मृत्युके बाद भूत-पदार्थ अलग-अलग हो जाते हैं और अपने-अपनेमें लीन हो जाते हैं। अतः विषकी चिकित्सा बहुत शीघ्र करनी चाहिये, विलम्ब होनेसे रोग असाध्य हो जाता है। सर्पादि जीवोंका विष जिस प्रकार प्राण हरण करनेवाला होता है, वैसे ही शंखिया आदि विष भी प्राणको हरण करनेवाले होते हैं।

विषके पहले वेगमें रोमाञ्च तथा दूसरे वेगमें पसीना आता है। तीसरे वेगमें शरीर काँपता है तथा चौथेमें श्रवणशक्ति अवरुद्ध होने लगती है, पाँचवेंमें हिचकी आने लगती है और छठेमें ग्रीवा लटक जाती है तथा सातवें वेगमें प्राण निकल जाते हैं। इन सात वेगोंमें शरीरके सातों धातुओंमें विष व्याप्त हो जाता है। इन धातुओंमें पहुँचे हुए विषका अलग-अलग लक्षण तथा उपचार इस प्रकार है—

आँखोंके आगे अँधेरा छा जाय और शरीरमें बार-बार जलन होने लगे तो यह जानना चाहिये कि विष त्वचामें है। इस अवस्थामें आककी जड़, अपामार्ग, तगर और प्रियंगु—इनको जलमें घोंटकर पिलानेसे विषकी बाधा शान्त हो सकती है। त्वचासे रक्तमें विष पहुँचनेपर शरीरमें दाह और मूर्च्छा होने लगती है। शीतल पदार्थ अच्छा लगता है। उशीर (खस), चन्दन, कूट, तगर, नीलोत्पल, सिंदुवारकी जड़, धतूरेकी जड़, हींग और मिरच —इनको पीसकर देना चाहिये। इससे बाधा शान्त न हो तो भटकटैया, इन्द्रायणकी जड़ और सर्पगन्धाको घीमें पीसकर देना चाहिये। यदि इससे भी शान्त न हो तो सिंदुवार और हींगका नस्य देना चाहिये और पिलाना चाहिये। इसीका अञ्जन और लेप भी करना चाहिये, इससे रक्तमें प्राप्त विषकी बाधा शान्त हो जाती है।

रक्तसे पित्तमें विष पहुँच जानेपर पुरुष उठ-उठकर गिरने लगता है, शरीर पीला हो जाता है, सभी दिशाएँ पीले वर्णकी दिखायी देती हैं, शरीरमें दाह और प्रबल मूर्च्छा होने लगती है। इस अवस्थामें पीपल, शहद, महुआ, घी, तुम्बेकी जड़, इन्द्रायणकी जड़—इन सबको गोमूत्रमें पीसकर नस्य, लेपन तथा अञ्जन करनेसे विषका वेग हट जाता है।

पित्तसे विषके कफमें प्रवेश कर जानेपर शरीर जकड़ जाता है। श्वास भलीभाँति नहीं आती, कण्ठमें घर्घर शब्द होने लगता है और मुखसे लार गिरने लगती है। यह लक्षण देखकर पीपल, मिरच, सोंठ, श्लेष्मातक (बहुवार वृक्ष), लोध एवं मधुसारको समान भाग करके गोमूत्रमें पीसकर लेपन और अञ्जन लगाना चाहिये और उसे पिलाना भी चाहिये। ऐसा करनेसे विषका वेग शान्त हो जाता है।

कफसे वातमें विष प्रवेश करनेपर पेट फूल जाता है, कोई भी पदार्थ दिखायी नहीं पड़ता, दृष्टि-भंग हो जाता है। ऐसा लक्षण होनेपर शोणा (सोनागाछ)-की जड़, प्रियाल, गजपीपल, भारंगी, वचा, पीपल, देवदारु, महुआ, मधुसार, सिंदुवार और हींग—इन सबको पीसकर गोली बना ले और रोगीको खिलाये एवं अञ्जन तथा लेपन करे। यह ओषधि सभी विषोंका हरण करती है।

वातसे मज्जामें विष पहुँच जानेपर दृष्टि नष्ट हो जाती है, सभी अङ्ग बेसुध हो शिथिल हो जाते हैं, ऐसा लक्षण होनेपर घी, शहद, शर्करायुक्त खस और चन्दनको घोंटकर पिलाना चाहिये और नस्य आदि भी देना चाहिये। ऐसा करनेसे विषका वेग हट जाता है।

मज्जासे मर्मस्थानोंमें विष पहुँच जानेपर सभी

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

इन्द्रियाँ निश्चेष्ट हो जाती हैं और वह जमीनपर गिर जाता है। काटनेसे रक्त नहीं निकलता, केशके उखाड़नेपर भी कष्ट नहीं होता, उसे मृत्युके ही अधीन समझना चाहिये। ऐसे लक्षणोंसे युक्त रोगीकी साधारण वैद्य चिकित्सा नहीं कर सकते। जिनके पास सिद्ध मन्त्र और ओषधि होगी वे ही ऐसे रोगियोंके रोगको हटानेमें समर्थ होते हैं। इसके लिये साक्षात् रुद्रने एक ओषधि कही है। मोरका पित्त तथा मार्जारका पित्त और गन्धनाडीकी जड़, कुंकुम, तगर, कूट, कासमर्दकी छाल तथा उत्पल, कुमुद और कमल—इन तीनोंके केसर—सभीका समान भाग लेकर उसे गोमूत्रमें पीसकर नस्य दे, अञ्जन लगाये। ऐसा करनेसे कालसर्पसे डँसा हुआ भी व्यक्ति शीघ्र विषरहित हो जाता है यह मृतसंजीवनी ओषधि है अर्थात् मरेको भी जिला देती है। (अध्याय ३५)

सर्पोंकी भिन्न-भिन्न जातियाँ, सर्पोंके काटनेके लक्षण, पञ्चमी तिथिका नागोंसे सम्बन्ध और पञ्चमी-तिथिमें नागोंके पूजनका फल एवं विधान

गौतम मुनिने कश्यपजीसे पूछा— महात्मन्! सर्प, सर्पिणी, बालसर्प, सूतिका, नपुंसक और व्यन्तर नामक सर्पोंके काटनेमें क्या भेद होता है, इनके लक्षण आप अलग-अलग बतायें।

कश्यपजी बोले—मैं इन सबको तथा सर्पोंके रूप-लक्षणोंको संक्षेपमें बतलाता हूँ, सुनिये—

यदि सर्प काटे तो दृष्टि ऊपरको हो जाती है, सर्पिणीके काटनेसे दृष्टि नीचे, बालसर्पके काटनेसे दाहिनी ओर और बालसर्पिणीके काटनेसे दृष्टि बायीं ओर झुक जाती है। गर्भिणीके काटनेसे पसीना आता है, प्रसूती काटे तो रोमाञ्च और कम्पन होता है तथा नपुंसकके काटनेसे शरीर टूटने लगता है। सर्प दिनमें, सर्पिणी रात्रिमें और नपुंसक संध्याके समय अधिक विषयुक्त होता है। यदि अँधेरेमें, जलमें, वनमें सर्प काटे या सोते हुए या प्रमत्तको काटे, सर्प न दिखायी पड़े अथवा दिखायी पड़े, उसकी जाति न पहचानी जाय और पूर्वोक्त लक्षणोंकी जानकारी न हो तो वैद्य उसकी कैसे चिकित्सा कर सकता है!

सर्प चार प्रकारके होते हैं—दर्वीकर, मण्डली, राजिल और व्यन्तर। इनमें दर्वीकरका विष वात-स्वभाव, मण्डलीका पित्त-स्वभाव, राजिलका कफ-स्वभाव और व्यन्तर सर्पका संनिपात-स्वभावका होता है अर्थात् उसमें वात, पित्त और कफ—इन तीनोंकी अधिकता होती है। इन सर्पोंके रक्तकी परीक्षा इस प्रकार करनी चाहिये। दर्वीकर सर्पमें रक्त कृष्णवर्ण और स्वल्प होता है, मण्डलीमें बहुत गाढ़ा और लाल रंगका रक्त निकलता है, राजिल तथा व्यन्तरमें स्निग्ध और थोड़ा-सा रुधिर निकलता है। इन चार जातियोंके अतिरिक्त सर्पोंकी अन्य कोई पाँचवीं जाति नहीं मिलती। सर्प ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र—इन चार वर्णोंके होते हैं। ब्राह्मण सर्प काटे तो शरीरमें दाह होता है, प्रबल मूर्च्छा आ जाती है, मुख काला पड़ जाता है, मज्जा स्तम्भित हो जाती है और चेतना जाती रहती है। ऐसे लक्षणोंके दिखायी देनेपर अश्वगन्धा, अपामार्ग, सिंदुवारको घीमें पीसकर नस्य दे और पिलाये तो विषकी निवृत्ति हो जाती है। क्षत्रिय वर्णके सर्पके काटनेपर शरीरमें मूर्च्छा छा जाती है, दृष्टि ऊपरको हो जाती है, अत्यधिक पीड़ा होने लगती है और व्यक्ति अपनेको पहचान नहीं पाता। ऐसे लक्षणोंके होनेपर आककी जड़, अपामार्ग, इन्द्रायण और प्रियंगुको घीमें पीसकर मिला ले तथा इसीका नस्य देनेसे एवं पिलानेसे बाधा मिट

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

जाती है। वैश्य सर्प डँसे तो कफ बहुत आता है, मुखसे लार बहती है, मूर्च्छा आ जाती है और वह चेतनाशून्य हो जाता है। ऐसा होनेपर अश्वगन्धा, गृहधूम, गुग्गुल, शिरीष, अर्क, पलाश और श्वेत गिरिकर्णिका (अपराजिता)—इन सबको गोमूत्रमें पीसकर नस्य देने तथा पिलानेसे वैश्य सर्पकी बाधा तत्क्षण दूर हो जाती है। जिस व्यक्तिको शूद्र सर्प काटता है, उसे शीत लगकर ज्वर होता है, सभी अङ्ग चुलचुलाने लगते हैं, इसकी निवृत्तिके लिये कमल, कमलका केसर, लोध्र, क्षौद्र, शहद, मधुसार और श्वेतगिरिकर्णी—इन सबको समान भागमें लेकर शीतल जलके साथ पीसकर नस्य आदि दे और पान कराये। इससे विषका वेग शान्त हो जाता है।

ब्राह्मण सर्प मध्याह्नके पहले, क्षत्रिय सर्प मध्याह्नमें, वैश्य सर्प मध्याह्नके बाद और शूद्र सर्प संध्याके समय विचरण करता है। ब्राह्मण सर्प वायु एवं पुष्प, क्षत्रिय मूषक, वैश्य मेढक और शूद्र सर्प सभी पदार्थोंका भक्षण करता है। ब्राह्मण सर्प आगे, क्षत्रिय दाहिने, वैश्य बायें और शूद्र सर्प पीछेसे काटता है। मैथुनकी इच्छासे पीड़ित सर्प विषके वेगके बढ़नेसे व्याकुल होकर बिना समय भी काटता है। ब्राह्मण सर्पमें पुष्पके समान गन्ध होती है, क्षत्रियमें चन्दनके समान, वैश्यमें घृतके समान और शूद्र सर्पमें मत्स्यके समान गन्ध होती है। ब्राह्मण सर्प नदी, कूप, तालाब, झरने, बाग-बगीचे और पवित्र स्थानोंमें रहते हैं। क्षत्रिय सर्प ग्राम, नगर आदिके द्वार, तालाब, चतुष्पथ तथा तोरण आदि स्थानोंमें, वैश्य सर्प श्मशान, ऊषर स्थान, भस्म, घास आदिके ढेर तथा वृक्षोंमें; इसी प्रकार शूद्र सर्प अपवित्र स्थान, निर्जन वन, शून्य घर, श्मशान आदि बुरे स्थानोंमें निवास करते हैं। ब्राह्मण सर्प श्वेत एवं कपिल वर्ण, अग्निके समान तेजस्वी, मनस्वी और सात्त्विक होते हैं। क्षत्रिय सर्प मूँगेके समान रक्तवर्ण अथवा सुवर्णके तुल्य पीत वर्ण तथा सूर्यके समान तेजस्वी, वैश्य सर्प अलसी अथवा बाण-पुष्पके समान वर्णवाले एवं अनेक रेखाओंसे युक्त तथा शूद्र सर्प अञ्जन अथवा काकके समान कृष्णवर्ण और धूम्रवर्णके होते हैं। एक अङ्गुष्ठके अन्तरमें दो दंश हों तो बालसर्पका काटा हुआ जानना चाहिये। दो अङ्गुल अन्तर हो तो तरुण सर्पका, ढाई अङ्गुल अन्तर हो तो वृद्ध सर्पका दंश समझना चाहिये।

अनन्तनाग सामने, वासुकि बायीं ओर, तक्षक दाहिनी ओर देखता है और कर्कोटककी दृष्टि पीछेकी ओर होती है। अनन्त, वासुकि, तक्षक, कर्कोटक, पद्म, महापद्म, शंखपाल और कुलिक—ये आठ नाग क्रमशः पूर्वादि आठ दिशाओंके स्वामी हैं। पद्म, उत्पल, स्वस्तिक, त्रिशूल, महापद्म, शूल, क्षत्र और अर्धचन्द्र—ये क्रमशः आठ नागोंके आयुध हैं। अनन्त और कुलिक—ये दोनों ब्राह्मण नाग-जातियाँ हैं, शंख और वासुकि क्षत्रिय, महापद्म और तक्षक वैश्य तथा पद्म और कर्कोटक शूद्र नाग हैं। अनन्त और कुलिक नाग शुक्लवर्ण तथा ब्रह्माजीसे उत्पन्न हैं, वासुकि और शंखपाल रक्तवर्ण तथा अग्निसे उत्पन्न हैं, तक्षक और महापद्म स्वल्प पीतवर्ण तथा इन्द्रसे उत्पन्न हैं, पद्म और कर्कोटक कृष्णवर्ण तथा यमराजसे उत्पन्न हैं।

सुमन्तु मुनिने पुनः कहा—राजन्! सर्पोंके ये लक्षण और चिकित्सा महर्षि कश्यपने महामुनि गौतमको उपदेशके प्रसंगमें कहे थे और यह भी बताया कि सदा भक्तिपूर्वक नागोंकी पूजा करे और पञ्चमीको विशेषरूपसे दूध, खीर आदिसे उनका पूजन करे। श्रावण शुक्ला पञ्चमीको द्वारके दोनों ओर गोबरके द्वारा नाग बनाये। दही, दूध,

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

दूर्वा, पुष्प, कुश, गन्ध, अक्षत और अनेक प्रकारके नैवेद्योंसे नागोंका पूजन कर ब्राह्मणोंको भोजन कराये। ऐसा करनेपर उस पुरुषके कुलमें कभी सर्पोंका भय नहीं होता।

भाद्रपदकी पञ्चमीको अनेक रंगोंके नागोंको चित्रितकर घी, खीर, दूध, पुष्प आदिसे पूजनकर गुग्गुलकी धूप दे। ऐसा करनेसे तक्षक आदि नाग प्रसन्न होते हैं और उस पुरुषकी सात पीढ़ीतकको साँपका भय नहीं रहता।

आश्विन मासकी पञ्चमीको कुशका नाग बनाकर गन्ध, पुष्प आदिसे उनका पूजन करे। दूध, घी, जलसे स्नान कराये। दूधमें पके हुए गेहूँ और विविध नैवेद्योंका भोग लगाये। इस पञ्चमीको नागकी पूजा करनेसे वासुकि आदि नाग संतुष्ट होते हैं और वह पुरुष नागलोकमें जाकर बहुत कालतक सुखका भोग करता है। राजन्! इस पञ्चमी तिथिके कल्पका मैंने वर्णन किया। जहाँ **'ॐ कुरुकुल्ले फट् स्वाहा'**—यह मन्त्र पढ़ा जाता है, वहाँ कोई सर्प नहीं आ सकता[१]।

(अध्याय ३६—३८)

षष्ठी-कल्प-निरूपणमें स्कन्द-षष्ठी-व्रतकी महिमा

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! अब मैं षष्ठी तिथि-कल्पका वर्णन करता हूँ। यह तिथि सभी मनोरथोंको पूर्ण करनेवाली है। कार्तिक मासकी षष्ठी तिथिको फलाहारकर यह तिथिव्रत किया जाता है[२]। यदि राज्यच्युत राजा इस व्रतका अनुष्ठान करे तो वह अपना राज्य प्राप्त कर लेता है। इसलिये विजयकी अभिलाषा रखनेवाले व्यक्तिको इस व्रतका प्रयत्न-पूर्वक पालन करना चाहिये।

यह तिथि स्वामिकार्तिकेयको अत्यन्त प्रिय है। इसी दिन कृत्तिकाओंके पुत्र कार्तिकेयका आविर्भाव हुआ था। वे भगवान् शङ्कर, अग्नि तथा गङ्गाके भी पुत्र कहे गये हैं। इसी षष्ठी तिथिको स्वामिकार्तिकेय देवसेनाके सेनापति हुए। इस तिथिको व्रत कर घृत, दही, जल और पुष्पोंसे स्वामिकार्तिकेयको दक्षिणकी ओर मुख कर अर्घ्य देना चाहिये।

अर्घ्यदानका मन्त्र इस प्रकार है—

सप्तर्षिदारज स्कन्द स्वाहापतिसमुद्भव।
रुद्रार्यमाग्निज विभो गङ्गागर्भ नमोऽस्तु ते।
प्रीयतां देवसेनानीः सम्पादयतु हृद्गतम्॥

(ब्राह्मपर्व ३९। ६)

ब्राह्मणको अन्न देकर रात्रिमें फलका भोजन और भूमिपर शयन करना चाहिये। व्रतके दिन पवित्र रहे और ब्रह्मचर्यका पालन करे। शुक्ल-पक्ष तथा कृष्णपक्ष—दोनों षष्ठियोंको यह व्रत करना चाहिये। इस व्रतके करनेसे भगवान् स्कन्दकी कृपासे सिद्धि, धृति, तुष्टि, राज्य, आयु, आरोग्य और मुक्ति मिलती है। जो पुरुष उपवास न कर सके, वह रात्रि-व्रत ही करे, तब भी दोनों लोकोंमें उत्तम फल प्राप्त होता है। इस व्रतको करनेवाले पुरुषको देवता भी नमस्कार करते हैं और वह इस लोकमें आकर चक्रवर्ती राजा होता है। राजन्! जो पुरुष षष्ठी-व्रतके माहात्म्यका भक्तिपूर्वक श्रवण

१-कश्मीर नागोंका देश माना जाता है। 'नीलमतपुराण' में इसका विस्तृत वर्णन है।

२-पञ्चाङ्गोंके अनुसार मार्गशीर्ष शुक्ला षष्ठीको स्कन्द-षष्ठी होती है तथा कार्तिक शुक्ला षष्ठीको रवि-षष्ठी मानी जाती है, जिस दिन सम्पूर्ण भारतमें सूर्योपासना होती है। परंतु यहाँ कार्तिक शुक्ला षष्ठीके रूपमें वर्णन आया है, यह गणना अमान्तमास (अमावास्याको पूर्ण होनेवाले मास)-के अनुसार प्रतीत होती है।

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

करता है, वह भी स्वामिकार्तिकेयकी कृपासे विविध उत्तम भोग, सिद्धि, तुष्टि, धृति और लक्ष्मीको प्राप्त करता है। परलोकमें वह उत्तम गतिका भी अधिकारी होता है। (अध्याय ३९)

आचरणकी श्रेष्ठताका प्रतिपादन

राजा शतानीकने कहा—मुने! अब आप ब्राह्मण आदिके आचरणकी श्रेष्ठताके विषयमें बतलानेकी कृपा करें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! मैं अत्यन्त संक्षेपमें इस विषयको बताता हूँ, उसे आप सुनें। न्याय-मार्गका अनुसरण करनेवाले शास्त्रकारोंने कहा है कि 'वेद आचारहीनको पवित्र नहीं कर सकते, भले ही वह सभी अङ्गोंके साथ वेदोंका अध्ययन कर ले। वेद पढ़ना तो ब्राह्मणका शिल्पमात्र है, किंतु ब्राह्मणका मुख्य लक्षण तो सदाचरण ही बतलाया गया है*।' चारों वेदोंका अध्ययन करनेपर भी यदि वह आचरणसे हीन है तो उसका अध्ययन वैसे ही निष्फल होता है, जिस प्रकार नपुंसकके लिये स्त्रीरत्न निष्फल होता है।

जिनके संस्कार उत्तम होते हैं, वे भी दुराचरण कर पतित हो जाते हैं और नरकमें पड़ते हैं तथा संस्कारहीन भी उत्तम आचरणसे अच्छे कहलाते हैं एवं स्वर्ग प्राप्त करते हैं। मनमें दुष्टता भरी रहे, बाहरसे सब संस्कार हुए हों, ऐसे वैदिक संस्कारोंसे संस्कृत कतिपय पुरुष आचरणमें शूद्रोंसे भी अधिक मलिन हो जाते हैं। क्रूर कर्म करनेवाला, ब्रह्महत्या करनेवाला, गुरुदारगामी, चोर, गौओंको मारनेवाला, मद्यपायी, परस्त्रीगामी, मिथ्यावादी, नास्तिक, वेदनिन्दक, निषिद्ध कर्मोंका आचरण करनेवाला यदि ब्राह्मण है और सभी तरहके संस्कारसे सम्पन्न भी है, वेद-वेदाङ्ग-पारङ्गत भी है, फिर भी उसकी सद्गति नहीं होती। दयाहीन, हिंसक, अतिशय दाम्भिक, कपटी, लोभी, पिशुन (चुगलखोर), अतिशय दुष्ट पुरुष वेद पढ़कर भी संसारको ठगते हैं और वेदको बेचकर अपना जीवन-यापन करते हैं, अनेक प्रकारके छल-छिद्रसे प्रजाकी हिंसा कर केवल अपना सांसारिक सुख सिद्ध करते हैं। ऐसे ब्राह्मण शूद्रसे भी अधम हैं।

जो ग्राह्य-अग्राह्यके तत्त्वको जाने, अन्याय और कुमार्गका परित्याग करे, जितेन्द्रिय, सत्यवादी और सदाचारी हो, नियमोंके पालन, आचार तथा सदाचरणमें स्थिर रहे, सबके हितमें तत्पर रहे, वेद-वेदाङ्ग और शास्त्रका मर्मज्ञ हो, समाधिमें स्थित रहे, क्रोध, मत्सर, मद तथा शोक आदिसे रहित हो, वेदके पठन-पाठनमें आसक्त रहे, किसीका अत्यधिक सङ्ग न करे, एकान्त और पवित्र स्थानमें रहे, सुख-दुःखमें समान हो, धर्मनिष्ठ हो, पापाचरणसे डरे, आसक्तिरहित, निरहंकार, दानी, शूर, ब्रह्मवेत्ता, शान्त-स्वभाव और तपस्वी हो तथा सम्पूर्ण शास्त्रोंमें परिनिष्ठित हो—इन गुणोंसे युक्त पुरुष ब्राह्मण होते हैं। ब्रह्मके भक्त होनेसे ब्राह्मण, क्षतसे रक्षा करनेके कारण क्षत्रिय, वार्ता (कृषि-विद्या आदि)-का सेवन करनेसे वैश्य और शब्द-श्रवणमात्रसे जो द्रुतगति हो जायँ, वे शूद्र कहलाते हैं। क्षमा, दम, शम, दान, सत्य, शौच, धृति, दया, मृदुता, ऋजुता, संतोष, तप, निरहंकारता, अक्रोध, अनसूया, अतृष्णता, अस्तेय, अमात्सर्य, धर्मज्ञान, ब्रह्मचर्य, ध्यान, आस्तिक्य, वैराग्य, पाप-भीरुता, अद्वेष,

* आचारहीनान् न पुनन्ति वेदा यद्यप्यधीताः सह षड्भिरङ्गैः। शिल्पं हि वेदाध्ययनं द्विजानां वृत्तं स्मृतं ब्राह्मणलक्षणं तु॥ (ब्राह्मपर्व ४१।८)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

गुरुशुश्रूषा आदि गुण जिनमें रहते हैं, उनका ब्राह्मणत्व दिन-प्रतिदिन बढ़ता रहता है।

शम, तप, दम, शौच, क्षमा, ऋजुता, ज्ञान-विज्ञान और आस्तिक्य—ये ब्राह्मणोंके सहज कर्म हैं। ज्ञानरूपी शिखा, तपोरूपी सूत्र अर्थात् यज्ञोपवीत जिनके रहते हैं, उनको मनुने ब्राह्मण कहा है। पाप-कर्मोंसे निवृत्त होकर उत्तम आचरण करनेवाला भी ब्राह्मणके समान ही है। शीलसे युक्त शूद्र भी ब्राह्मणसे प्रशस्त हो सकता है और आचाररहित ब्राह्मण भी शूद्रसे अधम हो जाता है।

जिस तरह दैव और पौरुषके मिलनेपर कार्य सिद्ध होते हैं, वैसे ही उत्तम जाति और सत्कर्मका योग होनेपर आचरणकी पूर्णता सिद्ध होती है। (अध्याय ४०—४५)

भगवान् कार्तिकेय तथा उनके षष्ठी-व्रतकी महिमा

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! भाद्रपद मासकी षष्ठी तिथि बहुत उत्तम तिथि है, यह सभी पापोंका हरण करनेवाली, पुण्य प्रदान करनेवाली तथा सभी कल्याण-मङ्गलोंको देनेवाली है। यह तिथि कार्तिकेयको अतिशय प्रिय है। इस दिन किया हुआ स्नान, दान आदि सत्कर्म अक्षय होता है। जो दक्षिण दिशा (कुमारिकाक्षेत्र)-में निवास करनेवाले कुमार कार्तिकेयका इस तिथिको दर्शन करते हैं, वे ब्रह्महत्या आदि पापोंसे मुक्त हो जाते हैं, इसलिये इस तिथिमें भगवान् कार्तिकेयका अवश्य दर्शन करना चाहिये। भक्तिपूर्वक कार्तिकेयका पूजन करनेसे मानव मनोवाञ्छित फल प्राप्त करता है और अन्तमें इन्द्रलोकमें निवास करता है। ईंट, पत्थर, काष्ठ आदिके द्वारा श्रद्धापूर्वक कार्तिकेयका मन्दिर बनानेवाला पुरुष स्वर्णके विमानमें बैठकर कार्तिकेयके लोकमें जाता है। इनके मन्दिरपर ध्वजा चढ़ाने तथा झाड़ू-पोंछा (मार्जन) आदि करनेसे रुद्रलोक प्राप्त होता है। चन्दन, अगर, कपूर आदिसे कार्तिकेयकी पूजा करनेपर हाथी, घोड़ा आदि वाहनोंका स्वामी होता है और सेनापतित्व भी प्राप्त होता है। राजाओंको कार्तिकेयकी अवश्य ही आराधना करनी चाहिये। जो राजा कृत्तिकाओंके पुत्र भगवान् कार्तिकेयकी आराधना कर युद्धके लिये प्रस्थान करता है, वह देवराज इन्द्रकी तरह अपने शत्रुओंको परास्त कर देता है। कार्तिकेयकी चम्पक आदि विविध पुष्पोंसे पूजा करनेवाला व्यक्ति सभी पापोंसे मुक्त हो जाता है और शिवलोकको प्राप्त करता है। इस भाद्रपद मासकी षष्ठीको तेलका सेवन नहीं करना चाहिये। षष्ठी तिथिको व्रत एवं पूजनकर रात्रिमें भोजन करनेवाला व्यक्ति सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त हो कार्तिकेयके लोकमें निवास करता है। जो व्यक्ति कुमारिकाक्षेत्रमें स्थित भगवान् कार्तिकेयका दर्शन एवं भक्तिपूर्वक उनका पूजन करता है, वह अखण्ड शान्ति प्राप्त करता है। (अध्याय ४६)

सप्तमी-कल्पमें भगवान् सूर्यके परिवारका निरूपण एवं शाक-सप्तमी-व्रत

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! अब मैं सप्तमी-कल्पका वर्णन करता हूँ। सप्तमी तिथिको भगवान् सूर्यका आविर्भाव हुआ था। वे अण्डके साथ उत्पन्न हुए और अण्डमें रहते हुए ही उन्होंने वृद्धि प्राप्त की। बहुत दिनोंतक अण्डमें रहनेके कारण ये 'मार्तण्ड' के नामसे प्रसिद्ध हुए। जब ये अण्डमें ही स्थित थे तो दक्ष प्रजापतिने अपनी रूपवती कन्या रूपाको भार्याके रूपमें इन्हें अर्पित

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

किया*। दक्षकी आज्ञासे विश्वकर्माने इनके शरीरका संस्कार किया, जिससे ये अतिशय तेजस्वी हो गये। अण्डमें स्थित रहते ही इन्हें यमुना एवं यम नामकी दो संतानें प्राप्त हुईं। भगवान् सूर्यका तेज सहन न कर सकनेके कारण उनकी स्त्री व्याकुल हो सोचने लगी—इनके अतिशय तेजके कारण मेरी दृष्टि इनकी ओर ठहर नहीं पाती, जिससे इनके अङ्गोंको मैं देख नहीं पा रही हूँ। मेरा सुवर्ण-वर्ण, कमनीय शरीर इनके तेजसे दग्ध हो श्यामवर्णका हो गया है। इनके साथ मेरा निर्वाह होना बहुत कठिन है। यह सोचकर उसने अपनी छायासे एक स्त्री उत्पन्न कर उससे कहा—'तुम भगवान् सूर्यके समीप मेरी जगह रहना, परंतु यह भेद खुलने न पाये।' ऐसा समझाकर उसने उस छाया नामकी स्त्रीको वहाँ रख दिया तथा अपनी संतान यम और यमुनाको वहीं छोड़कर वह तपस्या करनेके लिये उत्तरकुरु देशमें चली गयी और वहाँ घोड़ीका रूप धारण कर तपस्यामें रत रहते हुए इधर-उधर अनेक वर्षोंतक घूमती रही।

भगवान् सूर्यने छायाको ही अपनी पत्नी समझा। कुछ समयके बाद छायासे शनैश्चर और तपती नामकी दो संतानें उत्पन्न हुईं। छाया अपनी संतानपर यमुना तथा यमसे अधिक स्नेह करती थी। एक दिन यमुना और तपतीमें विवाद हो गया। पारस्परिक शापसे दोनों नदी हो गयीं। एक बार छायाने यमुनाके भाई यमको ताडित किया। इसपर यमने क्रुद्ध होकर छायाको मारनेके लिये पैर उठाया। छायाने क्रुद्ध होकर शाप दे दिया—'मूढ! तुमने मेरे ऊपर चरण उठाया है, इसलिये तुम्हारा प्राणियोंका प्राणहिंसक रूपी यह बीभत्स कर्म तबतक रहेगा, जबतक सूर्य और चन्द्र रहेंगे। यदि तुम मेरे शापसे कलुषित अपने पैरको पृथ्वीपर रखोगे तो कृमिगण उसे खा जायँगे।'

यम और छायाका इस प्रकार विवाद हो ही रहा था कि उसी समय भगवान् सूर्य वहाँ आ पहुँचे। यमने अपने पिता भगवान् सूर्यसे कहा—'पिताजी! यह हमारी माता कदापि नहीं हो सकती, यह कोई और स्त्री है। यह हमें नित्य क्रूर भावसे देखती है और हम सभी भाई-बहनोंमें समान दृष्टि तथा समान व्यवहार नहीं रखती। यह सुनकर भगवान् सूर्यने क्रुद्ध होकर छायासे कहा—'तुम्हें यह उचित नहीं है कि अपनी संतानोंमें ही एकसे प्रेम करो और दूसरेसे द्वेष। जितनी संतानें हों सबको समान ही समझना चाहिये। तुम विषम-दृष्टिसे क्यों देखती हो? यह सुनकर छाया तो कुछ न बोली, पर यमने पुनः कहा—'पिताजी! यह दुष्टा मेरी माता नहीं है, बल्कि मेरी माताकी छाया है। इसीसे इसने मुझे शाप दिया है।' यह कहकर यमने पूरा वृत्तान्त उन्हें बतला दिया। इसपर भगवान् सूर्यने कहा—'बेटा! तुम चिन्ता न करो। कृमिगण मांस और रुधिर लेकर भूलोकको चले जायँगे, इससे तुम्हारा पाँव गलेगा नहीं, अच्छा हो जायगा और ब्रह्माजीकी आज्ञासे तुम लोकपालपदको भी प्राप्त करोगे। तुम्हारी बहन यमुनाका जल गङ्गाजलके समान पवित्र हो जायगा और तपतीका जल नर्मदाजलके तुल्य पवित्र माना जायगा। आजसे यह छाया सबके देहोंमें अवस्थित होगी।'

ऐसी व्यवस्था और मर्यादा स्थिर कर भगवान् सूर्य दक्ष प्रजापतिके पास गये और उन्हें अपने आगमनका कारण बताते हुए सम्पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया। इसपर दक्ष प्रजापतिने कहा—'आपके अति प्रचण्ड तेजसे व्याकुल होकर आपकी भार्या उत्तरकुरु देशमें चली गयी है। अब आप विश्वकर्मासे अपना रूप प्रशस्त करवा लें।' यह कहकर उन्होंने

* सूर्यकी पत्नी 'रूपा' का दूसरा नाम 'संज्ञा' है। अन्य पुराणोंमें संज्ञाको विश्वकर्माकी पुत्री कहा गया है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

विश्वकर्माको बुलाकर उनसे कहा—'विश्वकर्मन्! आप इनका सुन्दर रूप प्रकाशित कर दें।' तब सूर्यकी सम्मति पाकर विश्वकर्माने अपने तक्षण-कर्मसे सूर्यको खरादना प्रारम्भ किया। अङ्गोंके तराशनेके कारण सूर्यको अतिशय पीड़ा हो रही थी और बार-बार मूर्च्छा आ जाती थी। इसीलिये विश्वकर्माने सब अङ्ग तो ठीक कर लिये, पर जब पैरोंकी अङ्गुलियोंको छोड़ दिया तब सूर्य भगवान्ने कहा—'विश्वकर्मन्! आपने तो अपना कार्य पूर्ण कर लिया, परंतु हम पीड़ासे व्याकुल हो रहे हैं। इसका कोई उपाय बताइये।' विश्वकर्माने कहा—'भगवन्! आप रक्त चन्दन और करवीरके पुष्पोंका सम्पूर्ण शरीरमें लेप करें, इससे तत्काल यह वेदना शान्त हो जायगी।' भगवान् सूर्यने विश्वकर्माके कथनानुसार अपने सारे शरीरमें इनका लेप किया, जिससे उनकी सारी वेदना मिट गयी। उसी दिनसे रक्त चन्दन और करवीरके पुष्प भगवान् सूर्यको अत्यन्त प्रिय हो गये और उनकी पूजामें प्रयुक्त होने लगे। सूर्यभगवान्के शरीरके खरादनेसे जो तेज निकला, उस तेजसे दैत्योंके विनाश करनेवाले वज्रका निर्माण हुआ।

भगवान् सूर्यने भी अपना उत्तम रूप प्राप्तकर प्रसन्नमनसे अपनी भार्याके दर्शनोंकी उत्कण्ठासे तत्काल उत्तरकुरुकी ओर प्रस्थान किया। वहाँ उन्होंने देखा कि वह घोड़ीका रूप धारण कर विचरण कर रही है। भगवान् सूर्य भी अश्वका रूप धारण कर उससे मिले।

पर-पुरुषकी आशंकासे उसने अपने दोनों नासापुटोंसे सूर्यके तेजको एक साथ बाहर फेंक दिया, जिससे अश्विनीकुमारोंकी उत्पत्ति हुई और यही देवताओंके वैद्य हुए। तेजके अन्तिम अंशसे रेवन्तकी उत्पत्ति हुई। तपती, शनि और सावर्णि—ये तीन संतानें छायासे और यमुना तथा यम संज्ञासे उत्पन्न हुए। सूर्यको अपनी भार्या उत्तरकुरुमें सप्तमी तिथिके दिन प्राप्त हुई, उन्हें दिव्य रूप सप्तमी तिथिको ही मिला तथा संतानें भी इसी तिथिको प्राप्त हुईं, अतः सप्तमी तिथि भगवान् सूर्यको अतिशय प्रिय है।

जो व्यक्ति पञ्चमी तिथिको एक समय भोजन कर षष्ठीको उपवास करता है तथा सप्तमीको दिनमें उपवास कर भक्ष्य-भोज्योंके साथ विविध शाक-पदार्थोंको भगवान् सूर्यके लिये अर्पण कर ब्राह्मणोंको देता है तथा रात्रिमें मौन होकर भोजन करता है, वह अनेक प्रकारके सुखोंका भोग करता है तथा सर्वत्र विजय प्राप्त करता एवं अन्तमें उत्तम विमानपर चढ़कर सूर्यलोकमें कई मन्वन्तरोंतक निवासकर पृथ्वीपर पुत्र-पौत्रोंसे समन्वित चक्रवर्ती राजा होता है तथा दीर्घकालपर्यन्त निष्कण्टक राज्य करता है।

राजा कुरुने इस सप्तमी-व्रतका बहुत कालतक अनुष्ठान किया और केवल शाकका ही भोजन किया। इसीसे उन्होंने कुरुक्षेत्र नामक पुण्यक्षेत्र प्राप्त किया और इसका नाम रखा धर्मक्षेत्र। सप्तमी, नवमी, षष्ठी, तृतीया और पञ्चमी—ये तिथियाँ बहुत उत्तम हैं और स्त्री-पुरुषोंको मनोवाञ्छित फल प्रदान करनेवाली हैं। माघकी सप्तमी, आश्विनकी नवमी, भाद्रपदकी षष्ठी, वैशाखकी तृतीया और भाद्रपद मासकी पञ्चमी—ये तिथियाँ इन महीनोंमें विशेष प्रशस्त मानी गयी हैं। कार्तिक शुक्ला सप्तमीसे इस व्रतको ग्रहण करना चाहिये। उत्तम शाकको सिद्ध कर ब्राह्मणोंको देना चाहिये और रात्रिमें स्वयं भी शाक ही ग्रहण करना चाहिये। इस प्रकार चार मासतक व्रतकर व्रतका पहला पारण करना चाहिये। उस दिन पञ्चगव्यसे सूर्यभगवान्को स्नान कराना चाहिये और स्वयं भी पञ्चगव्यका प्राशन करना चाहिये, अनन्तर

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

केसरका चन्दन, अगस्त्यके पुष्प, अपराजित नामक धूप और पायसका नैवेद्य सूर्यनारायणको समर्पित करना चाहिये। ब्राह्मणोंको भी पायसका भोजन कराना चाहिये। दूसरे पारणमें कुशाके जलसे भगवान् सूर्यनारायणको स्नान कराकर स्वयं गोमयका प्राशन करना चाहिये और श्वेतचन्दन, सुगन्धित पुष्प, अगरुका धूप तथा गुडके अपूप नैवेद्यमें अर्पण करना चाहिये और वर्षके समाप्त होनेपर तीसरा पारण करना चाहिये। गौर सर्षपका उबटन लगाकर भगवान् सूर्यको स्नान कराना चाहिये। इससे सम्पूर्ण पाप नष्ट हो जाते हैं। फिर रक्तचन्दन, करवीरके पुष्प, गुग्गुलका धूप और अनेक भक्ष्य-भोज्यसहित दही-भात नैवेद्यमें अर्पण करना चाहिये तथा यही ब्राह्मणोंको भी भोजन कराना चाहिये। भगवान् सूर्यनारायणके सम्मुख ब्राह्मणसे पुराण-श्रवण करना चाहिये अथवा स्वयं बाँचना चाहिये। अन्तमें ब्राह्मणको भोजन कराकर पौराणिकको वस्त्र-आभूषण, दक्षिणा आदि देकर प्रसन्न करना चाहिये। पौराणिकके संतुष्ट होनेपर भगवान् सूर्यनारायण प्रसन्न हो जाते हैं। रक्त चन्दन, करवीरके पुष्प, गुग्गुलका धूप, मोदक, पायसका नैवेद्य, घृत, ताम्रपात्र, पुराण-ग्रन्थ और पौराणिक—ये सब भगवान् सूर्यको अत्यन्त प्रिय हैं। राजन्! यह शाक-सप्तमी-व्रत भगवान् सूर्यको अति प्रिय है। इस व्रतका करनेवाला पुरुष भाग्यशाली होता है। (अध्याय ४७)

श्रीकृष्ण-साम्ब-संवाद तथा भगवान् सूर्यनारायणकी पूजन-विधि

राजा शतानीकने कहा—ब्राह्मणश्रेष्ठ! भगवान् सूर्यनारायणका माहात्म्य सुनते-सुनते मुझे तृप्ति नहीं हो रही है, इसलिये सप्तमी-कल्पका आप पुनः कुछ और विस्तारसे वर्णन करें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! इस विषयमें भगवान् श्रीकृष्ण और उनके पुत्र साम्बका जो परस्पर संवाद हुआ था, उसीका मैं वर्णन करता हूँ, उसे आप सुनें।

एक समय साम्बने अपने पिता भगवान् श्रीकृष्णसे पूछा—'पिताजी! मनुष्य संसारमें जन्म-ग्रहणकर कौन-सा कर्म करे, जिससे उसे दुःख न हो और मनोवाञ्छित फलोंको प्राप्त कर वह स्वर्ग प्राप्त करे तथा मुक्ति भी प्राप्त कर सके। इन सबका आप वर्णन करें। मेरा मन इस संसारमें अनेक प्रकारकी आधि-व्याधियोंको देखकर अत्यन्त उदास हो रहा है, मुझे क्षणमात्र भी जीनेकी इच्छा नहीं होती, अतः आप कृपाकर ऐसा उपाय बतायें कि जितने दिन भी इस संसारमें रहा जाय, ये आधि-व्याधियाँ पीडित न कर सकें और फिर इस संसारमें जन्म न हो अर्थात् मोक्ष प्राप्त हो जाय।'

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—वत्स! देवताओंके प्रसादसे, उनके अनुग्रहसे तथा उनकी आराधना करनेसे यह सब कुछ प्राप्त हो सकता है। देवताओंकी आराधना ही परम उपाय है। देवता अनुमान और आगम-प्रमाणोंसे सिद्ध होते हैं। विशिष्ट पुरुष विशिष्ट देवताकी आराधना करे तो वह विशिष्ट फल प्राप्त कर सकता है।

साम्बने कहा—महाराज! प्रथम तो देवताओंके अस्तित्वमें ही संदेह है, कुछ लोग कहते हैं देवता हैं और कुछ कहते हैं कि देवता नहीं हैं, फिर विशिष्ट देवता किन्हें समझा जाय?

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—वत्स! आगमसे, अनुमानसे और प्रत्यक्षसे देवताओंका होना सिद्ध होता है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

साम्बने कहा—यदि देवता प्रत्यक्ष सिद्ध हो सकते हैं तो फिर उनके साधनके लिये अनुमान और आगम-प्रमाणकी कुछ भी अपेक्षा नहीं है।

श्रीकृष्ण बोले—वत्स! सभी देवता प्रत्यक्ष नहीं होते। शास्त्र और अनुमानसे ही हजारों देवताओंका होना सिद्ध होता है।

साम्बने कहा—पिताजी! जो देवता प्रत्यक्ष हैं और विशिष्ट एवं अभीष्ट फलोंको देनेवाले हैं, पहले आप उन्हींका वर्णन करें। अनन्तर शास्त्र तथा अनुमानसे सिद्ध होनेवाले देवताओंका वर्णन करें।

श्रीकृष्णने कहा—प्रत्यक्ष देवता तो संसारके नेत्रस्वरूप भगवान् सूर्यनारायण ही हैं, इनसे बढ़कर दूसरा कोई देवता नहीं है। सम्पूर्ण जगत् इन्हींसे उत्पन्न हुआ है और अन्तमें इन्हींमें विलीन भी हो जायगा*।

सत्य आदि युगों और कालकी गणना इन्हींसे सिद्ध होती है। ग्रह, नक्षत्र, योग, करण, राशि, आदित्य, वसु, रुद्र, वायु, अग्नि, अश्विनीकुमार, इन्द्र, प्रजापति, दिशाएँ, भूः, भुवः, स्वः—ये सभी लोक और पर्वत, नदी, समुद्र, नाग तथा सम्पूर्ण भूतग्रामकी उत्पत्तिके एकमात्र हेतु भगवान् सूर्यनारायण ही हैं। यह सम्पूर्ण चराचर-जगत् इनकी ही इच्छासे उत्पन्न हुआ है। इनकी ही इच्छासे स्थित है और सभी इनकी ही इच्छासे अपने-अपने व्यवहारमें प्रवृत्त होते हैं। इन्हींके अनुग्रहसे यह सारा संसार प्रयत्नशील दिखायी देता है। सूर्यभगवान्के उदयके साथ जगत्का उदय और उनके अस्त होनेके साथ जगत् अस्त होता है। इनसे अधिक न कोई देवता हुआ और न होगा। वेदादि शास्त्रों तथा इतिहास-पुराणादिमें इनका परमात्मा, अन्तरात्मा आदि शब्दोंसे प्रतिपादन किया गया है। ये सर्वत्र व्याप्त हैं। इनके सम्पूर्ण गुणों और प्रभावोंका वर्णन सौ वर्षोंमें भी नहीं किया जा सकता। इसीलिये दिवाकर, गुणाकर, सबके स्वामी, सबके स्रष्टा और सबका संहार करनेवाले भी ये ही कहे गये हैं। ये स्वयं अव्यय हैं।

जो पुरुष सूर्य-मण्डलकी रचना कर प्रातः, मध्याह्न और सायं उनकी पूजा कर उपस्थान करता है, वह परमगतिको प्राप्त करता है। फिर जो प्रत्यक्ष सूर्यनारायणका भक्तिपूर्वक पूजन करता है, उसके लिये कौन-सा पदार्थ दुर्लभ है। जो अपनी अन्तरात्मामें ही मण्डलस्थ भगवान् सूर्यको अपनी बुद्धिद्वारा निश्चित कर लेता है तथा ऐसा समझकर वह इनका ध्यानपूर्वक पूजन, हवन एवं जप करता है, वह सभी कामनाओंको प्राप्त करता है और अन्तमें इनके लोकको प्राप्त होता है। इसलिये हे पुत्र! यदि तुम संसारमें सुख चाहते हो और भुक्ति तथा मुक्तिकी इच्छा रखते हो तो विधिपूर्वक प्रत्यक्ष देवता भगवान् सूर्यकी तन्मयतासे आराधना करो। इससे तुम्हें आध्यात्मिक, आधिदैविक तथा आधिभौतिक कोई भी दुःख नहीं होंगे। जो सूर्यभगवान्की शरणमें जाते हैं, उनको किसी प्रकारका भय नहीं होता और उन्हें इस लोक तथा परलोकमें शाश्वत सुख प्राप्त होता है। स्वयं मैंने भगवान् सूर्यकी बहुत कालतक यथाविधि आराधना की है, उन्हींकी कृपासे यह दिव्य ज्ञान मुझे प्राप्त हुआ है। इससे बढ़कर मनुष्योंके हितका और कोई उपाय नहीं है। (अध्याय ४८)

---

* प्रत्यक्षं देवता सूर्यो जगच्चक्षुर्दिवाकरः। तस्मादभ्यधिका काचिद्देवता नास्ति शाश्वती॥
यस्मादिदं जगज्जातं लयं यास्यति यत्र च। (ब्राह्मपर्व ४८। २१-२२)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

श्रीसूर्यनारायणके नित्यार्चनका विधान

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—साम्ब! अब हम सूर्यनारायणके पूजनका विधान बताते हैं, जिसके करनेसे सम्पूर्ण पाप और विघ्न नष्ट हो जाते हैं तथा सभी मनोरथोंकी सिद्धि होती है और पुण्य भी प्राप्त होता है। प्रातःकाल उठकर शौच आदिसे निवृत्त हो नदीके तटपर जाकर आचमन करे तथा सूर्योदयके समय शुद्ध मृत्तिकाका शरीरपर लेपन कर स्नान करे। पुनः आचमन कर शुद्ध वस्त्र धारण करे और सप्ताक्षर-मन्त्र '**ॐ खखोल्काय स्वाहा**' से सूर्यभगवान्‌को अर्घ्य दे तथा हृदयमें मन्त्रका ध्यान करे एवं सूर्य-मन्दिरमें जाकर सूर्यकी पूजा करे। सर्वप्रथम श्रद्धापूर्वक पूरक, रेचक और कुम्भक नामक प्राणायाम कर वायवी, आग्नेयी, माहेन्द्री तथा वारुणी धारणा करके भूतशुद्धिकी रीतिसे शरीरका शोषण, दहन, स्तम्भन एवं प्लावन करके अपने शरीरकी शुद्धि कर ले। अपने शुद्ध हृदयमें भगवान् सूर्यकी भावना कर उन्हें प्रणाम करे। स्थूल, सूक्ष्म शरीर तथा इन्द्रियोंको अपने-अपने स्थानोंमें उपन्यस्त करे। '**ॐ खः स्वाहा हृदयाय नमः, ॐ खं स्वाहा शिरसे स्वाहा, ॐ उल्काय स्वाहा शिखायै वषट्, ॐ याय स्वाहा कवचाय हुम्, ॐ स्वाँ स्वाहा नेत्रत्रयाय वौषट्, ॐ हाँ स्वाहा अस्त्राय फट्।**'

—इन मन्त्रोंसे अङ्गन्यास कर पूजन-सामग्रीका मूल मन्त्रसे अभिमन्त्रित जलद्वारा प्रोक्षण करे। फिर सुगन्धित पुष्पादि उपचारोंसे सूर्यभगवान्‌का पूजन करे। सूर्यनारायणकी पूजा दिनके समय सूर्य-मूर्तिमें और रात्रिके समय अग्निमें करनी चाहिये। प्रभातकालमें पूर्वाभिमुख, सायंकालमें पश्चिमाभिमुख तथा रात्रिमें उत्तराभिमुख होकर पूजन करनेका विधान है। '**ॐ खखोल्काय स्वाहा**' इस सप्ताक्षर मूल मन्त्रसे सूर्यमण्डलके बीच षट्दल-कमलका ध्यान कर उसके मध्यमें सहस्र किरणोंसे देदीप्यमान भगवान् सूर्यनारायणकी मूर्तिका ध्यान करे। फिर रक्त चन्दन, करवीर आदि रक्त पुष्पों, धूप, दीप, अनेक प्रकारके नैवेद्य, वस्त्राभूषण आदि उपचारोंसे पूजन करे अथवा रक्त चन्दनसे ताम्रपात्रमें षट्दल-कमल बनाकर उसके मध्यमें सभी उपचारोंसे भगवान् सूर्यनारायणका पूजन करे। छहों दलोंमें षडङ्ग-पूजन कर उत्तर आदि दिशाओंमें सोमादि आठ ग्रहोंका अर्चन करे और अष्टदिक्पालों तथा उनके आयुधोंका भी तत्तद् दिशाओंमें पूजन करे। नामके आदिमें 'प्रणव' लगाकर नामको चतुर्थी-विभक्तियुक्त करके अन्तमें '**नमः**' कहे—जैसे '**ॐ सोमाय नमः**' इत्यादि। इस प्रकार नाममन्त्रोंसे सबका पूजन करे। अनन्तर व्योम-मुद्रा, रवि-मुद्रा, पद्म-मुद्रा, महाश्वेत-मुद्रा और अस्त्र-मुद्रा दिखाये। ये पाँच मुद्राएँ पूजा, जप, ध्यान, अर्घ्य आदिके अनन्तर दिखानी चाहिये।

इस प्रकार एक वर्षतक भक्तिपूर्वक तन्मयताके साथ भगवान् सूर्यनारायणका पूजन करनेसे अभीष्ट मनोरथोंकी प्राप्ति होती है और बादमें मुक्ति भी प्राप्त होती है। इस विधिसे पूजन करनेपर रोगी रोगसे मुक्त हो जाता है, धनहीन धन प्राप्त करता है, राज्यभ्रष्टको राज्य मिल जाता है तथा पुत्रहीन पुत्र प्राप्त करता है। सूर्यनारायणका पूजन करनेवाला पुरुष प्रज्ञा, मेधा तथा सभी समृद्धियोंसे सम्पन्न होता हुआ चिरंजीवी होता है। इस विधिसे पूजन करनेपर कन्याको उत्तम वरकी, कुरूपा स्त्रीको उत्तम सौभाग्यकी तथा विद्यार्थीको सद्विद्याकी प्राप्ति होती है। ऐसा सूर्यभगवान्‌ने स्वयं अपने मुखसे कहा है। इस प्रकार सूर्यभगवान्‌का पूजन करनेसे धन, धान्य, संतान, पशु आदिकी नित्य अभिवृद्धि होती है। मनुष्य निष्काम हो जाता है तथा अन्तमें उसे सद्गति प्राप्त होती है। (अध्याय ४९)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भगवान् सूर्यके पूजन एवं व्रतोद्यापनका विधान, द्वादश आदित्योंके नाम और रथसप्तमी-व्रतकी महिमा

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—साम्ब! अब मैं सूर्यके विशिष्ट अवसरोंपर होनेवाले व्रत-उत्सव एवं पूजनकी विधियोंका वर्णन करता हूँ, उन्हें सुनो। किसी मासके शुक्लपक्षकी सप्तमी, ग्रहण या संक्रान्तिके एक दिन-पूर्व एक बार हविष्यान्नका भोजन कर सायंकालके समय भलीभाँति आचमन आदि करके अरुणदेवको प्रणाम करना चाहिये तथा सभी इन्द्रियोंको संयतकर भगवान् सूर्यका ध्यान कर रात्रिमें जमीनपर कुशकी शय्यापर शयन करना चाहिये। दूसरे दिन प्रातःकाल उठकर विधिपूर्वक स्नान सम्पन्न करके संध्या करे तथा पूर्वोक्त मन्त्र '**ॐ खखोल्काय स्वाहा**' का जप एवं सूर्यभगवान्‌की पूजा करे। अग्निको सूर्यतापके रूपमें समझकर वेदी बनाये और संक्षेपमें हवन तथा तर्पण करे। गायत्री-मन्त्रसे प्रोक्षणकर पूर्वाग्र और उत्तराग्र कुशा बिछाये। अनन्तर सभी पात्रोंका शोधन कर दो, कुशाओंकी प्रादेशमात्रकी एक पवित्री बनाये। उस पवित्रीसे सभी वस्तुओंका प्रोक्षण करे, घीको अग्निपर रखकर पिघला ले, उत्तरकी ओर पात्रमें उसे रख दे, अनन्तर जलते हुए उल्मुकसे पर्यग्निकरण करते हुए घृतका तीन बार उत्प्लवन करे। स्रुवा आदिका कुशोंके द्वारा परिमार्जन और सम्प्रोक्षण करके अग्निमें सूर्यदेवकी पूजा करे और दाहिने हाथमें स्रुवा ग्रहणकर मूल मन्त्रसे हवन करे। मनोयोगपूर्वक मौन धारण कर सभी क्रियाएँ सम्पन्न करनी चाहिये। पूर्णाहुतिके पश्चात् तर्पण करे। अनन्तर ब्राह्मणोंको उत्तम भोजन कराना चाहिये और यथाशक्ति उनको दक्षिणा भी देनी चाहिये। ऐसा करनेसे मनोवाञ्छित फलकी प्राप्ति होती है।

माघ मासकी सप्तमीको वरुण नामक सूर्यकी पूजा करे। इसी प्रकार क्रमशः फाल्गुनमें सूर्य, चैत्रमें वैशाख*, वैशाखमें धाता, ज्येष्ठमें इन्द्र, आषाढ़में रवि, श्रावणमें नभ, भाद्रपदमें यम, आश्विनमें पर्जन्य, कार्तिकमें त्वष्टा, मार्गशीर्षमें मित्र तथा पौष मासमें विष्णु नामक सूर्यका अर्चन करे। इस विधिसे बारहों मासमें अलग-अलग नामोंसे भगवान् सूर्यकी पूजा करनी चाहिये। इस प्रकार श्रद्धा-भक्तिपूर्वक एक दिन पूजा करनेसे वर्षपर्यन्त की गयी पूजाका फल प्राप्त हो जाता है।

उपर्युक्त विधिसे एक वर्षतक व्रत कर रत्नजटित सुवर्णका एक रथ बनवाये और उसमें सात घोड़े बनवाये। रथके मध्यमें सोनेके कमलके ऊपर रत्नोंके आभूषणोंसे अलंकृत सूर्यनारायणकी सोनेकी मूर्ति स्थापित करे। रथके आगे उनके सारथिको बैठाये। अनन्तर बारह ब्राह्मणोंमें बारह महीनोंके सूर्योंकी भावना कर तेरहवें मुख्य आचार्यको साक्षात् सूर्यनारायण समझकर उनकी पूजा करे तथा उन्हें रथ, छत्र, भूमि, गौ आदि समर्पित करे। इसी प्रकार रत्नोंके आभूषण, वस्त्र, दक्षिणा और एक-एक घोड़ा उन बारह ब्राह्मणोंको दे तथा हाथ जोड़कर यह प्रार्थना करे—'ब्राह्मण देवताओ! इस सूर्यव्रतके उद्यापन करनेके बाद यदि असमर्थतावश कभी सूर्यव्रत न कर सकूँ तो मुझे दोष न हो।' ब्राह्मणोंके साथ आचार्य भी '**एवमस्तु**' ऐसा कहकर यजमानको आशीर्वाद दे और कहे—'सूर्यभगवान् तुमपर प्रसन्न हों। जिस मनोरथकी पूर्तिके लिये तुमने यह व्रत किया है और भगवान्

* प्रायः अन्य सभी पुराणोंमें चैत्रादि बारह महीनोंमें सूर्यके ये नाम मिलते हैं—धाता, अर्यमा, मित्र, वरुण, इन्द्र, विवस्वान्, पूषा, पर्जन्य, अंश, भग, त्वष्टा और विष्णु। कल्पभेदके अनुसार नामोंमें भेद है।

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

सूर्यकी पूजा की है, वह तुम्हारा मनोरथ सिद्ध हो और भगवान् सूर्य उसे पूरा करें। अब व्रत न करनेपर भी तुमको दोष नहीं होगा।' इस प्रकार आशीर्वाद प्राप्त कर दीनों, अन्धों तथा अनाथोंको यथाशक्ति भोजन कराये और ब्राह्मणोंको भोजन कराकर, दक्षिणा देकर व्रतकी समाप्ति करे।

जो व्यक्ति इस सप्तमी-व्रतको एक वर्षतक करता है, वह सौ योजन लम्बे-चौड़े देशका धार्मिक राजा होता है और इस व्रतके फलसे सौ वर्षोंसे भी अधिक निष्कण्टक राज्य करता है। जो स्त्री इस व्रतको करती है, वह राजपत्नी होती है। निर्धन व्यक्ति इस व्रतको यथाविधि सम्पन्न कर बतलायी हुई विधिके अनुसार ताँबेका रथ ब्राह्मणको देता है तो वह अस्सी योजन लम्बा-चौड़ा राज्य प्राप्त करता है। इसी प्रकार आटेका रथ बनवाकर दान करनेवाला साठ योजन विस्तृत राज्य प्राप्त करता है तथा वह चिरायु, नीरोग और सुखी रहता है। इस व्रतको करनेसे पुरुष एक कल्पतक सूर्यलोकमें निवास करनेके पश्चात् राजा होता है। यदि कोई व्यक्ति भगवान् सूर्यकी मानसिक आराधना भी करता है तो वह भी समस्त आधि-व्याधियोंसे रहित होकर सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करता है। जिस प्रकार भगवान् सूर्यको कुहरा स्पर्श नहीं कर पाता, उसी प्रकार मानसिक पूजा करनेवाले साधकको किसी प्रकारकी आपत्तियाँ स्पर्श नहीं कर पातीं। यदि किसीने मन्त्रोंके द्वारा भक्तिपूर्वक विधि-विधानसे व्रत सम्पन्न करते हुए भगवान् सूर्यनारायणकी आराधना की तो फिर उसके विषयमें क्या कहना? इसलिये अपने कल्याणके लिये भगवान् सूर्यकी पूजा अवश्य करनी चाहिये।

पुत्र! सूर्यनारायणने इस विधि-विधानको स्वयं अपने मुखसे मुझसे कहा था। आजतक उसे गुप्त रखकर पहली बार मैंने तुमसे कहा है। मैंने इसी व्रतके प्रभावसे हजारों पुत्र और पौत्रोंको प्राप्त किया है, दैत्योंको जीता है, देवताओंको वशमें किया है, मेरे इस चक्रमें सदा सूर्यभगवान् निवास करते हैं। नहीं तो इस चक्रमें इतना तेज कैसे होता? यही कारण है कि सूर्यनारायणका नित्य जप, ध्यान, पूजन आदि करनेसे मैं जगत्का पूज्य हूँ। वत्स! तुम भी मन, वाणी तथा कर्मसे सूर्यनारायणकी आराधना करो। ऐसा करनेसे तुम्हें विविध सुख प्राप्त होंगे। जो पुरुष भक्तिपूर्वक इस विधानको सुनता है, वह भी पुत्र-पौत्र, आरोग्य एवं लक्ष्मीको प्राप्त करता है और सूर्यलोकको भी प्राप्त हो जाता है।

भगवान् कृष्णने कहा—साम्ब! माघ मासके शुक्ल पक्षकी पञ्चमी तिथिको एकभुक्त-व्रत और षष्ठीको नक्तव्रत करना चाहिये*। सुव्रत! कुछ लोग सप्तमीमें उपवास चाहते हैं और कुछ विद्वान् षष्ठीमें उपवास और सप्तमी तिथिमें पारण करनेका विधान कहते हैं (इस प्रकार विविध मत हैं)। वस्तुतः षष्ठीको उपवास कर भगवान् सूर्यनारायणकी पूजा करनी चाहिये। रक्तचन्दन, करवीर-पुष्प, गुग्गुल धूप, पायस आदि नैवेद्योंसे माघ आदि चार महीनोंतक सूर्यनारायणकी पूजा करनी चाहिये। आत्मशुद्धिके लिये गोमयमिश्रित जलसे स्नान, गोमयका प्राशन और यथाशक्ति ब्राह्मण-भोजन भी कराना चाहिये।

ज्येष्ठ आदि चार महीनोंमें श्वेत चन्दन, श्वेत पुष्प, कृष्ण अगरु धूप और उत्तम नैवेद्य सूर्यनारायणको अर्पण करना चाहिये। इसमें पञ्चगव्यप्राशन कर ब्राह्मणोंको उत्कृष्ट भोजन कराना चाहिये।

* जिस दिन प्रायः दिनका अधिक अंश बिताकर सायं चार बजेके लगभग भोजन कर पूरी रात उपवास रहकर बिताया जाता है, उसे एकभुक्त-व्रत कहा जाता है और दिनभर उपवासकर रात्रिको भोजन करना 'नक्तव्रत' कहलाता है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

आश्विन आदि चार मासोंमें अगस्त्य-पुष्प, अपराजित धूप और गुड़के पूए आदिका नैवेद्य तथा इक्षुरस भगवान् सूर्यको समर्पित करना चाहिये। यथाशक्ति ब्राह्मण-भोजन कराकर आत्मशुद्धिके लिये कुशाके जलसे स्नान करना चाहिये। उस दिन कुशोदकका ही प्राशन करे। व्रतकी समाप्तिमें माघ मासकी शुक्ला सप्तमीको रथका दान करे और सूर्यभगवान्‌की प्रसन्नताके लिये रथयात्रोत्सवका आयोजन करे। महापुण्यदायिनी इस सप्तमीको रथसप्तमी कहा गया है। यह महासप्तमीके नामसे अभिहित है। रथसप्तमीको जो उपवास करता है, वह कीर्ति, धन, विद्या, पुत्र, आरोग्य, आयु और उत्तमोत्तम कान्ति प्राप्त करता है। हे पुत्र! तुम भी इस व्रतको करो, जिससे तुम्हारे सभी अभीष्टोंकी सिद्धि हो। इतना कहकर शङ्ख, चक्र, गदा-पद्मधारी श्रीकृष्ण अन्तर्हित हो गये।

सुमन्तुने कहा—राजन्! उनकी आज्ञा पाकर साम्बने भी भक्तिपूर्वक सूर्यनारायणकी आराधनामें तत्पर हो रथसप्तमीका व्रत किया और कुछ ही समयमें रोगमुक्त होकर मनोवाञ्छित फल प्राप्त कर लिया*।

(अध्याय ५०-५१)

सूर्यदेवके रथ एवं उसके साथ भ्रमण करनेवाले देवता-नाग आदिका वर्णन

राजा शतानीकने पूछा—मुने! सूर्यनारायणकी रथयात्रा किस विधानसे करनी चाहिये। रथ कैसा बनाना चाहिये? इस रथयात्राका प्रचलन मृत्युलोकमें किसके द्वारा हुआ? इन सब बातोंको आप कृपाकर मुझे बतलायें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! किसी समय सुमेरु पर्वतपर समासीन भगवान् रुद्रने ब्रह्माजीसे पूछा—'ब्रह्मन्! इस लोकको प्रकाशित करनेवाले भगवान् सूर्य किस प्रकारके रथमें बैठकर भ्रमण करते हैं, इसे आप बतायें।'

ब्रह्माजीने कहा—त्रिलोचन! सूर्यनारायण जिस प्रकारके रथमें बैठकर भ्रमण करते हैं, उसका मैं वर्णन करता हूँ, आप सानन्द सुनें।

एक चक्र, तीन नाभि, पाँच अरे तथा स्वर्णमय अति कान्तिमान् आठ बन्धोंसे युक्त एवं एक नेमिसे सुसज्जित—इस प्रकारके दस हजार योजन लम्बे-चौड़े अतिशय प्रकाशमान स्वर्ण-रथमें विराजमान भगवान् सूर्य विचरण करते रहते हैं। रथके उपस्थसे ईषा-दण्ड तीन-गुना अधिक है। यहीं उनके सारथि अरुण बैठते हैं। इनके रथका जुआ सोनेका बना हुआ है। रथमें वायुके समान वेगवान् छन्दरूपी सात घोड़े जुते रहते हैं। संवत्सरमें जितने अवयव होते हैं, वे ही रथके अङ्ग हैं। तीनों काल चक्रकी तीन नाभियाँ हैं। पाँच ऋतुएँ अरे हैं, छठी ऋतु नेमि है। दक्षिण और उत्तर—ये दो अयन रथके दोनों भाग हैं। मुहूर्त रथके इषु, कला, शम्य, काष्ठाएँ रथके कोण, क्षण अक्षदण्ड, निमेष रथके कर्ण, ईषा-दण्ड लव, रात्रि वरूथ, धर्म रथका ध्वज, अर्थ और काम धुरीका अग्रभाग, गायत्री, त्रिष्टुप्, जगती, अनुष्टुप्, पंक्ति, बृहती तथा उष्णिक्—

* रथसप्तमीके विषयमें व्रतरत्नाकर, व्रतकल्पद्रुम, व्रतराज आदिके अतिरिक्त पद्मपुराण एवं वायुपुराणके माघ-माहात्म्यमें बहुत विस्तारसे व्रत-विधानका निरूपण हुआ है और कुछ पञ्चाङ्गोंमें भी इसी दिन भगवान् सूर्यके रथपर चढ़कर आकाशकी प्रथम यात्रा करनेका उल्लेख किया गया है। जैसे रामनवमीके दिन भगवान् रामका, जन्माष्टमीके दिन भगवान् श्रीकृष्णका प्राकट्य मानकर उत्सव किया जाता है, वैसे ही रथसप्तमीके दिन भगवान् सूर्यका प्राकट्य मानकर उनके लिये व्रत-उपवासके साथ विशेष अर्चा सम्पन्न की जाती है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

ये सात छन्द सात अश्व हैं। धुरीपर चक्र घूमता है। इस प्रकारके रथमें बैठकर भगवान् सूर्य निरन्तर आकाशमें भ्रमण करते रहते हैं।

देव, ऋषि, गन्धर्व, अप्सरा, नाग, ग्रामणी और राक्षस सूर्यके रथके साथ घूमते रहते हैं और दो-दो मासोंके बाद इनमें परिवर्तन हो जाता है।

धाता और अर्यमा—ये दो आदित्य, पुलस्त्य तथा पुलह नामक दो ऋषि, खण्डक, वासुकि नामक दो नाग, तुम्बुरु और नारद ये दो गन्धर्व, क्रतुस्थला तथा पुञ्जिकस्थला ये अप्सराएँ, रथकृत्स्न तथा रथौजा ये दो यक्ष, हेति तथा प्रहेति नामके दो राक्षस ये क्रमशः चैत्र और वैशाख मासमें रथके साथ चला करते हैं।

मित्र तथा वरुण नामक दो आदित्य, अत्रि तथा वसिष्ठ ये दो ऋषि, तक्षक और अनन्त दो नाग, मेनका तथा सहजन्या ये दो अप्सराएँ, हाहा-हूहू दो गन्धर्व, रथस्वान् और रथचित्र ये दो यक्ष, पौरुषेय और बध नामक दो राक्षस क्रमशः ज्येष्ठ तथा आषाढ़ मासमें सूर्यरथके साथ चला करते हैं।

श्रावण तथा भाद्रपदमें इन्द्र तथा विवस्वान् नामक दो आदित्य, अङ्गिरा तथा भृगु नामक दो ऋषि, एलापर्ण तथा शङ्खपाल ये दो नाग, प्रम्लोचा और दुंदुका नामक दो अप्सराएँ, भानु और दुर्दुर नामक गन्धर्व, सर्प तथा ब्राह्म नामक दो राक्षस, स्रोत तथा आपूरण नामके दो यक्ष सूर्यरथके साथ चलते रहते हैं।

आश्विन और कार्तिक मासमें पर्जन्य और पूषा नामके दो आदित्य, भारद्वाज और गौतम नामक दो ऋषि, चित्रसेन तथा वसुरुचि नामक दो गन्धर्व, विश्वाची तथा घृताची नामकी दो अप्सराएँ, ऐरावत और धनञ्जय नामक दो नाग एवं सेनजित् तथा सुषेण नामक दो यक्ष, आप एवं वात नामक दो राक्षस सूर्यरथके साथ चला करते हैं।

मार्गशीर्ष तथा पौष मासमें अंशु तथा भग नामक दो आदित्य, कश्यप और क्रतु नामक दो ऋषि, महापद्म और कर्कोटक नामक दो नाग, चित्राङ्गद और अरणायु नामक दो गन्धर्व, सहा तथा सहस्या नामक दो अप्सराएँ, तार्क्ष्य तथा अरिष्टनेमि नामक यक्ष, आप तथा वात नामक दो राक्षस सूर्यरथके साथ चला करते हैं।

माघ-फाल्गुनमें क्रमशः पूषा तथा जिष्णु नामक दो आदित्य, जमदग्नि और विश्वामित्र नामक दो ऋषि, काद्रवेय और कम्बलाश्वतर ये दो नाग, धृतराष्ट्र तथा सूर्यवर्चा नामक दो गन्धर्व, तिलोत्तमा और रम्भा ये दो अप्सराएँ तथा सेनजित् और सत्यजित् नामक दो यक्ष, ब्रह्मोपेत तथा यज्ञोपेत नामक दो राक्षस सूर्यरथके साथ चला करते हैं*।

ब्रह्माजीने कहा—रुद्रदेव! सभी देवताओंने अपने अंशरूपसे विविध अस्त्र-शस्त्रोंको भगवान् सूर्यकी रक्षाके लिये उन्हें दिया है। इस प्रकार सभी देवता उनके रथके साथ-साथ भ्रमण करते रहते हैं। ऐसा कोई भी देवता नहीं है जो रथके पीछे न चले। इस सर्वदेवमय सूर्यनारायणके मण्डलको ब्रह्मवेत्ता ब्रह्मस्वरूप, याज्ञिक यज्ञस्वरूप, भगवद्भक्त विष्णुस्वरूप तथा शैव शिवस्वरूप मानते हैं। ये स्थानाभिमानी देवगण अपने तेजसे भगवान् सूर्यको आप्यायित करते रहते हैं। देवता और ऋषि निरन्तर भगवान् सूर्यकी स्तुति करते रहते हैं, गन्धर्वगण गान करते रहते हैं तथा अप्सराएँ रथके आगे नृत्य करती हुई चलती रहती हैं। राक्षस रथके पीछे-पीछे चलते हैं। साठ हजार बालखिल्य ऋषिगण रथको चारों ओरसे घेरकर चलते हैं। दिवस्पति और स्वयम्भू रथके आगे, भर्ग दाहिनी ओर, पद्मज बायीं ओर, कुबेर दक्षिण दिशामें, वरुण उत्तर दिशामें, वीतिहोत्र

* ये नाम विष्णु आदि अन्य पुराणोंमें कुछ भेदसे मिलते हैं।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

और हरि रथके पीछे रहते हैं। रथके पीठमें पृथ्वी, मध्यमें आकाश, रथकी कान्तिमें स्वर्ग, ध्वजामें दण्ड, ध्वजाग्रमें धर्म, पताकामें ऋद्धि-वृद्धि और श्री निवास करती हैं। ध्वजदण्डके ऊपरी भागमें गरुड तथा उसके ऊपर वरुण स्थित हैं। मैनाक पर्वत छत्रका दण्ड, हिमाचल छत्र होकर सूर्यके साथ रहते हैं। इन देवताओंका बल, तप, तेज, योग और तत्त्व जैसा है वैसे ही सूर्यदेव तपते हैं। ये ही देवगण तपते हैं, बरसते हैं, सृष्टिका पालन-पोषण करते हैं, जीवोंके अशुभ-कर्मको निवृत्त करते हैं, प्रजाओंको आनन्द देते हैं और सभी प्राणियोंकी रक्षाके लिये भगवान् सूर्यके साथ भ्रमण करते रहते हैं। अपनी किरणोंसे चन्द्रमाकी वृद्धि कर सूर्यभगवान् देवताओंका पोषण करते हैं। शुक्ल पक्षमें सूर्यकिरणोंसे चन्द्रमाकी क्रमशः वृद्धि होती है और कृष्ण पक्षमें देवगण उसका पान करते हैं। अपनी किरणोंसे पृथ्वीका रस-पान कर सूर्यनारायण वृष्टि करते हैं। इस वृष्टिसे सभी ओषधियाँ उत्पन्न होती हैं तथा अनेक प्रकारके अन्न भी उत्पन्न होते हैं, जिससे पितरों और मनुष्योंकी तृप्ति होती है।

एक चक्रवाले रथमें भगवान् सूर्यनारायण बैठकर एक अहोरात्रमें सातों द्वीप और समुद्रोंसे युक्त पृथ्वीके चारों ओर भ्रमण करते हैं। एक वर्षमें ३६० बार भ्रमण करते हैं। इन्द्रकी पुरी अमरावतीमें जब मध्याह्न होता है, तब उस समय यमकी संयमनी पुरीमें सूर्योदय, वरुणकी सुखा नामकी नगरीमें अर्धरात्रि और सोमकी विभा नामकी नगरीमें सूर्यास्त होता है। संयमनीमें जब मध्याह्न होता है, तब सुखामें उदय, अमरावतीमें अर्धरात्रि तथा विभामें सूर्यास्त होता है। सुखामें जब मध्याह्न होता है, उस समय विभामें उदय, अमरावतीमें आधी रात और संयमनीमें सूर्यास्त होता है। विभा नगरीमें जब मध्याह्न होता है, तब अमरावतीमें सूर्योदय, संयमनीमें आधी रात और सुखा नामकी वरुणकी नगरीमें सूर्यास्त होता है। इस प्रकार मेरु पर्वतकी प्रदक्षिणा करते हुए भगवान् सूर्यका उदय और अस्त होता है। प्रभातसे मध्याह्नतक सूर्य-किरणोंकी वृद्धि और मध्याह्नसे अस्ततक ह्रास होता है। जहाँ सूर्योदय होता है वह पूर्व दिशा और जहाँ अस्त होता है वह पश्चिम दिशा है। एक मुहूर्तमें भूमिका तीसवाँ भाग सूर्य लाँघ जाते हैं। सूर्यभगवान्के उदय होते ही प्रतिदिन इन्द्र पूजा करते हैं, मध्याह्नमें यमराज, अस्तके समय वरुण और अर्धरात्रिमें सोम पूजन करते हैं।

विष्णु, शिव, रुद्र, ब्रह्मा, अग्नि, वायु, निर्ऋति, ईशान आदि सभी देवगण रात्रिकी समाप्तिपर ब्राह्मवेलामें कल्याणके लिये सदा भगवान् सूर्यकी आराधना करते रहते हैं। (अध्याय ५२-५३)

भगवान् सूर्यकी महिमा, विभिन्न ऋतुओंमें उनके अलग-अलग वर्ण तथा उनके फल

भगवान् रुद्रने कहा—ब्रह्मन्! आपने भगवान् सूर्यनारायणके माहात्म्यका वर्णन किया, जिसके सुननेसे हमें बहुत आनन्द मिला, कृपाकर आप उनके माहात्म्यका और वर्णन करें।

ब्रह्माजी बोले—हे रुद्र! इस सचराचर त्रैलोक्यके मूल भगवान् सूर्यनारायण ही हैं। देवता, असुर, मानव आदि सभी इन्हींसे उत्पन्न हैं। इन्द्र, चन्द्र, रुद्र, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव आदि जितने भी देवता हैं, सबमें इन्हींका तेज व्याप्त है। अग्निमें विधिपूर्वक दी हुई आहुति सूर्यभगवान्को ही प्राप्त होती है। भगवान् सूर्यसे ही वृष्टि होती है, वृष्टिसे अन्नादि उत्पन्न होते हैं और यही अन्न प्राणियोंका

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

जीवन है। इन्हींसे जगत्की उत्पत्ति होती है और अन्तमें इन्हींमें सारी सृष्टि विलीन हो जाती है। ध्यान करनेवाले इन्हींका ध्यान करते हैं तथा ये मोक्षकी इच्छा रखनेवालोंके लिये मोक्षस्वरूप हैं। यदि सूर्यभगवान् न हों तो क्षण, मुहूर्त, दिन, रात्रि, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, वर्ष तथा युग आदि काल-विभाग हो ही नहीं और काल-विभाग न होनेसे जगत्का कोई व्यवहार भी नहीं चल सकता। ऋतुओंका विभाग न हो तो फिर फल-फूल, खेती, ओषधियाँ आदि कैसे उत्पन्न हो सकती हैं? और इनकी उत्पत्तिके बिना प्राणियोंका जीवन भी कैसे रह सकता है? इससे यह स्पष्ट है कि इस (चराचरात्मक) विश्वके मूलभूत कारण भगवान् सूर्यनारायण ही हैं। सूर्यभगवान् वसन्त-ऋतुमें कपिलवर्ण, ग्रीष्ममें तप्त सुवर्णके समान, वर्षामें श्वेत, शरद्-ऋतुमें पाण्डुवर्ण, हेमन्तमें ताम्रवर्ण और शिशिर-ऋतुमें रक्तवर्णके होते हैं। इन वर्णोंका अलग-अलग फल है। रुद्र! उसे आप सुनें।

यदि सूर्यभगवान् (असमयमें) कृष्णवर्णके हों तो संसारमें भय होता है, ताम्रवर्णके हों तो सेनापतिका नाश होता है, पीतवर्णके हों तो राजकुमारकी मृत्यु, श्वेतवर्णके हों तो राजपुरोहितका ध्वंस और चित्र अथवा धूम्रवर्णके होनेसे चोर और शस्त्रका भय होता है, परंतु ऐसा वर्ण होनेके अनन्तर यदि वृष्टि हो जाती है तो अनिष्ट फल नहीं होते*।

(अध्याय ५४)

भगवान् सूर्यका अभिषेक एवं उनकी रथयात्रा

रुद्रने पूछा—ब्रह्मन्! भगवान् सूर्यकी रथयात्रा कब और किस विधिसे की जाती है? रथयात्रा करनेवाले, रथको खींचनेवाले, रथको वहन करनेवाले, रथके साथ जानेवाले और रथके आगे नृत्य-गान करनेवाले एवं रात्रि-जागरण करनेवाले पुरुषोंको क्या फल प्राप्त होता है? इसे आप लोककल्याणके लिये विस्तारपूर्वक बताइये।

ब्रह्माजी बोले—हे रुद्र! आपने बहुत उत्तम प्रश्न किया है। अब मैं इसका वर्णन करता हूँ, आप इसे एकाग्र-मनसे सुनें।

भगवान् सूर्यकी रथयात्रा और इन्द्रोत्सव—ये दोनों जगत्के कल्याणके लिये मैंने प्रवर्तित किये हैं। जिस देशमें ये दोनों महोत्सव आयोजित किये जाते हैं, वहाँ दुर्भिक्ष आदि उपद्रव नहीं होते और न चोरी आदिका कोई भय ही रहता है। इसलिये दुर्भिक्ष, अकाल आदि उपद्रवोंकी शान्तिके लिये इन उत्सवोंको मनाना चाहिये। मार्गशीर्षके शुक्ल पक्षकी सप्तमीको घृतके द्वारा भगवान् सूर्यको श्रद्धापूर्वक स्नान कराना चाहिये। ऐसा करनेवाला पुरुष सोनेके विमानमें बैठकर अग्निलोकको जाता है और वहाँ दिव्य भोग प्राप्त करता है। जो व्यक्ति शर्कराके साथ शालि-चावलका भात, मिष्टान्न और चित्रवर्णके भातको भगवान् सूर्यको अर्पित करता है, वह ब्रह्मलोकको प्राप्त होता है। जो प्रतिदिन भगवान् सूर्यको भक्तिपूर्वक घृतका उबटन लगाता है, वह परम गतिको प्राप्त करता है।

पौष शुक्ल सप्तमीको तीर्थोंके जल अथवा पवित्र जलसे वेदमन्त्रोंके द्वारा भगवान् सूर्यको स्नान कराना चाहिये। सूर्यभगवान्के अभिषेकके समय प्रयाग, पुष्कर, कुरुक्षेत्र, नैमिष, पृथूदक (पेहवा), शोण, गोकर्ण, ब्रह्मावर्त, कुशावर्त, बिल्वक, नीलपर्वत, गङ्गाद्वार, गङ्गासागर, कालप्रिय,

* इस विषयका बृहद् वर्णन 'बृहत्संहिता' की भट्टोत्पली टीका आदिमें है। विशेष जानकारीके लिये उन्हें देखा जा सकता है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

मित्रवन, भाण्डीरवन, चक्रतीर्थ, रामतीर्थ, गङ्गा, यमुना, सरस्वती, सिन्धु, चन्द्रभागा, नर्मदा, विपाशा (व्यासनदी), तापी, शिवा, वेत्रवती (वेतवा), गोदावरी, पयोष्णी (मन्दाकिनी), कृष्णा, वेण्या, शतद्रु (सतलज), पुष्करिणी, कौशिकी (कोसी) तथा सरयू आदि सभी तीर्थों, नदियों और समुद्रोंका स्मरण करना चाहिये*। दिव्य आश्रमों और देवस्थानोंका भी स्मरण करना चाहिये। इस प्रकार स्नान कराकर तीन दिन, सात दिन, एक पक्ष अथवा मासभर उस अभिषेकके स्थानमें ही भगवान्‌का अधिवास करे और प्रतिदिन भक्तिपूर्वक उनकी पूजा करता रहे।

माघ मासके कृष्ण पक्षकी सप्तमीको मङ्गल कलशों तथा वितान आदिसे सुशोभित चौकोर एवं पक्के ईंटोंसे बनी वेदीपर सूर्यनारायणको भलीभाँति स्थापित कर हवन, ब्राह्मण-भोजन, वेद-पाठ और विभिन्न प्रकारके नृत्य, गीत, वाद्य आदि उत्सवोंको करना चाहिये। अनन्तर माघ शुक्ला चतुर्थीको अयाचित व्रत करे, पञ्चमीको एक बार भोजन करे, षष्ठीको रात्रिके समय ही भोजन करे और सप्तमीको उपवास कर हवन, ब्राह्मण-भोजन आदि सम्पन्न करे। सबको दक्षिणा देकर पौराणिककी भलीभाँति पूजा करे। तदनन्तर रत्नजटित सुवर्णके रथमें भगवान् सूर्यको विराजित करे। उस रथको उस दिन मन्दिरके आगे ही खड़ा करे। रात्रिमें जागरण करे और नृत्य-गीत चलता रहे। माघ शुक्ला अष्टमीको रथयात्रा करनी चाहिये। रथके आगे विविध बाजे बजते रहें, नृत्य-गीत और मङ्गल वेदध्वनि होती रहे। रथयात्रा प्रथम नगरके उत्तर दिशासे प्रारम्भ करनी चाहिये, पुनः क्रमशः पूर्व, दक्षिण और पश्चिम दिशाओंमें भ्रमण कराना चाहिये। इस प्रकार रथयात्रा करनेसे राज्यके सभी उपद्रव शान्त हो जाते हैं। राजाको युद्धमें विजय मिलती है तथा उस राज्यमें सभी प्रजाएँ और पशुगण नीरोग एवं सुखी हो जाते हैं। रथयात्रा करनेवाले, रथको वहन करनेवाले और रथके साथ जानेवाले सूर्यलोकमें निवास करते हैं।

रुद्रने कहा—हे ब्रह्मन्! मन्दिरमें प्रतिष्ठित प्रतिमाको किस प्रकार उठाना चाहिये और किस प्रकार रथमें विराजमान करना चाहिये। इस विषयमें मुझे कुछ संदेह हो रहा है, क्योंकि वह प्रतिमा तो स्थिर अर्थात् अचल प्रतिष्ठित है। अतः उसे कैसे चलाया जा सकता है? कृपाकर आप मेरे इस संशयको दूर करें।

ब्रह्माजी बोले—संवत्सरके अवयवोंके रूपमें जिस रथका पूर्वमें मैंने वर्णन किया है, वह रथ सभी रथोंमें पहला रथ है, उसको देखकर ही विश्वकर्माने सभी देवताओंके लिये अलग-अलग विविध प्रकारके रथ बनाये हैं। उस प्रथम रथकी पूजाके लिये भगवान् सूर्यने अपने पुत्र मनुको वह रथ प्रदान किया। मनुने राजा इक्ष्वाकुको दिया और तबसे यह रथयात्रा पूजित हो गयी और परम्परासे चली आ रही है। इसलिये सूर्यकी रथयात्राका उत्सव मनाना चाहिये। भगवान् सूर्य तो सदा आकाशमें

* यजेद्धि तीर्थनामानि मनसा संस्मरन् बुधः। प्रयागं पुष्करं देवं कुरुक्षेत्रं च नैमिषम्॥
पृथूदकं चन्द्रभागां शोणं गोकर्णमेव च। ब्रह्मावर्तं कुशावर्तं बिल्वकं नीलपर्वतम्॥
गङ्गाद्वारं तथा पुण्यं गङ्गासागरमेव च। कालप्रियं मित्रवनं शुण्डीरस्वामिनं तथा॥
चक्रतीर्थं तथा पुण्यं रामतीर्थं तथा शिवम्। वितस्ता हर्षपन्था वै तथा वै देविका स्मृता॥
गङ्गा सरस्वती सिन्धुश्चन्द्रभागा सनर्मदा। विपाशा यमुना तापी शिवा वेत्रवती तथा॥
गोदावरी पयोष्णी च कृष्णा वेण्या तथा नदी। शतरुद्रा पुष्करिणी कौशिकी सरयूस्तस्था॥
तथान्ये सागराश्चैव सांनिध्यं कल्पयन्तु वै। तथाश्रमाः पुण्यतमा दिव्यान्यायतनानि च॥ (ब्राह्मपर्व ५५। २४—३०)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भ्रमण करते रहते हैं, इसलिये उनकी प्रतिमाको चलानेमें कोई भी दोष नहीं है। भगवान् सूर्यके भ्रमण करते हुए उनका रथ एवं मण्डल दिखायी नहीं पड़ता, इसलिये मनुष्योंने रथयात्राके द्वारा ही उनके रथ एवं मण्डलका दर्शन किया है। ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि देवोंकी प्रतिमाके स्थापित हो जानेके बाद उनको उठाना नहीं चाहिये, किंतु सूर्यनारायणकी रथयात्रा प्रजाओंकी शान्तिके लिये प्रतिवर्ष करनी चाहिये। सोने-चाँदी अथवा उत्तम काष्ठका अतिशय रमणीय और बहुत सुदृढ़ रथका निर्माण करना चाहिये। उसके बीचमें भगवान् सूर्यकी प्रतिमाको स्थापित कर उत्तम लक्षणोंसे युक्त अतिशय सुशील हरितवर्णके घोड़ोंको रथमें नियोजित करना चाहिये। उन घोड़ोंको केसरसे रँगकर अनेक आभूषणों, पुष्पमालाओं और चँवर आदिसे अलंकृत करना चाहिये। रथके लिये अर्घ्य प्रदान करना चाहिये। इस प्रकार रथको तैयार कर सभी देवताओंकी पूजा कर ब्राह्मण-भोजन कराना चाहिये। दक्षिणा देकर दीन, अंधे, उपेक्षितों तथा अनाथोंको भोजन आदिसे संतुष्ट करना चाहिये। उत्तम, मध्यम अथवा अधम किसी भी व्यक्तिको विमुख नहीं होने देना चाहिये। रथयात्रास्वरूप इस सूर्यमहायागमें भूखसे पीड़ित, बिना भोजन किये यदि कोई व्यक्ति भग्न आशावाला होकर लौट जाता है तो इस दुष्कृत्यसे उसके स्वर्गस्थ पितरोंका अधःपतन हो जाता है*। अतः सूर्यभगवान्‌के इस यज्ञमें भोजन और दक्षिणासे सबको संतुष्ट करना चाहिये, क्योंकि बिना दक्षिणाके यज्ञ प्रशस्त नहीं होता तथा निम्नलिखित मन्त्रोंसे देवताओंको उनका प्रिय पदार्थ समर्पित करना चाहिये—

बलिं गृह्णन्तु मे देवा आदित्या वसवस्तथा॥
मरुतोऽथाश्विनौ रुद्राः सुपर्णाः पन्नगा ग्रहाः।
असुरा यातुधानाश्च रथस्था यास्तु देवताः॥
दिक्पाला लोकपालाश्च ये च विघ्नविनायकाः।
जगतः स्वस्ति कुर्वन्तु ये च दिव्या महर्षयः॥
मा विघ्नं मा च मे पापं मा च मे परिपन्थिनः।
सौम्या भवन्तु तृप्ताश्च देवा भूतगणास्तथा॥

(ब्राह्मपर्व ५५। ६८–७१)

इन मन्त्रोंसे बलि देकर '**वामदेव्य०**', '**पवित्र०**', '**मानस्तोक०**' तथा '**रथन्तर०**' इन ऋचाओंका पाठ करे। अनन्तर पुण्याहवाचन और अनेक प्रकारके मङ्गल वाद्योंकी ध्वनि कर सुन्दर एवं समतल मार्गपर रथको चलाये, जिससे कहींपर धक्का न लगे। घोड़ेके अभावमें अच्छे बैलोंको रथमें लगाना चाहिये या पुरुषगण ही रथको खींचें। तीस या सोलह ब्राह्मण जो शुद्ध आचरणवाले हों तथा व्रती हों, वे प्रतिमाको मन्दिरसे उठाकर बड़ी सावधानीसे रथमें स्थापित करें। सूर्य-प्रतिमाके दोनों ओर सूर्यदेवकी राज्ञी (संज्ञा) एवं निक्षुभा (छाया) नामक दोनों पत्नियोंको स्थापित करे। निक्षुभाको दाहिनी ओर तथा राज्ञीको बायीं ओर स्थापित करना चाहिये। सदाचारी वेदपाठी दो ब्राह्मण प्रतिमाओंके पीछेकी ओर बैठें और उन्हें सँभालकर स्थिर रखें। सारथि भी कुशल रहना चाहिये। सुवर्णदण्डसे अलंकृत छत्र रथके ऊपर लगाये, अतिशय सुन्दर रत्नोंसे जटित सुवर्णदण्डसे युक्त ध्वजा रथपर चढ़ाये, जिसमें अनेक रंगोंकी सात पताकाएँ लगी हों। रथके आगेके भागमें सारथिके रूपमें ब्राह्मणको बैठना चाहिये। श्रद्धारहित व्यक्तिको रथके ऊपर नहीं चढ़ना चाहिये, क्योंकि जो श्रद्धारहित व्यक्ति रथपर आरूढ होता है, उसकी संतति नष्ट हो जाती है। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यको ही रथके वहन करनेका अधिकार है। अपने स्थानसे चलकर सर्वप्रथम रथको उत्तरद्वारपर

* सूर्यक्रतौ तु वितते एवमाहुर्मनीषिणः॥
यश्चिन्तयति भग्नाशः क्षुधावातप्रपीडितः। अदातुर्हि पितॄंस्तेन स्वर्गस्थानपि पातयेत्॥ (ब्राह्मपर्व ५५। ६५-६६)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

ले जाना चाहिये। वहाँ एक दिनतक रथकी पूजा करे, विविध नृत्य-गीतादि-उत्सव, वेदपाठ तथा पुराणोंकी कथा होनी चाहिये। वहाँ ब्राह्मण-भोजन भी कराना चाहिये। नवमीके दिन रथ चलाकर पूर्वद्वारपर ले जाय, एक दिन वहाँ रहे। तीसरे दिन दक्षिणद्वारपर रथ ले जाय तथा चौथे दिन पश्चिमद्वारपर रथ ले जाय। वहाँसे नगरके मध्यमें रथ ले जाय, वहाँ पूजन और उत्सव करे, दीपमालिका प्रज्वलित करे, ब्राह्मणोंको दान दे और भोजन कराये। अनन्तर वहाँसे मन्दिरमें रथको लाना चाहिये। वहाँ नगरके सभी लोग मिलकर पूजन और उत्सव करें। एक दिन-रात रथमें ही प्रतिमा रहे। दूसरे दिन भगवान् सूर्यकी प्रतिमाको रथसे उतारकर बड़ी धूमधामसे मन्दिरमें स्थापित करे। इस प्रकार सप्तमीसे त्रयोदशीतक रथयात्रा होनी चाहिये और चतुर्दशीको प्रतिमा पूर्व स्थानमें स्थापित कर दे। इस रथयात्राके करनेसे सभी विघ्न-बाधाएँ निवृत्त हो जाती हैं। (अध्याय ५५)

रथयात्रामें विघ्न होनेपर एवं गोचरमें दुष्ट ग्रहोंके आ जानेपर शान्तिका विधान और तिलकी महिमा

भगवान् रुद्रने पूछा—ब्रह्मन्! आप पुनः रथयात्राका वर्णन करें।

ब्रह्माजीने कहा—रुद्र! रथको धीरे-धीरे सममार्गपर चलाया जाय, जिससे रथको धक्का आदि न लगने पाये। मार्गकी शुद्धिके लिये प्रथम प्रतीहार और दण्डनायक उस मार्गमें जायँ। पिंगल, रक्षक, द्वारक, दिण्डी तथा लेखक—ये भी रथके साथ-साथ चलें। इतनी सतर्कता और कुशलतासे रथको ले जाया जाय कि रथका कोई अङ्ग-भङ्ग न हो। रथका ईषादण्ड टूटनेपर ब्राह्मणोंको, अक्ष टूटनेपर क्षत्रियोंको, तुला टूटनेपर वैश्योंको, शय्याके टूटनेपर शूद्रोंको भय होता है। युगके भङ्गसे अनावृष्टि, पीठके भङ्गसे प्रजाको भय, रथका चक्र टूटनेसे शत्रुसेनाका आगमन, ध्वजाके गिरनेसे राज-भङ्ग तथा प्रतिमा खण्डित होनेसे राजाकी मृत्यु होती है। छत्रके टूटनेपर युवराजकी मृत्यु होती है। इनमेंसे किसी भी प्रकारका उत्पात होनेपर उसकी शान्ति अवश्य करानी चाहिये तथा ब्राह्मणको भोजन और दान देना चाहिये एवं विधिपूर्वक ग्रह-शान्ति करानी चाहिये। रथके ईशानकोणमें वेदी अथवा कुण्ड बनाकर घृत और समिधाओंसे देवता तथा ग्रहोंकी प्रसन्नताके लिये हवन करना चाहिये और इन नाम-मन्त्रोंसे आहुति देनी चाहिये—'**ॐ अग्नये स्वाहा, ॐ सोमाय स्वाहा, ॐ प्रजापतये स्वाहा।**'—इत्यादि। अनन्तर शान्ति एवं कल्याणके लिये इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिये—

स्वस्त्यस्त्विह च विप्रेभ्यः स्वस्ति राज्ञे तथैव च।
गोभ्यः स्वस्ति प्रजाभ्यश्च जगतः शान्तिरस्तु वै॥
शं नोऽस्तु द्विपदे नित्यं शान्तिरस्तु चतुष्पदे।
शं प्रजाभ्यस्तथैवास्तु शं सदात्मनि चास्तु वै॥
भूः शान्तिरस्तु देवेश भुवः शान्तिस्तथैव च।
स्वश्चैवास्तु तथा शान्तिः सर्वत्रास्तु तथा रवेः॥
त्वं देव जगतः स्रष्टा पोष्टा चैव त्वमेव हि।
प्रजापाल ग्रहेशान शान्तिं कुरु दिवस्पते॥

(ब्राह्मपर्व ५६। १६—१९)

अपनी जन्मराशिसे दुष्ट स्थानमें स्थित ग्रहोंकी प्रसन्नता तथा शान्तिके लिये ग्रह-समिधाओंसे हवन करना चाहिये। ये समिधाएँ प्रादेशमात्र लम्बी होनी चाहिये। सूर्यके लिये अर्ककी, चन्द्रमाके लिये पलाशकी, मङ्गलके लिये खदिरकी, बुधके लिये अपामार्गकी, बृहस्पतिके लिये पीपलकी, शुक्रके

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

लिये गूलरकी, शनिके लिये शमीकी, राहुके लिये दूर्वाकी और केतुके लिये कुशाकी समिधा ही हवनके लिये प्रयोग करना चाहिये। उत्तम गौ, शङ्ख, लाल बैल, सुवर्ण, वस्त्र युगल, श्वेत अश्व, काली गौ, लौहपात्र और छाग—ये क्रमशः नौ ग्रहोंकी दक्षिणा हैं। गुड़ और भात, घी-मिश्रित खीर, हविष्यान्न, क्षीरान्न, दही-भात, घृत, तिल और उड़दके बने पक्वान्न, गूदोंवाला फल, चित्रवर्णका भात एवं काँजी—ये क्रमशः नवग्रहोंके भोजन हैं। जैसे शरीरमें कवच पहन लेनेसे बाण नहीं लगते, वैसे ही ग्रहोंकी शान्ति करनेसे किसी प्रकारका उपघात नहीं होता। अहिंसक, जितेन्द्रिय, नियममें स्थित और न्यायसे धनार्जन करनेवाले पुरुषोंपर ग्रहोंका सदा अनुग्रह रहता है। यश, धन, संतानकी प्राप्तिके लिये, अनावृष्टि होनेपर, आरोग्य-प्राप्तिके लिये तथा सभी उपद्रवोंकी शान्तिके लिये ग्रहोंकी सदा पूजा करनी चाहिये। संतानसे रहित, दुष्ट संतानवाली, मृतवत्सा, मात्र कन्या संतानवाली स्त्री संतानदोषकी निवृत्तिके लिये, जिसका राज्य नष्ट हो गया हो वह राज्यके लिये, रोगी पुरुष रोगकी शान्तिके लिये अवश्य ग्रहोंकी शान्ति करे, ऐसा मनीषियोंने कहा है[१]। ग्रहोंकी प्रतिमा ताम्र, स्फटिक, रक्तचन्दन, सुवर्ण, चाँदी, लोहे और शीशे आदिकी बनवाकर अथवा इनके चित्रका निर्माण करा कर जिस ग्रहका जो वर्ण हो उसी रंगके वस्त्र एवं पुष्प उन्हें समर्पित करे। गुग्गुलका धूप सभीको अर्पित करना चाहिये।

'**आ कृष्णेन०**' (यजु० ३३। ४३), '**इमं देवा०**' (यजु० ९। ४०) इत्यादि नवग्रहोंके अलग-अलग मन्त्रोंसे एक-एक ग्रहके नामसे समिधा, घृत, शहद और दहीकी एक सौ आठ अथवा अट्ठाईस आहुतियाँ दे तथा ब्राह्मणोंको भोजन कराये। उन्हें यथाशक्ति दक्षिणा दे। जो ग्रह जिसके गोचर अथवा कुण्डलीमें दुष्ट स्थानपर स्थित हो, उसे उस ग्रहकी यत्नपूर्वक पूजा करनी चाहिये। महादेव! मैंने इन ग्रहोंको ऐसा वर दिया है कि लोगोंद्वारा तुम सब पूजित होओगे। राजाओंका उत्थान और पतन तथा मनुष्योंका उदय और सम्पत्तियोंका नाश ग्रहोंके अधीन है, इसलिये ग्रहशान्ति अवश्य करनी चाहिये। ग्रह, गाय, राजा, गुरुजन तथा ब्राह्मण पूजन करनेवाले व्यक्तिको सब प्रकारका सुख प्रदान करते हैं। इनका अपमान करनेसे मनुष्यको अनेक प्रकारके दुःख मिलते हैं। यज्ञ करनेवाले, सत्यवादी, जप, होम, उपवास आदिमें तत्पर धर्मात्मा पुरुषोंकी सभी बाधाएँ शान्त हो जाती हैं[२]।

इस प्रकारसे शान्ति कर रथको पुनः चलाना चाहिये और शेष मार्गोंमें घुमाकर अपने स्थानमें पहुँच जानेपर रथ-स्थित देवताओंकी पूजा करनी चाहिये। उत्पात होनेपर ग्रहोंकी शान्तिके समान ही रथमें स्थित सभी देवताओंकी भी पूजा करनी चाहिये, ऐसा करनेसे सभी तरहके उत्पातोंकी सब प्रकारसे शान्ति हो जाती है।

दुष्ट ग्रहोंकी शान्तिके लिये ब्राह्मणोंको तिल प्रदान करे अथवा घीके साथ तिलोंका हवन करे

१- यथा बाणप्रहाराणां वारणं कवचं स्मृतम्। तथा दैवोपघातानां शान्तिर्भवति वारणम्॥
अहिंसकस्य दान्तस्य धर्मार्जितधनस्य च। नित्यं च नियमस्थस्य सदा सानुग्रहा ग्रहाः॥
ग्रहाः पूज्या सदा रुद्र इच्छता विपुलं यशः। श्रीकामः शान्तिकामो वा ग्रहयज्ञं समाचरेत्॥
वृष्ट्यायुः पुष्टिकामो वा तथैवाभिचरन् पुनः। यानपत्या भवेन्नारी दुष्प्रजाश्चापि या भवेत्॥
बाला यस्याः प्रम्रियन्ते या च कन्याप्रजा भवेत्। राज्यभ्रष्टो नृपो यस्तु दीर्घरोगी च यो भवेत्॥
ग्रहयज्ञः स्मृतस्तेषां मानवानां मनीषिभिः। (ब्राह्मपर्व ५६। ३०—३५)

२- ग्रहा गावो नरेन्द्राश्च गुरवो ब्राह्मणास्तथा। पूजिताः पूजयन्त्येते निर्दहन्त्यपमानिताः॥
यज्वनां सत्यवाक्यानां तथा नित्योपवासिनाम्। जपहोमपराणां च सर्वं दुष्टं प्रशाम्यति॥ (ब्राह्मपर्व ५६। ४७, ४९)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

और देवताओंको धूप दे। तिल देवताओंके लिये स्वाहारूप अमृत, पितरोंके लिये स्वधारूप अमृत तथा ब्राह्मणोंके लिये आश्रयस्वरूप कहे गये हैं। ये तिल कश्यपके अङ्गसे उत्पन्न हुए हैं तथा देवता एवं पितरोंको अति प्रिय हैं। स्नान, दान, हवन, तर्पण और भोजनमें परम पवित्र माने गये हैं*।

इस प्रकार ग्रह और देवताओंका पूजन कर भगवान् सूर्यकी प्रतिमाको रथसे उतारकर मण्डलमें स्थापित करे, फिर विघ्न-बाधाओंकी शान्तिके लिये दीप, जल, जौ, अक्षत, कपासके बीज, नमक तथा धानकी भूसीसे आरती कर पत्नियोंसहित सूर्यनारायणको वेदीके ऊपर स्थापित करे। वहाँ दस दिनतक उनकी विधिपूर्वक पूजा करे। दस दिनतक होनेवाली यह पूजा दशाहिका पूजा कहलाती है। इस प्रकार पूजनकर फिर भगवान् सूर्यनारायणको पूर्व स्थानपर स्थापित करना चाहिये। (अध्याय ५६-५७)

सूर्यनारायणकी रथयात्राका फल

ब्रह्माजीने कहा—हे महादेव! इस प्रकार अमित ओजस्वी भगवान् भास्करकी रथयात्रा करनेवाला और दूसरेसे करानेवाला व्यक्ति परार्ध वर्षों (ब्रह्माजीकी आधी आयु)-तक सूर्यलोकमें निवास करता है। उस व्यक्तिके कुलमें न कोई दरिद्र होता है न कोई रोगी। सूर्यभगवान्के अभ्यङ्गके लिये घी समर्पण करनेवाले तथा अनेक प्रकारका तिलक करनेवाले व्यक्तिको सूर्यलोक प्राप्त होता है। गङ्गा आदि तीर्थोंसे जल लाकर जो सूर्यनारायणको स्नान कराता है, वह वरुणलोकमें निवास करता है। लाल रंगका भात और गुड़का नैवेद्य समर्पित करनेवाला व्यक्ति प्रजापतिलोकको प्राप्त करता है। भक्तिपूर्वक सूर्यनारायणको स्नान कराकर पूजन करनेवाला व्यक्ति सूर्यलोकमें निवास करता है। जो व्यक्ति सूर्यदेवको रथपर चढ़ाता है, रथके मार्गको पवित्र करता और पुष्प, तोरण, पताका आदिसे अलंकृत करता है, वह वायुलोकमें निवास करता है। जो व्यक्ति नृत्य-गीत आदिके द्वारा बृहद् उत्सव मनाता है, वह सूर्यलोकको प्राप्त करता है। जब सूर्यदेव रथपर विराजमान होते हैं, उस दिन जागरण करनेवाला पुण्यवान् व्यक्ति निरन्तर आनन्द प्राप्त करता है। जो व्यक्ति भगवान् सूर्यकी सेवा आदिके लिये व्यक्तिको नियोजित करता है, वह सभी कामनाओंको प्राप्तकर सूर्यलोकमें निवास करता है। रथारूढ भगवान् सूर्यका दर्शन करना बड़े ही सौभाग्यकी बात है। जब रथकी यात्रा उत्तर अथवा दक्षिण दिशाकी ओर होती है, उस समय दर्शन करनेवाला व्यक्ति धन्य है। जिस दिन रथयात्रा हो, उसके सालभर बाद उसी दिन पुनः रथयात्रा करनी चाहिये। यदि वर्षके बाद यात्रा न करा सके तो बारहवें वर्ष अतिशय उत्साहके साथ उत्सव सम्पन्न कर यात्रा सम्पन्न करानी चाहिये। बीचमें यात्रा नहीं करनी चाहिये।

इसी प्रकार इन्द्रध्वजके उत्सवमें भी यदि विघ्न हो जाय तो बारहवें वर्षमें ही उसे सम्पन्न करना चाहिये। जो व्यक्ति रथयात्राकी व्यवस्था करता है, वह इन्द्रादि लोकपालके सायुज्यको प्राप्त करता है। यात्रामें विघ्न करनेवाले व्यक्ति मंदेह जातिके राक्षस होते हैं। सूर्यनारायणकी पूजा किये बिना जो अन्य देवताओंकी पूजा करता है, वह पूजा निष्फल है।

* देवानाममृतं ह्येते पितॄणां हि स्वधामृतम्। शरणं ब्राह्मणानां च सदा ह्येतान् विदुर्बुधाः॥
कश्यपस्याङ्गजा ह्येते पवित्राश्च तथा हर। स्नाने दाने तथा होमे तर्पणे ह्यशने पराः॥ (ब्राह्मपर्व ५७। २५-२६)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

रथयात्राके समय जो सूर्यनारायणका दर्शन करता है, वह निष्पाप हो जाता है। षष्ठी, सप्तमी, पूर्णिमा, अमावास्या और रविवारके दिन दर्शन करनेसे बहुत पुण्य होता है। आषाढ़, कार्तिक और माघकी पूर्णिमाको दर्शन करनेसे अनन्त पुण्य होता है। इन तीन मासोंमें भी रथयात्रा करनी चाहिये। इनमें भी कार्तिकी (कार्तिक-पूर्णिमा)- को विशेष फलदायक होनेसे महाकार्तिकी कहा गया है। इन समयोंमें उपवासकर जो भक्तिपूर्वक भगवान् सूर्यकी पूजा करता है, वह सद्गतिको प्राप्त करता है। संसारपर अनुग्रह करनेके लिये प्रतिमामें स्थित होकर सूर्यदेव स्वयं पूजन ग्रहण करते हैं। जो व्यक्ति मुण्डन कराकर स्नान, जप, होम, दान आदि करता है, वह दीक्षित होता है। सूर्य-भक्तको अवश्य ही मुण्डन कराना चाहिये। जो व्यक्ति इस प्रकार दीक्षित होकर सूर्यनारायणकी आराधना करता है, वह परम गतिको प्राप्त करता है। महादेवजी! इस रथयात्राके विधानका मैंने वर्णन किया। इसे जो पढ़ता है, सुनता है, वह सभी प्रकारके रोगोंसे मुक्त हो जाता है और विधिपूर्वक रथयात्राका सम्पादन करनेवाला व्यक्ति सूर्यलोकको जाता है। (अध्याय ५८)

रथसप्तमी तथा भगवान् सूर्यकी महिमाका वर्णन

ब्रह्माजी बोले—हे रुद्र! माघ मासके शुक्ल पक्षकी षष्ठी तिथिको उपवास करके गन्धादि उपचारोंसे भगवान् सूर्यनारायणकी पूजाकर रात्रिमें उनके सम्मुख शयन करे। सप्तमीमें प्रातःकाल विधिपूर्वक पूजा करे और उदारतापूर्वक ब्राह्मणोंको भोजन कराये। इस प्रकार एक वर्षतक सप्तमीको व्रतकर रथयात्रा करे। कृष्णपक्षमें तृतीया तिथिको एकभुक्त, चतुर्थीको नक्तव्रत, पञ्चमीको अयाचितव्रत*, षष्ठीको पूर्ण उपवास तथा सप्तमीको पारण करे। रथस्थ भगवान् सूर्यकी भलीभाँति पूजाकर सुवर्ण तथा रत्नादिसे अलंकृत तथा तोरण, पताकादिसे सुसज्जित रथमें सूर्यनारायणकी प्रतिमा स्थापित कर ब्राह्मणकी पूजा करके उसका दान कर दे। स्वर्णके अभावमें चाँदी, ताम्र, आटे आदिका रथ बनाकर आचार्यको दान करे। महादेव! यह माघसप्तमी बहुत उत्तम तिथि है, पापोंका हरण करनेवाली इस रथसप्तमीको भगवान् सूर्यके निमित्त किया गया स्नान, दान, होम, पूजा आदि सत्कर्म हजार गुना फलदायक हो जाता है। जो कोई भी इस व्रतको करता है, वह अपने अभीष्ट मनोरथको प्राप्त करता है। इस सप्तमीके माहात्म्यका भक्तिपूर्वक श्रवण करनेवाला व्यक्ति ब्रह्महत्याके पापसे मुक्ति पा जाता है।

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! इस प्रकार रथयात्राका विधान बताकर ब्रह्माजी अपने लोकको चले गये और रुद्रदेवता भी अपने धाम चले गये। अब आप और क्या सुनना चाहते हैं, यह बतायें।

राजा शतानीकने कहा—हे महाराज! सूर्यदेवके प्रभावका मैं कहाँतक वर्णन करूँ। उन्हींके अनुग्रहसे युधिष्ठिर आदि मेरे पितामहोंको सभी प्रकारका दिव्य भोजन प्रदान करनेवाला अक्षय पात्र मिला था, जिससे वनमें भी वे ब्राह्मणोंको संतुष्ट करते थे। जिन भगवान् सूर्यकी देवता, ऋषि, सिद्ध तथा मनुष्य आदि निरन्तर आराधना करते रहते हैं, उन भगवान् भास्करके माहात्म्यको मैंने अनेक बार सुना है, पर उनका माहात्म्य सुनते-सुनते मुझे तृप्ति नहीं होती। जिनसे सम्पूर्ण विश्व उत्पन्न हुआ है तथा जिनके उदय होनेसे ही सारा संसार चेष्टावान् होता है, जिनके हाथोंसे

* बिना किसीसे माँगे जो भोजन मिल जाय, उसे अयाचितव्रत कहते हैं।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

लोकपूजित ब्रह्मा और विष्णु तथा ललाटसे शंकर उत्पन्न हुए हैं, उनके प्रभावका वर्णन कौन कर सकता है? अब मैं यह सुनना चाहता हूँ कि जिन मन्त्र, स्तोत्र, दान, स्नान, जप, पूजन, होम, व्रत तथा उपवासादि कर्मोंके करनेसे भगवान् सूर्य प्रसन्न होकर सभी कष्टोंको निवृत्त करते हैं और संसार-सागरसे मुक्त करते हैं, आप उन्हीं उत्तम मन्त्र, स्तोत्र, रहस्य, विद्या, पाठ, व्रत आदिको बतायें, जिनसे भगवान् सूर्यका कीर्तन हो और जिह्वा धन्य हो जाय। क्योंकि वही जिह्वा धन्य है जो भगवान् सूर्यका स्तवन करती है। सूर्यकी आराधनाके बिना यह शरीर व्यर्थ है। एक बार भी सूर्यनारायणको प्रणाम करनेसे प्राणीका भवसागरसे उद्धार हो जाता है। रत्नोंका आश्रय मेरुपर्वत, आश्चर्योंका आश्रय आकाश, तीर्थोंका आश्रय गङ्गा और सभी देवताओंके आश्रय भगवान् सूर्य हैं। मुने! इस प्रकार अनन्त गुणोंवाले भगवान् सूर्यके माहात्म्यको मैंने बहुत बार सुना है। देवगण भी भगवान् सूर्यकी ही आराधना करते हैं, यह भी मैंने सुना है। अब मेरा यही दृढ़ संकल्प है कि सम्पूर्ण प्राणियोंके हृदयमें निवास करनेवाले तथा स्मरणमात्रसे समस्त पाप-तापोंको दूर करनेवाले भगवान् सूर्यकी भक्तिपूर्वक उपासना कर मैं भी संसारसे मुक्त हो जाऊँ।

(अध्याय ५९-६०)

भगवान् सूर्यद्वारा योगका वर्णन एवं ब्रह्माजीद्वारा दिण्डीको दिया गया क्रियायोगका उपदेश

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! ऋषियोंको जिस प्रकार ब्रह्माजीने सूर्यनारायणकी आराधनाके विधानका उपदेश दिया था, उसे मैं सुनाता हूँ।

किसी समय ऋषियोंने ब्रह्माजीसे प्रार्थना की कि महाराज! सभी प्रकारकी चित्तवृत्तिके निरोधरूपी योगको आपने कैवल्यपदको देनेवाला कहा है, किंतु यह योग अनेक जन्मोंकी कठिन साधनाके द्वारा प्राप्त हो सकता है। क्योंकि इन्द्रियोंको बलात् आकृष्ट करनेवाले विषय अत्यन्त दुर्जय हैं, मन किसी प्रकारसे स्थिर नहीं होता, राग-द्वेष आदि दोष नहीं छूटते और पुरुष अल्पायु होते हैं, इसलिये योगसिद्धिका प्राप्त होना अतिशय कठिन है। अतः आप ऐसे किसी साधनका उपदेश करें जिससे बिना परिश्रमके ही निस्तार हो सके।

ब्रह्माजीने कहा—मुनीश्वरो! यज्ञ, पूजन, नमस्कार, जप, व्रतोपवास और ब्राह्मण-भोजन आदिसे सूर्यनारायणकी आराधना करना ही इसका मुख्य उपाय है। यह क्रियायोग है। मन, बुद्धि, कर्म, दृष्टि आदिसे सूर्यनारायणकी आराधनामें तत्पर रहे। वे ही परब्रह्म, अक्षर, सर्वव्यापी, सर्वकर्ता, अव्यक्त, अचिन्त्य और मोक्षको देनेवाले हैं। अतः आप उनकी आराधना कर अपने मनोवाञ्छित

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

फलको प्राप्त करें और भवसागरसे मुक्त हो जायँ। ब्रह्माजीसे यह सुनकर मुनिगण सूर्यनारायणकी उपासनारूप क्रियायोगमें तत्पर हो गये। हे राजन्! विषयोंमें डूबे हुए संसारके दुःखी जीवोंको सुख प्रदान करनेवाले सूर्यनारायणके अतिरिक्त और कोई भी नहीं है, इसलिये उठते-बैठते, चलते-सोते, भोजन करते हुए सदा सूर्यनारायणका ही स्मरण करो, भक्तिपूर्वक उनकी आराधनामें प्रवृत्त होओ, जिससे जन्म-मरण, आधि-व्याधिसे युक्त इस संसारसमुद्रसे तुम पार हो जाओगे। जो पुरुष जगत्कर्ता, सदा वरदान देनेवाले, दयालु और ग्रहोंके स्वामी श्रीसूर्यनारायणकी शरणमें जाता है, वह अवश्य ही मुक्ति प्राप्त करता है।

सुमन्तु मुनिने पुनः कहा—राजन्! प्राचीन कालमें दिण्डीको ब्रह्महत्या लग गयी थी। उस ब्रह्महत्याके पापको दूर करनेके लिये उन्होंने बहुत दिनोंतक सूर्यनारायणकी आराधना और स्तुति की। उससे प्रसन्न हो भगवान् सूर्य उनके पास आये। भगवान् सूर्यने कहा—'दिण्डिन्! तुम्हारी भक्तिपूर्वक की गयी स्तुतिसे मैं बहुत प्रसन्न हूँ, अपना अभीष्ट वर माँगो।'

दिण्डीने कहा—महाराज! आपने पधारकर मुझे दर्शन दिया, यह मेरे सौभाग्यकी बात है। यही मेरे लिये सर्वश्रेष्ठ वर है। पुण्यहीनोंके लिये आपका दर्शन सर्वदा दुर्लभ है। आप सबके हृदयमें स्थित हैं, अतः आप सबका अभिप्राय जानते हैं। जिस प्रकार मुझे ब्रह्महत्या लगी है, उसे तो आप जानते ही हैं। भगवन्! आप मुझपर ऐसा अनुग्रह करें कि मैं इस निन्दित ब्रह्महत्यासे तथा अन्य पापोंसे शीघ्र मुक्त हो जाऊँ और मैं सफल-मनोरथ हो जाऊँ। आप संसारसे उद्धारका उपाय बतलायें, जिसके आचरणसे संसारके प्राणी सुखी हों। दिण्डीके इस वचनको सुनकर योगवेत्ता भगवान् सूर्यने उन्हें निर्बीज-योगका उपदेश दिया, जो दुःखके निवारणके लिये औषधरूप है।

दिण्डीने प्रार्थना करते हुए कहा—महाराज! यह निष्कल-योग तो बहुत कठिन है, क्योंकि इन्द्रियोंको जीतना, मनको स्थिर करना, अहं-शरीरादिका अभिमान और ममताका त्याग करना, राग-द्वेषसे बचना—ये सब अतिशय कष्टसाध्य हैं। ये बातें कई जन्मोंके अभ्यास करनेसे प्राप्त होती हैं। अतः आप ऐसा साधन बतलायें, जिससे अनायास बिना विशेष परिश्रमके ही फलकी प्राप्ति हो जाय।

भगवान् सूर्यने कहा—गणनाथ! यदि तुम्हें मुक्तिकी इच्छा है तो समस्त क्लेशोंको नष्ट करनेवाले क्रियायोगको सुनो। अपने मनको मुझमें लगाओ, भक्तिसे मेरा भजन करो, मेरा यजन करो, मेरे परायण हो जाओ, आत्माको मेरेमें लगा दो, मुझे नमस्कार करो, मेरी भक्ति करो, सम्पूर्ण ब्रह्माण्डमें मुझे परिव्याप्त समझो*, ऐसा करनेसे तुम्हारे सम्पूर्ण दोषोंका विनाश हो जायगा और तुम मुझे प्राप्त कर लोगे। भलीभाँति मुझमें आसक्त हो जानेपर राग-लोभादि दोषोंके नाश हो जानेसे कृतकृत्यता हो जाती है। अपने मनको स्थिर करनेके लिये सोना, चाँदी, ताम्र, पाषाण, काष्ठ आदिसे मेरी प्रतिमाका निर्माण कराकर या चित्र ही लिखकर विविध उपचारोंसे भक्तिपूर्वक पूजन करो। सर्वभावसे प्रतिमाका आश्रय ग्रहण करो। चलते-फिरते, भोजन करते, आगे-पीछे, ऊपर-नीचे उसीका ध्यान करो, उसे पवित्र तीर्थोंके जलसे स्नान कराओ। गन्ध, पुष्प, वस्त्र, आभूषण, विविध नैवेद्य और जो पदार्थ स्वयंको प्रिय हों उन्हें अर्पण करो। इन विविध उपचारोंसे मेरी प्रतिमाको संतुष्ट करो।

* मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु। मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः॥ (ब्राह्मपर्व ६२। १९; गीता ९। ३४)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

कभी गानेकी इच्छा हो तो मेरी मूर्तिके आगे मेरा गुणानुवाद गाओ, सुननेकी इच्छा हो तो हमारी कथा सुनो। इस प्रकार मुझमें अपने मनको अर्पण करनेसे तुम्हें परमपदकी प्राप्ति हो जायगी। सभी कर्म मुझमें अर्पण करो, डरनेकी कोई बात नहीं। मुझमें मन लगाओ, जो कुछ करो मेरे लिये करो, ऐसा करनेसे तुम ब्रह्महत्या आदि सभी दोष-पापोंसे रहित होकर मुक्त हो जाओगे, इसलिये तुम इस क्रियायोगका आश्रय ग्रहण करो।

दिण्डी बोले—महाराज! इस अमृतरूप क्रियायोगको आप विस्तारसे कहें, क्योंकि आपके बिना कोई भी इसे बतलानेमें समर्थ नहीं है। यह अत्यन्त गोपनीय और पवित्र है।

भगवान् सूर्यने कहा—तुम चिन्ता मत करो। इस सम्पूर्ण क्रियायोगका ब्रह्माजी तुमको विस्तारपूर्वक उपदेश करेंगे और मेरी कृपासे तुम इसे ग्रहण करोगे। इतना कहकर तीनों लोकोंके दीपस्वरूप भगवान् सूर्य अन्तर्हित हो गये और दिण्डी भी ब्रह्माजीके धामको चले गये। ब्रह्मलोक पहुँचकर दिण्डी सुरज्येष्ठ चतुर्मुख ब्रह्माजीको प्रणाम कर कहने लगे।

दिण्डीने प्रार्थनापूर्वक कहा—ब्रह्मन्! मुझे भगवान् सूर्यदेवने आपके पास भेजा है। आप कृपाकर मुझे क्रियायोगका उपदेश करें, जिसके सहारे मैं शीघ्र ही भगवान् सूर्यको प्रसन्न कर सकूँ।

ब्रह्माजी बोले—गणाधिप! भगवान् सूर्यका दर्शन करते ही तुम्हारी ब्रह्महत्या तो नष्ट हो गयी। तुम भगवान् सूर्यके कृपापात्र हो। यदि सूर्यनारायणकी आराधना करनेकी इच्छा है तो प्रथम दीक्षा ग्रहण करो, क्योंकि दीक्षाके बिना उपासना नहीं होती। अनेक जन्मोंके पुण्यसे भगवान् सूर्यमें भक्ति होती है। जो पुरुष भगवान् सूर्यसे द्वेष रखता है, ब्राह्मण तथा वेदकी निन्दा करता है, उसे अवश्य ही अधम पुरुषसे उत्पन्न समझो। मायाके प्रभावसे ही अधम पुरुषोंकी कुकर्ममें प्रवृत्ति होती है और उनके स्वल्प शेष रहनेपर सूर्यकी आराधनाके लिये दीक्षाकी इच्छा होती है। इस भवसागरमें डूबनेवाले पुरुषोंका हाथ पकड़कर उद्धार करनेवाले एकमात्र भगवान् सूर्य ही हैं। इसलिये तुम दीक्षा ग्रहण कर भगवान् सूर्यमें तन्मय होकर उनकी उपासना करो, इससे शीघ्र ही भगवान् सूर्य तुमपर अनुग्रह करेंगे।

दिण्डीने पूछा—महाराज! दीक्षाका अधिकारी कौन पुरुष है और दीक्षा-ग्रहण करनेके बाद क्या करना चाहिये। कृपया आप इसे बतायें।

ब्रह्माजीने कहा—दिण्डिन्! दीक्षा-ग्रहणकी इच्छावाले व्यक्तिको मन, वचन और कर्मसे हिंसा नहीं करनी चाहिये। सूर्यभगवान्में भक्ति करनी चाहिये, दीक्षित ब्राह्मणोंको सदा नमस्कार करना चाहिये, किसीसे द्रोह नहीं करना चाहिये। सभी प्राणियोंको सूर्यके रूपमें समझना चाहिये। देव, मनुष्य, पशु, पक्षी, चींटी, वृक्ष, पाषाण आदि जगत्के सभी पदार्थों और आत्माको सूर्यसे भिन्न न समझकर मन, वचन और कर्मसे जीवोंमें पापबुद्धि नहीं करनी चाहिये—ऐसा ही पुरुष दीक्षाका अधिकारी होता है। जो गति सूर्यनारायणकी आराधनासे प्राप्त होती है, वह न तो तपसे मिलती है और न बहुत दक्षिणावाले यज्ञोंके करनेसे। सभी प्रकारसे जो भगवान् सूर्यका भक्त है, वह धन्य है। उस सूर्यभक्तके अनेक कुलोंका उद्धार हो जाता है। जो अपने हृदयप्रदेशमें भगवान् सूर्यकी अर्चा करता है, वह निष्पाप होकर सूर्यलोकको प्राप्त करता है। सूर्यका मन्दिर बनवानेवाला अपनी सात पीढ़ियोंको सूर्यलोकमें निवास कराता है और जितने वर्षोंतक मन्दिरमें पूजा होती है, उतने हजार वर्षोंतक वह सूर्यलोकमें आनन्दका भोग करता है। निष्कामभावसे सूर्यकी

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

उपासना करनेवाला व्यक्ति मुक्तिको प्राप्त करता है। जो उत्तम लेप, सुन्दर पुष्प, अतिशय सुगन्धित धूप प्रतिदिन सूर्यनारायणको अर्पित करता है, वह यज्ञके फलको प्राप्त करता है। यज्ञमें बहुत सामग्रियोंकी अपेक्षा रहती है, इसलिये मनुष्य यज्ञ नहीं कर सकते, परंतु भक्तिपूर्वक दूर्वासे भी सूर्यनारायणकी पूजा करनेसे यज्ञ करनेसे भी अधिक फलकी प्राप्ति हो जाती है—

बहूपकरणा यज्ञा नानासम्भारविस्तराः॥
न दिण्डिन्नवाप्यन्ते मनुष्यैरल्पसंचयैः।
भक्त्या तु पुरुषैः पूजा कृता दूर्वाङ्कुरैरपि।
भानोर्ददाति हि फलं सर्वयज्ञैः सुदुर्लभम्॥

(ब्राह्मपर्व ६३। ३२-३३)

दिण्डिन्! गन्ध, पुष्प, धूप, वस्त्र, आभूषण तथा विविध प्रकारके नैवेद्य जो भी प्राप्त हों और तुम्हें जो प्रिय हों, उन्हें भक्तिपूर्वक सूर्यनारायणको निवेदित करो। तीर्थके जल, दही, दूध, घृत, शर्करा और शहदसे उन्हें स्नान कराओ। गीत-वाद्य, नृत्य, स्तुति, ब्राह्मण-भोजन, हवन आदिसे भगवान्‌को प्रसन्न करो, किंतु सभी पूजाएँ भक्तिपूर्वक होनी चाहिये। मैंने भगवान् सूर्यकी आराधना करके ही सृष्टि की है। विष्णु उनके अनुग्रहसे ही जगत्‌का पालन करते हैं और रुद्रने उनकी प्रसन्नतासे ही संहारशक्ति प्राप्त की है। ऋषिगण भी उनके ही कृपाप्रसादको प्राप्तकर मन्त्रोंका साक्षात्कार करनेमें समर्थ होते हैं। इसलिये तुम भी पूजन, व्रत, उपवास आदिसे वर्षपर्यन्त भगवान् सूर्यकी आराधना करो, जिससे सभी क्लेश दूर हो जायँगे और तुम शान्ति प्राप्त करोगे[१]।

(अध्याय ६१—६३)

भगवान् सूर्यके व्रतोंके अनुष्ठान तथा उनके मन्दिरोंमें अर्चन-पूजनकी विधि तथा फल-सप्तमी-व्रतका फल

दिण्डीने ब्रह्माजीसे पूछा—ब्रह्मन्! आपने आदित्य-क्रियायोगको मुझे बतलाया, अब आप यह बतलानेकी कृपा करें कि भगवान् सूर्य उपवाससे कैसे प्रसन्न होते हैं? उपवास करनेवालोंके लिये क्या-क्या त्याज्य है? आराधनामें क्या-क्या करना चाहिये, इसका आप विस्तारपूर्वक वर्णन करें।

ब्रह्माजी बोले—दिण्डिन्! भगवान् सूर्य पुष्प आदिद्वारा पूजन करनेसे ही प्रसन्न हो जाते हैं और उत्तम फल देते हैं। पापोंसे रहित होकर सद्‌गुणोंका आश्रय ग्रहण कर, सभी भोगोंका परित्याग करना ही उपवास कहलाता है[२]। अतः ऐसे उपवाससे क्यों नहीं मनोवाञ्छित फल प्राप्त होगा? एक रात, दो रात, तीन रात या नक्त-व्रत करनेवाला निष्काम होकर उपवासकर मन, वचन और कर्मसे सूर्यनारायणकी आराधनामें तत्पर रहे तो ब्रह्मलोकको प्राप्त कर सकता है। यदि साधक किसी कामनासे दत्तचित्त होकर भगवान् सूर्यकी उपासना करता है तो प्रसन्न होकर भगवान् उसकी कामना पूर्ण कर देते हैं। अन्धकारका नाश करनेवाले जगदात्मा सूर्यनारायणकी तन्मयतापूर्वक आराधनाके बिना किसी प्रकार भी सद्‌गति नहीं मिलती। अतः पुष्प, धूप, चन्दन, नैवेद्य आदिसे भक्तिपूर्वक सूर्यकी पूजा और उनकी प्रसन्नताके लिये उपवास करना चाहिये। उत्तम पुष्पके न मिलनेपर वृक्षोंके कोमल पत्ते अथवा दूर्वाङ्कुरसे पूजन करना चाहिये। पुष्प, पत्र, फल, जल जो भी यथाशक्ति मिले, उसे

१-क्रियायोगका वर्णन सभी पुराणोंमें मिलता है, विशेषरूपसे पद्मपुराणका क्रियायोगसार-खण्ड द्रष्टव्य है।
२-उपावृतस्य पापेभ्यो यस्तु वासो गुणैः सह। उपवासः स विज्ञेयः सर्वभोगविवर्जितः॥ (ब्राह्मपर्व ६४। ४)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

ही भक्तिके साथ भगवान् सूर्यको अर्पण करना चाहिये। इससे भगवान् सूर्यको अतुल तुष्टि प्राप्त होती है। सूर्यनारायणके मन्दिरमें सदा झाड़ू देनेपर धूलिमें जितनी कणिकाएँ होती हैं, उतने समयतक सूर्यके समान होकर वह स्वर्गमें रहता है। मन्दिरके छोटे भागका भी मार्जन करनेपर उस दिनके पापसे व्यक्ति मुक्त हो जाता है। जो गोमयसे, मृत्तिका अथवा अन्य धातुओंके चूर्णोंसे मन्दिरमें उपलेपन करता है, वह विमानपर चढ़कर सूर्यलोकमें जाता है। मन्दिरमें जलसे छिड़काव करनेवाला वरुणलोकमें निवास करता है। जो लेपन किये हुए मन्दिरमें पुष्प बिखेरता है, वह कभी दुर्गति नहीं प्राप्त करता। मन्दिरमें दीपक प्रज्वलित करनेवाला व्यक्ति सभी ऋतुओंमें सुखप्रद सवारी प्राप्त करता है। ध्वजा चढ़ानेवालेके ज्ञात और अज्ञात सभी पाप पताकाके वायुसे हिलनेपर नष्ट हो जाते हैं। गीत, वाद्य और नृत्यके द्वारा मन्दिरमें उत्सव करनेवाला उत्तम विमानमें बैठता है, गन्धर्व और अप्सराएँ उसके आगे गान और नृत्य करती हैं। जो मन्दिरमें पुराणका पाठ करता है, उसे श्रेष्ठ बुद्धिकी प्राप्ति होती है और वह जातिस्मर (सभी जन्मोंकी बात जाननेवाला) हो जाता है। दिण्डिन्! सूर्यकी आराधनासे जो चाहो वह प्राप्त कर सकते हो। इनकी आराधनासे कई लोग गन्धर्व, कतिपय विद्याधर, कतिपय देवता बन गये हैं। इन्द्रने इनकी आराधनासे ही इन्द्रपद प्राप्त किया है। ब्रह्मचारी, गृहस्थ और वानप्रस्थ एवं स्त्रियोंके ये ही उपास्य हैं। जितेन्द्रिय संन्यासी भी इनके अनुग्रहसे ही मुक्तिको प्राप्त करते हैं, क्योंकि ये ही मोक्षके द्वार हैं। इस तरह सभी वर्ण और आश्रमोंके आश्रय एवं परमगति भगवान् सूर्य ही हैं।

दिण्डिन्! अब मैं काम्य उपवास और फल-सप्तमीका वर्णन करता हूँ। फल-सप्तमीका व्रत करनेसे सभी पाप नष्ट हो जाते हैं और सूर्यलोककी प्राप्ति होती है। भाद्रपद मासकी शुक्ला चतुर्थीको अयाचित-व्रत कर पञ्चमीको एक बार भोजन करे, षष्ठीको जितक्रोध, जितेन्द्रिय होकर पूर्ण उपवास करे और भक्तिके साथ सभी सामग्रियोंसे सूर्यनारायणकी पूजा करे। रातमें भगवान् सूर्यके सम्मुख पृथ्वीपर शयन करे। सप्तमीको सूर्यभगवान्का ध्यान करते हुए प्रातः उठकर स्नान-पूजन करे और खजूर, नारियल, आम, मातुलुंग आदि नैवेद्योंका भोग लगाये और ब्राह्मणको दे तथा स्वयं भी प्रसादके रूपमें उन्हें ग्रहण करे। यदि ये फल न मिलें तो शालि (चावल)-का या गेहूँका आटा लेकर उसमें गुड़ मिलाये और घीमें पकाकर उनका ही भगवान् सूर्यको भोग लगाये, अनन्तर हवन कर ब्राह्मण-भोजन कराये। इस प्रकार एक वर्षतक सप्तमीका व्रत कर अन्तमें उद्यापन करे। गोमूत्र, गोमय, गोदुग्ध, दही, घी, कुशका जल, श्वेत मृत्तिका, तिल और सरसोंका उबटन, दूर्वा, गौके सींगका जल, चमेलीके फूलके रस—इनसे स्नान करे और इनका ही प्राशन करे। ये सभी पापोंका हरण करनेवाले हैं। सभी प्रकारके फल, सस्यसम्पन्न भूमि, धान्ययुक्त भवन, बछड़ेके साथ गौ, विद्रुमके साथ ताम्रपात्र और श्वेत वस्त्र ब्राह्मणोंको दे। जो शक्ति-सम्पन्न हो वह चाँदी अथवा आटेके पिष्टक, फल तथा दो वस्त्र दे। सोना, रत्न और वस्त्र आचार्यको दे। ब्राह्मणको भोजन कराये। इस प्रकार व्रतको सम्पन्न करे। यह फल-सप्तमीका विधान कहा गया है।

यह अतिशय पुण्यमयी सप्तमी सभी पापोंका नाश करनेवाली है। इस दिन उपवासकर मनुष्य सूर्यलोकको प्राप्त करता है। वहाँ देव, गन्धर्व और अप्सराओंके साथ पूजित होता है। इस व्रतको जो करता है, वह पाप, दरिद्रता और

In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

सभी प्रकारके दुःखोंसे मुक्त हो जाता है। इस व्रतके करनेसे ब्राह्मण मुक्ति, क्षत्रिय इन्द्रलोक, वैश्य कुबेरलोकमें निवास करता है। शूद्र इस व्रतके करनेसे द्विजत्व प्राप्त कर लेता है। पुत्रहीन पुत्र प्राप्त करता है, दुर्भगा सौभाग्यशालिनी होती है और विधवा नारी अगले जन्ममें वैधव्य प्राप्त नहीं करती। इस फल-सप्तमीको समस्त वाञ्छित पदार्थोंको प्रदान करनेवाली चिन्तामणिके समान समझना चाहिये। इस फल-सप्तमीकी कथाके श्रवण अथवा व्रत करनेवालोंकी सभी इच्छाएँ पूर्ण हो जाती हैं।

(अध्याय ६४)

रहस्य-सप्तमी-व्रतके दिन त्याज्य पदार्थका निषेध तथा व्रतका विधान एवं फल

ब्रह्माजीने कहा—दिण्डिन्! अब मैं रहस्य-सप्तमी-व्रतका विधान कह रहा हूँ। इस व्रतके करनेसे अपनेसे आगे आनेवाली सात पीढ़ी तथा पीछेकी भी सात पीढ़ीके कुलोंका उद्धार हो जाता है। जो इस व्रतका नियमसे पालन करता है, उसे धन, पुत्र, आरोग्य, विद्या, विनय, धर्म तथा अप्राप्य वस्तुकी भी प्राप्ति हो जाती है। इस व्रतके नियम इस प्रकार हैं—सबमें मैत्रीभाव रखते हुए भगवान् सूर्यका चिन्तन करता रहे। मनुष्यको व्रतके दिन न तेलका स्पर्श करना चाहिये, न नीला वस्त्र धारण करना चाहिये तथा न आँवलेसे स्नान करना चाहिये। किसीसे कलह तो करे ही नहीं। इस दिन नीला वस्त्र धारण करके जो सत्कर्म करता है, वह निष्फल होता है। जो ब्राह्मण इस व्रतके दिन एक बार नीला वस्त्र धारण कर ले तो उसे उचित है कि स्वयंकी शुद्धिके लिये उपवास करके पञ्चगव्य-प्राशन करे, तभी वह शुद्ध होता है। यदि अज्ञानवश नील-वृक्षकी लकड़ीसे कोई ब्राह्मण दन्तधावन कर लेता है तो वह दो चान्द्रायण-व्रत करनेसे शुद्ध होता है। इस दिन रोमकूपमें नीले रंगके प्रवेश करनेमात्रसे ही तीन कृच्छ्र-चान्द्रायणव्रत करेनेसे शुद्धि होती है। जो व्यक्ति प्रमादवश नील-वृक्षके उद्यानमें चला जाता है वह पञ्चगव्य-प्राशनसे ही शुद्ध होता है। जहाँ नील एक बार बोयी जाती है, वह भूमि बारह वर्षतक अपवित्र रहती है।

रहस्य-सप्तमी-व्रतके दिन जो तेलका स्पर्श करता है, उसकी प्रिय भार्या नष्ट हो जाती है, अतः तैलका स्पर्श नहीं करना चाहिये। इस तिथिको किसीके साथ द्रोह और क्रूरता भी करना उचित नहीं है। इस दिन गीत गाना, नृत्य करना, वीणादि वाद्ययन्त्र बजाना, शव देखना, व्यर्थमें हँसना, स्त्रीके साथ शयन करना, द्यूत-क्रीडा, रोना, दिनमें सोना, असत्य बोलना, दूसरेके अनिष्टका चिन्तन करना, किसी भी जीवको कष्ट देना, अत्यधिक भोजन करना, गली-कूचोंमें घूमना, दम्भ, शोक, शठता तथा क्रूरता—इन सबका प्रयत्नपूर्वक परित्याग कर देना चाहिये।

इस व्रतका आरम्भ चैत्र माससे करना चाहिये। व्रत करनेवाले मनुष्यको चाहिये कि वह चैत्रादि मासोंमें धाता, अर्यमा, मित्र, वरुण, इन्द्र, विवस्वान्, पर्जन्य, पूषा, भग, त्वष्टा, विष्णु तथा भास्कर—इन द्वादश सूर्योंका क्रमशः पूजन करे। प्रत्येक सप्तमीके दिन भोजक ब्राह्मणको घीके साथ भोजन कराकर उसे घृतसहित पात्र, एक माशा सुवर्ण और दक्षिणा देनी चाहिये। यदि भोजक न मिल सके तो श्रेष्ठ ब्राह्मणको ही भोजककी भाँति भोजन कराकर वही वस्तुएँ दानमें देनी चाहिये।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

हे दिण्डिन्! इस प्रकार मैंने सप्तमीके इस माहात्म्यका वर्णन किया, जिसके श्रवणमात्रसे भी सभी पाप नष्ट हो जाते हैं और सूर्यलोककी प्राप्ति होती है।

सुमन्तु बोले—राजन्! इतना कहकर ब्रह्माजी अन्तर्धान हो गये और दिण्डी भी उनके द्वारा बताये गये इस व्रतके अनुसार सूर्यनारायणका पूजन करके अपने मनोवाञ्छित फलको प्राप्त करनेमें सफल हुए और भगवान् सूर्यके अनुचर हो गये। (अध्याय ६५)

शंख एवं द्विज, वसिष्ठ एवं साम्ब तथा याज्ञवल्क्य और ब्रह्माके संवादमें आदित्यकी आराधनाका माहात्म्य-कथन, भगवान् सूर्यकी ब्रह्मरूपता

राजा शतानीकने कहा—मुने! आप भगवान् सूर्यनारायणके प्रभावका और भी वर्णन करें। आपकी अमृतमयी वाणी सुन-सुनकर मुझे तृप्ति नहीं हो रही है।

सुमन्तुजीने कहा—राजन्! इस विषयमें शंख और द्विजका जो संवाद हुआ है, उसे आप सुनें, जिसे सुनकर मानव सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त हो जाता है।

एक अत्यन्त रमणीय आश्रम था, जिसमें सभी वृक्ष फलोंके भारसे झुक रहे थे। कहीं मृग अपनी सींगोंसे परस्पर एक-दूसरेके शरीरमें खुजला रहे थे, किसी दिशामें मयूरोंका नृत्य और भ्रमरोंकी मधुर ध्वनिका गुंजार हो रहा था। ऐसे मनोहारी आश्रममें अनेक तपस्वियोंसे सेवित भगवान् सूर्यके अनन्य भक्त शंख नामके एक मुनि रहते थे। एक बार भोजक-कुमारोंने मुनिके समीप जाकर विनयपूर्वक अभिवादन कर निवेदन किया—महाराज! वेदोंके विषयमें हमें संदेह है। आप उसका निवारण करें। उन विनयी भोजकोंकी इस प्रार्थनाको सुनकर प्रसन्न हुए शंखमुनि उन सभीको वेदाध्ययन कराने लगे। एक दिन वे सभी कुमार वेदका अध्ययन कर रहे थे, उसी समय परम तपस्वी द्विज नामके एक श्रेष्ठ मुनि वहाँ आये। अमित तेजस्वी उन शंखमुनिने उनकी विधिवत् अर्चना की और उन्हें आसनपर बैठाया। उन कुमारोंने भी उनकी वन्दना की, जिससे द्विज बहुत प्रसन्न हुए।

शंख मुनिने उन भोजक-कुमारोंसे कहा—शिष्ट पुरुषके आगमनसे अनध्याय होता है। अतः तुम सब इस समय अपना अध्ययन समाप्त करो। यह सुनते ही कुमारोंने अपने-अपने ग्रन्थ बंद कर दिये।

द्विजने शंख मुनिसे पूछा—ये बालक कौन हैं और क्या पढ़ते हैं?

शंख मुनिने कहा—महाराज! ये भोजक-कुमार हैं। सूत्र और कल्पके साथ चारों वेद, सूर्यनारायणके पूजन और हवनका विधान, प्रतिष्ठाविधि, रथयात्राकी रीति तथा सप्तमी तिथिके कल्पका ये अध्ययन कर रहे हैं।

द्विजने पुनः पूछा—मुने! सप्तमी-व्रतका क्या विधान है और भगवान् सूर्यके अर्चनकी क्या विधि है? सूर्य-मन्दिरमें गन्ध, पुष्प, दीप आदि देनेसे क्या फल प्राप्त होता है? किस व्रत, नियम और दानसे भगवान् सूर्य प्रसन्न होते हैं? उन्हें कौन-से पुष्प-धूप तथा उपहार दिये जाते हैं? यह सब मैं सुनना चाहता हूँ, इसे आप बतायें। सूर्यनारायणके माहात्म्यकी भी विशेषरूपसे चर्चा करें।

शंख मुनिने कहा—इस प्रसंगमें मैं महाराज

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

साम्ब और महर्षि वसिष्ठके संवादका वर्णन कर रहा हूँ।

एक बार साम्ब महर्षि वसिष्ठके पवित्र आश्रमपर गये। वहाँ जाकर उन्होंने नियतात्मा वसिष्ठके चरणोंमें प्रणाम किया और वे हाथ जोड़कर विनीत भावसे खड़े हो गये। महर्षि वसिष्ठने भी उनके भक्तिभावको देखकर प्रसन्नमनसे उनसे पूछा।

वसिष्ठ बोले—साम्ब! तुम्हारा तो सम्पूर्ण शरीर भयंकर कुष्ठ-रोगसे विदीर्ण हो गया था, यह सर्वथा रोगमुक्त कैसे हुआ और तुम्हारे शरीरकी दिव्य कान्ति एवं शोभा कैसे बढ़ गयी? यह सब मुझे बताओ।

साम्बने कहा—महाराज! मैंने भगवान् सूर्यनारायणकी आराधना उनके सहस्रनामोंद्वारा की है। उसी आराधनाके प्रभावसे उन्होंने प्रसन्न होकर मुझे साक्षात् दर्शन दिया है और उनसे मुझे वरकी भी प्राप्ति हुई है।

वसिष्ठने पुनः पूछा—तुमने किस विधिसे सूर्यकी आराधना की है? तुम्हें किस व्रत, तप अथवा दानसे उनका साक्षात् दर्शन हुआ? यह सब विस्तारसे बतलाओ।

साम्बने कहा—महाराज! जिस विधिसे मैंने भगवान् सूर्यको प्रसन्न किया है, वह समस्त वृत्तान्त आप ध्यानपूर्वक सुनें।

आजसे बहुत पहले मैंने अज्ञानवश दुर्वासा-मुनिका उपहास किया था। इसलिये क्रोधमें आकर उन्होंने मुझे कुष्ठरोगसे ग्रस्त होनेका शाप दे दिया, जिससे मैं कुष्ठरोगी हो गया। तब अत्यन्त दुःखी एवं लज्जित होते हुए मैंने अपने पिता भगवान् श्रीकृष्णके पास जाकर निवेदन किया—'तात! मैं दुर्वासा मुनिके शापसे कुष्ठरोगसे ग्रस्त होकर अत्यधिक पीड़ित हो रहा हूँ, मेरा शरीर गलता जा रहा है। कण्ठका स्वर भी बैठता जा रहा है। पीड़ासे प्राण निकल रहे हैं। वैद्यों आदिके द्वारा उपचार करानेपर भी मुझे शान्ति नहीं मिलती। अब आपकी आज्ञा प्राप्त कर मैं प्राण त्यागना चाहता हूँ। अतः आप मुझे यह आज्ञा देनेकी कृपा करें, जिससे मैं इस कष्टसे मुक्त हो सकूँ।' मेरा यह दीन वचन सुनकर उन्हें बड़ा दुःख हुआ और उन्होंने क्षणभर विचार कर मुझसे कहा—'पुत्र! धैर्य धारण करो, चिन्ता मत करो, क्योंकि जैसे सूखे तिनकेको आग जलाकर भस्म कर देती है, वैसे ही चिन्ता करनेसे रोग और अधिक कष्ट देता है। भक्तिपूर्वक तुम देवाराधन करो। उससे सभी रोग नष्ट हो जायँगे।' पिताके ऐसे वचन सुनकर मैंने पूछा—'तात! ऐसा कौन देवता है, जिसकी आराधना करनेसे इस भयंकर रोगसे मैं मुक्ति पा सकूँ?'

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—पुत्र! एक समयकी बात है, योगिश्रेष्ठ याज्ञवल्क्य मुनिने ब्रह्मलोकमें जाकर पद्मयोनि ब्रह्माजीको प्रणाम किया और उनसे पूछा कि महाराज! मोक्ष प्राप्त करनेके इच्छुक प्राणीको किस देवताकी आराधना करनी चाहिये? अक्षय स्वर्गकी प्राप्ति किस देवताकी उपासना करनेसे होती है? यह चराचर विश्व किससे उत्पन्न हुआ है और किसमें लीन होता है? इन सबका आप वर्णन करें।

ब्रह्माजी बोले—महर्षे! आपने बहुत अच्छा प्रश्न पूछा है। यह सुनकर मैं बहुत प्रसन्न हूँ। मैं आपके प्रश्नोंका उत्तर दे रहा हूँ, इसे ध्यानपूर्वक सुनें—जो देवश्रेष्ठ अपने उदयके साथ ही समस्त जगत्का अन्धकार नष्ट कर तीनों लोकोंको प्रतिभासित कर देते हैं, वे अजर-अमर, अव्यय, शाश्वत, अक्षय, शुभ-अशुभके जाननेवाले, कर्मसाक्षी, सर्वदेवता और जगत्के स्वामी हैं। उनका मण्डल कभी क्षय नहीं होता। वे पितरोंके पिता, देवताओंके भी देवता, जगत्के आधार, सृष्टि, स्थिति तथा

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

संहारकर्ता हैं। योगी पुरुष वायुरूप होकर जिनमें लीन हो जाते हैं, जिनकी सहस्र रश्मियोंमें मुनि, सिद्धगण और देवता निवास करते हैं, जनक, व्यास, शुकदेव, बालखिल्य, आदि ऋषिगण, पञ्चशिख आदि योगिगण जिनके प्रभामण्डलमें प्रविष्ट हुए हैं, ऐसे वे प्रत्यक्ष देवता सूर्यनारायण ही हैं। ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव आदिका नाम तो मात्र सुननेमें ही आता है, पर सभीको वे दृष्टिगोचर नहीं होते, किंतु तिमिरनाशक सूर्यनारायण सभीको प्रत्यक्ष दिखायी देते हैं। इसलिये ये सभी देवताओंमें श्रेष्ठतम हैं। अतः याज्ञवल्क्य! आपको भी सूर्यनारायणके अतिरिक्त अन्य किसी देवताकी उपासना नहीं करनी चाहिये। इन प्रत्यक्ष देवताकी आराधना करनेसे सभी फल प्राप्त हो सकते हैं।

याज्ञवल्क्य मुनिने कहा—महाराज! आपने मुझे बहुत ही उत्तम उपदेश दिया है, जो बिलकुल सत्य है, मैंने पहले भी बहुत बार सूर्यनारायणके माहात्म्यको सुना है। जिनके दक्षिण अङ्गसे विष्णु, वाम अङ्गसे स्वयं आप और ललाटसे रुद्र उत्पन्न हुए हैं, उनकी तुलना और कौन देवता कर सकते हैं? उनके गुणोंका वर्णन भला किन शब्दोंमें किया जा सकता है? अब मैं उनकी उस आराधना-विधिको सुनना चाहता हूँ, जिसके द्वारा मैं संसार-सागरको पार कर जाऊँ। वे कौन-से व्रत-उपवास-दान, होम-जप आदि हैं, जिनके करनेसे सूर्यनारायण प्रसन्न होकर समस्त कष्टोंको दूर कर देते हैं? यह सब आप बतलानेकी कृपा करें; क्योंकि प्राणियोंद्वारा धर्म, अर्थ तथा कामकी प्राप्तिके लिये जो चेष्टाएँ की जाती हैं, उनमें वही चेष्टा सफल है जो भगवान् सूर्यका आश्रय ग्रहण कर अनुष्ठित हो; अन्यथा वे सभी क्रियाएँ व्यर्थ हैं। इस अपार घोर संसार-सागरमें निमग्न प्राणियोंद्वारा एक बार भी किया गया सूर्यनमस्कार मुक्तिको प्राप्त करा देता है*। भक्तिभावसे परिपूर्ण याज्ञवल्क्यके इन वचनोंको सुनकर ब्रह्माजी प्रसन्न हो उठे और कहने लगे कि याज्ञवल्क्य! आपने सूर्यनारायणकी आराधनाका जो उपाय पूछा है, उसका मैं वर्णन कर रहा हूँ, एकाग्रचित्त होकर आप सुनें।

ब्रह्माजी बोले—आदि और अन्तसे रहित, सर्वव्याप्त, परब्रह्म अपनी लीलासे प्रकृति-पुरुष-रूप धारण करके संसारको उत्पन्न करनेवाले, अक्षर, सृष्टि-रचनाके समय ब्रह्मा, पालनके समय विष्णु और संहारकालमें रुद्रका रूप धारण करनेवाले सर्वदेवमय, पूज्य भगवान् सूर्यनारायण ही हैं। अब मैं भेदाभेदस्वरूप उन भगवान् सूर्यको प्रणाम करके उनकी आराधनाका वर्णन करूँगा, यह अत्यन्त गुप्त है, जिसे प्रसन्न होकर भगवान् भास्करने मुझसे कहा था।

ब्रह्माजी पुनः बोले—याज्ञवल्क्य! एक बार मैंने भगवान् सूर्यनारायणकी स्तुति की। उस स्तुतिसे प्रसन्न होकर वे प्रत्यक्ष प्रकट हुए, तब मैंने उनसे पूछा कि महाराज! वेद-वेदाङ्गोंमें और पुराणोंमें आपका ही प्रतिपादन हुआ है। आप शाश्वत, अज तथा परब्रह्मस्वरूप हैं। यह जगत् आपमें ही स्थित है। गृहस्थाश्रम जिनका मूल है, ऐसे वे चारों आश्रमोंवाले रात-दिन आपकी अनेक मूर्तियोंका पूजन करते हैं। आप ही सबके माता-पिता और पूज्य हैं। आप किस देवताका ध्यान एवं पूजन करते हैं? मैं इसे नहीं समझ पा रहा हूँ, इसे मैं सुनना चाहता हूँ, मेरे मनमें बड़ा कौतूहल है।

भगवान् सूर्यने कहा—ब्रह्मन्! यह अत्यन्त गुप्त बात है, किंतु आप मेरे परम भक्त हैं, इसलिये मैं इसका यथावत् वर्णन कर रहा हूँ—वे परमात्मा सभी प्राणियोंमें व्याप्त, अचल, नित्य,

* दुर्गसंसारकान्तारमपारमभिधावताम्। एकः सूर्यनमस्कारो मुक्तिमार्गस्य देशकः॥ (ब्राह्मपर्व ६६। ७२)

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth

सूक्ष्म तथा इन्द्रियातीत हैं, उन्हें क्षेत्रज्ञ, पुरुष, हिरण्यगर्भ, महान्, प्रधान तथा बुद्धि आदि अनेक नामोंसे अभिहित किया जाता है। जो तीनों लोकोंके एकमात्र आधार हैं, वे निर्गुण होकर भी अपनी इच्छासे सगुण हो जाते हैं, सबके साक्षी हैं, स्वतः कोई कर्म नहीं करते और न तो कर्मफलकी प्राप्तिसे संलिप्त रहते हैं। वे परमात्मा सब ओर सिर, नेत्र, हाथ, पैर, नासिका, कान तथा मुखवाले हैं, वे समस्त जगत्को आच्छादित करके अवस्थित हैं तथा सभी प्राणियोंमें स्वच्छन्द होकर आनन्दपूर्वक विचरण करते हैं।

शुभाशुभ कर्मरूप बीजवाला शरीर क्षेत्र कहलाता है। इसे जाननेके कारण परमात्मा क्षेत्रज्ञ कहलाते हैं। वे अव्यक्तपुरमें शयन करनेसे पुरुष, बहुत रूप धारण करनेसे विश्वरूप और धारण-पोषण करनेके कारण महापुरुष कहे जाते हैं। ये ही अनेक रूप धारण करते हैं। जिस प्रकार एक ही वायु शरीरमें प्राण-अपान आदि अनेक रूप धारण किये हुए है और जैसे एक ही अग्नि अनेक स्थान-भेदोंके कारण अनेक नामोंसे अभिहित की जाती है, उसी प्रकार परमात्मा भी अनेक भेदोंके कारण बहुत रूप धारण करते हैं। जिस प्रकार एक दीपसे हजारों दीप प्रज्वलित हो जाते हैं, उसी प्रकार एक परमात्मासे सम्पूर्ण जगत् उत्पन्न होता है। जब वह अपनी इच्छासे संसारका संहार करता है, तब फिर एकाकी ही रह जाता है। परमात्माको छोड़कर जगत्में कोई स्थावर या जंगम पदार्थ नित्य नहीं है, क्योंकि वे अक्षय, अप्रमेय और सर्वज्ञ कहे जाते हैं। उनसे बढ़कर कोई अन्य नहीं है, वे ही पिता हैं, वे ही प्रजापति हैं, सभी देवता और असुर आदि उन परमात्मा भास्करदेवकी आराधना करते हैं और वे उन्हें सद्गति प्रदान करते हैं। वे सर्वगत होते हुए भी निर्गुण हैं। उसी आत्मस्वरूप परमेश्वरका मैं ध्यान करता हूँ तथा सूर्यरूप अपने आत्माका ही पूजन करता हूँ। हे याज्ञवल्क्य मुने! भगवान् सूर्यने स्वयं ही ये बातें मुझसे कही थीं।

(अध्याय ६६-६७)

सूर्यनारायणके प्रिय पुष्प, सूर्यमन्दिरमें मार्जन-लेपन आदिका फल, दीपदानका फल तथा सिद्धार्थ-सप्तमी-व्रतका विधान और फल

ब्रह्माजी बोले—याज्ञवल्क्य! एक बार मैंने भगवान् सूर्यनारायणसे उनके प्रिय पुष्पोंके विषयमें जिज्ञासा की। तब उन्होंने कहा था कि मल्लिका (बेला फूलकी एक जाति)-पुष्प मुझे अत्यन्त प्रिय है। जो मुझे इसे अर्पण करता है, वह उत्तम भोगोंको प्राप्त करता है। मुझे श्वेत कमल अर्पण करनेसे सौभाग्य, सुगन्धित कुटज-पुष्पसे अक्षय ऐश्वर्यकी प्राप्ति होती है तथा मन्दार-पुष्पसे सभी प्रकारके कुष्ठ-रोगोंका नाश होता है और बिल्व-पत्रसे पूजन करनेपर विपुल सम्पत्तिकी प्राप्ति होती है। मन्दार-पुष्पकी मालासे सम्पूर्ण कामनाओंकी पूर्ति, वकुल (मौलसिरी)-पुष्पकी मालासे रूपवती कन्याका लाभ, पलाश-पुष्पसे अरिष्ट-शान्ति, अगस्त्य-पुष्पसे पूजन करनेपर (मेरा) सूर्यनारायणका अनुग्रह तथा करवीर (कनैल)-पुष्प समर्पित करनेसे मेरे अनुचर होनेका सौभाग्य प्राप्त होता है। बेलाके पुष्पोंसे (मेरी) सूर्यकी पूजा करनेपर मेरे लोककी प्राप्ति होती है। एक हजार कमल-पुष्प चढ़ानेपर मेरे (सूर्य) लोकमें निवास करनेका फल प्राप्त होता है। वकुल-पुष्प अर्पित करनेसे भानुलोक प्राप्त होता है। कस्तूरी, चन्दन, कुंकुम तथा कपूरके योगसे बनाये गये यक्षकर्दम गन्धका लेपन करनेसे

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सद्गति प्राप्त होती है। सूर्यभगवान्‌के मन्दिरका मार्जन तथा उपलेपन करनेवाला सभी रोगोंसे मुक्त हो जाता है और उसे शीघ्र ही प्रचुर धनकी प्राप्ति होती है। जो भक्तिपूर्वक गेरूसे मन्दिरका लेपन करता है, उसे सम्पत्ति प्राप्त होती है और वह रोगोंसे मुक्ति प्राप्त करता है तथा यदि मृत्तिकासे लेपन करता है तो उसे अठारह प्रकारके कुष्ठरोगोंसे मुक्ति मिल जाती है।

सभी पुष्पोंमें करवीरका पुष्प और समस्त विलेपनोंमें रक्तचन्दनका विलेपन मुझे अधिक प्रिय है। करवीरके पुष्पोंसे जो सूर्यभगवान्‌की (मेरी) पूजा करता है, वह संसारके सभी सुखोंको भोगकर अन्तमें स्वर्गलोकमें निवास करता है।

मन्दिरमें लेपन करनेके पश्चात् मण्डल बनानेपर सूर्यलोककी प्राप्ति होती है। एक मण्डल बनानेसे अर्थकी प्राप्ति, दो मण्डल बनानेसे आरोग्य, तीन मण्डलकी रचना करनेसे अविच्छिन्न संतान, चार मण्डल बनानेसे लक्ष्मी, पाँच मण्डल बनानेसे विपुल धन-धान्य, छः मण्डलोंकी रचना करनेसे आयु, बल और यश तथा सात मण्डलोंकी रचना करनेसे मण्डलका अधिपति होता है तथा आयु, धन, पुत्र और राज्यकी प्राप्ति होती है एवं अन्तमें उसे सूर्यलोक मिलता है।

मन्दिरमें घृतका दीपक प्रज्वलित करनेसे नेत्र-रोग नहीं होता। महुएके तेलका दीपक जलानेसे सौभाग्य प्राप्त होता है, तिलके तेलका दीपक जलानेसे सूर्यलोक तथा कड़ुआ तेलसे दीपक जलानेपर शत्रुओंपर विजय प्राप्त होती है।

सर्वप्रथम गन्ध-पुष्प-धूप-दीप आदि उपचारोंसे सूर्यका पूजन कर नाना प्रकारके नैवेद्य निवेदित करने चाहिये। पुष्पोंमें चमेली और कनेरके पुष्प, धूपोंमें विजय-धूप, गन्धोंमें कुंकुम, लेपोंमें रक्तचन्दन दीपोंमें घृतदीप तथा नैवेद्योंमें मोदक भगवान् सूर्यनारायणको परम प्रिय हैं। अतः इन्हीं वस्तुओंसे उनकी पूजा करनी चाहिये। पूजन करनेके पश्चात् प्रदक्षिणा और नमस्कार करके हाथमें श्वेत सरसोंका एक दाना और जल लेकर सूर्यभगवान्‌के सम्मुख खड़े होकर हृदयमें अभीष्ट कामनाका चिन्तन करते हुए सरसोंसहित जलको पी जाना चाहिये, परंतु दाँतोंसे उसका स्पर्श नहीं हो। इसी प्रकार दूसरी सप्तमीको श्वेत सर्षप (पीली सरसों)-के दो दाने जलके साथ पान करना चाहिये और इसी तरह सातवीं सप्तमीतक एक-एक दाना बढ़ाते हुए इस मन्त्रसे उसे अभिमन्त्रित करके पान करना चाहिये—

सिद्धार्थकस्त्वं हि लोके सर्वत्र श्रूयसे यथा।
तथा मामपि सिद्धार्थमर्थतः कुरुतां रविः॥

(ब्राह्मपर्व ६८। ३६)

तदनन्तर शास्त्रोक्त रीतिसे जप और हवन करना चाहिये। यह भी विधि है कि प्रथम सप्तमीके दिन जलके साथ सिद्धार्थ (सरसों)-का पान करे, दूसरी सप्तमीको घृतके साथ और आगे शहद, दही, दूध, गोमय और पञ्चगव्यके साथ क्रमशः एक-एक सिद्धार्थ बढ़ाते हुए सातवीं सप्तमीतक सिद्धार्थका पान करे। इस प्रकार जो सर्षप-सप्तमीका व्रत करता है, वह बहुत-सा धन, पुत्र और ऐश्वर्य प्राप्त करता है। उसकी सभी मनःकामनाएँ सिद्ध हो जाती हैं और वह सूर्यलोकमें निवास करता है। (अध्याय ६८)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

शुभाशुभ स्वप्न और उनके फल

ब्रह्माजी बोले—याज्ञवल्क्य! जो व्यक्ति सप्तमीमें उपवास करके विधिपूर्वक सूर्यनारायणका पूजन, जप एवं हवन आदि क्रियाएँ सम्पन्नकर रात्रिके समय भगवान् सूर्यका ध्यान करते हुए शयन करता है, तब उसे रात्रिमें जो स्वप्न दिखायी देते हैं, उन स्वप्न-फलोंका मैं अब वर्णन कर रहा हूँ। यदि स्वप्नमें सूर्यका उदय, इन्द्रध्वज और चन्द्रमा दिखायी दे तो सभी समृद्धियाँ प्राप्त होती हैं। माला पहने व्यक्ति, गाय या वंशीकी आवाज, श्वेत कमल, चामर, दर्पण, सोना, तलवार, पुत्रकी प्राप्ति, रुधिरका थोड़ा या अधिक मात्रामें निकलना तथा पान करना ऐसा स्वप्न देखनेसे ऐश्वर्यकी प्राप्ति होती है। घृताक्त प्रजापतिके दर्शनसे पुत्र-प्राप्तिका फल होता है। स्वप्नमें प्रशस्त वृक्षपर चढ़े अथवा अपने मुखमें महिषी, गौ या सिंहनीका दोहन करे तो शीघ्र ही ऐश्वर्य प्राप्त होता है। सोने या चाँदीके पात्रमें अथवा कमल-पत्रमें जो स्वप्नमें खीर खाता है उसे बलकी प्राप्ति होती है। द्यूत, वाद तथा युद्धमें विजयप्राप्तिका जो स्वप्न देखता है, वह सुख प्राप्त करता है। स्वप्नमें जो अग्नि-पान करता है, उसके जठराग्निकी वृद्धि होती है। यदि स्वप्नमें अपने अङ्ग प्रज्वलित होते दिखायी दें और सिरमें पीड़ा हो तो सम्पत्ति मिलती है। श्वेतवर्णके वस्त्र, माला और प्रशस्त पक्षीका दर्शन शुभ होता है। देवता-ब्राह्मण, आचार्य, गुरु, वृद्ध तथा तपस्वी स्वप्नमें जो कुछ कहते हैं, वह सत्य होता है[१]। स्वप्नमें सिरका कटना अथवा फटना, पैरोंमें बेड़ीका पड़ना, राज्य-प्राप्तिका संकेतक है। स्वप्नमें रोनेसे हर्षकी प्राप्ति होती है। घोड़ा, बैल, श्वेत कमल तथा श्रेष्ठ हाथीपर निडर होकर चढ़नेसे महान् ऐश्वर्य प्राप्त होता है। ग्रह और ताराओंका ग्रास देखे, पृथ्वीको उलट दे और पर्वतको उखाड़ फेंके तो राज्यका लाभ होता है। पेटसे आँत निकले और उससे वृक्षको लपेटे, पर्वत-समुद्र तथा नदी पार करे तो अत्यधिक ऐश्वर्यकी प्राप्ति होती है। सुन्दर स्त्रीकी गोदमें बैठे और बहुत-सी स्त्रियाँ आशीर्वाद दें, शरीरको कीड़े भक्षण करें, स्वप्नमें स्वप्नका ज्ञान हो, अभीष्ट बात सुनने और कहनेमें आये तथा मङ्गलदायक पदार्थोंका दर्शन एवं प्राप्ति हो तो धन और आरोग्यका लाभ होता है। जिन स्वप्नोंका फल राज्य और ऐश्वर्यकी प्राप्ति है, यदि उन स्वप्नोंको रोगी देखता है तो वह रोगसे मुक्त हो जाता है। इस प्रकार रात्रिमें स्वप्न देखनेके पश्चात् प्रातःकाल स्नानकर राजा-ब्राह्मण अथवा भोजकको अपना स्वप्न सुनाना चाहिये[२]।

(अध्याय ६९)

१-देवद्विजजनाचार्यगुरुवृद्धतपस्विनः ॥
यद्यद्वदन्ति तत्सर्वं सत्यमेव हि निर्दिशेत्। (ब्राह्मपर्व ६९। १४-१५)

२-भारत तथा विदेशोंमें भी मैटिनी आदिके 'डिक्शेनरी ऑफ ड्रीम्स' आदि अनेक ग्रन्थ हैं। बृहस्पतिप्रोक्त 'स्वप्नाध्याय' ग्रन्थ विशेष प्रसिद्ध है। वाल्मीकीय रामायणमें त्रिजटाके स्वप्नका वर्णन ध्येय है। स्वप्नका योगसे घनिष्ठ सम्बन्ध है। सभीके संयुक्त अध्ययनसे साधकोंको विशेष लाभ हो सकता है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सिद्धार्थ (सर्षप)-सप्तमी-व्रतके उद्यापनकी विधि

ब्रह्माजी बोले—याज्ञवल्क्य! सिद्धार्थ-सप्तमीके व्रतके अनन्तर दूसरे दिन स्नान-पूजन-जप तथा हवन आदि करके भोजक, पुराणवेत्ता और वेद-पारङ्गत ब्राह्मणोंको भोजन कराकर लाल वस्त्र, दूध देनेवाली गाय, उत्तम भोजन तथा जो-जो पदार्थ अपनेको प्रिय हों, वे सब मध्याह्नकालमें भोजकोंको दान देने चाहिये। यदि भोजक न प्राप्त हो सकें तो पौराणिकको और पौराणिक न मिल सकें तो सामवेद जाननेवाले मन्त्रविद् ब्राह्मणको वे सभी वस्तुएँ देनी चाहिये। मुने! यह सिद्धार्थ-सप्तमीके उद्यापनकी संक्षिप्त विधि है।

इस प्रकार भक्तिपूर्वक सात सप्तमीका व्रत करनेसे अनन्त सुखकी प्राप्ति होती है और दस अश्वमेध-यज्ञका फल प्राप्त होता है। इस व्रतसे सभी कार्य सिद्ध हो जाते हैं। गरुड़को देखकर सर्प आदिकी तरह कुष्ठ आदि सभी रोग इसके अनुष्ठानसे दूर भागते हैं। व्रत-नियम तथा तप करके सात सप्तमीको व्रत करनेसे मनुष्य विद्या, धन, पुत्र, भाग्य, आरोग्य और धर्मको तथा अन्त समयमें सूर्यलोकको प्राप्त कर लेता है। इस सप्तमी-व्रतकी विधिका जो श्रवण करता है अथवा उसे पढ़ता है, वह भी सूर्यनारायणमें लीन हो जाता है। देवता और मुनि भी इस व्रतके माहात्म्यको सुनकर सूर्यनारायणके भक्त हो गये हैं। जो पुरुष इस आख्यानका स्वयं श्रवण करता है अथवा दूसरेको सुनाता है तो वे दोनों सूर्यलोकको जाते हैं। रोगी यदि इसका श्रवण करे तो रोगमुक्त हो जाता है। इस व्रतकी जिज्ञासा रखनेवाला भक्त अभिलषित इच्छाओंको प्राप्त करता है और सूर्यलोकको जाता है। यदि इस आख्यानको पढ़कर यात्रा की जाय तो मार्गमें विघ्न नहीं आते और यात्रा सफल होती है। जो कोई भी जिस पदार्थकी कामना करता है, वह उसे निश्चित प्राप्त कर लेता है। गर्भिणी स्त्री इस आख्यानको सुने तो वह सुखपूर्वक पुत्रको जन्म देती है, बन्ध्या सुने तो संतान प्राप्त करती है। याज्ञवल्क्य! यह सब कथा सूर्यनारायणने मुझसे कही थी तथा मैंने आपको सुना दी और अब आप भी भक्तिपूर्वक सूर्यनारायणकी आराधना करें, जिससे सभी पातक नष्ट हो जायँ। उदित होते ही जो अपनी किरणोंसे संसारका अन्धकार दूर कर प्रकाश फैलाते हैं, वे द्वादशात्मा सूर्यनारायण ही जगत्के माता-पिता तथा गुरु हैं, अदिति-पुत्र भगवान् सूर्य आपपर प्रसन्न हों।

(अध्याय ७०)

ब्रह्माद्वारा कहा गया भगवान् सूर्यका नाम-स्तोत्र

ब्रह्माजी बोले—याज्ञवल्क्य! भगवान् सूर्य जिन नामोंके स्तवनसे प्रसन्न होते हैं, मैं उनका वर्णन कर रहा हूँ—

नमः सूर्याय नित्याय रवयेऽर्काय भानवे।
भास्कराय मतङ्गाय मार्तण्डाय विवस्वते॥

नित्य, रवि, अर्क, भानु, भास्कर, मतङ्ग, मार्तण्ड तथा विवस्वान् नामोंसे युक्त भगवान् सूर्यको मेरा नमस्कार है।

आदित्यायादिदेवाय नमस्ते रश्मिमालिने।
दिवाकराय दीप्ताय अग्नये मिहिराय च॥

आदिदेव, रश्मिमाली, दिवाकर, दीप्त, अग्नि तथा मिहिर नामक भगवान् आदित्यको मेरा नमस्कार है।

प्रभाकराय मित्राय नमस्तेऽदितिसम्भव।
नमो गोपतये नित्यं दिशां च पतये नमः॥

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharada Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

हे अदितिके पुत्र भगवान् सूर्य! आप प्रभाकर, मित्र, गोपति (किरणोंके स्वामी) तथा दिक्पति नामवाले हैं, आपको मेरा नित्य नमस्कार है।

नमो धात्रे विधात्रे च अर्यम्णे वरुणाय च।
पूष्णे भगाय मित्राय पर्जन्यायांशवे नमः॥

धाता, विधाता, अर्यमा, वरुण, पूषा, भग, मित्र, पर्जन्य, अंशुमान् नामवाले भगवान् सूर्यको मेरा प्रणाम है।

नमो हितकृते नित्यं धर्माय तपनाय च।
हरये हरिताश्वाय विश्वस्य पतये नमः॥

हितकृत् (संसारका कल्याण करनेवाले), धर्म, तपन, हरि, हरिताश्व (हरे रंगके अश्वोंवाले), विश्वपति भगवान् सूर्यको नित्य मेरा नमस्कार है।

विष्णवे ब्रह्मणे नित्यं त्र्यम्बकाय तथात्मने।
नमस्ते सप्तलोकेश नमस्ते सप्तसप्तये॥

विष्णु, ब्रह्मा, त्र्यम्बक (शिव), आत्मस्वरूप, सप्तसप्ति, हे सप्तलोकेश! आपको मेरा नमस्कार है।

एकस्मै हि नमस्तुभ्यमेकचक्ररथाय च।
ज्योतिषां पतये नित्यं सर्वप्राणभृते नमः॥

अद्वितीय, एकचक्ररथ (जिनके रथमें एक ही चक्र है), ज्योतिष्पति, हे सर्वप्राणभृत्! (सभी प्राणियोंका भरण-पोषण करनेवाले) आपको मेरा नित्य नमस्कार है।

हिताय सर्वभूतानां शिवायार्तिहराय च।
नमः पद्मप्रबोधाय नमो वेदादिमूर्तये॥

समस्त प्राणिजगत्का हित करनेवाले, शिव (कल्याणकारी) और आर्तिहर (दुःखविनाशी), पद्मप्रबोध (कमलोंको विकसित करनेवाले), वेदादिमूर्ति भगवान् सूर्यको नमस्कार है।

काधिजाय नमस्तुभ्यं नमस्तारासुताय च।
भीमजाय नमस्तुभ्यं पावकाय च वै नमः॥

प्रजापतियोंके स्वामी महर्षि कश्यपके पुत्र! आपको नमस्कार है। भीमपुत्र तथा पावक नामवाले तारासुत! आपको नमस्कार है, नमस्कार है।

धिषणाय नमो नित्यं नमः कृष्णाय नित्यदा।
नमोऽस्त्वदितिपुत्राय नमो लक्ष्याय नित्यशः॥

धिषण, कृष्ण, अदितिपुत्र तथा लक्ष्य नामवाले भगवान् सूर्यको बार-बार नमस्कार है।

ब्रह्माजीने कहा—याज्ञवल्क्य! जो मनुष्य सायंकाल और प्रातःकाल इन नामोंका पवित्र होकर पाठ करता है, वह मेरे समान ही मनोवाञ्छित फलोंको प्राप्त करता है। इस नाम-स्तोत्रसे सूर्यकी आराधना करनेपर उनके अनुग्रहसे धर्म, अर्थ, काम, आरोग्य, राज्य तथा विजयकी प्राप्ति होती है। यदि मनुष्य बन्धनमें हो तो इसके पाठसे बन्धनमुक्त हो जाता है। इसके जप करनेसे सभी पापोंसे छुटकारा मिल जाता है। यह जो सूर्यस्तोत्र मैंने कहा है, वह अत्यन्त रहस्यमय है।

(अध्याय ७१)

जम्बूद्वीपमें सूर्यनारायणकी आराधनाके तीन प्रमुख स्थान, दुर्वासा मुनिका साम्बको शाप देना

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! ब्रह्माजीसे इस प्रकार उपदेश प्राप्तकर याज्ञवल्क्य मुनिने सूर्यभगवान्की आराधना की, जिसके प्रभावसे उन्हें सालोक्य-मुक्ति प्राप्त हुई। अतः भगवान् सूर्यकी उपासना करके आप भी उस देवदुर्लभ मोक्षको प्राप्त कर सकेंगे।

राजा शतानीकने पूछा—मुने! जम्बूद्वीपमें भगवान् सूर्यदेवका आदि स्थान कहाँ है? जहाँ विधिपूर्वक आराधना करनेसे शीघ्र ही मनोवाञ्छित फलकी प्राप्ति हो सके।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! इस जम्बूद्वीपमें भगवान् सूर्यनारायणके मुख्य तीन स्थान हैं[१]। प्रथम इन्द्रवन है, दूसरा मुण्डीर तथा तीसरा तीनों लोकोंमें प्रसिद्ध कालप्रिय (कालपी) नामक स्थान है। इस द्वीपमें इन तीनोंके अतिरिक्त एक अन्य स्थान भी ब्रह्माजीने बतलाया है, जो चन्द्रभागा नदीके तटपर अवस्थित है, जिसको साम्बपुर भी कहा जाता है, वहाँ भगवान् सूर्यनारायण साम्बकी भक्तिसे प्रसन्न होकर लोककल्याणके लिये अपने द्वादश रूपोंमेंसे मित्ररूपमें निवास करते हैं। जो भक्तिपूर्वक उनका पूजन करता है, उसको वे स्वीकार करते हैं।

राजा शतानीकने पुनः पूछा—महामुने! साम्ब कौन है? किसका पुत्र है? भगवान् सूर्यने उसके ऊपर अपनी कृपा क्यों की? यह भी आप बतानेकी कृपा करें।

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! संसारमें द्वादश आदित्य प्रसिद्ध हैं, उनमेंसे विष्णु नामके जो आदित्य हैं, वे इस जगत्में वासुदेव श्रीकृष्णरूपमें अवतीर्ण हुए। उनकी जाम्बवती नामकी पत्नीसे महाबलशाली साम्ब नामक पुत्र हुआ। वह शापवश कुष्ठरोगसे ग्रस्त हो गया। उससे मुक्त होनेके लिये उसने भगवान् सूर्यनारायणकी आराधना की और उसीने अपने नामसे साम्बपुर[२] नामक एक नगर बसाया तथा यहींपर भगवान् सूर्यनारायणकी प्रथम प्रतिमा प्रतिष्ठापित की।

राजा शतानीकने पूछा—महाराज! साम्बके द्वारा ऐसा कौन-सा अपराध हुआ था, जिससे उसे इतना कठोर शाप मिला। थोड़ेसे अपराधपर तो शाप नहीं मिलता।

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! इस वृत्तान्तका वर्णन हम संक्षेपमें कर रहे हैं, आप सावधान होकर सुनें। एक समय रुद्रके अवतारभूत दुर्वासा मुनि तीनों लोकोंमें विचरण करते हुए द्वारकापुरीमें आये, परंतु पीले-पीले नेत्रोंसे युक्त कृश-शरीर, अत्यन्त विकृत रूपवाले दुर्वासाको देखकर साम्ब अपने सुन्दर स्वरूपके अहंकारमें आकर उनके देखने, चलने आदि चेष्टाओंकी नकल करने लगे। उनके मुखके समान अपना ही विकृत मुख बनाकर उन्हींकी भाँति चलने लगे। यह देखकर और 'साम्बको रूप तथा यौवनका अत्यन्त अभिमान है' यह समझकर दुर्वासा मुनिको अत्यधिक क्रोध हो आया। वे क्रोधसे काँपते हुए यह कह उठे—'साम्ब! मुझे कुरूप और अपनेको अति रूपसम्पन्न मानकर तूने मेरा परिहास किया है। जा, तू शीघ्र ही कुष्ठरोगसे ग्रस्त हो जायगा।'

ऐसे ही एक बार पुनः परिहास किये जानेके कारण दुर्वासा मुनिको फिर शाप देना पड़ा और उसी शापके फलस्वरूप साम्बसे लोहेका एक मूसल उत्पन्न हुआ, जो समस्त यदुवंशियोंके विनाशका कारण बना।

अतः देवता, गुरु और ब्राह्मण आदिकी अवज्ञा बुद्धिमान् पुरुषको कभी नहीं करनी चाहिये। इन लोगोंके समक्ष सदैव विनम्र ही बना रहना चाहिये और सदा मधुर वाणी ही बोलनी चाहिये। राजन्! ब्रह्माजीने भगवान् शिवके समक्ष जो दो श्लोक पढ़े थे, क्या उनको आपने सुना नहीं है?

यो धर्मशीलो जितमानरोषो विद्याविनीतो न परोपतापी।
स्वदारतुष्टः परदारवर्जितो न तस्य लोके भयमस्ति किंचित्॥

१-इन तीनों स्थानोंकी विशेष जानकारीके लिये 'कल्याण' के ५३ वें वर्षके विशेषाङ्क 'सूर्याङ्क' का 'तीन प्रसिद्ध सूर्य-मन्दिर' नामक अन्तिम लेख देखना चाहिये।

२-यही नगर आगे चलकर 'मूलस्थान' पुनः मुसलिम शासनमें 'मुल्तान' नामसे प्रसिद्ध हुआ, जो आज पाकिस्तानमें लाहौरके पश्चिम भागमें स्थित है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

न तथा शशी न सलिलं न चन्दनं नैव शीतलच्छाया।
प्रह्लादयति पुरुषं यथा हिता मधुरभाषिणी वाणी॥

(ब्राह्मपर्व ७३। ४७-४८)

'जो धर्मात्मा है तथा जिसने सम्मान एवं क्रोधपर विजय प्राप्त कर ली है, विद्यासे युक्त और विनम्र है, दूसरेको संताप नहीं देता, अपनी स्त्रीसे संतुष्ट है तथा परायी स्त्रीका परित्याग करनेवाला है, ऐसे मनुष्यके लिये संसारमें किंचिन्मात्र भी भय नहीं है।'

'पुरुषको चन्द्रमा, जल, चन्दन और शीतल छाया वैसा आनन्दित नहीं कर पाते हैं, जैसा आनन्द उसे हितकारी मधुर वाणी सुननेसे प्राप्त होता है।'

राजन्! इस प्रकार दुर्वासा मुनिके शापसे साम्बको कुष्ठरोग हुआ था। तदनन्तर उसने भगवान् सूर्यनारायणकी आराधना करके पुनः अपने सुन्दर रूप तथा आरोग्यको प्राप्त किया और अपने नामका साम्बपुर नामक एक नगर बसाकर उसमें भगवान् सूर्यको प्रतिष्ठापित किया।

(अध्याय ७२-७३)

सूर्यनारायणकी द्वादश मूर्तियोंका वर्णन

राजा शतानीकने कहा—महामुने! साम्बके द्वारा चन्द्रभागा नदीके तटपर सूर्यनारायणकी जो स्थापना की गयी है, वह स्थान आदिकालसे तो नहीं है, फिर भी आप उस स्थानके माहात्म्यका इतना वर्णन कैसे कर रहे हैं? इसमें मुझे संदेह है।

सुमन्तु मुनि बोले—भारत! वहाँपर सूर्यनारायणका स्थान तो सनातनकालसे है। साम्बने उस स्थानकी प्रतिष्ठा तो बादमें की है। इसका हम संक्षेपमें वर्णन करते हैं। आप प्रेमपूर्वक उसे सुनें—

इस स्थानपर परमब्रह्मस्वरूप जगत्स्वामी भगवान् सूर्यनारायणने अपने मित्ररूपमें तप किया है। वे ही अव्यक्त परमात्मा भगवान् सूर्य सभी देवताओं और प्रजाओंकी सृष्टि करके स्वयं बारह रूप धारण कर अदितिके गर्भसे उत्पन्न हुए। इसीसे उनका नाम आदित्य पड़ा। इन्द्र, धाता, पर्जन्य, पूषा, त्वष्टा, अर्यमा, भग, विवस्वान्, अंशु, विष्णु, वरुण तथा मित्र—ये सूर्यभगवान्की द्वादश मूर्तियाँ हैं। इन सबसे सम्पूर्ण जगत् व्याप्त है। इनमेंसे प्रथम इन्द्र नामक मूर्ति देवराजमें स्थित है, जो सभी दैत्यों और दानवोंका संहार करती है। दूसरी धाता नामक मूर्ति प्रजापतिमें स्थित होकर सृष्टिकी रचना करती है। तीसरी पर्जन्य नामक मूर्ति किरणोंमें स्थित होकर अमृतवर्षा करती है। पूषा नामक चौथी मूर्ति मन्त्रोंमें अवस्थित होकर प्रजापोषणका कार्य करती है। पाँचवीं त्वष्टा नामकी जो मूर्ति है, वह वनस्पतियों और ओषधियोंमें स्थित है। छठी मूर्ति अर्यमा प्रजाकी रक्षा करनेके लिये पुरोंमें स्थित है। सातवीं भग नामक मूर्ति पृथ्वी और पर्वतोंमें विद्यमान है। आठवीं विवस्वान् नामक मूर्ति अग्निमें स्थित है और वह प्राणियोंके भक्षण किये हुए अन्नको पचाती है। नवीं अंशु नामक मूर्ति चन्द्रमामें अवस्थित है, जो जगत्को आप्यायित करती है। दसवीं विष्णु नामक मूर्ति दैत्योंका नाश करनेके लिये सदैव अवतार धारण करती है। ग्यारहवीं वरुण नामकी मूर्ति समस्त जगत्की जीवनदायिनी है और समुद्रमें उसका निवास है। इसीलिये समुद्रको वरुणालय भी कहा जाता है। बारहवीं मित्र नामक मूर्ति जगत्का कल्याण करनेके लिये चन्द्रभागा नदीके तटपर विराजमान है। यहाँ सूर्यनारायणने मात्र वायु-पान करके तप किया है और मित्ररूपसे यहाँपर अवस्थित हैं, इसलिये इस स्थानको मित्रपद (मित्रवन) भी कहते हैं। ये

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

अपनी कृपामयी दृष्टिसे संसारपर अनुग्रह करते हुए भक्तोंको भाँति-भाँतिके वर देकर संतुष्ट करते रहते हैं। यह स्थान पुण्यप्रद है। महाबाहो! यहींपर अमित तेजस्वी साम्बने सूर्यनारायणकी आराधना करके मनोवाञ्छित फल प्राप्त किया है। उनकी प्रसन्नता और आदेशसे साम्बने यहाँ भगवान् सूर्यको प्रतिष्ठापित किया। जो पुरुष भक्तिपूर्वक सूर्यनारायणको प्रणाम करता है और श्रद्धा-भक्तिसे उनकी आराधना करता है, वह सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त होकर सूर्यलोकमें निवास करता है। (अध्याय ७४)

देवर्षि नारदद्वारा सूर्यके विराट्रूप तथा उनके प्रभावका वर्णन

सुमन्तुजी बोले—राजन्! भयंकर कुष्ठरोगका शाप प्राप्तकर दुःखित हो साम्बने अपने पिता भगवान् श्रीकृष्णसे पूछा—तात! मेरा यह कष्ट कैसे दूर होगा? कृपाकर इसका उपाय आप बतायें।

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—वत्स! तुम भगवान् सूर्यकी आराधना करो, उससे तुम्हारा यह कुष्ठरोग दूर हो जायगा। तुम देवर्षि नारदद्वारा सूर्यनारायणके आराधना-विधानकी शिक्षा प्राप्त करो। वे प्रसन्न होकर तुम्हें विस्तारसे उनकी आराधनाका विधान बतलायेंगे।

एक दिन नारदजी द्वारकापुरीमें भगवान् श्रीकृष्णका दर्शन करनेके लिये आये। उसी समय साम्बने अत्यन्त विनम्रभावसे जाकर उन्हें प्रणाम किया और हाथ जोड़कर प्रार्थना की। महामुने! मैं आपकी शरण हूँ, आप मेरे ऊपर कृपाकर कोई ऐसा उपाय बतायें, जिससे मेरा शरीर कुष्ठरोगसे मुक्त हो सके और मेरा कष्ट दूर हो जाय।

नारदजीने कहा—साम्ब! सभी देव जिनकी स्तुति करते हैं, उन्हींका तुम भी पूजन करो। उन्हींकी कृपासे तुम रोगसे मुक्त हो जाओगे।

साम्बने पूछा—महाराज! देवगण किसका पूजन और स्तवन करते हैं? आप ही उसे भी बतायें, जिससे मैं उनकी शरणमें जा सकूँ। यह शापाग्नि मुझे दग्ध कर रही है। ऐसे कौन देवता हैं, जो कृपा करके मुझे इस विपत्तिसे मुक्त करा सकेंगे?

नारदजीने कहा—पुत्र! समस्त देवताओंके पूज्य, नमस्कार करने योग्य और निरन्तर स्तुत्य भगवान् सूर्यनारायण ही हैं। तुम उनके प्रभावको सुनो—

किसी समय समस्त लोकोंमें विचरण करता हुआ मैं सूर्यलोकमें पहुँचा। वहाँ मैंने देखा कि देवता, गन्धर्व, नाग, यक्ष, राक्षस और अप्सराएँ सूर्यनारायणकी सेवामें लगे हुए हैं। गन्धर्व गीत गा रहे हैं और अप्सराएँ नृत्य कर रही हैं। राक्षस-यक्ष तथा नाग शस्त्र धारण करके उनकी रक्षाके लिये खड़े हैं। ऋग्वेद, यजुर्वेद एवं सामवेद मूर्तिमान् स्वरूप धारण कर स्वयं स्तुति कर रहे हैं और ऋषिगण भी वेदोंकी ऋचाओंसे उनका स्तवन कर रहे हैं। मूर्तिरूपमें प्रातः, मध्याह्न और सायंकालकी तीनों सुन्दर रूपवाली संध्याएँ हाथमें वज्र तथा बाण धारण किये हुए सूर्यनारायणके चारों ओर स्थित हैं। प्रातः-संध्या रक्तवर्णकी है, मध्याह्न-संध्या चन्द्रमाके समान श्वेतवर्णकी एवं सायं-संध्या मंगलके समान वर्णवाली है। आदित्य, वसु, रुद्र, मरुत् तथा अश्विनीकुमार आदि सभी देवगण तीनों संध्याओंमें उन भगवान् सूर्यका पूजन करते हैं। इन्द्र सदैव वहाँ खड़े होकर भगवान् सूर्यकी जय-जयकार करते रहते हैं। गरुड़का ज्येष्ठ भ्राता अरुण उनका सारथि है। वह कालके अवयवोंसे निर्मित उनके रथका संचालक है। हरे वर्णके छन्दरूप सात अश्व उनके रथमें जुते हुए हैं। राज्ञी तथा निक्षुभा नामकी दो पत्नियाँ उनके दोनों ओर बैठी

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth

हुई हैं। सभी देवता हाथ जोड़कर चारों ओर खड़े हैं। पिंगल, लेखक, दण्डनायक आदि गण तथा कल्माष नामक दो पक्षी द्वारपालके रूपमें उनकी सेवामें लगे हुए हैं। दिण्डी उनके सामने तथा ब्रह्मा आदि सभी देवता उनकी स्तुति कर रहे हैं।

भगवान् सूर्यनारायणका ऐसा प्रभाव देखकर मैंने सोचा कि यही देव हैं, जो समस्त देवताओंके पूज्य हैं। साम्ब! तुम उन्हींकी शरणमें जाओ।

साम्बने पूछा—महाराज! मैं भलीभाँति यह जानना चाहता हूँ कि सूर्यनारायण सर्वगत कैसे हैं? उनकी कितनी रश्मियाँ हैं? कितनी मूर्तियाँ हैं? राज्ञी तथा निक्षुभा नामकी ये दोनों भार्याएँ कौन हैं? पिंगल, लेखक और दण्डनायक वहाँ क्या कार्य करते हैं? कल्माष पक्षी कौन हैं? उनके आगे स्थित रहनेवाला दिण्डी कौन है? और वे कौन-कौन देवता हैं, जो उनके चतुर्दिक् खड़े रहते हैं? आप इन सबका तत्त्वतः अच्छी तरहसे वर्णन करें, जिससे मैं भी सूर्यनारायणके प्रभावको जानकर उनकी शरणमें जा सकूँ।

नारदजीने कहा—साम्ब! अब मैं सूर्यनारायणके माहात्म्यका वर्णन कर रहा हूँ। तुम उसे प्रेमपूर्वक सुनो—

विवस्वान् देव अव्यक्त कारण, नित्य, सत् एवं असत्-स्वरूप हैं। जो तत्त्वचिन्तक पुरुष हैं, वे उनको प्रधान और प्रकृति कहा करते हैं। वे गन्ध, वर्ण तथा रससे हीन एवं शब्द और स्पर्शसे रहित हैं। वे जगत्की योनि हैं तथा सनातन परब्रह्म हैं। वे सभी प्राणियोंके नियन्ता हैं। वे अनादि, अनन्त, अज, सूक्ष्म, त्रिगुण, निराकार तथा अविज्ञेय हैं, उन्हें परमपुरुष कहा जाता है। उन्हीं महात्मा भगवान् सूर्यसे यह सब जगत् परिव्याप्त है। उन परमेश्वरकी प्रतिमा ज्ञान एवं वैराग्य-लक्षणोंवाली है। उनकी बुद्धि धर्म एवं ऐश्वर्यको प्रदान करनेवाली ब्राह्मी बुद्धि कही जाती है। उन अव्यक्तकी जो भी इच्छा होती है, वही सब उत्पन्न होता है। वे ही सृष्टिके समय चतुर्मुख ब्रह्मा बन जाते हैं और प्रलयके समय कालरूप हो जाते हैं। पालनके समय वे ही पुरुष विष्णुरूप ग्रहण कर लेते हैं। स्वयम्भू पुरुषकी ये तीनों अवस्थाएँ उनके तीन गुणोंके अनुसार हैं। वे आदिदेव होनेके कारण आदित्य तथा अजात होनेके कारण अज कहे गये हैं। देवताओंमें महान् होनेसे वे महादेव कहे गये हैं। समस्त लोकोंके ईश होने तथा अधीश होनेके कारण वे ईश्वर कहे गये हैं। बृहत् होनेसे ब्रह्मा तथा भवत्व होनेसे भव कहे जाते हैं। वे समस्त प्रजाओंकी रक्षा और पालन करते हैं, इसलिये प्रजापति कहे गये हैं। पुर्में शयन करनेसे 'पुरुष,' उत्पाद्य न होने और अपूर्व होनेसे 'स्वयम्भू' नामसे प्रसिद्ध हैं। हिरण्याण्डमें रहनेके कारण ये हिरण्यगर्भ कहे जाते हैं। ये दिशाओंके स्वामी, ग्रहोंके ईश, देवताओंके भी देवता होनेसे देवदेव तथा दिवाकर भी कहे जाते हैं। तत्त्वद्रष्टा ऋषियोंने अप्को नार कहा है, यह अप् इनका आश्रय है, इसीलिये 'आप' नारायण कहे गये हैं। 'अर' यह शीघ्रतावाचक शब्द है। 'आप' ही समुद्ररूप धारण करनेपर फिर उसमें शीघ्रता नहीं रहती, इसीके कारण उसे नार कहते हैं। प्रलयकालमें सभी स्थावर-जंगम नष्ट हो जाते हैं। जब सम्पूर्ण जगत् समुद्रके समान एकाकार हो जाता है, तब वे पुरुष नारायणरूप धारण करके उस समुद्रमें शयन करते हैं। वे पुरुष वेदोंमें सहस्रों सिरों, सहस्रों भुजाओं, सहस्रों नेत्रों तथा सहस्रों चरणोंवाले कहे गये हैं। वे ही देवताओंमें प्रथम देवता तथा जगत्की रक्षा करनेवाले हैं।

नारदजीने पुनः कहा—साम्ब! सहस्रयुगके समान अपनी रात्रि बिताकर प्रभात होते ही उन

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

पुरुषने जब सृष्टि रचनेकी इच्छा की, तब उन्होंने देखा कि सम्पूर्ण पृथ्वी जलमें डूबी हुई है। तदनन्तर उन्होंने वराहरूप धारण करके महासागरके जलमें निमग्न पृथ्वीका उद्धार किया। उस समय उनका वेदमय शरीर कम्पित हो उठा और रोमोंमें स्थित महर्षिगण उनकी स्तुति करने लगे। पुनः ब्रह्माका रूप धारण करके वे सृष्टिकी रचना करने लगे। उन्होंने सर्वप्रथम अपने ही समान अपने मनसे मुझ-सहित श्रेष्ठ दस मानसपुत्रोंको उत्पन्न किया। जिनके नाम हैं—भृगु, अंगिरा, अत्रि, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, मरीचि, दक्ष एवं वसिष्ठ—इन प्रजापतियोंकी सृष्टि करनेके बाद प्रजाओंकी हित-कामनासे वे ही सूर्यनारायण देवी अदितिके पुत्र-रूपमें स्वयं प्रादुर्भूत हुए। मरीचिके पुत्र कश्यप हुए। दक्षकी कन्या अदितिका विवाह महर्षि कश्यपके साथ हुआ। उसने '**भूर्भुवः स्वः**' से संयुक्त एक अण्ड उत्पन्न किया, जिससे द्वादशात्मा भगवान् सूर्य प्रकट हुए। इस सूर्यमण्डलका व्यास नौ हजार योजन है। सत्ताईस हजार योजन उसकी परिधि है। जिस प्रकार कदम्बका पुष्प चारों ओर केसरोंसे व्याप्त रहता है, उसी प्रकार सूर्यमण्डल अपनी किरणोंसे परिव्याप्त रहता है। वह सहस्रों सिरवाला पुरुष जिसको परमात्मा कहते हैं, इस तेजोमय मण्डलके मध्य स्थित है। वह अपनी सहस्र किरणोंद्वारा नदी, समुद्र, ह्रद, कूप आदिसे जलको ग्रहण कर लेता है। सूर्यकी प्रभा (तेज) रात्रिके समय अग्निमें प्रवेश कर जाती है, इसीलिये रात्रिमें अग्नि दूरसे ही दिखायी देने लगती है। सूर्योदयके समय वही प्रभा पुनः सूर्यमें प्रविष्ट हो जाती है। प्रकाशत्व और उष्णत्व—ये दोनों गुण सूर्यमें तथा अग्निमें भी हैं। इस प्रकार सूर्य और अग्नि एक-दूसरेको आप्यायित किया करते हैं।

साम्ब! हेति, किरण, गौ, रश्मि, गभस्ति, अभीषु, घन, उस्र, वसु, मरीचि, नाडी, दीधिति, साध्य, मयूख, भानु, अंशु, सप्तार्चि, सुपर्ण, कर तथा पाद—ये बीस भगवान् सूर्यकी किरणोंके नाम कहे गये हैं, जो संख्यामें एक हजार हैं। इनमेंसे चार सौ किरणें वृष्टि करती हैं, जिनका नाम चन्दन है। इन किरणोंका स्वरूप अमृतमय है। तीन सौ किरणें हिमको वहन करती हैं। उनका नाम चन्द्र है और वर्ण पीत है। शेष तीन सौ शुक्ल नामवाली किरणें धूपकी सृष्टि करती हैं, ये सभी किरणें ओषधियों, स्वधा तथा अमृतके रूपमें मनुष्यों, पितरों तथा देवताओंको सदा संतृप्त करती रहती हैं। ये द्वादशात्मा कालस्वरूप सूर्यदेव तीनों लोकोंमें अपने तेजसे तपते रहते हैं। ये ही ब्रह्मा-विष्णु तथा शिव हैं। ऋक्, यजुः एवं साम—ये तीनों वेद भी ये ही हैं। प्रातःकालमें ऋग्वेद, मध्याह्नकालमें यजुर्वेद तथा संध्याकालमें सामवेद इनकी स्तुति करते हैं। ब्रह्मा, विष्णु तथा शिवके द्वारा इनका पूजन नित्य होता रहता है। जिस प्रकार वायु सर्वगत है, उसी प्रकार सूर्यकी किरणें भी सर्वव्याप्त हैं। तीन सौ किरणोंके द्वारा भूर्लोक प्रकाशित होता रहता है। इसके पश्चात् जो शेष किरणें हैं, वे तीन-तीन सौकी संख्यामें शेष अन्य दोनों लोकों (भुवर्लोक और स्वर्लोक)-को प्रकाशित करती हैं। एक सौ किरणोंसे पाताल प्रकाशित होता है। ये नक्षत्र, ग्रह तथा चन्द्रमादि ग्रहोंके अधिष्ठान हैं। चन्द्रमा, ग्रह, नक्षत्र तथा तारागणोंमें सूर्यनारायणका ही प्रकाश है। इनकी एक सहस्र किरणोंमें ग्रहसंज्ञक सात किरणें मुख्य हैं, जिन्हें सुषुम्णा, हरिकेश, विश्वकर्मा, सूर्य, रश्मि, विष्णु, और सर्वबन्धु कहा जाता है।

सम्पूर्ण जगत्के मूल भगवान् आदित्य ही हैं। इन्द्र आदि देवता इन्हींसे उत्पन्न हुए हैं। देवताओं तथा जगत्का सम्पूर्ण तेज इन्हींका है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

अग्निमें दी गयी आहुति सूर्यनारायणको ही प्राप्त होती है। इसलिये आदित्यसे ही वृष्टि उत्पन्न होती है। वृष्टिसे अन्न उत्पन्न होता है तथा अन्नसे प्रजाका पालन होता है। ध्यान करनेवाले लोगोंके लिये ध्यानरूप और मोक्ष प्राप्त करनेकी इच्छासे आराधना करनेवाले लोगोंके लिये ये मोक्षस्वरूप हैं। क्षण, मुहूर्त, दिन, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, संवत्सर तथा युगकी कल्पना सूर्यनारायणके बिना सम्भव नहीं है। काल-नियमके बिना अग्निहोत्रादि कर्म नहीं हो सकते। ऋतु-विभागके बिना पुष्प-फल तथा मूलकी उत्पत्ति सम्भव नहीं है। उनके न रहनेसे तो जगत्के सम्पूर्ण व्यवहार ही नष्ट हो जाते हैं। सूर्यनारायणके सामान्य द्वादश नाम इस प्रकार हैं—आदित्य, सविता, सूर्य, मिहिर, अर्क, प्रतापन, मार्तण्ड, भास्कर, भानु, चित्रभानु, दिवाकर और रवि। विष्णु, धाता, भग, पूषा, मित्र, इन्द्र, वरुण, अर्यमा, विवस्वान्, अंशुमान्, त्वष्टा तथा पर्जन्य—ये द्वादश आदित्य हैं। चैत्रादि बारह महीनोंमें ये द्वादश आदित्य उदित रहते हैं। चैत्रमें विष्णु, वैशाखमें अर्यमा, ज्येष्ठमें विवस्वान्, आषाढ़में अंशुमान्, श्रावणमें पर्जन्य, भाद्रपदमें वरुण, आश्विनमें इन्द्र, कार्तिकमें धाता, मार्गशीर्षमें मित्र, पौषमें पूषा, माघमें भग और फाल्गुनमें त्वष्टा नामके आदित्य तपते हैं।

उत्तरायणमें सूर्य-किरणें वृद्धिको प्राप्त करती हैं और दक्षिणायनमें वह किरण-वृद्धि घटने लगती है। इस प्रकार सूर्य-किरणें लोकोपकारमें प्रवृत्त रहती हैं। जैसे स्फटिकमें विभिन्न रंगोंके प्रविष्ट होनेसे वह अनेक वर्णका दिखायी देता है, जैसे एक ही मेघ आकाशमें अनेक रूपोंका हो जाता है तथा गुण-विशेषसे जैसे आकाशसे गिरा हुआ जल भूमिके रस-वैशिष्ट्यसे अनेक स्वाद और गुणवाला हो जाता है, जिस प्रकार एक ही अग्नि ईंधन-भेदके कारण अनेक रूपोंमें विभक्त हो जाती है, जैसे वायु पदार्थोंके संयोगसे सुगन्धित और दुर्गन्धयुक्त हो जाती है, जैसे गृह्याग्निके भी अनेक नाम हो जाते हैं, उसी प्रकार एक सूर्यनारायण ही ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव आदि अनेक रूप धारण करते हैं, इसलिये इनकी ही भक्ति करनी चाहिये। इस प्रकार जो सूर्यनारायणको जानता है, वह रोग तथा पापोंसे शीघ्र ही मुक्त हो जाता है।

पापी पुरुषकी सूर्यनारायणके प्रति भक्ति नहीं होती। इसलिये साम्ब! तुम सूर्यनारायणकी आराधना करो, जिससे तुम इस भयंकर व्याधिसे मुक्त होकर सभी कामनाओंको प्राप्त कर लोगे।

(अध्याय ७५—७८)

भगवान् सूर्यका परिवार

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! साम्बने नारदजीसे पुनः कहा—महामुने! आपने भगवान् सूर्यनारायणके अत्यन्त आनन्दप्रद माहात्म्यका वर्णन किया, जिससे मेरे हृदयमें उनके प्रति दृढ़ भक्ति उत्पन्न हो गयी। अब आप भगवान् सूर्यनारायणकी पत्नी महाभागा राज्ञी एवं निक्षुभा तथा दिण्डी और पिंगल आदिके विषयमें बतायें।

नारदजीने कहा—साम्ब! भगवान् सूर्यनारायणकी राज्ञी और निक्षुभा नामकी दो पत्नियाँ हैं। इनमेंसे राज्ञीको द्यौ अर्थात् स्वर्ग और निक्षुभाको पृथ्वी भी कहा जाता है। पौष शुक्ल सप्तमी तिथिको द्यौके साथ और माघ कृष्णपक्षकी सप्तमी तिथिको निक्षुभा (पृथ्वी)-के साथ सूर्यनारायणका संयोग होता है। जिससे राज्ञी—द्यौसे जल और निक्षुभा—पृथ्वीसे तीनों लोकोंके कल्याणके लिये अनेक प्रकारकी सस्य-सम्पत्तियाँ उत्पन्न होती हैं। सस्य

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

(अन्न)-को देखकर अत्यन्त प्रसन्नतासे ब्राह्मण हवन करते हैं। स्वाहाकार तथा स्वधाकारसे देवताओं और पितरोंकी तृप्ति होती है। जिस प्रकार राज्ञी अपने दो रूपोंमें हुई और ये जिनकी पुत्री हैं तथा इनकी जो संतानें हुईं उनका हम वर्णन करते हैं, इसे आप सुनें—

साम्ब! ब्रह्माके पुत्र मरीचि, मरीचिके कश्यप, कश्यपसे हिरण्यकशिपु, हिरण्यकशिपुसे प्रह्लाद, प्रह्लादसे विरोचन नामका पुत्र हुआ। विरोचनकी बहिनका विवाह विश्वकर्माके साथ हुआ, जिससे संज्ञा नामकी एक कन्या उत्पन्न हुई। मरीचिकी सुरूपा नामकी कन्याका विवाह अंगिरा ऋषिसे हुआ, जिससे बृहस्पति उत्पन्न हुए। बृहस्पतिकी ब्रह्मवादिनी बहिनने आठवें प्रभास नामक वसुसे पाणिग्रहण किया, जिसका पुत्र विश्वकर्मा समस्त शिल्पोंको जाननेवाला हुआ। उन्हींका नाम त्वष्टा भी है। जो देवताओंके बढ़ई हुए। इन्हींकी कन्या संज्ञाको राज्ञी कहा जाता है। इन्हींको द्यौ, त्वाष्ट्री, प्रभा तथा सुरेणु भी कहते हैं। इन्हीं संज्ञाकी छायाका नाम निक्षुभा है। सूर्यभगवान्‌की संज्ञा नामक भार्या बड़ी ही रूपवती और पतिव्रता थी। किंतु भगवान् सूर्यनारायण मानवरूपमें उसके समीप नहीं जाते थे और अत्यधिक तेजसे परिव्याप्त होनेके कारण सूर्यनारायणका वह स्वरूप सुन्दर मालूम नहीं होता था। अतः वह संज्ञाको भी अच्छा नहीं लगता था। संज्ञासे तीन संतानें उत्पन्न हुईं, किंतु सूर्यनारायणके तेजसे व्याकुल होकर वह अपने पिताके घर चली गयी और हजारों वर्षतक वहाँ रही। जब पिताने संज्ञासे पतिके घर जानेके लिये अनेक बार कहा, तब वह उत्तर कुरुदेशको चली गयी। वहाँ वह अश्विनीका रूप धारण करके तृण आदि चरती हुई समय बिताने लगी।

सूर्यभगवान्‌के समीप संज्ञाके रूपमें उसकी छाया निवास करती थी। सूर्य उसे संज्ञा ही समझते थे। इससे दो पुत्र हुए और एक कन्या हुई। श्रुतश्रवा तथा श्रुतकर्मा—ये दो पुत्र और अत्यन्त सुन्दर तपती नामकी कन्या छायाकी संतानें हैं। श्रुतश्रवा तो सावर्णि मनुके नामसे प्रसिद्ध होगा और श्रुतकर्माने शनैश्चर नामसे प्रसिद्धि प्राप्त की। संज्ञा जिस प्रकारसे अपनी संतानोंसे स्नेह करती थी, वैसा स्नेह छायाने नहीं किया। इस अपमानको संज्ञाके ज्येष्ठ पुत्र सावर्णि मनुने तो सहन कर लिया, किंतु उनके छोटे पुत्र यम (धर्मराज) सहन नहीं कर सके। छायाने जब बहुत ही क्लेश देना शुरू किया, तब क्रोधमें आकर बालपन तथा भावी प्रबलताके कारण उन्होंने अपनी विमाता छायाकी भर्त्सना की और उसे मारनेके लिये अपना पैर उठाया। यह देखकर क्रुद्ध विमाता छायाने उन्हें कठोर शाप दे दिया—'दुष्ट! तुम अपनी माँको पैरसे मारनेके लिये उद्यत हो रहे हो, इसलिये तुम्हारा यह पैर टूटकर गिर जाय।' छायाके शापसे विह्वल होकर यम अपने पिताके पास गये और उन्हें सारा वृत्तान्त कह सुनाया। पुत्रकी बातें सुनकर सूर्यनारायणने कहा—'पुत्र! इसमें कुछ विशेष कारण होगा, क्योंकि अत्यन्त धर्मात्मा तुझ-जैसे पुत्रके ऊपर माताको क्रोध आया है। सभी पापोंका तो निदान है, किंतु माताका शाप कभी अन्यथा नहीं हो सकता। पर मैं तुम्हारे ऊपर अधिक स्नेहके कारण एक उपाय कहता हूँ। यदि तुम्हारे पैरके मांसको लेकर कृमि भूमिपर चले जायँ तो इससे माताका शाप भी सत्य होगा और तुम्हारे पैरकी रक्षा भी हो जायगी।'

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! इस प्रकार पुत्रको आश्वासन देकर सूर्यनारायण छायाके समीप जाकर बोले—'छाये! तुम इनसे स्नेह क्यों नहीं करती

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

हो? माताके लिये तो सभी संतानें समान ही होनी चाहिये।' यह सुनकर छायाने कोई उत्तर नहीं दिया, जिससे सूर्यनारायणको क्रोध आ गया और वे शाप देनेके लिये उद्यत हो गये। छाया भगवान् सूर्यको क्रुद्ध देखकर भयभीत हो गयी और उसने अपना सम्पूर्ण वृत्तान्त बतला दिया। तब सूर्य अपने ससुर विश्वकर्माके पास गये। अपने जामाता सूर्यको क्रुद्ध देखकर विश्वकर्माने उनका पूजन किया तथा मधुर वचनोंसे शान्त किया और कहा—'देव! मेरी पुत्री संज्ञा आपके अत्यन्त तेजको सहन न कर सकनेके कारण वनको चली गयी है और वह आपके उत्तम रूपके लिये वहाँपर महान् तपस्या कर रही है। ब्रह्माजीने मुझे आज्ञा दी है कि यदि उनकी अभिरुचि हो तो तुम संसारके कल्याणके लिये सूर्यको तराशकर उत्तम रूप बनाओ।' विश्वकर्माका यह वचन सूर्यनारायणने स्वीकार कर लिया और तब विश्वकर्माने शाकद्वीपमें सूर्यनारायणको भ्रमि (खराद)-पर चढ़ाकर उनके प्रचण्ड तेजको खराद डाला, जिससे उनका रूप बहुत कुछ सौम्य बन गया। सूर्यनारायणने भी अपने योगबलसे इस बातकी जानकारी की कि सम्पूर्ण प्राणियोंसे अदृश्य हमारी पत्नी संज्ञा अश्विनीके रूपको धारण करके उत्तरकुरुमें निवास कर रही है। अतः सूर्य भी स्वयं अश्वका रूप धारण करके उसके पास आकर मिले। फलतः कालान्तरमें अश्विनीसे देवताओंके वैद्य जुड़वाँ अश्विनीकुमारोंका जन्म हुआ। उनके नाम हैं नासत्य तथा दस्र। इसके पश्चात् सूर्यनारायणने अपना वास्तविक रूप धारण किया। उस रूपको देखकर संज्ञा अत्यन्त प्रीतिसे प्रसन्न हुई और वह उनके समीप गयी। तत्पश्चात् संज्ञासे 'रेवन्त' नामका पुत्र उत्पन्न हुआ, जो भगवान् सूर्यनारायणके समान ही सौन्दर्य-सम्पन्न था।

इस प्रकार सावर्णि मनु, यम, यमुना, शनि, तपती, दो अश्विनीकुमार, वैवस्वत मनु और रेवन्त—ये सब सूर्यनारायणकी संतानें हुईं। यमकी भगिनी यमी यमुना नदी बनकर प्रवाहित हुई। सावर्णि आठवें मनु होंगे। सावर्णि मनु मेरु पर्वतके पृष्ठप्रदेशपर तपस्या कर रहे हैं। सावर्णिके भ्राता शनि एक ग्रह बन गये और उनकी भगिनी तपती नदी बन गयी, जो विन्ध्यगिरिसे निकलकर पश्चिमी समुद्रमें जाकर मिलती है। इस नदीमें स्नान करनेसे बहुत ही पुण्य प्राप्त होता है। सौम्या नदीसे तपतीका संगम और गङ्गा नदीसे वैवस्वती—यमुनाका संगम होता है। दोनों अश्विनीकुमार देवताओंके वैद्य हैं, जिनकी विद्यासे ही वैद्यगण भूमिपर अपना जीवन-निर्वाह करते हैं। सूर्यनारायणने अपने समान रूपवाले रेवन्त नामक पुत्रको अश्वोंका स्वामी बनाया। जो मानव अपने गन्तव्य मार्गके लिये रेवन्तकी पूजा करके प्रस्थान करता है, उसे मार्गमें क्लेश नहीं होता। विश्वकर्माके द्वारा सूर्यनारायणको खरादपर चढ़ाकर जो तेज ग्रहण किया गया, उससे उन्होंने भगवान् सूर्यकी पूजा करनेके लिये भोजकोंको उत्पन्न किया। जो अमित तेजस्वी सूर्यनारायणकी संतानोत्पत्तिकी इस कथाको सुनता अथवा पढ़ता है, वह सभी पापोंसे मुक्त होकर सूर्यलोकमें दीर्घकालतक रहनेके पश्चात् पृथ्वीपर चक्रवर्ती राजा होता है। (अध्याय ७९)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सूर्यभगवान्‌को नमस्कार एवं प्रदक्षिणा करनेका फल और विजया-सप्तमी-व्रतकी विधि

देवर्षि नारदने कहा—साम्ब! अब मैं आपको भगवान् सूर्यनारायणके पूजन, उनके निमित्त दिये गये दान तथा उनको किये गये प्रणाम एवं प्रदक्षिणाके फलके विषयमें दिण्डी और ब्रह्माजीका संवाद सुना रहा हूँ, आप ध्यानसे सुनें—

ब्रह्माजी बोले—दिण्डिन्! सूर्यभगवान्‌का पूजन, उनकी स्तुति, जप, प्रदक्षिणा तथा उपवास आदि करनेसे अभीष्ट फलकी प्राप्ति होती है। सूर्यनारायणको नम्र होकर प्रणाम करनेके लिये भूमिपर जैसे ही सिरका स्पर्श होता है, वैसे ही तत्काल सभी पातक नष्ट हो जाते हैं[१]। जो मनुष्य भक्तिपूर्वक सूर्यनारायणकी प्रदक्षिणा करता है, उसे सप्तद्वीपा वसुमतीकी प्रदक्षिणाका फल प्राप्त हो जाता है और वह समस्त रोगोंसे मुक्त होकर अन्त समयमें सूर्यलोकको प्राप्त करता है, किंतु प्रदक्षिणामें पवित्रताका ध्यान रखना आवश्यक है। अतएव जूता या खड़ाऊँ आदि पहनकर प्रदक्षिणा नहीं करनी चाहिये। जो मनुष्य जूता या खड़ाऊँ पहनकर सूर्य-मन्दिरमें प्रवेश करता है, वह असिपत्र-वन नामक घोर नरकमें जाता है। जो प्राणी षष्ठी या सप्तमीके दिन एकाहार अथवा उपवास रखकर भक्तिपूर्वक सूर्यनारायणका पूजन करता है, वह सूर्यलोकमें निवास करता है। कृष्ण पक्षकी सप्तमीको रक्त पुष्पोपचारोंसे और शुक्ल पक्षकी सप्तमीको श्वेत कमलपुष्प तथा मोदक आदि उपचारोंसे भगवान् सूर्यनारायणका पूजन करना चाहिये। ऐसा करनेसे व्रती सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त हो सूर्यलोकको प्राप्त करता है।

दिण्डिन्! जया, विजया, जयन्ती, अपराजिता, महाजया, नन्दा तथा भद्रा नामकी ये सात प्रकारकी सप्तमियाँ कही गयी हैं। यदि शुक्ल पक्षकी सप्तमीको रविवार हो तो उसे विजया सप्तमी कहते हैं। उस दिन किया गया स्नान, दान, होम, उपवास, पूजन आदि सत्कर्म महापातकोंका विनाश करता है। इस विजया-सप्तमी-व्रतमें पञ्चमी तिथिको दिनमें एकभुक्त रहे, षष्ठी तिथिको नक्तव्रत करे और सप्तमीको पूर्ण उपवास करे, तदनन्तर अष्टमीके दिन व्रतकी पारणा करे। इस तिथिके दिन किया गया दान, हवन, देवता तथा पितरोंका पूजन अक्षय होता है।

(अध्याय ८०-८१)

द्वादश रविवारोंका वर्णन और नन्दादित्य-व्रतकी विधि

दिण्डीने ब्रह्माजीसे पूछा—ब्रह्मन्! जो मनुष्य आदित्यवारके दिन श्रद्धा-भक्तिसे सूर्यदेवका स्नान-दानादि कर पूजन करते हैं, उनको कौन-सा फल प्राप्त होता है? और जिस वारके संयोगसे सप्तमी तिथि विजया कहलाती है, उसके माहात्म्यका आप पुनः वर्णन करें।

ब्रह्माजीने कहा—दिण्डिन्! जो मनुष्य आदित्यवारको श्राद्ध करते हैं, वे सात जन्मतक नीरोग रहते हैं तथा जो नक्तव्रत एवं आदित्यहृदयका[२] पाठ करते हैं, वे रोगसे मुक्त हो जाते हैं और सूर्यलोकमें

१-प्रणिधाय शिरो भूमौ नमस्कारपरो रवेः। तत्क्षणात् सर्वपापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः॥ (ब्राह्मपर्व ८०। १०)

२-भविष्यपुराणके नामसे प्राप्त होनेवाले स्तोत्रोंमें 'श्रीआदित्यहृदय-स्तोत्र' का अत्यधिक प्रचार है और इसकी प्रसिद्धि प्राचीन कालमें भी इतनी अधिक थी कि महर्षि पराशरने सूर्यकी दशा-अन्तर्दशाओंमें शान्तिके लिये सर्वत्र इसी स्तोत्रके जपका निर्देश दिया है। यह स्तोत्र प्रायः दो सौ श्लोकोंमें उपनिबद्ध है। इसके पाठसे मनुष्य दुःख-दारिद्र्य तथा कुष्ठ आदि असाध्य रोगोंसे मुक्त होकर महासिद्धिको प्राप्त कर लेता है। इस स्तोत्रमें भगवान् सूर्यकी महिमा, अर्घ्यदानविधि आदिका सुन्दर वर्णन है। इसका मण्डलाष्टक बड़ा ही सुन्दर है। इसके पाठसे भगवान् सूर्यमें श्रद्धा उत्पन्न हो जाती है। सूर्योपासनामें इस 'आदित्यहृदय' का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

निवास करते हैं। उपवास रखकर जो महाश्वेता मन्त्रका* जप करते हैं, वे मनोवाञ्छित फलको प्राप्त करते हैं। आदित्यवारके दिन महाश्वेता-मन्त्र तथा षडक्षर-मन्त्र '**ॐ खखोल्काय स्वाहा**' का जप करनेसे निःसंदेह सूर्यलोककी प्राप्ति होती है।

सूर्यनारायणके द्वादश वार इस प्रकार हैं—नन्द, भद्र, सौम्य, कामद, पुत्रद, जय, जयन्त, विजय, आदित्याभिमुख, हृदय, रोगहा एवं महाश्वेता-प्रिय। माघ शुक्लपक्षकी षष्ठीकी नन्दसंज्ञा है। उस दिन नक्तव्रत करके घृतसे सूर्यनारायणको स्नान कराना चाहिये तथा श्वेत चन्दन, अगस्त्यके पुष्प, गुग्गुल-धूप आदिसे पूजन करके अपूप आदिका नैवेद्य समर्पित करना चाहिये। ब्राह्मणको अपूप देकर स्वयं भी मौन धारण कर भोजन करना चाहिये। गेहूँके अथवा यवके चूर्णमें घृत तथा खाँड़ या शक्कर मिलाकर अपूप बनाना चाहिये और उसीका नैवेद्य सूर्यनारायणको निवेदित कर निम्न मन्त्र पढ़ते हुए ब्राह्मणको वह नैवेद्य दे देना चाहिये—

आदित्यतेजसोत्पन्नं राज्ञीकरविनिर्मितम्।
श्रेयसे मम विप्र त्वं प्रतीक्षापूपमुत्तमम्॥

(ब्राह्मपर्व ८२। १८)

ब्राह्मण नैवेद्य ग्रहण कर ले, तदनन्तर उस नैवेद्यको निम्न मन्त्र पढ़ते हुए पूजकको दे—

कामदं सुखदं धर्म्यं धनदं पुत्रदं तथा।
सदास्तु ते प्रतीच्छामि मण्डकं भास्करप्रियम्॥

(ब्राह्मपर्व ८२। १९)

उपर्युक्त दोनों मन्त्र ग्रहण करने और समर्पित करनेके लिये हैं। नन्दवारका यह विधान कल्याणकारी है। जो इस विधिसे सूर्यदेवकी पूजा करता है, उसे सूर्यलोककी प्राप्ति होती है। उसकी संततिका कभी क्षय नहीं होता अर्थात् उसकी कुल-परम्परा पृथ्वीपर चलती रहती है तथा उसके वंशमें दारिद्र्य एवं रोग भी नहीं होते। सूर्यलोक प्राप्त करनेके पश्चात् पुनर्जन्म होनेपर वह पृथ्वीका राजा होता है। इस पूजन-विधानको पढ़ने अथवा श्रवण करनेसे भी कल्याण होता है एवं दिव्य अचल लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है। (अध्याय ८२)

भद्रादित्य, सौम्यादित्य और कामदादित्यवार-व्रतोंकी विधिका निरूपण

ब्रह्माजी बोले—दिण्डिन्! भाद्रपद मासके शुक्ल पक्षकी षष्ठी तिथिको जो वार हो उसका नाम भद्र है। उस दिन जो मनुष्य नक्तव्रत और उपवास करता है, वह हंसयुक्त विमानमें बैठकर सूर्यलोकको जाता है। उस दिन श्वेत चन्दन, मालती-पुष्प, विजय-धूप तथा खीरके नैवेद्यसे मध्याह्नकालमें सूर्यनारायणका पूजन करके ब्राह्मणको भोजन कराकर यथाशक्ति दक्षिणा देनी चाहिये।

दिण्डिन्! यदि रोहिणी नक्षत्रसे युक्त आदित्यवार हो तो उसे सौम्यवार कहा जाता है। उस दिन किये जानेवाले स्नान, दान, जप, होम, पितृ-देवादि तर्पण तथा पूजन आदि कृत्य अक्षय होते हैं।

मार्गशीर्षके शुक्ल पक्षकी षष्ठी तिथिको जो वार हो, वह कामदवार कहलाता है। यह वार भगवान् सूर्यको अत्यन्त प्रिय है। इस दिन जो

यह स्तोत्र वर्तमान उपलब्ध भविष्यपुराणमें प्राप्त नहीं होता, इससे यह उसका खिल-भाग प्रतीत होता है। नारदपुराणमें उपलब्ध भविष्यपुराणकी सूची भी वर्तमानमें उपलब्ध भविष्यपुराणमें नहीं मिलती। कालक्रमसे पुराणोंका प्राचीन रूप न रह जानेसे आज वह सब एकत्र उपलब्ध नहीं हो पाता, परंतु प्रायः सभी बड़े स्तोत्र-संग्रहोंमें यह 'आदित्यहृदय-स्तोत्र' संगृहीत है। वाल्मीकीय रामायणमें अगस्त्यमुनिप्रोक्त 'आदित्यहृदय-स्तोत्र' भविष्यपुराणके 'आदित्यहृदय-स्तोत्र' से भिन्न है।

* महाश्वेता-मन्त्र 'गायत्री-मन्त्र' का ही अपर पर्याय प्रतीत होता है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भक्ति और श्रद्धासे सूर्यनारायणकी पूजा करता है, वह सभी पातकोंसे विमुक्त होकर सूर्यलोकमें निवास करता है। इस व्रतको करनेसे विद्यार्थीको विद्या, पुत्रेच्छुको पुत्र, धनार्थीको धन और आरोग्यके अभिलाषीको आरोग्यकी प्राप्ति होती है। इसी प्रकार कामदवार-व्रतसे और अन्य सभी कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं, इसीलिये इसका नाम कामद है।

(अध्याय ८३—८५)

पुत्रद, जय, जयन्तसंज्ञक आदित्यवार-व्रतोंकी विधि

ब्रह्माजी बोले—दिण्डिन्! जिस आदित्यवारको हस्त नक्षत्र हो उसे पुत्रद (आदित्य-) वार कहा जाता है। उस दिन उपवास करना चाहिये और श्राद्ध करके मध्यम पिण्डका प्राशन करना चाहिये। धूप, माल्य, दिव्य गन्ध आदि नाना प्रकारके उपचारोंसे सूर्यनारायणका पूजन कर महाश्वेता-मन्त्रको जपते हुए साधकको सूर्यनारायणके समक्ष ही शयन करना चाहिये। प्रातःकालमें ही उठकर स्नान आदिसे निवृत्त हो सूर्यभगवान्को अर्घ्य देना चाहिये। रक्त-चन्दन तथा करवीरके पुष्पोंसे पूजा करनी चाहिये। तत्पश्चात् पाँच ब्राह्मणोंको बुलाकर उनमेंसे दो ब्राह्मणोंको मगसंज्ञक तथा तीन ब्राह्मणोंको भीमसंज्ञक मानकर विधिपूर्वक पार्वण-श्राद्ध करना चाहिये। श्राद्धके समाप्त होनेपर मध्यम पिण्डको भगवान् सूर्यके सामने रखकर निम्नलिखित मन्त्रसे भक्षण करना चाहिये—

स एष पिण्डो देवेश योऽभीष्टस्तव सर्वदा।
अश्नामि पश्यते तुभ्यं तेन मे संततिर्भवेत्॥

(ब्राह्मपर्व ८६। १०)

इस विधानसे पूजा करनेपर सूर्यनारायण निश्चित ही पुत्र प्रदान करते हैं। इस प्रकार उपवासपूर्वक व्रतको करनेसे धन-धान्य, सुवर्ण, सुख-आरोग्य तथा सूर्यलोक भी प्राप्त होता है, किंतु विशेषरूपसे पुत्र-प्राप्तिका ही फल है, इसीसे इस वारको पुत्रद कहते हैं।

ब्रह्माजीने कहा—दिण्डिन्! दक्षिणायनके दिन जो वार हो, वह जयवार कहा जाता है। इस दिन किया गया उपवास, नक्तव्रत, स्नान-दान तथा जप भगवान् सूर्यमें सौगुनी प्रीति बढ़ानेवाला होता है। अतः सूर्यमें सौगुनी प्रीति बढ़ानेवाले इस नक्त-व्रतादिको अवश्य करना चाहिये।

यदि उत्तरायणके दिन रविवार हो तो उसे जयन्तवार कहते हैं। इस दिन भगवान् सूर्य स्नान-दानादि कर्म तथा पूजन करनेवालोंको हजार गुना फल प्रदान करते हैं। इस दिन उपवास करके घृत, दूध तथा इक्षुरससे सूर्यनारायणको स्नान कराकर कुंकुमका विलेपन करना चाहिये और गुग्गुलका धूप देकर मोदकका नैवेद्य समर्पित करना चाहिये। इस प्रकार भगवान् सूर्यनारायणका पूजन करके तिलसे हवन करना चाहिये। तदनन्तर यथाशक्ति ब्राह्मणोंको मोदक, तिल तथा शष्कुली (पूरी)-का भोजन कराना चाहिये। (अध्याय ८६-८७)

विजय, आदित्याभिमुख तथा हृदयवार-व्रतोंकी विधि

ब्रह्माजी बोले—दिण्डिन्! शुक्ल पक्षमें रोहिणी नक्षत्रसे युक्त सप्तमी तिथिको विजयसंज्ञक आदित्यवार कहते हैं। वह सम्पूर्ण पापों और भयोंको नष्ट कर देता है। उस दिन सम्पन्न किये गये पुण्यकर्म कोटिगुना फल प्रदान करते हैं।

दिण्डिन्! माघ मासके कृष्ण पक्षकी सप्तमीको

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sherda Peeth

जो दिन हो उसे आदित्याभिमुख कहते हैं। उस दिन प्रातःकाल ही स्नान कर गन्ध-पुष्पादि उपचारोंसे सूर्यनारायणकी पूजा करनी चाहिये। तदनन्तर रक्तचन्दनके काष्ठसे बने हुए स्तम्भका आश्रय लेकर सूर्यदेवकी ओर मुखकर महाश्वेता-मन्त्र जपते हुए सायंकालतक खड़ा रहना चाहिये। तदनन्तर ब्राह्मणको भोजन कराकर दक्षिणा देनी चाहिये। तत्पश्चात् मौन होकर स्वयं भी भोजन करना चाहिये। जो मनुष्य इस व्रतका विधिपूर्वक पालन करते हैं, उन्हें भगवान् सूर्यनारायणका अनुग्रह प्राप्त होता है।

दिण्डिन्! संक्रान्तिके दिन यदि रविवार हो तो उसका नाम हृदयवार होता है। वह आदित्यके हृदयको अत्यन्त प्रिय है। उस दिन नक्तव्रत करके मन्दिरमें सूर्यनारायणके अभिमुख एक सौ आठ बार आदित्यहृदयका पाठ करना चाहिये अथवा सायंकालतक भगवान् सूर्यका हृदयमें ध्यान करना चाहिये। सूर्यास्त होनेके पश्चात् घर आकर यथाशक्ति ब्राह्मणको भोजन कराये तथा मौनपूर्वक स्वयं भी खीरका भोजन करके सूर्यदेवका स्मरण करते हुए भूमिपर ही शयन करे। इस प्रकार जो इस दिन व्रत रहकर श्रद्धा-भक्तिसे सूर्यनारायणकी पूजा करता है, उसके समस्त अभीष्ट सिद्ध हो जाते हैं और वह भगवान् सूर्यके समान ही तेज-कान्ति तथा यशको प्राप्त करता है। (अध्याय ८८—९०)

रोगहा एवं महाश्वेतवार-व्रतकी विधि

ब्रह्माजी बोले—दिण्डिन्! यदि आदित्यवारको उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र पड़े तो उसे रोगहावार कहते हैं। यह सम्पूर्ण रोगों एवं भयोंको दूर करनेवाला है। इस दिन जो गन्ध, पुष्प आदि उपचारोंसे भगवान् सूर्यनारायणका पूजन करता है, वह सभी रोगोंसे मुक्त हो जाता है तथा सूर्यलोकको प्राप्त होता है। मन्दारके पत्रोंका दोना बनाकर उसीमें उसीके फूल रखकर रात्रिमें भगवान् सूर्यनारायणके सामने रख देना चाहिये तथा प्रातःकाल उठकर उन्हीं फूलोंसे उनका पूजन करना चाहिये। तदनन्तर खीरका भोजन करके व्रतकी समाप्ति करनी चाहिये।

दिण्डिन्! यदि सूर्यग्रहणके दिन रविवार हो तो उसे महाश्वेतवार कहते हैं, वह भगवान् सूर्यको बहुत प्रिय है। उस दिन उपवास करके पवित्रताके साथ गन्ध-पुष्पादि उपचारोंसे भक्तिपूर्वक सूर्यनारायणका पूजन करके महाश्वेता-मन्त्रका जप करे। तदनन्तर महाश्वेताकी पूजा करके सूर्यनारायणकी पूजा करनेका विधान है। महाश्वेताकी स्थापना करके गन्ध-पुष्प आदिसे उनका पूजन करे तथा उन्हींके सम्मुख एक वेदीपर सूर्यनारायणकी स्थापना कर उनकी पूजा आदि करे। तत्पश्चात् स्नान करके घृतसहित तिलोंका हवन करे। ग्रहणके समय महाश्वेता-मन्त्रका जप करता रहे और ग्रहणके समाप्त होनेके पश्चात् पुनः स्नान करके महाश्वेता तथा ग्रहाधिपति भगवान् सूर्यका पूजन करे। ब्राह्मणोंसे पुराण सुनकर उन्हें भोजन कराये तथा यथाशक्ति दक्षिणा दे। उसके बाद स्वयं मौन होकर भोजन करे। इस दिन किये हुए स्नान, दान, जप, होम आदि कर्म अनन्त फल देते हैं।

दिण्डिन्! सम्पूर्ण पापों और भयोंको दूर करनेवाले सूर्यनारायणके इन द्वादश वारोंका मैंने जो वर्णन किया है, इसे जो मनुष्य पढ़ता है अथवा सुनता है, वह भगवान् सूर्यका प्रिय हो जाता है और जो इन व्रतोंको नियमपूर्वक करता है, वह धर्म, अर्थ, काम और चन्द्रमाके समान

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

कान्ति, सूर्यके समान प्रभा, इन्द्रके समान पराक्रम तथा स्थायी लक्ष्मीको प्राप्त करता है, तदनन्तर अन्तमें वह शिवलोकको चला जाता है।

(अध्याय ९१-९२)

सूर्यदेवकी पूजामें विविध उपचार और फल आदि निवेदन करनेका माहात्म्य

ब्रह्माजी बोले—दिण्डिन्! जो प्राणी भगवान् सूर्यनारायणके निमित्त सभी धर्मकार्य करते हैं, उनके कुलमें रोगी और दरिद्री उत्पन्न नहीं होते। जो व्यक्ति भगवान् सूर्यके मन्दिरमें भक्तिपूर्वक गोबरसे लेपन करता है, वह तत्क्षण सभी पापोंसे मुक्त हो जाता है। श्वेत-रक्त अथवा पीली मिट्टीसे जो मन्दिरमें लेप करता है, वह मनोवाञ्छित फल प्राप्त करता है। जो व्यक्ति उपवासपूर्वक अनेक प्रकारके सुगन्धित फूलोंसे सूर्यनारायणका पूजन करता है, वह समस्त अभीष्ट फलोंको प्राप्त करता है। घृत या तिल-तैलसे मन्दिरमें दीपक प्रज्वलित करनेवाला सूर्यलोकको तथा सूर्यनारायणके प्रीत्यर्थ चौराहे, तीर्थ, देवालयादिमें दीपक प्रज्वलित करनेवाला ओजस्वी रूपको प्राप्त करता है। भक्तिभावसे समन्वित होकर जिस मनुष्यके द्वारा सूर्यके लिये दीपक जलवाया जाता है, वह अपनी अभीष्ट कामनाओंको प्राप्त कर देवलोकको प्राप्त करता है। जो चन्दन, अगरु, कुंकुम, कपूर तथा कस्तूरी आदि मिलाकर तैयार किये गये उबटनसे सूर्यनारायणके शरीरका लेपन करता है, वह करोड़ों वर्षतक स्वर्गमें विहार कर पुनः पृथ्वीपर सभी इच्छाओंसे संतृप्त रहता है और समस्त लोकोंका पूज्य बनकर चक्रवर्ती राजा होता है। चन्दन और जलसे मिश्रित पुष्पोंके द्वारा सूर्यको अर्घ्य प्रदान करनेपर पुत्र, पौत्र, पत्नीसहित स्वर्गलोकमें पूज्य होता है। सुगन्धित पदार्थ तथा पुष्पोंसे युक्त जलके द्वारा सूर्यको अर्घ्य देकर मनुष्य देवलोकमें बहुत समयतक रहकर पुनः पृथ्वीपर राजा होता है। स्वर्णसे युक्त जल अथवा लाल वर्णके जलसे अर्घ्य देनेपर करोड़ों वर्षतक स्वर्गलोकमें पूजित होता है। कमलपुष्पसे सूर्यकी पूजा करके मनुष्य स्वर्गको प्राप्त करता है। श्रद्धा-भक्तिपूर्वक सूर्यनारायणको गुग्गुल तथा घृतमिश्रित धूप देनेसे तत्काल ही सभी पापोंसे मुक्ति मिल जाती है।

जो मनुष्य पूर्वाह्णमें भक्ति और श्रद्धासे सूर्यदेवका पूजन करता है, उसे सैकड़ों कपिला गोदान करनेका फल मिलता है। मध्याह्नकालमें जो जितेन्द्रिय होकर उनकी पूजा करता है, उसे भूमिदान और सौ गोदानका फल प्राप्त होता है। सायंकालकी संध्यामें जो मनुष्य पवित्र होकर श्वेत वस्त्र तथा उष्णीष (पगड़ी) धारण करके भगवान् भास्करकी पूजा करता है, उसे हजार गौओंके दानका फल प्राप्त होता है।

जो मनुष्य अर्धरात्रिमें भक्तिपूर्वक भगवान् सूर्यकी पूजा करता है, उसे जातिस्मरता प्राप्त होती है और उसके कुलमें धार्मिक व्यक्ति उत्पन्न होते हैं। प्रदोष-वेलामें जो मनुष्य भगवान् सूर्यदेवकी पूजा करता है, वह स्वर्गलोकमें अक्षयकालतक आनन्दका उपभोग करता है। प्रभातकालमें भक्तिपूर्वक सूर्यकी पूजा करनेपर देवलोककी प्राप्ति होती है। इस प्रकार सभी वेलाओंमें अथवा जिस किसी भी समय जो मनुष्य भक्तिपूर्वक मन्दार-पुष्पोंसे भगवान् सूर्यकी पूजा करता है, वह तेजमें भगवान् सूर्यके समान होकर सूर्यलोकमें पूज्य बन जाता है। जो व्यक्ति दोनों अयन-संक्रान्तियोंमें भगवान् सूर्यकी भक्तिपूर्वक पूजा करता है, वह ब्रह्माके लोकको प्राप्त करता है और वहाँ देवताओंद्वारा पूजित होता है। ग्रहण आदि अवसरोंपर पूजन करनेवाला चिन्तित

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

नहीं होता। जो निद्रासे उठनेपर सूर्यदेवको प्रणाम करता है, उसे प्रसन्न होकर भगवान् अभिलषित गति प्रदान करते हैं।

उदयकालमें सूर्यदेवको मात्र एक दिन यदि घृतसे स्नान करा दिया जाय तो एक लाख गोदानका फल प्राप्त होता है। गायके दूधद्वारा स्नान करानेसे पुण्डरीक-यज्ञका फल मिलता है। इक्षुरससे स्नान करानेपर अश्वमेध-यज्ञके फलका लाभ होता है। भगवान् सूर्यके लिये पहली बार ब्यायी हुई सुपुष्ट गौ तथा शस्य प्रदान करनेवाली पृथ्वीका जो दान करता है, वह अचल लक्ष्मीको प्राप्त कर पुनः सूर्यलोकको चला जाता है और गौके शरीरमें जितने रोयें होते हैं, उतने ही करोड़ वर्षतक वह सूर्यलोकमें पूजित होता है। जो मनुष्य भगवान् सूर्यके निमित्त भेरी, शंख, वेणु आदि वाद्य दान करते हैं, वे सूर्यलोकको जाते हैं। जो मनुष्य भक्तिभावसे सूर्यनारायणकी पूजा करके उन्हें छत्र, ध्वजा, पताका, वितान, चामर तथा सुवर्णदण्ड आदि समर्पित करता है, वह दिव्य छोटी-छोटी किंकिणियोंसे युक्त सुन्दर विमानके द्वारा सूर्यलोकमें जाकर आनन्दित होता है और चिरकालतक वहाँ रहकर पुनः मनुष्य-जन्म ग्रहण कर सभी राजाओंके द्वारा अभिवन्दित राजा होता है।

जो मनुष्य विविध सुगन्धित पुष्पों तथा पत्रोंसे सूर्यकी अर्चना करता है और विविध स्तोत्रोंसे सूर्यका संस्तवन-गान आदि करता है, वह उन्हींके लोकको प्राप्त होता है। जो पाठक और चारणगण सदा प्रातःकाल सूर्यसम्बन्धी ऋचाओं एवं विविध स्तोत्रोंका उपगान करते हैं, वे सभी स्वर्गगामी होते हैं। जो मनुष्य अश्वोंसे युक्त, सुवर्ण, रजत या मणिजटित सुन्दर रथ अथवा दारुमय रथ सूर्यनारायणको समर्पित करता है, वह सूर्यके वर्णके समान किंकिणी-जालमालासे समन्वित विमानमें बैठकर सूर्यलोककी यात्रा करता है।

जो लोग वर्षभर या छः मास नित्य इनकी रथयात्रा करते हैं, वे उस परमगतिको प्राप्त करते हैं, जिसे ध्यानी, योगी तथा सूर्यभक्तिके अनुगामी श्रेष्ठ जन प्राप्त करते हैं। जो मनुष्य भक्तिभाव-समन्वित होकर भगवान् सूर्यके रथको खींचते हैं, वे बार-बार जन्म लेनेपर भी नीरोग तथा दरिद्रतासे रहित होते हैं। जो मनुष्य भास्करदेवकी रथयात्रा करते हैं, वे सूर्यलोकको प्राप्तकर यथाभिलषित सुखका आनन्द प्राप्त करते हैं, परंतु जो मोह अथवा क्रोधवश रथयात्रामें बाधा उत्पन्न करते हैं, उन्हें पाप-कर्म करनेवाले मंदेह नामक राक्षस ही समझना चाहिये। सूर्यभगवान्के लिये धन-धान्य-हिरण्य अथवा विविध प्रकारके वस्त्रोंका दान करनेवाले परमगतिको प्राप्त होते हैं। गौ, भैंस अथवा हाथी या सुन्दर घोड़ोंका दान करनेवाले लोग अक्षय अभिलाषाओंको पूर्ण करनेवाले अश्वमेध-यज्ञके फलको प्राप्त करते हैं और उन्हें उस दानसे हजार गुना पुण्य-लाभ होता है। जो सूर्यनारायणके लिये खेती करनेयोग्य सुन्दर उपजाऊ भूमि-दान देता है, वह अपनी पीढ़ीसे पहलेके दस कुल और पश्चात्के दस कुलको तार देता है तथा दिव्य विमानसे सूर्यलोकको चला जाता है। जो बुद्धिमान् मनुष्य भगवान् सूर्यके लिये भक्तिपूर्वक ग्राम-दान करता है, वह सूर्यके समान वर्णवाले विमानमें आरूढ़ होकर परमगतिको प्राप्त होता है। भक्तिपूर्वक जो लोग फल-पुष्प आदिसे परिपूर्ण उद्यानका दान सूर्यनारायणके लिये देते हैं, वे परमगतिको प्राप्त होते हैं। मनसा-वाचा-कर्मणा जो भी दुष्कृत होता है, वह सब भगवान् सूर्यकी कृपासे नष्ट हो जाता है। चाहे आर्त हो या रोगी हो अथवा दरिद्र या दुःखी हो, यदि वह भगवान् आदित्यकी शरणमें आ जाता है तो उसके सम्पूर्ण कष्ट दूर हो जाते

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

हैं। एक दिनकी सूर्य-पूजा करनेसे जो फल प्राप्त होता है, वह अनेक इष्टापूर्तोंकी अपेक्षा श्रेष्ठ है।

जो भगवान् सूर्यके मन्दिरके सामने भगवान् सूर्यकी कल्याणकारी लीला करता है, उसे सभी अभीष्ट कामनाओंको सिद्ध करनेवाले राजसूय-यज्ञका फल प्राप्त होता है। गणाधिप! जो मनुष्य सूर्यदेवके लिये महाभारत ग्रन्थका दान करता है, वह सभी पापोंसे विमुक्त होकर विष्णुलोकमें पूजित होता है। रामायणकी पुस्तक देकर मनुष्य वाजपेय-यज्ञके फलको प्राप्त कर सूर्यलोकको प्राप्त करता है। सूर्यभगवान्के लिये भविष्यपुराण अथवा साम्बपुराणकी पुस्तकका दान करनेपर मानव राजसूय तथा अश्वमेध-यज्ञ करनेका फल प्राप्त करता है तथा अपनी सभी मनःकामनाओंको प्राप्त कर सूर्यलोकको पा लेता है और वहाँ चिरकालतक रहकर ब्रह्मलोकमें जाता है। वहाँ सौ कल्पतक रहकर पुनः वह पृथ्वीपर राजा होता है। जो मनुष्य सूर्यमन्दिरमें कुआँ तथा तालाब बनवाता है, वह मनुष्य आनन्दमय दिव्य लोकको प्राप्त करता है। जो मनुष्य सूर्यमन्दिरमें शीतकालमें मनुष्योंके शीत-निवारणके योग्य कम्बल आदिका दान करता है, वह अश्वमेध-यज्ञका फल प्राप्त करता है। जो मनुष्य सूर्यमन्दिरमें नित्य पवित्र पुस्तक, इतिहास तथा पुराणका वाचन करता है, वह उस फलको प्राप्त करता है, जो नित्य हजारों अश्वमेध-यज्ञको करनेसे भी प्राप्त नहीं होता। अतः सूर्यके मन्दिरमें प्रयत्नपूर्वक पवित्र पुस्तक, इतिहास तथा पुराणका वाचन करना चाहिये। भगवान् भास्कर पुण्य आख्यान-कथासे सदा संतुष्ट होते हैं। (अध्याय ९३)

एक वैश्य तथा ब्राह्मणकी कथा, सूर्यमन्दिरमें पुराण-वाचन एवं भगवान् सूर्यको स्नानादि करानेका फल

ब्रह्माजी बोले—दिण्डिन्! मैं आपको पितामह और कुमार कार्तिकेयका एक आख्यान सुना रहा हूँ, जो पुण्यदायक, पापनाशक तथा कल्याणकारी है। एक बार सभी लोकोंके रचयिता पितामह सुखपूर्वक बैठे थे, उनके पास श्रद्धा-भक्ति-समन्वित हो कार्तिकेयने आकर प्रणाम किया और कहा—

विभो! आज मैं दिवाकर भगवान् सूर्यदेवका दर्शन करनेके लिये गया था। प्रदक्षिणा करके मैंने उनकी पूजा की तथा परमभक्ति और श्रद्धासे मस्तक झुकाकर उन्हें प्रणाम किया और वहीं बैठ गया। वहाँ मैंने एक महान् आश्चर्यकी बात देखी—स्वर्णजटित छोटी-छोटी घंटियोंसे युक्त श्रेष्ठ वैदूर्यादि मणियों एवं मुक्ताओंसे सुशोभित विचित्र विमानसे आ रहे एक पुरुषको देखकर भगवान् दिवाकर सहसा आसनसे उठ खड़े हुए। उन्होंने सामने आये हुए उस पुरुषको अपने दाहिने हाथसे पकड़कर अपने सामने बैठाया और उसके सिरको सूँघा तथा उसका पूजन किया, तदनन्तर समीपमें बैठे हुए उस पुरुषसे भगवान् सूर्यने कहा—

हे भद्र! आपका स्वागत है। आपका हम सबपर बड़ा प्रेम है। आपने बहुत आनन्द दिया। जबतक महाप्रलय नहीं होता, तबतक आप मेरे समीप रहें। उसके पश्चात् उस स्थानको जायँ, जहाँ ब्रह्मा स्वयं स्थित हैं। इसी बीच भगवान् सूर्यके सामने एक श्रेष्ठ विमानपर आसीन दूसरा पुरुष आया। उसका भी सूर्यभगवान्ने उसी प्रकार आदर किया और उसे भी विनम्र भावसे वहीं बैठाया। देवशार्दूल! भगवान् सूर्यके द्वारा की गयी

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

उन दोनोंकी पूजा देखकर मेरे मनमें बड़ा कौतूहल उत्पन्न हो गया, अतः मैंने भगवान् भास्करसे पूछा—'देव! पहले जो यह मनुष्य आपके पास आया है और जिसे आपने अधिक संतुष्ट किया है, इसने कौन-सा ऐसा पुण्यकर्म किया है, जो इसकी आपने स्वयं ही पूजा की है? इस विषयको लेकर मेरे हृदयमें विशेषरूपसे कौतूहल उत्पन्न हो गया है। उसी प्रकारसे आपने दूसरे मनुष्यकी भी पूजा की है। ये दोनों सब प्रकारसे पुण्यकर्म करनेवाले उत्तम जनोंमें भी श्रेष्ठ मनुष्य हैं। आप तो सदा ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव आदि देवताओंके द्वारा भी अर्जित, पूजित होते हैं, फिर आपके द्वारा ये दोनों किस कारण पूजित हुए? देवेश! मुझे आप इसका रहस्य बतायें।'

भगवान् सूर्यने कहा—महामते! आपने इनके कर्मके विषयमें बहुत अच्छी बात पूछी है, जिस कारणसे ये मेरे पास आये हैं, उसे आप श्रवण करें—पृथ्वीतलपर अयोध्या नामकी एक प्रसिद्ध नगरी है, जो मेरे अंशसे उत्पन्न राजाओंद्वारा अभिरक्षित है। उस अयोध्या नामक नगरीमें धनपाल नामका एक श्रेष्ठ वैश्य रहता था। उस पुरीमें उसने एक दिव्य सूर्यमन्दिर बनवाया और बहुत-से श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको बुलाकर उनकी पूजा की। इतिहास-पुराणके वाचकोंकी विशेषरूपसे पूजा की और उनसे पुराण-श्रवण करानेकी प्रार्थना की तथा कहा—द्विजश्रेष्ठ! इस मन्दिरमें यह चारों वर्णोंका समूह पुराण-श्रवण करनेका इच्छुक है, अतः आप पुराण-श्रवण करायें, जिससे भगवान् सूर्य मेरे लिये सात जन्मतक वर देनेवाले हों। आप एक वर्षतक मेरी दी हुई वृत्तिको ग्रहण करें। उन्होंने वैश्य धनपालके आग्रहको स्वीकार कर लिया। परंतु छः मासमें ही वैश्य धनपाल कालधर्मको प्राप्त हो गया। हे कुमार! वही यह वैश्य है। मैंने इसीको लानेके लिये विमान भेजा था। पुण्य आख्यानको कहने या सुननेसे जो फल एवं तुष्टि प्राप्त होती है, यह उसीका फल है। गन्ध-पुष्पादि उपचारोंसे पूजन करनेपर मेरे हृदयमें वैसी प्रसन्नता उत्पन्न नहीं होती जैसी पुराण सुननेसे होती है। कुमार! गौ, सुवर्ण तथा स्वर्णजटित वस्त्रों, ग्रामों तथा नगरोंका दान देनेसे मुझे इतनी प्रसन्नता नहीं होती, जितनी प्रसन्नता इतिहास-पुराण सुनने-सुनानेसे होती है। मुझे अनेक खाद्य-पदार्थोंद्वारा किये गये श्राद्धोंसे वैसी प्रसन्नता नहीं होती, जैसी पुराण-वाचनसे होती है। सुरश्रेष्ठ! इससे अधिक और क्या कहूँ? इस रहस्ययुक्त पवित्र आख्यानके वाचनके बिना मुझे अन्य कुछ भी प्रिय नहीं है।

नरोत्तम! यह जो दूसरा ब्राह्मण यहाँ आया है, यह भी उसी श्रेष्ठ अयोध्या नगरीमें उत्तम कुलका ब्राह्मण था। एक बार यह परम श्रद्धा-भक्तिसे समन्वित होकर धर्मकी उत्तम कथाको सुननेके लिये गया था। वहाँपर उसने भक्तिपूर्वक उत्तम पवित्र आख्यानको सुनकर उन महात्मा वाचककी प्रदक्षिणा की। तत्पश्चात् यह ब्राह्मण उस परम तेजस्वी वाचकको दक्षिणामें एक माशा स्वर्ण दान देकर परम आनन्दित हुआ। यही इसका पुण्य है। जो यह मेरे द्वारा सम्मानित हुआ है यह उसी पुण्यकर्मका परिणाम है। श्रद्धा-भक्तिसमन्वित जो व्यक्ति वाचककी पूजा करता है, उसीसे मैं भी पूजित हो जाता हूँ।

जो मनुष्य अच्छे-से-अच्छे भोज्य पदार्थोंके द्वारा वाचकको परितृप्त करता है, उसीसे मेरी भी संतुष्टि हो जाती है। मेरी संतानें—यम, यमी, शनि, मनु तथा तपती मुझे उतने प्रिय नहीं हैं, जितना मुझे कथावाचक प्रिय हैं*। वाचकके संतुष्ट

* न यमो न यमी चापि न मन्दो न मनुस्तथा। तपती न तथान्विष्टा यथेष्टो वाचको मम॥ (ब्राह्मपर्व ९४। ४५)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

होनेपर सभी देवता प्रसन्न हो जाते हैं, इसमें कोई संदेह नहीं। क्योंकि हे देवसेनापते! सबसे पहले संसारके द्वारा पूज्य जो मेरा मुख था, उसी मुखसे संसारका कल्याण करनेके निमित्त सभी इतिहास-पुराणादि ग्रन्थ प्रकट हुए। महामते! मुझे पुराण वेदोंसे भी अधिक प्रिय हैं। जो श्रद्धाभावसे नित्य इन्हें सुनते हैं और वाचकको वृत्ति प्रदान करते हैं, वे परमपद प्राप्त करते हैं। सुव्रत! धर्म-अर्थ-काम तथा मोक्ष—पुरुषार्थचतुष्टयकी उत्तम व्याख्याके लिये मैंने ये इतिहास-पुराण बनाये हैं। वेदोंका अर्थ अत्यन्त दुर्ज्ञेय है। अतएव महामते! इनको जाननेके लिये ही मैंने इतिहास-पुराणोंकी रचना की है। जो मनुष्य प्रतिदिन पुराण-श्रवणका उत्तम कार्य करवाता है, वह सूर्यदेवसे ज्ञान प्राप्तकर परमपदको प्राप्त करता है। वाचकको जो दक्षिणा देता है, वह सूर्यदेवके लोकको प्राप्त करता है। हे सुरश्रेष्ठ! इसमें आश्चर्य क्या है? जैसे देवताओंमें इन्द्र श्रेष्ठ हैं, शस्त्रोंमें वज्र श्रेष्ठ है और जैसे तेजस्वियोंमें अग्नि, नदियोंमें सागर श्रेष्ठ माना गया है, वैसे ही सभी ब्राह्मणोंमें इतिहास-पुराण-वाचक ब्राह्मण श्रेष्ठ है। जो मनुष्य भक्तिपूर्वक पुराण-वाचकका पूजन करता है, उसके उस पुण्यकर्मद्वारा सम्पूर्ण जगत् पूजित हो जाता है।

ब्रह्माजीने पुनः कहा—दिण्डिन्! देवदेवेश्वर भगवान् सूर्यके मन्दिरमें जो मनुष्य धर्मका श्रवण करता है या कराता है, उसके पुण्यसे वह परम गतिको प्राप्त करता है।

जो पुरुष भगवान् सूर्यकी तीन बार प्रदक्षिणा करके भूमिपर मस्तक झुकाकर सूर्यनारायणको प्रणाम करता है, वह उत्तम गतिको प्राप्त होता है। जो मनुष्य जूता पहनकर मन्दिरमें प्रवेश करता है, वह तामिस्र नामक भयंकर नरकमें जाता है। जो सूर्यदेवके स्नानार्थ घृत, दूध, मधु, इक्षुरस अथवा गङ्गादि पवित्र नदियोंका उत्तम जल देते हैं, वे सम्पूर्ण कामनाओंको प्राप्तकर सूर्यमण्डलको प्राप्त करते हैं। अभिषेकके समय जो उनका भक्तिपूर्वक दर्शन करते हैं, उन्हें अश्वमेध-यज्ञका फल प्राप्त होता है और अन्तमें वे शिवलोकको जाते हैं। सूर्यभगवान्‌को ऐसे स्थानपर स्नान कराना चाहिये, जहाँ स्नानका जल आदि किसीसे लाँघा न जा सके। जलका लङ्घन हो जानेपर अशुभ होता है।

(अध्याय ९४-९५)

जया-सप्तमी-व्रतका वर्णन

दिण्डीने कहा—ब्रह्मन्! आपने मुझसे जो सात सप्तमियोंका वर्णन किया है, उसमें जो पहली सप्तमी है, उसके विषयमें तो आपने विस्तारपूर्वक वर्णन किया, किंतु शेष छः सप्तमियोंके विषयमें कुछ नहीं कहा। अतः अन्य सभी सप्तमियोंका भी आप वर्णन करें, जिनमें उपवास करके मैं सूर्यलोकको प्राप्त कर सकूँ।

ब्रह्माजी बोले—दिण्डिन्! शुक्ल पक्षकी जिस सप्तमीको हस्त नक्षत्र हो, उसे 'जया' सप्तमी कहते हैं। उस दिन किया गया दान, हवन, जप, तर्पण तथा देव-पूजन एवं सूर्यदेवका पूजन सौगुना लाभप्रद होता है। यह सप्तमी भगवान् भास्करको अत्यन्त प्रिय है। यह पापनाशिनी, श्रेष्ठ यश देनेवाली, पुत्र प्राप्त करानेवाली, अभीष्ट इच्छाओंको पूर्ण करनेवाली और लक्ष्मीको प्राप्त करानेवाली है। प्राचीन कालमें इसी तिथिको भगवान् सूर्यने हस्त नक्षत्रपर संक्रमण किया था, इसलिये इसे शुक्ला सप्तमी भी कहते हैं। अपने दोनों हाथोंमें कमल धारण किये हुए भगवान् सूर्यकी स्वर्णमयी प्रतिमा बनाकर विधिपूर्वक

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

वर्षभर उनका पूजन करना चाहिये। इस व्रतमें तीन पारणाएँ करनी चाहिये। प्रथम पारणा चार मासपर करे। उसमें करवीरके पुष्प तथा रक्त चन्दन, गुग्गुल-धूप तथा गेहूँके आटेके लड्डूके नैवेद्य आदिसे पूजा करनी चाहिये। इस विधिसे देवाधिपति मार्तण्ड भगवान् सूर्यकी विधिपूर्वक पूजा करके ब्राह्मणोंकी पूजा करे। सप्तमी तिथिमें उपवास रखकर अष्टमीको पारणा करनी चाहिये। इस पारणामें पीली सरसोंमिश्रित जलसे स्नान करे, गोमयका प्राशन करे तथा मदारसे दन्तधावन करे। '**भानुर्मे प्रीयताम्**'—'भगवान् सूर्य मुझपर प्रसन्न हों'—ऐसा उच्चारण करते हुए ये क्रियाएँ सम्पन्न करे। यह पहली पारणा-विधि है।

दूसरी पारणामें मालतीके पुष्प, श्रीखण्ड-चन्दन, पायसका नैवेद्य तथा विजय-धूप देनी चाहिये। ब्राह्मणोंको भोजन कराकर स्वयं भी वैसा ही भोजन करना चाहिये। '**रविर्मे प्रीयताम्**'—'सूर्यदेव! मुझपर प्रसन्न हों'—ऐसा कहते हुए पञ्चगव्य प्राशनकर खदिरकी लकड़ीसे दन्तधावन करना चाहिये।

तीसरी पारणामें अगस्ति-पुष्पसे भगवान् भास्करका पूजन करना चाहिये। इस व्रतमें भगवान् सूर्यको श्रीखण्ड, कुसुम, सिह्लक-धूप देने चाहिये, क्योंकि ये भगवान्‌को अत्यन्त प्रिय हैं।

'**विकर्तनो मे प्रीयताम्**'—'भगवान् विकर्तन-सूर्य मुझपर प्रसन्न हों'—ऐसी प्रार्थना करते हुए कुशोदकका प्राशन करना चाहिये तथा बेरकी दातून करनी चाहिये। वर्षके अन्तमें भगवान् सूर्यकी गन्ध-पुष्प तथा नैवेद्यादि उपचारोंसे विधिवत् पूजा करनी चाहिये, अनन्तर उन्हींके समक्ष अवस्थित होकर परम पवित्र पुराणका वाचन करवाना चाहिये।

विभो! इस विधिसे जो पुरुष इस सप्तमी-तिथिका व्रत करता है, उसके स्नानादिक समस्त व्रतके कार्य सौगुना फल देनेवाले हो जाते हैं। इस सप्तमीके व्रतको करनेवाला व्यक्ति यश, धन, धान्य, सुवर्ण, पुत्र, आयु, बल तथा लक्ष्मीको प्राप्त कर सूर्यलोकको जाता है। (अध्याय ९६)

जयन्ती-सप्तमीका विधान और फल

ब्रह्माजी बोले—त्रिलोचन! माघ मासके शुक्ल पक्षकी सप्तमी तिथि जयन्ती-सप्तमी कही जाती है, यह पुण्यदायिनी, पापविनाशिनी तथा कल्याणकारिणी है। इस तिथिपर जिस विधिसे उपासना करनी चाहिये, उसे आप सुनें। पण्डितोंने इस व्रतमें चार पारणाओंका उल्लेख किया है। पञ्चमी तिथिमें एकभुक्त, षष्ठीमें नक्तव्रत और सप्तमीमें उपवास करके अष्टमीमें पारणा करनी चाहिये। माघ, फाल्गुन तथा चैत्र मासमें जब जयन्ती-सप्तमीका व्रत किया जाय तब भगवान् सूर्यको बकुलके सुन्दर पुष्प चढ़ाने चाहिये तथा कुंकुमका विलेपन करना चाहिये, मोदकोंका नैवेद्य और घृतका धूप देना चाहिये। पञ्चगव्य-प्राशन करके पवित्रीकरण करना चाहिये। ब्राह्मणोंको मोदक यथाशक्ति खिलाना चाहिये तथा शालि नामक चावलका भात भी देना चाहिये। इस प्रकार जो मनुष्य लोकपूज्य भगवान् भास्करकी पूजा करता है, वह इस व्रतकी सभी पारणाओंमें अश्वमेध एवं राजसूय-यज्ञका फल प्राप्त करता है।

द्वितीय पारणामें सूर्यभगवान्‌की पूजा करके राजसूय-यज्ञका फल प्राप्त होता है। वैशाख, ज्येष्ठ और आषाढ़ मासमें सूर्यदेवकी पूजा करनेके लिये शतदल कमल तथा श्वेत चन्दन और गुग्गुलके धूपका विधान कहा गया है। इसमें गुड़के बने हुए अपूपका नैवेद्य अर्पित करना चाहिये और गोमयका प्राशन करना चाहिये। ब्राह्मणोंको गुड़से

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

बने हुए अपूपोंका भोजन कराना अच्छा माना गया है। यह पारणा पापनाशिका है।

तृतीय पारणाकी विधि इस प्रकार है—श्रावण, भाद्रपद और आश्विन मासमें रक्त चन्दन, मालतीके पुष्प और विजय नामक धूपका पूजनमें प्रयोग करना चाहिये। घृतमें बनाये गये अपूपोंका नैवेद्य निवेदित करना चाहिये। ब्राह्मणोंको भोजन भी उसी घृतके अपूपोंसे करानेका विधान है। शरीरको परम पवित्र करनेवाले कुशोदकका पान करना चाहिये। यह तृतीय पारणा पापोंका नाश करनेवाली कही गयी है।

अब चौथी पारणा बता रहा हूँ, इसे सुनें—कार्तिक, मार्गशीर्ष तथा पौष मासमें सूर्यपूजनकी पारणा करनेसे अनन्त पुण्यफल प्राप्त होते हैं। इस पारणामें कनेरके लाल पुष्प, रक्त चन्दन देने चाहिये। अमृत[१] नामका धूप, पायसका श्रेष्ठ नैवेद्य निवेदित करना चाहिये। श्वेत गायके मट्ठेका प्राशन करनेका विधान है।

चारों पारणाओंमें क्रमशः **'चित्रभानुः प्रीयताम्'**, **'भानुः प्रीयताम्'**, **'आदित्यः प्रीयताम्'** तथा **'भास्करः प्रीयताम्'**—ऐसा उच्चारण करना चाहिये। इस विधिसे जो मनुष्य विभावसु भगवान् सूर्यनारायणकी पूजा करता है, वह परम पदको प्राप्त होता है। इस प्रकार सप्तमी-व्रत करनेपर व्रतकर्ताको सभी अभीष्ट कामनाओंकी प्राप्ति हो जाती है। पुत्रार्थी पुत्र तथा धनार्थी धन प्राप्त करता है और रोगी मनुष्य रोगोंसे मुक्त हो जाता है तथा अन्तमें वह नितान्त कल्याण प्राप्त करता है।

इस प्रकार जो मनुष्य इस सप्तमी-व्रतका आचरण करता है, वह सर्वत्र विजयी होता है तथा सभी पापोंसे मुक्त होकर वह विशुद्धात्मा सूर्यलोकको प्राप्त करता है। (अध्याय ९७)

अपराजिता-सप्तमी एवं महाजया-सप्तमी-व्रतका वर्णन

ब्रह्माजी बोले—गणाधिप! भाद्रपद मासके शुक्लपक्षकी सप्तमी तिथि अपराजिता-सप्तमी नामसे विख्यात है। यह महापातकोंका नाश करती है। इस व्रतमें चतुर्थी तिथिको एकभुक्त और पञ्चमी तिथिमें नक्तव्रत करनेका विधान है। षष्ठी तिथिको उपवास करके सप्तमी तिथिमें पारणा करनेका विधान है। विद्वानोंने इसमें भी चार पारणाएँ बतायी हैं। सूर्यदेवकी पूजा करवीर-पुष्प, रक्त चन्दन, गुग्गुलसे बने हुए धूप, गुड़से बने अपूपसे करनी चाहिये। भाद्रपद आदि तीन मासोंमें श्वेत पुष्प, श्वेत चन्दन, घृतका धूप तथा पायसके नैवेद्यसे सूर्यदेवका पूजन करना चाहिये। मार्गशीर्ष आदि तीन महीनोंमें अगस्त्य-पुष्प, कुंकुमका विलेपन, सिह्लक-धूप, शालि-चावलके नैवेद्य आदिसे पूजा करनी चाहिये। फाल्गुन आदि तीन मासोंमें रक्त कमलके पुष्प, अगरु, चन्दन, अनन्त[२] नामक धूप, शर्करा या मिश्रीखण्डसे बने हुए अपूपोंके नैवेद्यसे सूर्यदेवकी पूजा करनी चाहिये। विद्वानोंने ज्येष्ठ आदिके महीनोंमें सूर्यदेवकी

१-अगरुं चन्दनं मुस्तं सिह्लकं त्र्यूषणं तथा। समभागैस्तु कर्तव्यमिदं चामृतमुच्यते॥ (ब्राह्मपर्व ९७। १९)

अगरु, चन्दन, मोथा, सिह्लक (एक गन्ध-द्रव्य) और त्रिकटु (सोंठ, पीपर, मिर्च)-को समभाग लेकर जो धूप बनाया जाता है, उसे अमृत-धूप कहते हैं।

२-श्रीखण्डं ग्रन्थिसहितमगुरुः सिह्लकं तथा। मुस्ता तथेन्द्रं भूतेश शर्करा गृह्यते त्र्यहम्॥
इत्येष धूपोऽनन्तस्तु कथितो देवसत्तम। (ब्राह्मपर्व ९८। ९-१०)

श्रीखण्ड, अगरु, सिह्लक, नागरमोथा, ग्रन्थिपर्णी, इन्द्रायण तथा शर्करा मिलाकर जो धूप बनाया जाता है, उसे अनन्त नामक धूप कहा गया है।

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

पूजा करनेके लिये इसी विधिको कहा है। चारों पारणाओंमें क्रमशः भगवान् सूर्यदेवके नाम इस प्रकार हैं—सुधांशु, अर्यमा, सविता और त्रिपुरान्तक। सभी पारणाओंमें क्रमशः **'सुधांशुः प्रीयताम्'** इत्यादि कहे। गोमूत्र, पञ्चगव्य, घृत, गरम दूध—ये व्रतके क्रमशः प्राशन-पदार्थ हैं।

जो मनुष्य इस विधिसे इस सप्तमी-व्रतको करता है, वह युद्धमें शत्रुओंसे पराजित नहीं होता। वह शत्रुको जीतकर धर्म, अर्थ तथा काम—इस त्रिवर्गके फलको भी निःसंदेह प्राप्त कर लेता है। त्रिवर्गको प्राप्त करके वह सूर्यलोकको प्राप्त होता है।

जो मनुष्य इस प्रकार सदा प्रयत्नपूर्वक सप्तमी-व्रतको करता है, वह शत्रुको पराजित करके सूर्यलोकको प्राप्त करता है और श्वेत अश्वोंसे युक्त एवं स्वर्णिम ध्वज-पताकासे समन्वित यानके द्वारा भगवान् वरुणदेवके समीपमें जाकर उनका प्रिय हो जाता है।

ब्रह्माजी बोले—शुक्ल पक्षकी सप्तमी तिथिमें जब सूर्य संक्रमण करते हैं, तब वह सप्तमी महाजया कहलाती है, जो भगवान् भास्करको अत्यन्त प्रिय है। इस अवसरपर किये गये स्नान, दान, जप, होम और पितृ-देव-पूजन—ये सब कार्य कोटि-गुना फल देते हैं—ऐसा भगवान् भास्करने स्वयं कहा है। (अध्याय ९८-९९)

नन्दा-सप्तमी तथा भद्रा-सप्तमी-व्रतका विधान

ब्रह्माजी बोले—हे वीर! मार्गशीर्ष मासमें शुक्ल पक्षकी जो सप्तमी होती है, वह नन्दा कहलाती है। वह सभीको आनन्दित करनेवाली तथा कल्याणकारिणी है। इस व्रतमें पञ्चमी तिथिको एकभुक्त और षष्ठी तिथिमें नक्तव्रत कर मनीषीलोग सप्तमी तिथिको उपवास बतलाते हैं। इस व्रतमें विद्वानोंने तीन पारणाओंके करनेका उपदेश किया है। इसके पूजनमें मालतीके पुष्प, सुगन्ध, चन्दन, कर्पूर और अगरुसे मिश्रित धूपका प्रयोग करना चाहिये। खाँड़के सहित दही-भातका नैवेद्य भगवान् भास्करको प्रिय है। उसी खाँड़मिश्रित दही-भातका भोजन ब्राह्मणोंको करवाना चाहिये। तत्पश्चात् स्वयं भी उसी भोजनको करना चाहिये। भगवान् भास्करको धूप देनेके लिये प्रथम पारणामें विधि इस प्रकार है—पलाशके पुष्प, पक्षक[१] धूप अथवा यथासामर्थ्य जो भी धूप हो सके, उसी धूपसे पूजा करनी चाहिये।

द्वितीय पारणामें प्रबोध[२] धूप, शर्कराखण्डसे मिश्रित पुएका नैवेद्य सूर्यनारायणको अर्पित करनेका विधान है। खाँड़मिश्रित भोजनसे ब्राह्मणोंको भोजन भी कराना चाहिये। निम्ब-पत्रका प्राशन करनेके पश्चात् स्वयं भी मौन होकर भोजन करना चाहिये।

तृतीय पारणामें भगवान् भास्करको प्रसन्न करनेके लिये नील या श्वेत कमल और गुग्गुलके धूप तथा पायसका नैवेद्य अर्पित करना चाहिये। प्राशनमें तथा विलेपनमें भी चन्दनके उपयोगकी विधि कही गयी है।

१-कर्पूरं चन्दनं कुष्ठमगरुः सिह्लकं तथा॥
सग्रन्थि वृषणं भीम कुंकुमं गृञ्जनं तथा। हरीतकी तथा भीम एष पक्षक उच्यते॥
(ब्राह्मपर्व १००। ६-७)

कर्पूर, चन्दन, कुष्ठ (कुटकी), अगरु, सिह्लक, ग्रंन्थिपर्णी, कस्तूरी, कुंकुम, गृञ्जन तथा हरीतकीके मेलसे पक्षक धूप बनता है।

२-कृष्णागरुः सितं कंजं बालकं वृषणं तथा॥
चन्दनं तगरो मुस्ता प्रबोधशर्करान्विता। (ब्राह्मपर्व १००। ८-९)

कृष्णागरु, श्वेत कमल, सुगन्धबाला, कस्तूरी, चन्दन, तगरु, नागरमोथा और शर्करा मिलाकर प्रबोध धूप बनता है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

मनुष्योंको सदा पवित्र करनेवाले भगवान् सूर्यनारायणके नामोंको भी सुनें—विष्णु, भग तथा धाता—ये उनके नाम हैं। प्रत्येक पारणामें क्रमशः **'विष्णुः प्रीयताम्'** इत्यादि उच्चारण करना चाहिये। इस विधिसे जो मनुष्य दत्तचित्त होकर भगवान् भास्करकी पूजा करता है, वह इस लोकमें अपनी कामनाओंको पूर्ण करके अनन्तकालतक आनन्दित रहता है। तत्पश्चात् सूर्यलोकमें जाकर वह वहाँ भी आनन्दको प्राप्त करता है।

ब्रह्माजी बोले—शुक्ल पक्षमें सप्तमी तिथिको जब हस्त नक्षत्र हो तो वह भद्रा-सप्तमी कही जाती है। उस दिन भगवान् सूर्यदेवको पहले घीसे, अनन्तर दूधसे तत्पश्चात् इक्षुरससे स्नान कराकर चन्दनका लेप करना चाहिये। तत्पश्चात् उन्हें गुग्गुलका धूप दिखाये। चतुर्थी तिथिको एकभुक्त तथा पञ्चमी तिथिको नक्तव्रत करनेका विधान है। षष्ठी तिथिको अयाचित रहकर सप्तमी तिथिको उपवास रखना श्रेष्ठ कहा गया है। सप्तमी-व्रतका पालन करनेवाले मनुष्यको चाहिये कि वह उस व्रतके दिन पाखण्डी, सत्कर्मोंसे दूर करनेवाले, विडाल-वृत्तिका आचरण करनेवाले मनुष्योंसे दूर रहे। बुद्धिमान् व्यक्ति सप्तमी-व्रतका पालन करते हुए दिनमें शयन न करे। इस विधिसे जो मनुष्य भद्रा-सप्तमीका व्रत करता है, उसे ऋभु नामक देवता सदा समस्त कल्याणकी वस्तुएँ प्रदान करते हैं। जो मनुष्य इस तिथिको शालिचूर्णसे भद्र (वृषभ) बनाकर सूर्यदेवको समर्पित करता है, उसको भद्र पुत्र प्राप्त होता है और वह जीवनपर्यन्त आनन्दित रहता है।

जो मनुष्य भक्तिपूर्वक सप्तमी-कल्पको प्रारम्भसे सुनता है, वह अश्वमेध-यज्ञके फलको प्राप्त करनेके पश्चात् परमपद—मोक्षको प्राप्त होता है।

(अध्याय १००-१०१)

तिथियों और नक्षत्रोंके देवता तथा उनके पूजनका फल

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! यद्यपि भगवान् सूर्यको सभी तिथियाँ प्रिय हैं, किंतु सप्तमी तिथि विशेष प्रिय है।

शतानीकने पूछा—जब भगवान् सूर्यको सभी तिथियाँ प्रिय हैं तो सप्तमीमें ही यज्ञ, दान आदि विशेषरूपसे क्यों अनुष्ठित होते हैं?

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! प्राचीन कालमें इस विषयमें भगवान् विष्णुने सुरज्येष्ठ ब्रह्माजीसे जो प्रश्न किये थे और ब्रह्माजीने जैसा बतलाया था, उसे मैं आपको बताता हूँ, आप श्रवण करें—

ब्रह्माजी बोले—विष्णो! विभाजनके समय प्रतिपद् आदि सभी तिथियाँ अग्नि आदि देवताओंको तथा सप्तमी भगवान् सूर्यको प्रदान की गयी। जिन्हें जो तिथि दी गयी, वह उसका ही स्वामी कहलाया। अतः अपने दिनपर ही अपने मन्त्रोंसे पूजे जानेपर वे देवता अभीष्ट प्रदान करते हैं।

सूर्यने अग्निको प्रतिपदा, ब्रह्माको द्वितीया, यक्षराज कुबेरको तृतीया और गणेशको चतुर्थी तिथि दी है। नागराजको पञ्चमी, कार्तिकेयको षष्ठी, अपने लिये सप्तमी और रुद्रको अष्टमी तिथि प्रदान की है। दुर्गादेवीको नवमी, अपने पुत्र यमराजको दशमी, विश्वेदेवगणोंको एकादशी तिथि दी गयी है। विष्णुको द्वादशी, कामदेवको त्रयोदशी, शङ्करको चतुर्दशी तथा चन्द्रमाको पूर्णिमाकी तिथि दी है। सूर्यके द्वारा पितरोंको पवित्र, पुण्यशालिनी अमावास्या तिथि दी गयी है। ये कही गयी पंद्रह तिथियाँ चन्द्रमाकी हैं। कृष्ण पक्षमें देवता इन सभी तिथियोंमें शनैः शनैः चन्द्रकलाओंका पान कर लेते हैं। वे शुक्ल पक्षमें पुनः सोलहवीं कलाके साथ उदित होती हैं। वह अकेली षोडशी कला

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सदैव अक्षय रहती है। उसमें साक्षात् सूर्यका निवास रहता है। इस प्रकार तिथियोंका क्षय और वृद्धि स्वयं सूर्यनारायण ही करते हैं। अतः वे सबके स्वामी माने जाते हैं। ध्यानमात्रसे ही सूर्यदेव अक्षय गति प्रदान करते हैं। दूसरे देवता भी जिस प्रकार उपासकोंकी अभीष्ट कामना पूर्ण करते हैं, उसे मैं संक्षेपमें बताता हूँ, आप सुनें—

प्रतिपदा तिथिमें अग्निदेवकी पूजा करके अमृतरूपी घृतका हवन करे तो उस हविसे समस्त धान्य और अपरिमित धनकी प्राप्ति होती है। द्वितीयाको ब्रह्माकी पूजा करके ब्रह्मचारी ब्राह्मणको भोजन करानेसे मनुष्य सभी विद्याओंमें पारङ्गत हो जाता है। तृतीया तिथिमें धनके स्वामी कुबेरका पूजन करनेसे मनुष्य निश्चित ही विपुल धनवान् बन जाता है तथा क्रय-विक्रयादि व्यापारिक व्यवहारमें उसे अत्यधिक लाभ होता है। चतुर्थी तिथिमें भगवान् गणेशका पूजन करना चाहिये। इससे सभी विघ्नोंका नाश हो जाता है, इसमें संदेह नहीं। पञ्चमी तिथिमें नागोंकी पूजा करनेसे विषका भय नहीं रहता, स्त्री और पुत्र प्राप्त होते हैं और श्रेष्ठ लक्ष्मी भी प्राप्त होती है। षष्ठी तिथिमें कार्तिकेयकी पूजा करनेसे मनुष्य श्रेष्ठ मेधावी, रूपसम्पन्न, दीर्घायु और कीर्तिको बढ़ानेवाला हो जाता है। सप्तमी तिथिको चित्रभानु नामवाले भगवान् सूर्यनारायणका पूजन करना चाहिये, ये सबके स्वामी एवं रक्षक हैं। अष्टमी तिथिको वृषभसे सुशोभित भगवान् सदाशिवकी पूजा करनी चाहिये, वे प्रचुर ज्ञान तथा अत्यधिक कान्ति प्रदान करते हैं। भगवान् शङ्कर मृत्युहरण करनेवाले, ज्ञान देनेवाले और बन्धनमुक्त करनेवाले हैं। नवमी तिथिमें दुर्गाकी पूजा करके मनुष्य इच्छापूर्वक संसार-सागरको पार कर लेता है तथा संग्राम और लोकव्यवहारमें वह सदा विजय प्राप्त करता है। दशमी तिथिको यमकी पूजा करनी चाहिये, वे निश्चित ही सभी रोगोंको नष्ट करनेवाले और नरक तथा मृत्युसे मानवका उद्धार करनेवाले हैं। एकादशी तिथिको विश्वेदेवोंकी भली प्रकारसे पूजा करनी चाहिये। वे भक्तको संतान, धन-धान्य और पृथ्वी प्रदान करते हैं। द्वादशी तिथिको भगवान् विष्णुकी पूजा करके मनुष्य सदा विजयी होकर समस्त लोकमें वैसे ही पूज्य हो जाता है, जैसे किरणमाली भगवान् सूर्य पूज्य हैं। त्रयोदशीमें कामदेवकी पूजा करनेसे मनुष्य उत्तम रूपवान् हो जाता है और मनोवाञ्छित रूपवती भार्या प्राप्त करता है तथा उसकी सभी कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं। चतुर्दशी तिथिमें भगवान् देवदेवेश्वर सदाशिवकी पूजा करके मनुष्य समस्त ऐश्वर्योंसे समन्वित हो जाता है तथा बहुत-से पुत्रों एवं प्रभूत धनसे सम्पन्न हो जाता है। पौर्णमासी तिथिमें जो भक्तिमान् मनुष्य चन्द्रमाकी पूजा करता है, उसका सम्पूर्ण संसारपर अपना आधिपत्य हो जाता है और वह कभी नष्ट नहीं होता। दिण्डिन्! अपने दिनमें अर्थात् अमावास्यामें पितृगण पूजित होनेपर सदैव प्रसन्न होकर प्रजावृद्धि, धन-रक्षा, आयु तथा बल-शक्ति प्रदान करते हैं। उपवासके बिना भी ये पितृगण उक्त फलको देनेवाले होते हैं। अतः मानवको चाहिये कि पितरोंको भक्तिपूर्वक पूजाके द्वारा सदा प्रसन्न रखे। मूलमन्त्र, नाम-संकीर्तन और अंश मन्त्रोंसे कमलके मध्यमें स्थित तिथियोंके स्वामी देवताओंकी विविध उपचारोंसे भक्तिपूर्वक यथाविधि पूजा करनी चाहिये तथा जप-होमादि कार्य सम्पन्न करने चाहिये। इसके प्रभावसे मानव इस लोकमें और परलोकमें सदा सुखी रहता है। उन-उन देवोंके लोकोंको प्राप्त करता है और मनुष्य उस देवताके अनुरूप हो जाता है। उसके सारे अरिष्ट

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

नष्ट हो जाते हैं तथा वह उत्तम रूपवान्, धार्मिक, शत्रुओंका नाश करनेवाला राजा होता है।

इसी प्रकार सभी नक्षत्र-देवता जो नक्षत्रोंमें ही व्यवस्थित हैं, वे पूजित होनेपर समस्त अभीष्ट कामनाओंको प्रदान करते हैं, अब मैं उनके विषयमें बताता हूँ। अश्विनी नक्षत्रमें अश्विनीकुमारोंकी पूजा करनेसे मनुष्य दीर्घायु एवं व्याधिमुक्त होता है। भरणी नक्षत्रमें कृष्णवर्णके सुन्दर पुष्पों तथा शुभ्र कर्पूरादि गन्धसे पूजित यमदेव अपमृत्युसे मुक्त कर देते हैं। कृत्तिका नक्षत्रमें रक्त पुष्पोंसे बनी हुई माल्यादि और होमके द्वारा पूजा करनेसे अग्निदेव निश्चित ही यथेष्ट फल देते हैं। रोहिणी नक्षत्रमें प्रजापति—मुझ ब्रह्माकी पूजा करनेसे मैं उसकी अभिलाषा पूर्ण कर देता हूँ। मृगशिरा नक्षत्रमें पूजित होनेपर उसके स्वामी चन्द्रदेव उसे ज्ञान और आरोग्य प्रदान करते हैं। आर्द्रा नक्षत्रमें शिवके अर्चनसे विजय प्राप्त होती है। सुन्दर कमल आदि पुष्पोंसे पूजे गये भगवान् शिव सदा कल्याण करते हैं।

पुनर्वसु नक्षत्रमें अदितिकी पूजा करनी चाहिये। पूजासे संतृप्त होकर वे माताके सदृश रक्षा करती हैं। पुष्य नक्षत्रमें उसके स्वामी बृहस्पति अपनी पूजासे प्रसन्न होकर प्रचुर सद्बुद्धि प्रदान करते हैं। आश्लेषा नक्षत्रमें नागोंकी पूजा करनेसे नागदेव निर्भय कर देते हैं, काटते नहीं। मघा नक्षत्रमें हव्य-कव्यके द्वारा पूजे गये सभी पितृगण धन-धान्य, भृत्य, पुत्र तथा पशु प्रदान करते हैं। पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रमें पूषाकी पूजा करनेपर विजय प्राप्त हो जाती है और उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें भग नामक सूर्यदेवकी पुष्पादिसे पूजा करनेपर वे विजय, कन्याको अभीप्सित पति और पुरुषको अभीष्ट पत्नी प्रदान करते हैं तथा उन्हें रूप एवं द्रव्य-सम्पदासे सम्पन्न बना देते हैं। हस्त नक्षत्रमें भगवान् सूर्य गन्ध-पुष्पादिसे पूजित होनेपर सभी प्रकारकी धन-सम्पत्तियाँ प्रदान करते हैं। चित्रा नक्षत्रमें पूजे गये भगवान् त्वष्टा शत्रुरहित राज्य प्रदान करते हैं। स्वाती नक्षत्रमें वायुदेव पूजित होनेपर संतुष्ट हो परमशक्ति प्रदान करते हैं। विशाखा नक्षत्रमें लाल पुष्पोंसे इन्द्राग्निका पूजन करके मनुष्य इस लोकमें धन-धान्य प्राप्तकर सदा तेजस्वी रहता है।

अनुराधा नक्षत्रमें लाल पुष्पोंसे भगवान् मित्रदेवकी भक्तिपूर्वक विधिवत् पूजा करनेसे लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है और वह इस लोकमें चिरकालतक जीवित रहता है। ज्येष्ठा नक्षत्रमें देवराज इन्द्रकी पूजा करनेसे मनुष्य पुष्टि प्राप्त करता है तथा गुणोंमें, धनमें एवं कर्ममें सबसे श्रेष्ठ हो जाता है। मूल नक्षत्रमें सभी देवताओं और पितरोंकी भक्तिपूर्वक पूजा करनेसे मानव स्वर्गमें अचलरूपसे निवास करता है और पूर्वोक्त फलोंको प्राप्त करता है। पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रमें अप्-देवता (जल)-की पूजा और हवन करके मनुष्य शारीरिक तथा मानसिक संतापोंसे मुक्त हो जाता है। उत्तराषाढ़ा नक्षत्रमें विश्वेदेवों और भगवान् विश्वेश्वरकी पुष्पादिद्वारा पूजा करनेसे मनुष्य सभी कुछ प्राप्त कर लेता है।

श्रवण नक्षत्रमें श्वेत, पीत और नीलवर्णके पुष्पोंद्वारा भक्तिभावसे भगवान् विष्णुकी पूजा कर मनुष्य उत्तम लक्ष्मी और विजयको प्राप्त करता है। धनिष्ठा नक्षत्रमें गन्ध-पुष्पादिसे वसुओंके पूजनसे मनुष्य बहुत बड़े भयसे भी मुक्त हो जाता है। उसे कहीं कुछ भी भय नहीं रहता। शतभिषा नक्षत्रमें इन्द्रकी पूजा करनेसे मनुष्य व्याधियोंसे मुक्त हो जाता है और आतुर व्यक्ति पुष्टि, स्वास्थ्य और ऐश्वर्यको प्राप्त करता है। पूर्वाभाद्रपद नक्षत्रमें शुद्ध स्फटिक मणिके समान कान्तिमान् अजन्मा प्रभुकी पूजा करनेसे उत्तम भक्ति और विजय प्राप्त होती है। उत्तराभाद्रपद नक्षत्रमें अहिर्बुध्न्यकी पूजा करनेसे परम शान्तिकी प्राप्ति होती है। रेवती

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

नक्षत्रमें श्वेत पुष्पसे पूजे गये भगवान् पूषा सदैव मङ्गल प्रदान करते हैं और अचल धृति तथा विजय भी देते हैं।

अपनी सामर्थ्यके अनुसार भक्तिसे किये गये पूजनसे ये सभी सदा फल देनेवाले होते हैं। यात्रा करनेकी इच्छा हो अथवा किसी कार्यको प्रारम्भ करनेकी इच्छा हो तो नक्षत्र-देवताकी पूजा आदि करके ही वह सब कार्य करना उचित है। इस प्रकार करनेपर यात्रामें तथा क्रियामें सफलता होती है—ऐसा स्वयं भगवान् सूर्यने कहा है।

ब्रह्माजीने कहा—मधुसूदन! आप भक्तिपूर्वक सूर्यकी आराधना करें; क्योंकि भगवान् सूर्यकी नित्य पूजा, नमस्कार, सेवा-व्रत, उपवास, हवनादि तथा विविध प्रकारसे ब्राह्मणोंको तृप्त करनेसे मनुष्य पापरहित होकर सूर्यलोकको प्राप्त करता है।

(अध्याय १०२)

सूर्य-पूजाका माहात्म्य

ब्रह्माजी बोले—मधुसूदन! जो मनुष्य भक्तिपूर्वक सूर्यदेवका मन्दिर बनवाता है, वह अपनी सात पीढ़ियोंको दिव्य सूर्यलोक प्राप्त करा देता है। सूर्यदेवके मन्दिरमें जितने वर्षपर्यन्त भगवान् सूर्यकी पूजा होती है, उतने हजार वर्षोंतक वह सूर्यलोकमें आनन्द प्राप्त करता है। जिसके घरमें अर्घ्य, पुष्प, चन्दन, नैवेद्य आदिके द्वारा भगवान् सूर्यकी विधिपूर्वक आराधना होती है, वह चाहे सकाम हो या निष्काम, वह सूर्यकी साम्यता प्राप्त कर लेता है। भगवान् सूर्यमें अपने मनको लगाकर जो व्यक्ति अत्यन्त सुगन्धित मनोहारी पुष्प, विजय तथा अमृतादि नामक धूप, अत्यधिक सुगन्धित कर्पूरादिके विलेपनका लेप, दीपदान, नैवेद्य आदि उपहार भगवान् सूर्यनारायणको प्रतिदिन अर्पण करता है, वह अपनी अभीष्ट इच्छा प्राप्त कर लेता है। यज्ञाधिपति भगवान् भास्कर यज्ञोंसे भी प्रसन्न होते हैं, किंतु धनवान् तथा लोकसंचयी मनुष्य ही बहुत-से संसाधनों और नाना प्रकारके सम्भारोंसे युक्त एवं विस्तृत (अश्वमेध तथा राजसूयादि) यज्ञ सम्पन्न कर पाते हैं, इसलिये यदि मनुष्य भगवान् सूर्यकी भक्तिभावसे दूर्वाङ्कुरोंसे भी पूजा करते हैं तो सूर्यदेव उन्हें इन सभी यज्ञोंके करनेसे प्राप्त होनेवाले अति दुर्लभ फलको प्रदान कर देते हैं।

सूर्यदेवको अर्पित करनेयोग्य पुष्प, भोज्य-पदार्थ—नैवेद्य, धूप, गन्ध और शरीरमें लगानेवाला अनुलेप्य-पदार्थ, भूषण और लाल वस्त्र जो भी उपहार तथा भक्ष्य फल है, वह सब सूर्यदेवके अनुरूप होना चाहिये। उन आदिदेव यज्ञपुरुषकी आप यथाशक्ति आराधना करें। भगवान् सूर्यके मन्दिरमें जो चित्रभानु भगवान् दिवाकरको तीर्थके पवित्र जल, गन्ध, मधु, घृत और दूधसे स्नान कराता है, वह स्वर्गलोकके समान मधुर दूध-दहीसे सम्पन्न हो जाता है अथवा शाश्वत शान्तिको प्राप्त कर लेता है। अनेक विदेहवंशीय जनक नामसे प्रख्यात राजा और हैहयवंशी नृपतिगण भगवान् सूर्यकी आराधनासे अमरत्वको प्राप्त हो गये हैं। इसलिये आप भी विधिपूर्वक उपासनासे भगवान् भास्करको संतुष्ट करें, इससे प्रसन्न हुए भगवान् सूर्य शान्ति प्रदान करते हैं।

विष्णुने पूछा—ब्रह्मन्! भगवान् सूर्य उपवाससे कैसे संतुष्ट होते हैं? उपवास करनेवाले भक्तके द्वारा इनकी आराधना किस प्रकार की जाय? इसे आप बतायें।

ब्रह्माजीने कहा—जब भोगपरायण व्यक्ति भी धूप, पुष्प आदि उपचारोंसे भगवान् सूर्यकी तन्मयतापूर्वक आराधना कर कल्याण प्राप्त कर

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

लेता है तो फिर उपवास-परायण व्यक्ति यदि आराधना करता है तो उसके कल्याणके विषयमें कहना ही क्या है?

पापोंसे दूर रहना, सद्गुणोंका आचरण करना और सम्पूर्ण भोगोंसे विरत रहना उपवास कहलाता है। जो उपवास-परायण पुरुष भक्तिभावसे एक रात, दो रात अथवा तीन रात भगवान् सूर्यका ध्यान करता है, उनके नामका जप करता है और उनके उद्देश्यसे ही सम्पूर्ण कार्य करता है तथा उन्हींमें अपना मन लगाये हुए है, ऐसा अनासक्त पुरुष भगवान् सूर्यकी पूजा कर उस परम ब्रह्मको प्राप्त कर लेता है। जो मनुष्य किसी कामनावश अपने मनको भगवान् सूर्यमें लगाकर ध्यानपूर्वक उनकी उपासना करता है, वह वृषध्वज भगवान् सूर्यके प्रसन्न होनेपर उस उद्देश्यको प्राप्त कर लेता है।

विष्णुने पूछा—विभो! ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा स्त्री आदि सभी सांसारिक पङ्कमें फँसे हुए हैं, उन्हें सुगति कैसे प्राप्त होगी?

ब्रह्माजीने कहा—मनुष्य निष्कपटभावसे तिमिरहर भगवान् भास्करकी आराधना करके सद्गति प्राप्त कर सकता है। जो व्यक्ति विषयोंमें आसक्त है तथा भगवान् सूर्यमें मन नहीं लगाता, ऐसा पाप-कर्म करनेवाला मनुष्य सद्गति कैसे प्राप्त कर सकेगा? संसारके दुःखसे पीड़ित व्यक्ति सद्गति प्राप्त करना चाहता है तो उस लोकपूज्य सर्वेश्वर भगवान् ग्रहाधिपति सूर्यकी पुष्प, सुगन्धित धूप, अगरु, चन्दन, वस्त्र, आभूषण तथा भक्ष्य-नैवेद्यादि उपचारोंसे उपवास-परायण होकर आराधना करे। यदि संसारसे विरक्त होकर सद्गति प्राप्त करनेकी अभिलाषा हो तो कालके स्वामी सूर्यदेवकी आराधना करे। यदि उनकी आराधनाके लिये पुष्प नहीं है तो शुभ वृक्षोंके कोमल पल्लवों एवं दूर्वाङ्कुरोंसे भी पूजा की जा सकती है। अपनी सामर्थ्यके अनुसार पुष्प-पत्र-जल तथा धूपसे भक्तिभावपूर्वक भगवान् भास्करकी पूजा कर वह अतुलनीय संतुष्टि प्राप्त कर सकता है। सूर्यदेवके लिये विधिवत् एक बार भी किया गया प्रणाम दस अश्वमेध-यज्ञके बराबर होता है। दस अश्वमेध-यज्ञको करनेवाला मनुष्य बार-बार जन्म लेता है, किंतु सूर्यदेवको प्रणाम करनेवाला पुनः संसारमें जन्म नहीं लेता*।

इस प्रकार भक्तिपूर्वक जिसके द्वारा विधि-विधानसे भगवान् सूर्यकी उपासना की जाती है, वह उत्तम गति प्राप्त करता है। उन्हींकी आराधना करके मैंने संसार-पूज्य इस ब्रह्मत्वको प्राप्त किया है। आपने भी पहले उन्हीं सूर्यदेवसे अपनी अभीष्ट इच्छाओंको प्राप्त किया। भगवान् शङ्कर भी उन्हींकी आराधनासे ब्रह्महत्यासे मुक्त हुए। भगवान् दिवाकरकी आराधनासे किन्हीं मनुष्योंने देवत्व, किन्हींने गन्धर्वत्व और किन्हींने विद्याधरत्व प्राप्त किया है। लेख नामक इन्द्रने एक सौ यज्ञोंद्वारा इन्हीं भगवान् सूर्यकी आराधना करके इन्द्रत्व प्राप्त किया, इसलिये भगवान् सूर्यके अतिरिक्त अन्य कोई देव पूजनीय नहीं है। ब्रह्मचारीको अन्य देवोंकी अपेक्षा अपने श्रेष्ठ गुरु भगवान् भास्करकी ही आराधना करनी चाहिये, क्योंकि वे यज्ञ-पुरुष विवस्वान् भगवान् सूर्य सर्वदा पूज्य हैं। स्त्रियोंके लिये पतिके अतिरिक्त विभावसु भगवान् सूर्यदेव ही पूज्य हैं। गृहस्थ-पतिके लिये भी गोपति अंशुमान् ही पूजनेयोग्य हैं। वैश्योंको भी तमोनाशक सूर्यदेवकी पूजा करनी चाहिये। संन्यासियोंके लिये भी सदैव विभावसु ही ध्यान करनेयोग्य हैं।

* एकोऽपि हेलेः सुकृतः प्रणामो दशाश्वमेधावभृथेन तुल्यः। दशाश्वमेधी पुनरेति जन्म हेलिप्रणामी न पुनर्भवाय॥
(ब्राह्मपर्व १०३। ४५)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

इस प्रकार सभी वर्णों तथा सभी आश्रमोंके लिये चित्रभानु भगवान् सूर्यनारायण ही उपास्य हैं। उनकी आराधनासे सद्गति प्राप्त हो जाती है। (अध्याय १०३)

त्रिवर्ग-सप्तमीकी महिमा

ब्रह्माजी बोले—विष्णो! जिन-जिन कामनाओंको लेकर अथवा निष्काम होकर भगवान् सूर्यनारायणके उपवास-व्रतोंको करके व्यक्ति मनोवाञ्छित फल प्राप्त करता है, अब आप उन-उन उपवास-व्रतोंके विषयमें सुनें।

जो व्यक्ति फाल्गुन मासकी शुक्ला सप्तमी तिथिको भक्तिपूर्वक बार-बार हेलि नामक भगवान् सूर्यका जप एवं पूजन करता है, वह सूर्यलोकको प्राप्त होता है। देव-पूजनमें पवित्र होकर १०८ बार जप करना चाहिये। स्नान करते हुए, प्रस्थान-कालमें, उठते-बैठते अर्थात् सभी समय भगवान् सूर्यका नामोच्चारण करना चाहिये। उपवास करनेवाले व्यक्तिको पाखण्डी, पतित और अन्यायी लोगोंसे बातचीत नहीं करनी चाहिये। श्रद्धापूर्वक सूर्यदेवके प्रति मन एकाग्र करके उनकी पूजा करते हुए इस श्लोकका पाठ करना चाहिये—

हंस हंस कृपालुस्त्वमगतीनां गतिर्भव।
संसारार्णवमग्नानां त्राता भव दिवाकर॥

(ब्राह्मपर्व १०४।५)

'हे परमहंस-स्वरूप भगवान् सूर्य! आप दयालु हैं, गतिहीनोंको सद्गति प्रदान करनेवाले हैं, संसार-सागरमें निमग्न लोगोंके लिये आप रक्षक बनें।'

इस प्रकार एकाग्रचित्त होकर उपवास करते हुए भगवान् सूर्यनारायणका पूजन करना चाहिये। पूर्वाह्णकालमें स्नानकर सूर्यदेवका पूजन करे, तत्पश्चात् **'हंस हंस०'** इस श्लोकका जप करे और भगवान् सूर्यके चरणोंमें तीन बार जलधारा अर्पित करे।

इसी प्रकार चैत्र, वैशाख और ज्येष्ठ मासमें भी भगवान् सूर्यदेवका पूजन करते हुए मनुष्य मृत्युलोकमें ही श्रेष्ठ गतिको प्राप्त कर लेता है और अन्तमें सूर्यलोकको प्राप्त करता है। आषाढ़, श्रावण, भाद्रपद और आश्विन मासमें भी इसी विधिसे उपवास रखकर सूर्यभगवान्का 'मार्तण्ड' नामसे सम्यक् पूजन और जप करना चाहिये। गोमूत्रके प्राशनसे पवित्र मनुष्य धनवान् होकर कुबेरलोकको प्राप्त करता है। संसारके स्वामी अव्यय आत्मस्वरूप भगवान् सूर्यनारायणकी आराधना एवं अन्तकालमें भगवान् सूर्यका स्मरण करनेसे सूर्यलोककी प्राप्ति होती है। कार्तिक आदि चार महीनोंमें दूधका प्राशन करना चाहिये। इन महीनोंमें 'भास्कर' नामसे भगवान् सूर्यका पूजन तथा जप करना चाहिये। ऐसा करनेपर व्यक्ति भगवान् सूर्यके लोकको प्राप्त होता है। प्रत्येक मासमें ब्राह्मणोंको यथाभिलषित दान देना चाहिये। चातुर्मासकी समाप्तिपर पुराण-वाचन कराना चाहिये और कीर्तनका आयोजन करना चाहिये। विद्वानोंको चाहिये कि कथावाचककी पूजा करके श्राद्धकर्म करें, क्योंकि सिद्ध मालपूआ आदि पक्वान्नोंद्वारा कथावाचक या ब्राह्मणके सहयोगसे किया गया यथोचित श्राद्ध भगवान् सूर्यनारायणको अभीष्ट है। यह तिथि अभीष्ट धर्म, अर्थ तथा काम—इस त्रिवर्गको सदैव देनेवाली है। (अध्याय १०४)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

कामदा एवं पापनाशिनी-सप्तमी-व्रत-वर्णन

ब्रह्माजी बोले—विष्णो! फाल्गुन मासमें शुक्ल पक्षकी सप्तमीको उपवास करके भगवान् सूर्यनारायणकी विधिवत् पूजा करनी चाहिये। तत्पश्चात् दूसरे दिन अष्टमीको प्रातः उठकर स्नानादिसे निवृत्त हो भक्तिपूर्वक सूर्यदेवका सम्यक् पूजन करके ब्राह्मणोंको दक्षिणा देनी चाहिये। श्रद्धापूर्वक भगवान् सूर्यके निमित्त आहुतियाँ प्रदान कर भगवान् भास्करको प्रणाम कर इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिये—

यमाराध्य पुरा देवी सावित्री कामनाय वै।
स मे ददातु देवेशः सर्वान् कामान् विभावसुः॥
यमाराध्यादितिः प्राप्ता सर्वान् कामान् यथेप्सितान्।
स ददात्वखिलान् कामान् प्रसन्नो मे दिवस्पतिः॥
भ्रष्टराज्यश्च देवेन्द्रो यमभ्यर्च्य दिवस्पतिः।
कामान् सम्प्राप्तवान् राज्यं स मे कामं प्रयच्छतु॥

(ब्राह्मपर्व १०५।५—७)

'प्राचीन समयमें देवी सावित्रीने अपनी अभीष्ट-सिद्धिके लिये जिन आराध्यदेवकी आराधना की थी, वही मेरे आराध्य भगवान् सूर्य मेरी सभी कामनाओंको प्रदान करें। देवी अदितिने जिनकी आराधना करके अपने सभी अभीष्ट मनोरथोंको प्राप्त कर लिया था, वही दिवस्पति भगवान् भास्कर प्रसन्न होकर मेरी सभी अभिलाषाओंको पूर्ण करें। (दुर्वासा मुनिके शापके कारण) राजपदसे च्युत देवराज इन्द्रने जिनकी अर्चना करके अपनी सभी कामनाओंको प्राप्त कर लिया था, वही दिवस्पति मेरी कामना पूर्ण करें।'

हे गरुडध्वज! इस प्रकार भगवान् सूर्यकी प्रार्थना कर पूजा सम्पन्न करे। अनन्तर संयत होकर हविष्यान्नका भोजन करे। फाल्गुन, चैत्र, वैशाख और ज्येष्ठ—इन चार मासोंमें इस प्रकारसे व्रतकी पारणा करनेका विधान है। भक्तिपूर्वक करवीरके पुष्पोंसे चारों महीने सूर्यकी पूजा करनी चाहिये। कृष्ण अगरुकी धूप जलानी चाहिये और गो-शृङ्गका जल प्राशन करना चाहिये तथा खाँड़-मिश्रित पक्वान्नका नैवेद्य देकर ब्राह्मणोंको भोजन कराना चाहिये।

आषाढ़ आदि चातुर्मासमें पारणकी क्रिया इस प्रकार है—इन महीनोंमें चमेलीके पुष्प, गुग्गुलका धूप, कुएँका जल और पायसके नैवेद्यका विधान है। स्वयं भी उसी पायसके नैवेद्यको ग्रहण करना चाहिये।

कार्तिक आदि चातुर्मासमें गोमूत्रसे शरीर-शोधन करना चाहिये। दशाङ्ग*-धूप, रक्त कमल तथा कसारका नैवेद्य भगवान् सूर्यको निवेदित करना चाहिये। प्रत्येक महीनेमें ब्राह्मणोंको दक्षिणा देनी चाहिये। प्रत्येक पारणामें भक्तिपूर्वक सूर्यनारायणको प्रसन्न करनेका प्रयास करना चाहिये और यथाशक्ति संचित धनका दान करना चाहिये। वित्तशाठ्यता (कंजूसी) न करे। क्योंकि सद्भावसे पूजा करनेपर तथा दान आदिसे सात घोड़ोंसे युक्त रथपर आरूढ़ होनेवाले भगवान् सूर्य प्रसन्न होते हैं। पारणाके अन्तमें यथाशक्ति जल आदिसे स्नान कराकर पूजा करनेपर भगवान् सूर्य प्रसन्न हो निर्बाधरूपसे मनोवाञ्छित फल प्रदान करते हैं। यह सप्तमी पुण्यदायिनी, पापविनाशिनी तथा सभी फलोंको देनेवाली है। मनुष्यकी जैसी अभिलाषाएँ होती हैं, वैसे ही फल प्राप्त होते हैं। इस व्रतको करनेवाला व्यक्ति सूर्यके समान ही तेजस्वी बनकर स्वर्णमय विमानपर आरूढ़ हो सूर्यलोकको प्राप्त करता है

* कर्पूरं चन्दनं मुस्तामगरुं तगरं तथा। ऊषणं शर्करा कृष्णं सुगन्धं सिह्लकं तथा॥
दशाङ्गोऽयं स्मृतो धूपः प्रियो देवस्य सर्वदा॥ (ब्राह्मपर्व १०५।१५-१६)

कर्पूर, चन्दन, नागरमोथा, अगरु, तगर, ऊषण, शर्करा, दालचीनी, कस्तूरी तथा सुगन्ध—इन्हें समभागमें मिलाकर दशाङ्ग नामक धूप बनाया जाता है। यह धूप भगवान् सूर्यदेवको सर्वदा प्रिय है।

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

तथा वहाँ शाश्वती शान्तिको प्राप्त करता है। वहाँसे पुनः पृथ्वीपर जन्म लेकर उन गोपति सूर्यभगवान्‌की ही कृपासे प्रतापी राजा होता है।

इसी प्रकार उत्तरायणके सूर्यमें शुक्ल पक्षमें भग, अर्यमा, सूर्य आदिके नक्षत्रोंके पड़नेपर दान-मानसे भगवान् सूर्यकी पूजा कर उन्हें प्रसन्न करना चाहिये। इससे सम्पूर्ण पाप नष्ट हो जाते हैं। इसे पापनाशिनी सप्तमी कहा जाता है। (अध्याय १०५-१०६)

सूर्यपदद्वय-व्रत, सर्वाप्ति-सप्तमी एवं मार्तण्ड-सप्तमीकी विधि

ब्रह्माजी बोले—धर्मज्ञ! अब मैं जगद्धाता देवदेवेश्वर भगवान् सूर्यनारायणके पदद्वय-माहात्म्यका वर्णन करता हूँ, इसे आप सुनें।

अंशुमाली सूर्यदेवने संसारके कल्याणकी कामनासे अपने दोनों पादोंको एक पादपीठपर रखा है। उनके वामपादको उत्तरायण और दक्षिणपादको दक्षिणायनके रूपमें जानना चाहिये। सभी इन्द्र आदि देवगण इनके चरणोंकी वन्दना करते रहते हैं। हम और आप सूर्यदेवके दक्षिणपादकी अर्चना करते हैं। विष्णु तथा शङ्कर श्रद्धापूर्वक उनके वामपादकी पूजा करते हैं। जो मानव प्रत्येक सप्तमीको भगवान् सूर्यदेवकी विधिवत् आराधना करता है, उसपर वे सदा संतुष्ट रहते हैं।

भगवान् विष्णुने पूछा—गोलोकस्वामी सूर्य-नारायणकी आराधना किस प्रकार की जाती है? उसका आप वर्णन करें।

ब्रह्माजी बोले—उत्तरायण प्रारम्भ होनेके दिन स्नान करके संयमित मनसे घृत-दुग्ध आदि पदार्थोंके द्वारा भगवान् सूर्यको स्नान कराना चाहिये। सुन्दर वस्त्रोपहार, पुष्प-धूप तथा अनुलेपनादिसे उनकी विधिवत् पूजा कर ब्राह्मणोंको भोजन और दक्षिणादिसे संतुष्ट करना चाहिये। उसके बाद सूर्यभक्ति-परायण व्यक्तिको उनके पदद्वय-व्रतका विधान ग्रहण करना चाहिये। तदनन्तर स्नान करके 'चित्रभानु' दिवाकरकी वन्दना करनी चाहिये। खाते-चलते, सोते-जागते, प्रणाम करते, हवन और पूजन करते समय भगवान् चित्रभानुका ही जप करते हुए प्रतिदिन उनके नाम-कीर्तनका ही तबतक जप करना चाहिये, जबतक दक्षिणायनका समय न आ जाय। उनकी प्रार्थना इस प्रकार करनी चाहिये—

परमात्ममयं ब्रह्म चित्रभानुमयं परम्।
यमन्ते संस्मरिष्यामि स मे भानुः परा गतिः॥

(ब्राह्मपर्व १०७। १७)

'चित्रभानु परमात्ममय परम ब्रह्म हैं, जिनका अन्तकालमें मैं भलीभाँति स्मरण करूँगा, क्योंकि वे ही सूर्यनारायण मेरी परम गति हैं।'

इस प्रकार स्तुति करके षाण्मासिक भगवान् सूर्यके व्रतको तबतक करना चाहिये, जबतक दक्षिणायन पूर्णरूपसे न आ जाय। उसके पश्चात् यथाशक्ति ब्राह्मणोंको भोजन कराकर भगवान् मार्तण्डके सामने पुण्य-कथा और आख्यानका पाठ करना चाहिये। भक्तिपूर्वक यथाशक्ति वाचक और लेखकका पूजन भी करना चाहिये। इस प्रकार जो मनुष्य यह व्रत करता है, उसको इसी जन्ममें सभी पापोंसे मुक्ति मिल जाती है। यदि इस छः मासके बीचमें ही व्रतीकी मृत्यु हो जाती है तो उसे पूर्ण उपवासका फल प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त उसे भगवान् सूर्यनारायणके चरणद्वय-पूजनका फल भी मिलता है।

ब्रह्माजी पुनः बोले—माघ मासके कृष्ण पक्षकी सप्तमीको सर्वाप्ति-सप्तमी कहते हैं। इस व्रतसे सभी अभीप्सित कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं। इस व्रतमें पाखण्डी आदि दुराचारियोंसे वार्तालाप

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

न करे और एकाग्र-मनसे विनम्र होकर उन्हीं भगवान् सूर्यका पूजन करे।

माघ आदि छः मासोंमें प्रत्येक संक्रान्तिको पारणा मानी गयी है। तदनुसार माघ आदि छः मासोंमें क्रमशः 'मार्तण्ड', 'क', 'चित्रभानु', 'विभावसु', 'भग' और 'हंस'—ये छः नाम कहे गये हैं। पूरे छः मासोंमें घृत-दुग्धादि पञ्चगव्य पदार्थोंको स्नान और प्राशनके लिये प्रशस्त एवं पापनाशक माना गया है।

इस व्रतमें तेल और क्षार पदार्थ ग्रहण न करे, रात्रिमें जागरण करे। संसारमें सब कुछ देनेवाली यह तिथि सर्वार्थावाप्ति-सप्तमीके नामसे विख्यात है। हे अनघ! अब मैं कल्याण करनेवाली मार्तण्ड-सप्तमीका वर्णन कर रहा हूँ।

यह व्रत पौष मासके शुक्ल पक्षकी सप्तमीको किया जाता है। इसके सम्यक् अनुष्ठानसे अभीष्ट फलकी प्राप्ति होती है। इस दिन व्रत रहकर भगवान् सूर्यका 'मार्तण्ड' नामसे पूजन एवं निरन्तर जप करना चाहिये। ब्राह्मणकी भी विशेष श्रद्धा-भक्तिसे पूजा करनी चाहिये। इस प्रकार पवित्र मनसे सभी मासोंमें उपासना करके प्रत्येक मासमें अपनी शक्तिके अनुसार ब्राह्मणोंको गौ आदिका दान देना चाहिये। दूसरे वर्षमें उपवासपूर्वक यथाशक्ति सूर्यनारायणके निमित्त गौ आदिका दान देनेसे व्रती साक्षात् भगवान् मार्तण्डके लोकको प्राप्त करता है। इस मार्तण्ड नामक सप्तमीकी नक्षत्रगण उपासना करके ही द्युलोकमें प्रकाशित होते हुए आज भी स्थित दृष्ट होते हैं। (अध्याय १०७—१०९)

अनन्त-सप्तमी तथा अव्यङ्ग-सप्तमीका विधान

ब्रह्माजीने कहा—अच्युत! भाद्रपद मासमें शुक्ल पक्षकी सप्तमी तिथिको जितेन्द्रिय होकर सप्ताश्ववाहन भगवान् आदित्यको प्रणाम करके पुष्प-धूप आदि सामग्रियोंसे इनका पूजन करना चाहिये। पाखण्डी आदि दुराचारियोंसे आलाप न करे। ब्राह्मणको दक्षिणा देकर रात्रिमें मौन होकर भोजन करना चाहिये। इस विधानसे बैठते-चलते, प्रस्थान करते और गिरने-पड़नेकी स्थितिमें प्रत्येक समय आदित्य नामका स्मरण तथा उच्चारण करते हुए क्रमशः द्वादश मासतक व्रत और जगद्गुरु भगवान् सूर्यका पूजन करना चाहिये। व्रतकी पारणामें पुण्य-पुराणकी कथाका श्रवण करे। सूर्यदेवको प्रसन्न करे, इससे पुष्टिलाभ होता है। इस सप्तमीमें कथाश्रवणसे अनन्त फलोंकी प्राप्ति होती है।

श्रावण मासकी शुक्ला सप्तमीको अव्यङ्ग-सप्तमी कहा जाता है। इस दिन सप्ताश्ववाहन भगवान् सूर्यकी पुष्प-धूपादिसे पूजा करे। पाखण्डियोंसे वार्ता न करे, नियतात्मा होकर रहे। ब्राह्मणको दक्षिणा देकर मौन हो रात्रिमें भोजन करे। प्रतिवर्ष अव्यङ्ग बनाकर उन्हें निवेदित करे*। अव्यङ्ग-समर्पणके समय विविध प्रकारके बाजे बजवाने चाहिये। ब्राह्मणलोग वेदमन्त्रोंका उच्चारण करें। जिस प्रकार श्रावण मासमें अन्य देवताओंको पवित्रार्पण किया जाता है, उसी प्रकार सूर्यनारायणको भी प्रत्येक श्रावण मासमें अव्यङ्ग अर्पण करनेका विधान है।

इस प्रकार द्वादश मासपर्यन्त इस व्रतको करे। अन्तमें पारणा करनी चाहिये और ब्राह्मणोंको यथाशक्ति

* भविष्यपुराणमें अव्यङ्ग शब्द बार-बार आता है। यह सूतसे बनता है, जिसका भोजक ब्राह्मणके लिये कटिप्रदेशमें बाँधनेका विधान है। इसका वर्णन आगेके १४२ वें अध्यायमें आया है। इसे वहीं देखना चाहिये।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भोजन कराकर दक्षिणा देनी चाहिये। जो मनुष्य पवित्र होकर व्रत करके सूर्यनारायणकी आराधना करता है, वह भगवान् वनमाली सूर्यदेवके परम दिव्यलोकको प्राप्त होता है। (अध्याय ११०-१११)

सूर्यपूजामें भाव-शुद्धिकी आवश्यकता एवं त्रिप्राप्ति-सप्तमी-व्रत

ब्रह्माजी बोले—गरुडध्वज! भक्तिपूर्वक शुद्ध हृदयसे मात्र जलार्पणद्वारा भी सूर्यभगवान्‌की पूजा करनेपर दुर्लभ फलकी प्राप्ति हो जाती है। राग-द्वेषादिसे रहित हृदय, असत्य आदिसे अदूषित वाणी और हिंसावर्जित कर्म—ये भगवान् भास्करकी आराधनाके श्रेष्ठ तीन प्रकार हैं। रागादि दोषोंसे दूषित हृदयमें तिमिरविनाशक सूर्यनारायणकी रश्मियोंका स्पन्दन भी नहीं होता, फिर उनके निवासकी बात कौन कहे? यहाँतक कि वह तो भगवान् सूर्यके द्वारा संसारपङ्कमें निमग्न कर दिया जाता है।

जिस प्रकार चन्द्रमाकी कला अन्धकारको दूर करनेमें सर्वथा सफल नहीं होती, उसी प्रकार हिंसादिसे दूषित कर्मके द्वारा सूर्यनारायणकी पूजामें कैसे सफलता प्राप्त हो सकती है? चित्तकी अप्रसन्नताके कारण भी मनुष्य सूर्यदेवको प्राप्त नहीं कर सकता है। इसलिये सत्य-स्वभाव, सत्य-वाक्य और अहिंसक कर्मसे ही स्वभावतः भगवान् आदित्य प्रसन्न होते हैं। यदि मनुष्य कलुषित-हृदयसे भगवान् देवेशको सब कुछ दे दे, तो तब भी उन देवदेवेश्वर भगवान् दिवाकरकी आराधना नहीं होती। अतः आप अपने हृदयको रागादि द्वेषोंसे रहित बनाकर भगवान् भास्करके लिये अर्पित करें। ऐसा करनेपर दुष्प्राप्य भगवान् भास्करको आप अनायास ही प्राप्त कर लेंगे।

विष्णुने कहा—आपने बताया कि भास्कर हमारे लिये पूजनीय हैं, अतः उनकी सम्पूर्ण आराधना-विधि आप मुझे बतायें। ब्रह्मन्! श्रेष्ठ कुलमें जन्म, आरोग्य और दुर्लभ धनकी अभिवृद्धि—ये तीनों जिसके द्वारा प्राप्त होते हैं, उस त्रिप्राप्ति-व्रतको भी हमें बतायें।

ब्रह्माजी बोले—माघ मासमें कृष्ण पक्षकी सप्तमीके दिन हस्त नक्षत्रका योग रहनेपर व्रतीको चाहिये कि वह जगत्स्रष्टा सूर्यदेवकी सुगन्ध, धूप, नैवेद्य एवं उपहार आदि पूजन-सामग्रियोंके द्वारा पूजा करे। गृहस्थ पुरुष पुष्पोंके द्वारा दानादि-युक्त पूजा वर्षपर्यन्त सम्पन्न करे और वज्र (बाजरा), तिल, व्रीहि, यव, सुवर्ण, यव, अन्न, जल, ओला (ओलेका पानी), उपानह, छत्र और गुड़से बने पदार्थ, (क्रमसे प्रतिमास) मुनियों, ब्राह्मणोंको दान देना चाहिये। इस व्रतमें आत्मशुद्धिके लिये सूर्यनारायणकी पूजा करके प्रतिमास क्रमशः शाक, गोमूत्र, जल, घृत, दूर्वा, दधि, धान्य, तिल, यव, सूर्यकिरणोंसे तपा हुआ जल, कमलगट्टा और दूधका प्राशन करना चाहिये। इस विधिसे इस सप्तमी-व्रतको करनेवाला मनुष्य धन-धान्यसे परिपूर्ण, लक्ष्मीयुक्त तथा समस्त दुःखोंसे रहित होता है और श्रेष्ठ कुलमें जन्म लेकर जितेन्द्रिय, नीरोग, बुद्धिमान् और सुखी रहता है। अतः आप भी बिना प्रमाद किये ही इन प्रभासम्पन्न स्वामी भगवान् दिवाकरकी आराधना कर कामनाओंके सम्पूर्ण फलको प्राप्त करें। (अध्याय ११२)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सूर्यमन्दिर-निर्माणका फल तथा यमराजका अपने दूतोंको सूर्यभक्तोंसे दूर रहनेका आदेश, घृत तथा दूधसे अभिषेकका फल

ब्रह्माजीने कहा—हे वासुदेव! जो मनुष्य मिट्टी, लकड़ी अथवा पत्थरसे भगवान् सूर्यके मन्दिरका निर्माण करवाता है, वह प्रतिदिन किये गये यज्ञके फलको प्राप्त करता है। भगवान् सूर्यनारायणका मन्दिर बनवानेपर वह अपने कुलकी सौ आगे और सौ पीछेकी पीढ़ियोंको सूर्यलोक प्राप्त करा देता है। सूर्यदेवके मन्दिरका निर्माण-कार्य प्रारम्भ करते ही सात जन्मोंमें किया गया जो थोड़ा अथवा बहुत पाप है, वह नष्ट हो जाता है। मन्दिरमें सूर्यकी मूर्तिको स्थापित कर मनुष्य कृतकृत्य हो जाता है और उसे दोष-फलकी प्राप्ति नहीं होती तथा अपने आगे और पीछेके कुलोंका उद्धार कर देता है। इस विषयमें प्रजाओंको अनुशासित करनेवाले यमने पाशदण्डसे युक्त अपने किंकरोंसे पहले ही कहा है कि 'मेरे इस आदेशका यथोचित पालन करते हुए तुमलोग संसारमें विचरण करो, कोई भी प्राणी तुमलोगोंकी आज्ञाका उल्लङ्घन नहीं कर सकेगा। संसारके मूलभूत भगवान् सूर्यकी उपासना करनेवाले लोगोंको तुमलोग छोड़ देना, क्योंकि उनके लिये यहाँपर स्थान नहीं है। संसारमें जो सूर्यभक्त हैं और जिनका हृदय उन्हींमें लगा हुआ है, ऐसे लोग जो सूर्यकी सदा पूजा किया करते हैं, उन्हें दूरसे ही छोड़ देना। बैठते-सोते, चलते-उठते और गिरते-पड़ते जो मनुष्य भगवान् सूर्यदेवका नाम-संकीर्तन करता है, वह भी हमारे लिये बहुत दूरसे ही त्याज्य है। जो भगवान् भास्करके लिये नित्य-नैमित्तिक यज्ञ करते हैं, उन्हें तुमलोग दृष्टि उठाकर भी मत देखना। यदि तुमलोग ऐसा करोगे तो तुमलोगोंकी गति रुक जायगी। जो पुष्प-धूप-सुगन्ध और सुन्दर-सुन्दर वस्त्रोंके द्वारा उनकी पूजा करते हैं, उन्हें भी तुमलोग मत पकड़ना, क्योंकि वे मेरे पिताके मित्र या आश्रितजन हैं। सूर्यनारायणके मन्दिरमें उपलेपन तथा सफाई करनेवाले जो लोग हैं, उनके भी कुलकी तीन पीढ़ियोंको छोड़ देना। जिसने सूर्य-मन्दिरका निर्माण कराया है, उसके कुलमें उत्पन्न हुआ पुरुष भी तुमलोगोंके द्वारा बुरी दृष्टिसे देखने योग्य नहीं है। जिन भगवद्भक्तोंने मेरे पिताकी सुन्दर अर्चना की है, उन मनुष्योंको तथा उनके कुलको भी तुम सदा दूरसे ही त्याग देना।'

महात्मा धर्मराज यमके द्वारा ऐसा आदेश दिये जानेपर भी एक बार (भूलसे) यम-किंकर उनके आदेशका उल्लङ्घन करके राजा सत्राजित्के पास चले गये। परंतु उस सूर्यभक्त सत्राजित्के तेजसे वे सभी यमके सेवक मूर्च्छित होकर पृथ्वीपर वैसे ही गिर पड़े, जैसे मूर्च्छित पक्षी पर्वतपरसे भूमिपर गिर पड़ता है। इस प्रकार जो भक्त भगवान् सूर्यके मन्दिरका निर्माण करता-कराता है, वह समस्त यज्ञोंको सम्पन्न कर लेता है, क्योंकि भगवान् सूर्य स्वयं ही सम्पूर्ण यज्ञमय हैं।

ब्रह्माजी बोले—सूर्यकी प्रतिष्ठित प्रतिमाको जो घीसे स्नान कराता है, वह अपनी सभी कामनाओंको प्राप्त कर लेता है। कृष्णपक्षकी अष्टमीके दिन सूर्यभगवान्को जो घीसे स्नान कराता है, उसे सभी पापोंसे छुटकारा प्राप्त हो जाता है। सप्तमी अथवा षष्ठीके दिन सूर्यनारायणको गायके घीसे स्नान करानेसे सभी पातक दूर हो जाते हैं। संध्याकालमें घीसे स्नान करानेपर तो ज्ञात-अज्ञात सम्पूर्ण पाप दूर हो जाते हैं। सूर्यनारायण सर्वयज्ञरूप हैं और समस्त हव्य-पदार्थोंमें घी ही उत्तम पदार्थ है, इसलिये उन दोनोंका संगम होते ही सभी पाप

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shandu Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

नष्ट हो जाते हैं। सूर्यको दूधसे स्नान करानेवाला मनुष्य सात जन्मोंतक सुखी, रोगरहित और रूपवान् होता है और अन्तमें दिव्यलोकमें निवास करता है। जैसे दूध स्वच्छ होता है और रोगादिसे मुक्ति देनेवाला है, वैसे ही दूधसे स्नान करानेपर अज्ञान हटकर निर्मल ज्ञान प्राप्त होता है। दूधके स्नानसे भगवान् सूर्यनारायण प्रसन्न होकर सभी ग्रहोंको अनुकूल करते हैं तथा सभी लोगोंको पुष्टि और प्रीति प्रदान करते हैं। घी और दूधसे तिमिर-विनाशक देवेश सूर्यदेवको स्नान करानेपर उनकी दृष्टिमात्र पड़ते ही मनुष्य सबका प्रिय हो जाता है। (अध्याय ११३-११४)

कौसल्या और गौतमीके संवादरूपमें भगवान् सूर्यका माहात्म्य-निरूपण तथा भगवान् सूर्यके प्रिय पत्र-पुष्पादिका वर्णन

ब्रह्माजी बोले—जनार्दन! देवलोकमें गौतमी और कौसल्याका सूर्यके विषयमें एक पुरातन संवाद प्रसिद्ध है। एक बार गौतमी ब्राह्मणीने स्वर्गमें अपने पतिके साथ अतिशय रमणीय कौसल्याको देखकर आश्चर्यचकित होकर पूछा—'कौसल्ये! स्वर्गमें निवास करनेवाले सैकड़ों देवता, अनेक देवाङ्गनाएँ हैं, इसी प्रकार सिद्धगण और उनकी पत्नियाँ आदि भी हैं, किंतु उनमें न ऐसी गन्ध है, न ऐसी कान्ति है, न ऐसा रूप है। धारण किये हुए वस्त्र तथा आभूषण भी ऐसे नहीं सुशोभित हो रहे हैं, जैसे कि आप दोनों स्त्री-पुरुषोंके हो रहे हैं। आप दोनोंने कौन-सा ऐसा तप, दान अथवा होमकर्म किया है, जिसका यह फल है। आप इसका वर्णन करें।'

कौसल्या बोली—गौतमी! हम दोनोंने यज्ञेश्वर भगवान् सूर्यकी श्रद्धापूर्वक आराधना की है। सुगन्धित तीर्थ-जलोंसे तथा घृतसे उन्हें स्नान कराया है। उन्हींकी कृपासे हमने स्वर्ग, निर्मल कान्ति, प्रसन्नता, सौम्यता और सुख प्राप्त किया है। हमलोगोंके पास जो भी आभूषण, वस्त्र, रत्न आदि प्रिय वस्तुएँ हैं, उन्हें भगवान् सूर्यको अर्पण करनेके बाद ही हम धारण करते हैं। स्वर्गप्राप्तिकी अभिलाषासे हम दोनोंने भगवान् सूर्यकी आराधना की थी और उस आराधनाके फलस्वरूप ही हमलोग स्वर्गका सुख भोग रहे हैं। जो निष्कामभावसे भलीभाँति सूर्यकी उपासना करता है, उसे भगवान् सूर्य मुक्ति प्रदान करते हैं। त्रिलोकके सृष्टिकर्ता सविताकी तृप्तिसे ही सब कुछ प्राप्त होता है।

ब्रह्माजी बोले—विष्णो! मार्तण्ड भगवान् सूर्यकी आराधनासे मैंने भी अभीष्ट कामनाओंको प्राप्त किया है, जो अनन्तकालतक रहनेवाली हैं। चन्दन, अगरु, कपूर, कुंकुम तथा उशीरसे जो भगवान् सूर्यको अनुलिप्त करता है, प्रसन्न होकर भगवान् सूर्य उसे लक्ष्मी प्रदान करते हैं। कालेयक (काला चन्दन), तुरुष्क (एक गन्ध-द्रव्य), रक्त चन्दन, गन्ध, विजयधूप तथा और भी जो अपनेको इष्ट पदार्थ हों, उन्हें भगवान् सूर्यको निवेदित करना चाहिये। मालती, मल्लिका, जूही, अतिमुक्तक, पाटला, करवीर, जपा, कुंकुम, तगर, कर्णिका, चम्पक, केतक (केवड़ा), कुन्द, अशोक, तिलक, लोध्र, कमल, अगस्ति, पलाश आदिके पुष्प भगवान् सूर्यदेवको विशेष प्रिय हैं। बिल्वपत्र, शमीपत्र, भृङ्गराजपत्र, तमालपत्र आदि भगवान् सूर्यको प्रिय हैं। अतः उन्हें अर्पण करना चाहिये। कृष्णा तुलसी, केतकीके पुष्प और पत्र तथा रक्त चन्दनके अर्पण करनेसे भगवान् सूर्य

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सद्यः प्रसन्न होते हैं। नील कमल, श्वेत कमल और अनेक सुगन्धित पुष्प भगवान् सूर्यको चढ़ाने चाहिये, किंतु कुटज, शाल्मलि और गन्धरहित पुष्प सूर्यको नहीं चढ़ाने चाहिये, इन्हें चढ़ानेसे दारिद्र्य, भय और रोगकी प्राप्ति होती है। जिनका निषेध न हो वे ही पुष्प भगवान्‌को चढ़ाने चाहिये। उत्तम धूप, मुरा, माँसी, कपूर, अगरु, चन्दन तथा दूसरे सुन्दर पदार्थोंसे भगवान् वनमालीकी अर्चना करनी चाहिये। विविध रेशमी तथा कपासद्वारा निर्मित उत्तरीय आदि वस्त्र तथा जो अपनेको भी प्रिय है ऐसा वस्त्र सूर्यभगवान्‌को चढ़ाना चाहिये। फल तथा नैवेद्यादि भी जो अपनेको प्रिय हों उन्हें देना चाहिये। सुवर्ण, चाँदी, मणि और मुक्ता आदि जो अपनेको प्रिय हों, उन्हें भी भगवान् सूर्यको निवेदित करना चाहिये। अपनेको भास्करके रूपमें मानकर सारी यज्ञ-क्रियाएँ अव्यक्तरूप भगवान् सूर्यको निवेदित करनी चाहिये[१]। (अध्याय ११५)

सूर्य-भक्त सत्राजित्‌की कथा तथा त्रिविक्रम-व्रतकी विधि

ब्रह्माजी बोले—विष्णो! प्राचीन कालमें राजा ययातिके कुलमें सत्राजित् नामक एक प्रतापी चक्रवर्ती राजा हुए थे। वे अत्यन्त प्रभावशाली, तेजस्वी, कान्तिमान्, क्षमावान्, गुणवान् तथा बलशाली राजा थे और धीरता, गम्भीरता एवं यशसे सम्पन्न थे। उनके विषयमें पुराणवेत्ता लोग एक गाथा गाते हैं—महाबाहु सत्राजित्‌के इस पृथ्वीपर राज्य करते हुए जहाँसे सूर्य उदित होते और जहाँ अस्त होते हैं, जितनेमें भ्रमण करते हैं, वह सम्पूर्ण क्षेत्र सत्राजित्-क्षेत्र कहलाता है[२]। राजा सत्राजित् सम्पूर्ण रत्नोंसे परिपूर्ण सप्तद्वीपवती पृथ्वीपर धर्मपूर्वक राज्य करते थे। वे सूर्यदेवके परम भक्त थे। उनके ऐश्वर्यको देखकर सभी लोगोंको बड़ा आश्चर्य होता था। उनके राज्यमें सभी व्यक्ति धर्मानुयायी थे। राजा सत्राजित्‌के चार मन्त्री थे, वे सब अप्रतिहत सामर्थ्यवाले और राजाके स्वाभाविक भक्त थे। भगवान् सूर्यके प्रति उनकी अत्यन्त श्रद्धा थी और उनकी सामर्थ्यको देखकर न केवल उनकी प्रजाको आश्चर्य होता था, बल्कि स्वयं राजा भी अपने ऐश्वर्यपर आश्चर्यचकित थे। एक बार उनके मनमें आया कि अगले जन्मोंमें भी मेरा ऐसा ही ऐश्वर्य कैसे बना रहे। यह सोचकर उन्होंने शास्त्र और धर्मके तत्त्वको जाननेवाले ब्राह्मणोंको बुलाकर उनकी यथोचित भक्तिपूर्वक पूजा कर उन्हें आसनपर बिठलाया और उनसे कहा—'भगवन्! यदि आपलोगोंकी मुझपर कृपा है तो मेरी जिज्ञासाको शान्त करें।'

ब्राह्मणोंने कहा—'महाराज! आप अपना संदेह हमलोगोंके सम्मुख प्रस्तुत करें। आपने हमारा पालन-पोषण किया है और सभी प्रकारसे भोजन आदिद्वारा संतुष्ट रखा है। विद्वान् ब्राह्मणका तो कर्तव्य ही है कि वह धर्मके संदेहको दूर करे, अधर्मसे निवृत्त करे और कल्याणकारी उपदेशको भलीभाँति समझाये[३]।' आप अपनी इच्छाके अनुसार जो पूछना चाहें पूछें।' तभी उनकी महारानी विमलवतीने भी राजासे निवेदन किया कि 'महाराज!

१-आत्मानं भास्करं मत्वा यज्ञं तस्मै निवेदयेत्। तत्तदव्यक्तरूपाय भास्कराय निवेदयेत्॥ (ब्राह्मपर्व ११५। ३७)

२-सत्राजिते महाबाहो कृष्ण धात्रीं समाश्रिते॥
यावत्सूर्य उदेति स्म यावच्च प्रतितिष्ठति। सत्राजितं तु तत्सर्वं क्षेत्रमित्यभिधीयते॥ (ब्राह्मपर्व ११६। ९-१०)

३-संतुष्टो ब्राह्मणोऽश्नीयाच्छिन्द्याद्वा धर्मसंशयम्। हितं चोपदिशेद्वर्त्म अहिताद्वा निवर्तयेत्॥ (ब्राह्मपर्व ११६। २५)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

मेरा भी एक संदेह है, आप महात्माओंसे पूछकर निवृत्त करा लें। मैं तो अन्तःपुरमें ही रहती हूँ। अतः मेरी प्रार्थना है कि आप प्रथम मेरा ही संदेह निवृत्त करा दें, क्योंकि आपके संदेहकी निवृत्तिके अनेक साधन हैं।'

राजा सत्राजित्‌ने कहा—'प्रिये! क्या पूछना चाहती हो, पहले मैं तुम्हारा ही संदेह पूछूँगा।'

विमलवतीने कहा—'महाराज! मैंने अनेक राजाओंके चरित्र और ऐश्वर्यको सुना है, किंतु आपके समान ऐश्वर्य अन्य लोगोंको सुलभ नहीं है, यह किस कर्मका फल है? मैंने कौन-सा उत्तम कर्म किया था, जिसके फलस्वरूप मुझे आपकी रानी होनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ? पूर्वजन्ममें हम दोनोंने कौन-सा पुण्यकर्म किया है? इस विषयमें आप मुनियोंसे पूछें।'

सत्राजित् बोले—'देवि! तुमने तो मेरे मनकी बात जान ली है। मुनियोंकी बातें सत्य हैं, पत्नी पुरुषकी अर्धाङ्गिनी होती है। ऐसी कोई बात नहीं है जो इन महामुनियोंसे छिपी हो। इन महात्माओंसे मैं भी यही पूछना चाहता था। अनन्तर महाराजने महात्माओंसे पूछा—भगवन्! मैं पूर्वजन्ममें कौन था, मैंने कौन-से पुण्य कर्म किये थे? इस सर्वाङ्गसुन्दरी मेरी पत्नीने कौन-से उत्तम कर्म सम्पन्न किये थे, जिससे हमें ऐसी दुर्लभ लक्ष्मी प्राप्त हुई है। हमलोगोंमें परस्पर अतिशय प्रीति है। सभी राजा मेरे अधीन हैं, मेरे पास असीम द्रव्य है और मैं अत्यन्त बलशाली हूँ। मेरा शरीर भी नीरोग है। मेरी पत्नीके समान संसारमें कोई स्त्री नहीं है। सभी मेरे असीम तेजको सहन करनेमें असमर्थ हैं। महामुने! आपलोग त्रिकालज्ञ हैं। आप मेरी जिज्ञासाको शान्त करें।' राजाके इस प्रकार पूछनेपर उन ब्राह्मणोंने सूर्यदेवके परम भक्त परावसुसे प्रार्थना की कि आप ही इनके संदेहको निवृत्त करें। धर्मज्ञ ब्राह्मणोंकी सम्मतिसे महामति परावसुने योग-समाधिके द्वारा राजा तथा रानीके पूर्वजन्मके सभी कर्मोंकी जानकारी प्राप्त कर राजासे कहना आरम्भ किया—

परावसु बोले—महाराज! आप पूर्वजन्ममें बड़े निर्दयी, हिंसक तथा कठोर हृदयके शूद्र थे, कुष्ठ-रोगसे पीड़ित थे। सुन्दर नेत्रोंवाली ये महारानी उस समय भी आपकी ही भार्या थीं। ये ऐसी पतिव्रता थीं कि आपके द्वारा पीड़ित होनेपर भी आपकी सेवामें निरन्तर संलग्न रहती थीं, परंतु आपकी अतिशय क्रूरताके कारण आपके बन्धु-बान्धव आपसे अलग हो गये और आपने भी अपने पूर्वजोंद्वारा संचित धनको नष्ट कर डाला। अनन्तर आपने कृषि-कार्य प्रारम्भ किया, किंतु दैवेच्छासे वह भी व्यर्थ हो गया। आप अत्यन्त दीन-हीन होकर दूसरोंकी सेवाद्वारा जीवन-यापन करने लगे। आपने अपनी स्त्रीको छोड़नेका बहुत प्रयास किया, किंतु उसने आपका साथ नहीं छोड़ा। इसके बाद आप दोनों कान्यकुब्ज देशमें चले गये और भगवान् सूर्यके मन्दिरमें सेवा करने लगे। वहाँ प्रतिदिन मन्दिरका मार्जन, लेपन, प्रोक्षण (जल छिड़कना) आदि कार्य बड़े भक्तिभावसे करते रहे। मन्दिरमें पुराणकी कथा होती थी। आप दोनोंने उसका भक्तिपूर्वक श्रवण किया। कथा-श्रवण करनेके बाद आपकी पत्नीने पितासे प्राप्त अँगूठीको कथामें चढ़ा दिया। आपके मनमें रात-दिन यही चिन्ता रहती थी कि यह मन्दिर कैसे स्वच्छ रहे। आप दोनों बहुत दिनोंतक वहाँ रहे। भगवान्‌के सेवारूपी योगकर्ममें आपका मन अहर्निश लगा रहता था।

इस प्रकार आप दोनों निष्कामभावसे भगवान् सूर्यकी सेवा करते और जो कुछ मिलता, उसीसे निर्वाह करते थे। गोपति भगवान् सूर्यका आप नित्य चिन्तन करते थे, अतः आपके सभी पाप समाप्त हो गये।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

किसी समय अपनी विशाल सेनाके साथ कुवलाश्व नामका एक राजा वहाँ आया। उसकी अपार सम्पत्ति और हजारों श्रेष्ठ रानियोंको देखकर आप दोनोंकी भी राजा-रानी बननेकी इच्छा हुई। कुछ ही समयमें आपका देहान्त हो गया। सूर्यदेवकी श्रद्धा-भक्तिपूर्वक की गयी सेवा तथा पुराण-श्रवणके प्रभावसे आप राजा हुए और आपकी स्त्री रानी हुईं एवं आप दोनोंको जो असीम तेज प्राप्त हुआ है, उसका भी कारण सुनिये—

जब मन्दिरमें दीपक तेल तथा बत्तीके अभावमें बुझने लगता था, तब आप अपने भोजनके लिये रखे तेलसे उसे पूरित करते थे और आपकी रानी अपनी साड़ी फाड़कर उससे बत्ती बनाकर जलाती थी। राजन्! यदि अन्य जन्ममें भी आपको ऐश्वर्यकी इच्छा है तो भगवान् सूर्यकी श्रद्धापूर्वक आराधना करें। गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य आदि जो आपको प्रिय हों, वही भगवान् सूर्यको अर्पण करें। उनके मन्दिरमें मार्जन, उपलेपन आदि कार्य करें, जिससे मन्दिर स्वच्छ और निर्मल रहे। उत्तम दिनोंमें उपवास कर रात्रि-जागरण और नृत्य-गीत-वाद्यादिद्वारा महोत्सव करायें। पुराण-इतिहास आदिकी कथा श्रद्धापूर्वक सुनें तथा भगवान् सूर्यकी प्रसन्नताके लिये वेद-पाठ करायें। सदा निष्काम-भावसे तन्मय होकर उनकी सेवामें लगे रहें। संतुष्ट होकर भगवान् सूर्य अभीष्ट फल देते हैं। वे पुष्प, नैवेद्य, रत्न, सुवर्ण आदिसे उतना प्रसन्न नहीं होते, जितना वे भक्तिभावसे प्रसन्न होते हैं। यदि भक्तिभावपूर्वक सूर्यकी आराधना और विविध उपचारोंसे पूजन करेंगे तो इन्द्रसे भी अधिक वैभवकी प्राप्ति कर लेंगे।

राजा सत्राजित्ने कहा—भगवन्! इन्द्रत्वकी प्राप्ति या अमरत्वकी प्राप्तिसे जो आनन्द होता है, वह आनन्द आपकी इस वाणीको सुनकर मुझे प्राप्त हुआ। अज्ञानरूपी अन्धकारके लिये आपकी यह वाणी प्रदीप्त दीपकके समान है। सम्पत्तिके विनाशकी सम्भावनासे हम बहुत व्याकुल थे। आपने सम्पत्ति-प्राप्तिके लिये मूल तत्त्वका आज उपदेश दिया है। इससे यह सिद्ध हो गया कि मुझे यह सारी सम्पत्ति पूर्वजन्मके सुकृतकर्मके ही फलस्वरूप प्राप्त हुई है। भक्तिमान् दरिद्र भी भगवान् सूर्यको प्रसन्न कर सकता है, किंतु एक ऐश्वर्यशाली धनवान् भक्तिहीन होनेपर उनका अनुग्रह नहीं प्राप्त कर सकता। भगवन्! आप मुझे सूर्यभगवान्की आराधनाके उस मार्गको सूचित करें, जिससे शीघ्र ही उनका अनुग्रह प्राप्त हो सके।

परावसु बोले—राजन्! कार्तिक मासमें प्रतिदिन भगवान् सूर्यका पूजन कर ब्राह्मणको भोजन कराना चाहिये और स्वयं भी एक ही बार भोजन करना चाहिये। इस आराधनासे बाल्यावस्थामें किये गये ज्ञात-अज्ञात सभी पापोंसे छुटकारा मिल जाता है। मार्गशीर्षमें पूर्वोक्त रीतिसे व्रत करनेवाले स्त्री-पुरुषकी, ब्राह्मणको मरकत मणिका दान करनेसे प्रौढावस्थामें किये गये पापोंसे मुक्ति हो जाती है। पौष मासमें पूर्वोक्त विधिके अनुसार एकभुक्त हो श्रद्धापूर्वक सूर्यकी आराधना करनेसे वृद्धावस्थामें किये गये सभी पाप नष्ट हो जाते हैं।

इस त्रैमासिक व्रतको श्रद्धापूर्वक विधि-विधानसे करनेवाले स्त्री या पुरुष सूर्यभगवान्के कृपापात्र हो जाते हैं और लघु पापोंसे मुक्त हो जाते हैं। दूसरे वर्ष इसी प्रकार त्रैमासिक व्रत करनेपर सभी उपपातक निवृत्त हो जाते हैं। तीसरे वर्ष भी इस व्रतको करनेपर महापातक नष्ट हो जाते हैं और मनोवाञ्छित फलकी प्राप्ति होती है। यह व्रत तीन मासमें सम्पन्न होता है और इसे तीन वर्षतक करना चाहिये। सभी अवस्थाओंमें आधिभौतिक, आधिदैविक तथा आध्यात्मिक—त्रिविध पातक

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

इसके द्वारा नष्ट हो जाते हैं। इस सर्वपापहर्ता व्रतको त्रिविक्रम-व्रत कहा जाता है।

राजा सत्राजित्‌ने कहा—भगवन्! व्रतका विधान तो मैंने सुना, परंतु भोजन कैसे ब्राह्मणको कराना चाहिये, यह भी आप कृपाकर बतायें।

परावसु बोले—पौराणिक ब्राह्मणको भोजन कराना चाहिये। इस प्रसंगमें अरुणको सूर्यदेवने जो निर्देश दिया था, वह मैं आपको बताता हूँ—

किसी समय उदयाचलपर अरुणने भगवान् सूर्यसे पूछा—'महाराज! कौन-कौन पुष्प, नैवेद्य, वस्त्र आदि आपको प्रिय हैं और कैसे ब्राह्मणको भोजन करानेसे आप संतुष्ट होते हैं?' इसे आप कृपाकर बतायें।

भगवान् सूर्यने कहा—अरुण! करवीरके पुष्प, रक्त चन्दन, गुग्गुलका धूप, घीका दीपक और मोदक आदि नैवेद्य मुझे प्रिय हैं। मेरे भक्त और पौराणिक ब्राह्मणको दान देकर उसके प्रति श्रद्धा समर्पित करनेसे मुझे जितनी प्रसन्नता होती है, उतनी प्रसन्नता गीत, वाद्य और पूजन आदिसे नहीं होती। मैं पुराण आदिके वाचन-श्रवणसे अतिशय प्रसन्न होता हूँ। इतिहास-पुराणके वाचक तथा मेरी पूजा करनेवाला भोजक—ये दोनों मुझे विशेष प्रिय हैं। इसलिये पौराणिकका पूजन करे और इतिहास आदिको सुने। (अध्याय ११६)

भोजकोंकी उत्पत्ति तथा उनके लक्षणोंका वर्णन

अरुणने पूछा—भगवन्! यह भोजक कौन है? किसका पुत्र है? इसने ऐसा कौन-सा उत्तम कर्म किया है, जिस कारण ब्राह्मण आदि वर्णोंको छोड़कर आपका इसपर इतना अनुग्रह हुआ? आप कृपाकर सब मुझे बतायें।

आदित्य बोले—महामति वैनतेय! तुमने बहुत सुन्दर बात पूछी है। इसके उत्तरमें मैं जो कहता हूँ, उसे तुम सावधान होकर सुनो। अपनी पूजाके निमित्त ही मैंने अपने तेजसे भोजकोंकी उत्पत्ति की है। ये वर्णतः ब्राह्मण हैं और मेरी पूजाके लिये अनुष्ठानमें तत्पर रहते हैं। ये भोजक मुझे अति प्रिय हैं।

प्राचीन कालमें शाकद्वीपके स्वामी राजा प्रियव्रतके पुत्रने विमानके समान एक भव्य सूर्य-मन्दिर बनवाया और उसमें स्थापित करनेके लिये सभी शुभ लक्षणोंसे सम्पन्न सोनेकी एक दिव्य सूर्यकी प्रतिमा भी बनवायी। अब राजाको यह चिन्ता होने लगी कि मन्दिर तथा प्रतिमाकी प्रतिष्ठा कौन कराये? उन्हें कोई योग्य व्यक्ति नहीं दिखायी दिया। अतः वह राजा मेरी शरणमें आया। अपने भक्तको चिन्ताग्रस्त देखकर मैंने उसे प्रत्यक्ष दर्शन दिया और पूछा—'वत्स!' तुम क्या विचार कर रहे हो, तुम क्यों चिन्तित हो, शीघ्र ही अपनी चिन्ताका कारण बताओ। तुम दुःखी मत होओ, मैं तुम्हारे अत्यन्त दुष्कर कर्मोंको भी सम्पन्न कर दूँगा।' इसपर राजाने प्रसन्न होकर कहा—'प्रभो! मैंने बड़ी भक्ति एवं श्रद्धासे इस द्वीपमें आपका एक विशाल मन्दिर बनवाया है तथा एक दिव्य सूर्य-प्रतिमा भी बनवायी है, मुझे यह चिन्ता सता रही है कि प्रतिष्ठा-कार्य कैसे सम्पन्न हो?' राजाके इन वचनोंको सुनकर मैंने कहा—'राजन्! मैं अपने तेजसे अपनी पूजा करनेके लिये मगसंज्ञक ब्राह्मणोंकी सृष्टि करता हूँ। मेरे ऐसा कहते ही चन्द्रमाके समान श्वेतवर्णवाले आठ बलशाली पुरुष मेरे शरीरसे उत्पन्न हो गये। वे सभी काषाय वस्त्र पहिने हुए थे, हाथोंमें पिटारी और कमलके पुष्प लिये हुए थे तथा साङ्गोपाङ्ग चारों वेदों और उपनिषदोंका पाठ कर रहे थे। इनमेंसे दो पुरुष

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

ललाटसे, दो वक्षःस्थलसे, दो चरणोंसे तथा दो पादोंसे उत्पन्न हुए।' उन महात्माओंने मुझे पिता मानते हुए हाथ जोड़कर मुझसे कहा—'हे पिता! हे लोकनाथ! हम आपके पुत्र हैं। आपने किसलिये हमें उत्पन्न किया है? हमें आज्ञा दीजिये। हम सब आपके आदेशका पालन करेंगे।' पुत्रोंका ऐसा वचन सुनकर मैंने कहा—'तुम सब इस राजाकी बात सुनो और ये जैसा कहें वैसा ही करो।' पुत्रोंसे ऐसा कहनेके बाद मैंने राजासे कहा—'राजन्! ये मेरे पुत्र हैं, ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ हैं तथा सर्वदा पूज्य हैं। मेरी प्रतिष्ठा करानेके लिये ये सर्वथा योग्य हैं। इनसे प्रतिष्ठा करवा लो। मन्दिरकी प्रतिष्ठा कराकर मन्दिर इन्हें समर्पित कर दो। ये सदा मेरा पूजन किया करेंगे, परंतु देकर फिर इनसे हरण मत करना। मेरे निमित्त जो कुछ धन-धान्य, गृह, क्षेत्र, बाग, ग्राम नगर आदि मन्दिरमें अर्पण करो, उन सबके स्वामी ये भोजक ही होंगे। जैसे पिताके द्रव्यका अधिकारी उसका पुत्र होता है, वैसे ही मेरे धनके अधिकारी ये भोजक ही हैं।' मेरी आज्ञा पाकर उस राजाने प्रसन्न हो वैसा ही किया और भोजकोंद्वारा प्रतिष्ठा कराकर वह मन्दिर उन्हींको अर्पित कर दिया।

अरुण! इस प्रकार अपनी पूजाके लिये मैंने अपने शरीरके तेजसे भोजकोंको उत्पन्न किया। ये मेरे आत्मस्वरूप हैं। मेरी प्रीतिके लिये जो कुछ भी देना हो वह भोजकको देना चाहिये। परंतु भोजकको दिया हुआ धन कभी वापस नहीं लेना चाहिये। भोजक हमारे सम्पूर्ण धनका स्वामी है।

भोजकमें ये लक्षण होने चाहिये—वह पहले वेदाध्ययन कर फिर गृहस्थजीवनमें प्रवेश करे। नित्य त्रिकाल स्नान करे, दिन-रात्रिमें पञ्चकृत्यों* द्वारा मेरा पूजन करे। वेद, ब्राह्मण और देवताओंकी कभी निन्दा न करे। नित्य हमारे सम्मुख शङ्ख-ध्वनि करे। छः महीने पुराण सुननेसे जैसी प्रसन्नता मुझे होती है, वैसी प्रीति केवल एक बार शङ्ख-ध्वनि श्रवण करनेसे हो जाती है। इसलिये भोजकको पूजनमें नित्य शङ्ख बजाना चाहिये। वे अभोज्य पदार्थ भक्षण नहीं करते हैं, इसलिये भोजक कहलाते हैं और नित्य हमको भोजन कराते हैं, इसलिये भी भोजक कहलाते हैं। वे सदा मगका ध्यान करते रहते हैं, इसलिये मगध कहे जाते हैं। भोजक परम शुद्धिकर अव्यङ्ग धारण किये बिना सदा अपवित्र रहता है। जो अव्यङ्ग धारण किये बिना मेरी पूजा करता है, उसको संतान नहीं होती और मेरी प्रसन्नता भी उसे प्राप्त नहीं होती। भोजकको सिर मुड़ाकर रहना चाहिये, किंतु शिखा अवश्य रखनी चाहिये। रविवारके दिन तथा षष्ठीको नक्तव्रत कर सप्तमीको उपवास करना चाहिये और संक्रान्तिका व्रत भी करना चाहिये। मेरे समीप त्रिकाल गायत्रीका जप करे। भक्ति-श्रद्धापूर्वक मौन होकर मेरा पूजन करे। क्रोध न करे। सदा हमारा नैवेद्य भक्षण करे। वह नैवेद्य भोजकको शुद्ध करनेके लिये पवित्र हविष्यान्नके समान है। मुझे चढ़ा हुआ गन्ध, पुष्प, वस्त्राभूषण आदि बेचे नहीं। स्नान कराये गये जल और निर्माल्य (विसर्जनके बाद देवार्पित वस्तु) तथा अग्निका उल्लङ्घन न करे। सदा पवित्र रहे, एक बार भोजन करे और क्रोध, अमङ्गल-वचन तथा अशुभ कर्मोंको त्याग दे।

अरुण! इस प्रकारके लक्षणोंवाला भोजक मुझे बहुत प्रिय है। भोजकका सदा सत्कार करना चाहिये। तुम्हारे ही समान भोजक भी मुझे बहुत प्रिय हैं।

महात्मा परावसु बोले—राजन्! इस प्रकार

* इज्या, अभिगमन, उपादान, स्वाध्याय और योग—ये पाँच उपासनाके भेद हैं, जिनमें प्रतिमा-पूजन, संध्या-तर्पण, हवन-पूजन, ध्यान, जप एवं सूर्यके चरित्रोंका पाठ सम्मिलित है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

अरुणको उपदेश देकर सूर्यनारायण आकाशमें भ्रमण करने लगे और अरुण भी यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ।

ब्रह्माजी बोले—महामुनि परावसुके मुखसे यह कथा सुनकर राजा सत्राजित् और उसकी रानी विमलवती बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने पृथ्वीपर जहाँ-जहाँ भगवान् सूर्यके मन्दिर थे, उन सबमें मार्जन और उपलेपन कराया। सब मन्दिरोंमें कथा कहनेके लिये पौराणिकोंको नियुक्त किया और बहुत-सी दक्षिणा देकर उन्हें संतुष्ट किया। वे विविध उपचारोंसे भक्तिपूर्वक नित्य सूर्यदेवकी पूजा-उपासना करने लगे और अन्तमें उन दोनोंने उनकी प्रीति प्राप्त कर उत्तम गति प्राप्त की।

(अध्याय ११७)

भद्र ब्राह्मणकी कथा एवं कार्तिक मासमें सूर्य-मन्दिरमें दीपदानका फल

ब्रह्माजी बोले—विष्णो! जो कार्तिक मासमें सूर्यदेवके मन्दिरमें दीप प्रज्वलित करता है, उसे सम्पूर्ण यज्ञोंका फल प्राप्त होता है एवं वह तेजमें सूर्यके समान तेजस्वी होता है। अब मैं आपको भद्र ब्राह्मणकी कथा सुनाता हूँ, जो समस्त पापोंका नाश करनेवाली है, उसे आप सुनें—

प्राचीन कालमें माहिष्मती नामकी एक सुन्दर नगरीमें नागशर्मा नामका एक ब्राह्मण रहता था। भगवान् सूर्यकी प्रसन्नतासे उसके सौ पुत्र हुए। सबसे छोटे पुत्रका नाम था भद्र। वह सभी भाइयोंमें अत्यन्त विचक्षण विद्वान् था। वह भगवान् सूर्यके मन्दिरमें नित्य दीपक जलाया करता था। एक दिन उसके भाइयोंने उससे बड़े आदरसे पूछा—'भद्र! हमलोग देखते हैं कि तुम भगवान् सूर्यको न तो कभी पुष्प, धूप, नैवेद्य आदि अर्पण करते हो और न कभी ब्राह्मण-भोजन कराते हो, केवल दिन-रात मन्दिरमें जाकर दीप जलाते रहते हो, इसमें क्या कारण है? तुम हमें बताओ।' अपने भाइयोंकी बात सुनकर भद्र बोला—भ्रातृगण! इस विषयमें आपलोग एक आख्यान सुनें—

प्राचीन कालमें राजा इक्ष्वाकुके पुरोहित महर्षि वसिष्ठ थे। उन्होंने राजा इक्ष्वाकुसे सरयू-तटपर सूर्यभगवान्‌का एक मन्दिर बनवाया। वे वहाँ नित्य गन्ध-पुष्पादि उपचारोंसे भक्तिपूर्वक भगवान् सूर्यकी पूजा करते और दीपक प्रज्वलित करते थे। विशेषकर कार्तिक मासमें भक्तिपूर्वक दीपोत्सव किया करते थे। तब मैं भी अनेक कुष्ठ आदि रोगोंसे पीड़ित हो उसी मन्दिरके समीप पड़ा रहता और जो कुछ मिल जाता, उसीसे अपना पेट भरता। वहाँके निवासी मुझे रोगी और दीन-हीन जानकर मुझे भोजन दे देते थे। एक दिन मुझमें यह कुत्सित विचार आया कि मैं रात्रिके अन्धकारमें इस मन्दिरमें स्थित सूर्यनारायणके बहुमूल्य आभूषणोंको चुरा लूँ। ऐसा निश्चयकर मैं उन भोजकोंकी निद्राकी प्रतीक्षा करने लगा। जब वे भोजक सो गये, तब मैं धीरे-धीरे मन्दिरमें गया और वहाँ देखा कि दीपक बुझ चुका है। तब मैंने अग्नि जलाकर दीपक प्रज्वलित किया और उसमें घृत डालकर प्रतिमासे आभूषण उतारने लगा, उसी समय वे देवपुत्र भोजक जग गये और मुझे हाथमें दीपक लिया देखकर पकड़ लिया। मैं भयभीत हो विलापकर उनके चरणोंपर गिर पड़ा। दयावश उन्होंने मुझे छोड़ दिया, किंतु वहाँ घूमते हुए राजपुरुषोंने मुझे फिर बाँध लिया और वे मुझसे पूछने लगे—'अरे दुष्ट! तुम दीपक हाथमें लेकर मन्दिरमें क्या कर रहे थे? जल्दी बताओ', मैं अत्यन्त भयभीत हो गया। उन राजपुरुषोंके भयसे तथा रोगसे आक्रान्त होनेके

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

कारण मन्दिरमें ही मेरे प्राण निकल गये। उसी समय सूर्यभगवान्‌के गण मुझे विमानमें बैठाकर सूर्यलोक ले गये और मैंने एक कल्पतक वहाँ सुख भोगा तथा फिर उत्तम कुलमें जन्म लेकर आप सबका भाई बना। बन्धुओ! यह कार्तिक मासमें भगवान् सूर्यके मन्दिरमें दीपक जलानेका फल है। यद्यपि मैंने दुष्टबुद्धिसे आभूषण चुरानेकी दृष्टिसे मन्दिरमें दीपक जलाया था तथापि उसीके फलस्वरूप इस उत्तम ब्राह्मणकुलमें मेरा जन्म हुआ तथा वेद-शास्त्रोंका मैंने अध्ययन किया और मुझे पूर्वजन्मोंकी स्मृति हुई। इस प्रकार उत्तम फल मुझे प्राप्त हुआ। दुष्टबुद्धिसे भी घीद्वारा दीपक जलानेका ऐसा श्रेष्ठ फल देखकर मैं अब नित्य भगवान् सूर्यके मन्दिरमें दीपक प्रज्वलित करता रहता हूँ। भाइयो! मैंने कार्तिक मासमें यह दीपदानका संक्षेपमें माहात्म्य आपलोगोंको सुनाया।

इतनी कथा सुनाकर ब्रह्माजी बोले—विष्णो! दीपक जलानेका फल भद्रने अपने भाइयोंको बताया। जो पुरुष सूर्यके नामोंका जप करता हुआ मन्दिरमें कार्तिकके महीनेमें दीपदान करता है, वह आरोग्य, धन-सम्पत्ति, बुद्धि, उत्तम संतान और जातिस्मरत्वको प्राप्त करता है। षष्ठी और सप्तमी तिथिको जो प्रयत्नपूर्वक सूर्य-मन्दिरमें दीपदान करता है, वह उत्तम विमानमें बैठकर सूर्यलोकको जाता है। इसलिये भगवान् सूर्यके मन्दिरमें भक्तिपूर्वक दीप प्रज्वलित करना चाहिये। प्रज्वलित दीपको न तो बुझाये और न उसका हरण करे। दीपक हरण करनेवाला पुरुष अन्धमूषक होता है। इस कारण कल्याणकी इच्छावाला पुरुष दीप प्रज्वलित करे, हरे नहीं। (अध्याय ११८)

यमदूत और नारकीय जीवोंके संवादके प्रसंगमें सूर्य-मन्दिरमें दीपदान करने एवं दीप चुरानेके पुण्य-पापोंका परिणाम

ब्रह्माजी बोले—विष्णो! एक समय घोर नरकमें पड़े हुए भूखे, आर्त-दुःखी और विलाप करते हुए जीवोंसे यमदूतने कहा—मूढजनो! अब अधिक विलाप करनेसे क्या लाभ होगा, प्रमादवश तुम सबने अपनी आत्माकी उपेक्षा कर रखी है। पहले तुम सबने यह विचार नहीं किया कि इन कर्मोंका फल आगे भोगना पड़ेगा। यह शरीर थोड़े ही दिनोंतक रहनेवाला है, विषय भी नाशवान् हैं, यह कौन नहीं जानता। हजारों जन्मोंके बाद एक बार मनुष्य-जन्म मिलता है, उसमें क्यों मूढजन भोगोंकी ओर दौड़ते हैं। वे पुत्र, स्त्री, गृह, क्षेत्र आदिके लिये प्रयत्नशील रहते हैं और उनमें आसक्त होकर अनेक दुष्कर्म करते हैं, वे मूढजन अपना हित नहीं जानते, वे यह भी नहीं जानते कि सूर्य, चन्द्र, काल तथा आत्मा—ये सभी मनुष्यके शुभ और अशुभ कर्मोंको देखते रहते हैं अर्थात् साक्षीभूत हैं। न केवल एक जन्म अपितु सैकड़ों जन्मोंमें पुत्र, स्त्री आदिके लिये जो-जो भी कर्म किया जाता है, उसे अच्छी तरहसे ये जानते रहते हैं। मोहकी यह महिमा तो देखो कि नरकमें भी ममता बनी रहती है। इस प्रकार परिणाममें भयंकर विषयोंके द्वारा आकृष्टचित्तवाले मनुष्योंकी बुद्धि परमार्थ-तत्त्वकी ओर नहीं होती। जिह्वाद्वारा भगवान् सूर्यका नाम लेनेमें कौन-सा श्रम है? मन्दिरमें दीप जलानेमें भी अधिक परिश्रम नहीं पड़ता, परंतु यदि मनुष्यसे इतना भी नहीं हो सकता तो अब रोदन और विलाप करनेसे क्या लाभ है?* जैसा कर्म किया वैसा फल पाया। इसलिये पापकर्ममें

* अहो मोहस्य माहात्म्यं ममत्वं नरकेष्वपि। क्रन्दते मातरं तातं पीड्यमानोऽपि यत्स्वयम्॥

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

कभी भी बुद्धि नहीं लगानी चाहिये। यदि कोई अज्ञानसे पापकर्म हो जाय तो सूर्यभगवान्‌की आराधना करे, जिससे सब पाप नष्ट हो जाते हैं।

ब्रह्माजी बोले—यमदूतके ऐसे वचनोंको सुनकर तथा भूखसे व्याकुल, प्याससे सूखे कण्ठवाले, दुःखसे पीड़ित वे नारकीय जीव उससे कहने लगे—'साधो! हमने ऐसा कौन-सा कर्म किया, जिससे हमें इस दारुण नरकमें वास करना पड़ा।'

यमदूतने कहा—पूर्वजन्ममें यौवनके उन्मादसे उन्मादित तुम अविवेकियोंने घृतके लोभमें भगवान् सूर्यके मन्दिरसे दीप चुराया था। उसी कारण इस घोर नरकमें तुम सब दुःख भोग रहे हो।

ब्रह्माजी बोले—अच्युत! मैंने सूर्यके मन्दिरमें दीपदान करनेके पुण्य तथा दीप-हरण करनेके दुष्परिणामोंका वर्णन किया। दीपदान करनेका तो सर्वत्र ही उत्तम फल है, परंतु सूर्यनारायणके मन्दिरमें विशेष फल है। जगत्‌में जो-जो अन्धा, मूक, बधिर, विवेकहीन, निन्द्य व्यक्ति दिखायी पड़ते हैं, उन सबने साधुजनोंद्वारा प्रज्वलित किये हुए दीपोंको सूर्यनारायणके मन्दिरसे हरण किया है।

(अध्याय ११९)

वैवस्वतके लक्षण और सूर्यनारायणकी महिमा

विष्णुभगवान्‌ने ब्रह्माजीसे पूछा—ब्रह्मन्! संसारमें मनुष्य विष, रोग, ग्रह और अनेक प्रकारके उपद्रवोंसे पीड़ित रहते हैं, यह किन कर्मोंका फल है, कृपाकर आप कोई ऐसा उपाय बतायें, जिससे जीवोंको रोग आदिकी बाधा न हो।

ब्रह्माजीने कहा—जिन्होंने पूर्वजन्ममें व्रत-उपवास आदिके द्वारा भगवान् सूर्यको प्रसन्न नहीं किया, वे मनुष्य विष, ज्वर, ग्रह, रोग आदिके भागी होते हैं और जो सूर्यनारायणकी आराधना करते हैं, उन्हें आधि-व्याधियाँ नहीं सतातीं। पूर्वजन्ममें भगवान् सूर्यकी आराधनासे इस जन्ममें आरोग्य, परम बुद्धि और जो-जो भी मनमें इच्छा करता है, निःसंदेह उसे प्राप्त कर लेता है। आधि-व्याधियोंसे पीड़ित नहीं होता है और न विष एवं दुष्ट ग्रहोंके बन्धनमें ही फँसता है तथा कृत्या आदिका भी भय उसे नहीं रहता। सूर्यनारायणके भक्तके लिये दुष्ट भी अनुकूल हो जाते हैं और सब ग्रह सौम्य दृष्टि रखते हैं। जिसपर सूर्यदेव संतुष्ट हो जाते हैं, वह देवताओंका भी पूज्य हो जाता है। परंतु भगवान् सूर्यका अनुग्रह उसी पुरुषपर होता है, जो सब जीवोंको अपने समान ही समझता है और भक्तिपूर्वक उनकी आराधना करता है। प्रजाओंके स्वामी भगवान् सूर्यके प्रसन्न हो जानेपर मनुष्य पूर्णमनोरथ हो जाता है*।

एवमाकृष्टचित्तानां विषयैः स्वादुतर्पणैः। नृणां न जायते बुद्धिः परमार्थविलोकिनी॥
तथा च विषयासङ्गे करोत्यविरतं मनः। को हि भारो रवेर्नाम्नि जिह्वायाः परिकीर्तने॥
वर्तितैलेऽल्पमूल्ये च यद्वर्तिर्लभ्यते सुधा। अतो वै कतरो लाभः कातश्चिन्ता भवेत् तदा॥ (ब्राह्मपर्व ११९। १० —१३)

* व्रतोपवासैर्यैर्भानुर्नान्यजन्मनि तोषितः। ते नरा देवशार्दूल ग्रहरोगादिभागिनः॥
यैर्न तत्प्रवणं चित्तं सर्वदैव नरैः कृतम्। विषग्रहज्वराणां ते मनुष्याः कृष्ण भागिनः॥
आरोग्यं परमां वृद्धिं मनसा यद्यदिच्छति। तत्तदाप्नोत्यसंदिग्धं परत्रादित्यतोषणात्॥
नाधीन् प्राप्नोति न व्याधीन् न विषग्रहबन्धनम्। कृत्यास्पर्शभयं वापि तोषिते तिमिरापहे॥
सर्वे दुष्टाः समास्तस्य सौम्यास्तस्य सदा ग्रहाः। देवानामपि पूज्योऽसौ तुष्टो यस्य दिवाकरः॥
यः समः सर्वभूतेषु यथात्मनि तथा हिते। उपवासादिना येन तोष्यते तिमिरापहः॥
तोषितेऽस्मिन् प्रजानाथे नराः पूर्णमनोरथाः। अरोगाः सुखिनो नित्यं बहुधर्मसुखान्विताः॥

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भगवान् विष्णुने पूछा—ब्रह्मन्! जिन्होंने पहले भगवान् सूर्यकी आराधना नहीं की और रोग-व्याधिसे दुःखी हो गये हैं, वे उन कष्ट एवं पापोंसे कैसे मुक्त हों, कृपाकर बतायें। हम भी भक्तिपूर्वक भगवान् सूर्यकी आराधना करना चाहते हैं।

ब्रह्माजी बोले—भगवन्! यदि आप भगवान् सूर्यकी आराधना करना चाहते हैं तो आप पहले वैवस्वत (सूर्यभक्त) बनें, क्योंकि बिना विधिपूर्वक सौरी दीक्षाके उनकी उपासना पूरी नहीं हो सकती। जब मनुष्योंके पाप क्षीण होने लगते हैं तब भगवान् सूर्य और ब्राह्मणोंमें उनकी नैष्ठिकी श्रद्धा-भक्ति होती है। इस संसार-चक्रमें भ्रमण करते हुए प्राणियोंके लिये भगवान् सूर्यको प्रसन्न करना एकमात्र कल्याणका निष्कण्टक मार्ग है।

विष्णुभगवान्ने पूछा—ब्रह्मन्! वैवस्वतोंका क्या लक्षण है और उन्हें क्या करना चाहिये? यह आप बतायें।

ब्रह्माजी बोले—वैवस्वत वही है जो भगवान् सूर्यका परम भक्त हो तथा मन, वाणी एवं कर्मसे कभी जीवहिंसा न करे। ब्राह्मण, देवता और भोजकको नित्य प्रणाम करे, दूसरेके धनका हरण न करे, सभी देवताओं एवं संसारको भगवान् सूर्यका ही स्वरूप समझे और उनसे अपनेको अभिन्न समझे। देवता, मनुष्य, पशु-पक्षी, पिपीलिका, वृक्ष, पाषाण, काष्ठ, भूमि, जल, आकाश तथा दिशा—सर्वत्र भगवान् सूर्यको व्याप्त समझे, साथ ही स्वयंको भी सूर्यसे भिन्न न समझे। जो किसी भी प्राणीमें दुष्टभाव नहीं रखता, वही वैवस्वत सूर्योपासक है। जो पुरुष आसक्तिरहित होकर निष्कामभावसे भक्तिपूर्वक भगवान् सूर्यके निमित्त क्रियाएँ करता है, वह वैवस्वत कहलाता है। जिसका न तो कोई शत्रु हो और न कोई मित्र हो तथा न उसमें भेद-बुद्धि हो, सबको बराबर देखता हो, ऐसा पुरुष वैवस्वत कहलाता है। जिस उत्तम गतिको वैवस्वत पुरुष प्राप्त करता है, वह योगी और बड़े-बड़े तपस्वियोंके लिये भी दुर्लभ है। जो सभी प्रकारसे भगवान् सूर्यका दृढ़ भक्त है, वह धन्य है। भक्तिपूर्वक आराधना करनेसे ही सूर्यभगवान्का अनुग्रह प्राप्त होता है।

ब्रह्माजी पुनः बोले—मैं भी उनके दक्षिण किरणसे उत्पन्न हुआ हूँ और उन्हींके वाम किरणसे भगवान् शिव तथा वक्षःस्थलसे शङ्ख-चक्र-गदाधारी आप उत्पन्न हैं। उन्हींकी इच्छासे आप सृष्टिका पालन तथा शङ्कर संहार करते हैं। इसी प्रकार रुद्र, इन्द्र, चन्द्र, वरुण, वायु, अग्नि आदि सब देवता सूर्यदेवसे ही प्रादुर्भूत हुए हैं और उनकी आज्ञाके अनुसार अपने-अपने कर्मोंमें प्रवृत्त हो रहे हैं। इसलिये भगवन्! आप भी सूर्यभगवान्की आराधना करें, इससे सभी मनोरथ पूर्ण होंगे।

पितामह ब्रह्माजी एवं विष्णुभगवान्के इस संवादको जो भक्तिपूर्वक श्रवण करता है, वह मनोवाञ्छित फलोंको प्राप्त कर अन्तमें सुवर्णके विमानमें बैठकर सूर्यलोकको जाता है।

(अध्याय १२०)

न तेषां शत्रवो नैव शरीराद्यभिचारकम् । ग्रहरोगादिकं चापि पापकार्युपजायते ॥
अव्याहतानि देवस्य धनजालानि तं नरम् । रक्षन्ति सकलापत्सु येन श्वेताधिपोऽर्चितः ॥ (ब्राह्मपर्व १२०।४—१२)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भगवान् सूर्यनारायणके सौम्य रूपकी कथा, उनकी स्तुति और परिवार तथा देवताओंका वर्णन

राजा शतानीकने कहा—मुने! भगवान् सूर्यकी कथा सुनते-सुनते मुझे तृप्ति नहीं होती, अतः आप पुनः उन्हींके गुणों और चरित्रोंका वर्णन करें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! पूर्वकालमें ब्रह्माजीने भगवान् सूर्यकी जो पवित्र कथा ऋषियोंको सुनायी थी, उसे मैं आपको सुनाता हूँ। वह कथा पापोंको नष्ट करनेवाली है—

एक समय भगवान् सूर्यके प्रचण्ड तेजसे संतप्त हो ऋषियोंने ब्रह्माजीसे पूछा—'ब्रह्मन्! आकाशमें स्थित यह अग्निके तुल्य दाह करनेवाला तेजःपुञ्ज कौन है?'

ब्रह्माजी बोले—मुनीश्वरो! प्रलयके समय जब सारा स्थावर-जङ्गम जगत् नष्ट हो गया, उस समय सर्वत्र अन्धकार-ही-अन्धकार व्याप्त था। उस समय सर्वप्रथम बुद्धि उत्पन्न हुई, बुद्धिसे अहंकार तथा अहंकारसे आकाशादि पञ्चमहाभूतोंकी उत्पत्ति हुई और उनसे एक अण्ड उत्पन्न हुआ, जिसमें सात लोक और सात समुद्रोंसहित पृथ्वी स्थित है। उसी अण्डमें स्वयं ब्रह्मा तथा विष्णु और शिव भी स्थित थे। अन्धकारसे सभी व्याकुल थे। अनन्तर सब परमेश्वरका ध्यान करने लगे। ध्यान करनेसे अन्धकारको हरण करनेवाला एक तेजःपुञ्ज प्रकट हुआ। उसे देखकर हम सभी उसकी इस प्रकार दिव्य स्तुति करने लगे—

आदिदेवोऽसि देवानामीश्वराणां त्वमीश्वरः।
आदिकर्तासि भूतानां देवदेव सनातन॥
जीवनं सर्वसत्त्वानां देवगन्धर्वरक्षसाम्।
मुनिकिन्नरसिद्धानां तथैवोरगपक्षिणाम्॥
त्वं ब्रह्मा त्वं महादेवस्त्वं विष्णुस्त्वं प्रजापतिः।
वायुरिन्द्रश्च सोमश्च विवस्वान् वरुणस्तथा॥
त्वं कालः सृष्टिकर्ता च हर्ता त्राता प्रभुस्तथा।
सरितः सागराः शैला विद्युदिन्द्रधनूंषि च।
प्रलयः प्रभवश्चैव व्यक्ताव्यक्तः सनातनः॥
ईश्वरात्परतो विद्या विद्यायाः परतः शिवः।
शिवात्परतरो देवस्त्वमेव परमेश्वर॥
सर्वतः पाणिपादस्त्वं सर्वतोऽक्षिशिरोमुखः।
सहस्रांशुस्त्वं तु देव सहस्रकिरणस्तथा॥
भूरादिभूर्भुवःस्वश्च महर्जनस्तपस्तथा।
प्रदीप्तं दीप्तिमन्नित्यं सर्वलोकप्रकाशकम्।
दुर्निरीक्ष्यं सुरेन्द्राणां यद्रूपं तस्य ते नमः॥
सुरसिद्धगणैर्जुष्टं भृग्वत्रिपुलहादिभिः।
शुभं परममव्यग्रं यद्रूपं तस्य ते नमः॥
पञ्चातीतस्थितं तद्वै दशैकादश एव च।
अर्धमासमतिक्रम्य स्थितं तत्सूर्यमण्डले।
तस्मै रूपाय ते देव प्रणताः सर्वदेवताः॥
विश्वकृद्विश्वभूतं च विश्वानरसुरार्चितम्।
विश्वस्थितमचिन्त्यं च यद्रूपं तस्य ते नमः॥
परं यज्ञात्परं देवात्परं लोकात्परं दिवः।
दुरतिक्रमेति यः ख्यातस्तस्मादपि परम्परात्।
परमात्मेति विख्यातं यद्रूपं तस्य ते नमः॥
अविज्ञेयमचिन्त्यं च अध्यात्मगतमव्ययम्।
अनादिनिधनं देवं यद्रूपं तस्य ते नमः॥
नमो नमः कारणकारणाय नमो नमः पापविनाशनाय।
नमो नमो वन्दितवन्दनाय नमो नमो रोगविनाशनाय॥
नमो नमः सर्ववरप्रदाय नमो नमः सर्वबलप्रदाय।
नमो नमो ज्ञाननिधे सदैव नमो नमः पञ्चदशात्मकाय*॥

(ब्राह्मपर्व १२३। ११—२४)

इस प्रकार हमारी स्तुतिसे प्रसन्न हो वे तैजस-

* स्तुतिका भाव इस प्रकार है—

हे सनातन देवदेव! आप ही समस्त चराचर प्राणियोंके आदि स्रष्टा एवं ईश्वरोंके ईश्वर तथा आदिदेव हैं। देवता, गन्धर्व, राक्षस, मुनि,

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

रूप कल्याणकारी देव मधुर वाणीमें बोले—'देवगण! आप क्या चाहते हैं?' तब हमने कहा—'प्रभो! आपके इस प्रचण्ड तप्त रूपको देखनेमें कोई भी समर्थ नहीं है। अतः संसारके कल्याणके लिये आप सौम्य रूप धारण करें।' देवताओंकी ऐसी प्रार्थना सुनकर उन्होंने 'एवमस्तु' कहकर सभीको सुख देनेवाला उत्तम रूप धारण कर लिया।

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! सांख्ययोगका आश्रय ग्रहण करनेवाले योगी आदि तथा मोक्षकी अभिलाषा रखनेवाले पुरुष इनका ही ध्यान करते हैं। इनके ध्यानसे बड़े-बड़े पाप नष्ट हो जाते हैं। अग्निहोत्र, वेदपाठ और प्रचुर दक्षिणासे युक्त यज्ञ भी भगवान् सूर्यकी भक्तिके सोलहवीं कलाके तुल्य भी फलदायक नहीं हैं। ये तीर्थोंके भी तीर्थ, मङ्गलोंके भी मङ्गल और पवित्रोंको भी पवित्र करनेवाले हैं। जो इनकी आराधना करते हैं, वे सभी पापोंसे मुक्त होकर सूर्यलोकको प्राप्त करते हैं। वेदादि शास्त्रोंमें भगवान् दिवस्पति उपासना आदिके द्वारा जिस प्रकार सुलभ हो जाते हैं, उसी प्रकार सूर्यदेव समस्त लोकोंके उपास्य हैं।

राजा शतानीकने पूछा—मुने! देवता तथा ऋषियोंने किस प्रकार भगवान् सूर्यका सुन्दर रूप बनवाया? यह आप बतायें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! एक समय सभी ऋषियोंने ब्रह्मलोकमें जाकर ब्रह्माजीसे प्रार्थना की कि 'ब्रह्मन्! अदितिके पुत्र सूर्यनारायण आकाशमें अति प्रचण्ड तेजसे तप रहे हैं। जिस प्रकार नदीका किनारा सूख जाता है, वैसे ही अखिल जगत् विनाशको प्राप्त हो रहा है, हम सब भी अति पीड़ित हैं और आपका आसन कमल-पुष्प भी सूख रहा है, तीनों लोकोंमें कोई सुखी नहीं है, अतः आप ऐसा उपाय करें, जिससे यह तेज शान्त हो जाय।'

ब्रह्माजीने कहा—मुनीश्वरो! सभी देवताओंके साथ आप और हम सब सूर्यनारायणकी शरणमें जायँ, उसीमें सबका कल्याण है। ब्रह्माजीकी आज्ञा पाकर ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर सभी देवता और ऋषिगण उनकी शरणमें गये और उन्होंने भक्तिभावपूर्वक नम्र होकर अनेक प्रकारसे उनकी स्तुति की। देवताओंकी स्तुतिसे सूर्यनारायण प्रसन्न हो गये।

सूर्यभगवान् बोले—आपलोग वर माँगिये। उस समय देवताओंने यही वर माँगा कि 'प्रभो! आपके तेजको विश्वकर्मा कम कर दें, ऐसी आप आज्ञा प्रदान करें।' इन्होंने देवताओंकी प्रार्थना स्वीकार कर ली। तब विश्वकर्माने उनके तेजको तराश कर कम किया। इसी तेजसे भगवान् विष्णुका चक्र और अन्य देवताओंके शूल, शक्ति, गदा,

किन्नर, सिद्ध, नाग तथा तिर्यक् योनियोंके आप ही जीवनाधार हैं। आप ही ब्रह्मा, शिव, विष्णु, प्रजापति, वायु, इन्द्र, सोम, विवस्वान्, वरुण तथा काल हैं एवं जगत्के स्रष्टा, संहर्ता, पालनकर्ता और सबके शासक भी आप ही हैं। आप ही नदी, सागर, पर्वत, विद्युत्, इन्द्रधनुष इत्यादि सब कुछ हैं। प्रलय, प्रभव, व्यक्त एवं अव्यक्त भी आप ही हैं। ईश्वरसे परे विद्या, विद्यासे परे शिव तथा शिवसे परतर आप परमदेव हैं। हे परमात्मन्! आपके पाणि, पाद, अक्षि, सिर, मुख सर्वत्र—चतुर्दिक् व्याप्त हैं। आपकी देदीप्यमान सहस्रों किरणें सब ओर व्याप्त हैं। भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः तथा सत्य इत्यादि समस्त लोकोंमें आपका ही प्रचण्ड एवं प्रदीप्त तेज प्रकाशित है। इन्द्रादि देवताओंसे भी दुर्निरीक्ष्य, भृगु, अत्रि, पुलह आदि ऋषियों एवं सिद्धोंद्वारा सेवित अत्यन्त कल्याणकारी एवं शान्त रूपवाले आपको नमस्कार है। हे देव! आपका वह रूप पाँच, दस अथवा एकादश इन्द्रियों आदिसे अगम्य है, उस रूपकी देवता सदा वन्दना करते रहते हैं। देव! विश्वस्रष्टा, विश्वमें स्थित तथा विश्वभूत आपके अचिन्त्य रूपकी इन्द्रादि देवता अर्चना करते रहते हैं। आपके उस रूपको नमस्कार है। नाथ! आपका रूप यज्ञ, देवता, लोक, आकाश—इन सबसे परे है, आप दुरतिक्रम नामसे विख्यात हैं, इससे भी परे आपका अनन्त रूप है, इसीलिये आपका रूप परमात्मा नामसे प्रसिद्ध है। ऐसे रूपवाले आपको नमस्कार है। हे अनादिनिधन ज्ञाननिधे! आपका रूप अविज्ञेय, अचिन्त्य, अव्यय एवं अध्यात्मगत है, आपको नमस्कार है। हे कारणोंके कारण, पाप एवं रोगके विनाशक, वन्दितोंके भी वन्द्य, पञ्चदशात्मक, सभीके लिये श्रेष्ठ वरदाता तथा सभी प्रकारके बल देनेवाले! आपको सदा बार-बार नमस्कार है।

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shandu Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

वज्र, बाण, धनुष, दुर्गा आदि देवियोंके आभूषण तथा शिविका (पालकी), परशु आदि आयुध बनाकर विश्वकर्माने उन्हें देवताओंको दिया।

भगवान् सूर्यका तेज सौम्य हो जानेसे तथा उत्तम-उत्तम आयुध प्राप्त कर देवता अत्यन्त प्रसन्न हुए और उन्होंने पुनः उनकी भक्तिपूर्वक स्तुति की।

देवताओंकी स्तुतिसे प्रसन्न हो भगवान् सूर्यने और भी अनेक वर उन्हें प्रदान किये। अनन्तर देवताओंने परस्पर विचार किया कि दैत्यगण वर पाकर अत्यन्त अभिमानी हो गये हैं। वे अवश्य भगवान् सूर्यको हरण करनेका प्रयत्न करेंगे। इसलिये उन सबको नष्ट करनेके लिये तथा इनकी रक्षाके लिये हमें चाहिये कि हम इनके चारों ओर खड़े हो जायँ, जिससे ये दैत्य सूर्यको देख न सकें। ऐसा विचारकर स्कन्द दण्डनायकका रूप धारण कर भगवान् सूर्यके बायीं ओर स्थित हो गये। भगवान् सूर्यने दण्डनायकको जीवोंके शुभाशुभ कर्मोंको लिखनेका निर्देश दिया। दण्डका निर्णय करने तथा दण्डनीतिका निर्धारण करनेसे दण्डनायक नाम पड़ा। अग्निदेव पिंगलवर्णके होनेके कारण पिंगल नामसे प्रसिद्ध हुए और सूर्यभगवान्‌की दाहिनी ओर स्थित हुए। इसी प्रकार दोनों पार्श्वोंमें दो अश्विनीकुमार स्थित हुए। वे अश्वरूपसे उत्पन्न होनेके कारण अश्विनीकुमार कहलाये। महाबलशाली राज्ञ और श्रौष दो द्वारपाल हुए। राज्ञ कार्तिकेयके और श्रौष हरके अवतार कहे गये हैं। लोकपूज्य ये दोनों द्वारपाल धर्म और अर्थके रूपमें प्रथम द्वारपर रहते हैं। दूसरे द्वारपर कल्माष और पक्षी ये दो द्वारपाल रहते हैं। इनमेंसे कल्माष यमराजके रूप हैं और पक्षी गरुडरूप हैं। ये दोनों दक्षिण दिशामें स्थित हैं। कुबेर और विनायक उत्तरमें तथा दिण्डी और रेवन्त पूर्व दिशामें स्थित हैं। दिण्डी रुद्ररूप हैं और रेवन्त भगवान् सूर्यके पुत्र हैं। ये सब देवता दैत्योंको मारनेके लिये सूर्यनारायणके चारों ओर स्थित हैं और सुन्दर रूपवाले, विरूप, अन्यरूप और कामरूप हैं तथा अनेक प्रकारके आयुध धारण किये हैं। चारों वेद भी उत्तम रूप धारणकर भगवान् सूर्यके चारों ओर स्थित हैं। (अध्याय १२१—१२४)

श्रीसूर्यनारायणके आयुध—व्योमका लक्षण और माहात्म्य

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! अब भगवान् सूर्यके मुख्य आयुध व्योमका लक्षण कहता हूँ, उसे आप सुनें।

भगवान् सूर्यका आयुध व्योम सर्वदेवमय है, वह चार शृङ्गोंसे युक्त है तथा सुवर्णका बना हुआ है। जिस प्रकार वरुणका पाश, ब्रह्माका हुंकार, विष्णुका चक्र, त्र्यम्बकका त्रिशूल तथा इन्द्रका आयुध वज्र है, उसी प्रकार भगवान् सूर्यका आयुध व्योम है। उस व्योममें ग्यारह रुद्र, बारह आदित्य, दस विश्वेदेव*, आठ वसुगण तथा दो अश्विनीकुमार—ये सभी अपनी-अपनी कलाओंके साथ स्थित हैं। हर, शर्व, त्र्यम्बक, वृषाकपि, शम्भु, कपर्दी, रैवत, अपराजित, ईश्वर, अहिर्बुध्न्य और भुवन (भव)- ये ग्यारह रुद्र हैं। ध्रुव, धर, सोम, अनिल, अनल, अप्, प्रत्यूष और प्रभास—ये आठ वसु हैं। नासत्य और दस्र—ये दो अश्विनीकुमार हैं। क्रतु, दक्ष, वसु, सत्य, काल, काम, धृति, कुरु, शंकुमात्र तथा वामन—ये दस विश्वेदेव हैं।

* अन्य सभी पुराणोंमें विश्वेदेवोंकी संख्या कहीं दस, कहीं बारह, कहीं तेरह बतलायी गयी है। विशेष जानकारीके लिये 'कल्याण' विशेषाङ्क 'देवताङ्क' देखना चाहिये।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

इसी प्रकार साध्य, तुषित, मरुत् आदि देवता हैं। इनमें आदित्य और मरुत कश्यपके पुत्र हैं। विश्वेदेव, वसु और साध्य—ये धर्मके पुत्र हैं। धर्मका तीसरा पुत्र वसु (सोम) है और ब्रह्माजीका पुत्र धर्म है।

स्वायम्भुव, स्वारोचिष, उत्तम, तामस, रैवत और चाक्षुष—ये छः मनु तो व्यतीत हो गये हैं, वर्तमानमें सप्तम वैवस्वत मनु हैं। अर्कसावर्णि, ब्रह्मसावर्णि, रुद्रसावर्णि, धर्मसावर्णि, दक्षसावर्णि, रौच्य और भौत्य—ये सब मनु आगे होंगे। इन चौदहों मन्वन्तरोंमें इन्द्रोंके नाम इस प्रकार हैं—विष्णुभुक्, विद्युति, विभु, प्रभु, शिखी तथा मनोजव—ये छः इन्द्र व्यतीत हो गये हैं। ओजस्वी नामक इन्द्र वर्तमानमें हैं। बलि, अद्भुत, त्रिदिव, सुसात्त्विक, कीर्ति, शतधामा तथा दिवस्पति—ये सात इन्द्र आगे होंगे। कश्यप, अत्रि, वसिष्ठ, भरद्वाज, गौतम, विश्वामित्र और जमदग्नि—ये सप्तर्षि हैं। प्रवह, आवह, उद्वह, संवह, विवह, निवह और परिवह—ये सात मरुत् हैं। (प्रत्येकमें सात-सात मरुद्गणोंका समूह है)। ये उनचास मरुत् आकाशमें पृथक्-पृथक् मार्गसे चलते हैं। सूर्याग्निका नाम शुचि, वैद्युत अग्निका नाम पावक और अरणि-मन्थनसे उत्पन्न अग्निका नाम पवमान है। ये तीन अग्नियाँ हैं। अग्नियोंके पुत्र-पौत्र उनचास हैं और मरुत् भी उनचास ही हैं। संवत्सर, परिवत्सर, इद्वत्सर (इडावत्सर) अनवत्सर और वत्सर—ये पाँच संवत्सर हैं—ये ब्रह्माजीके पुत्र हैं। सौम्य, बर्हिषद् और अग्निष्वात्त—ये तीन पितर हैं। सूर्य, सोम, भौम, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु—ये नव ग्रह हैं। ये सदा जगत्का भाव-अभाव सूचित करते हैं। इनमें सूर्य और चन्द्र मण्डलग्रह, भौमादि पाँच ताराग्रह और राहु-केतु छायाग्रह कहलाते हैं। नक्षत्रोंके अधिपति चन्द्रमा हैं और ग्रहोंके राजा सूर्य हैं। सूर्य कश्यपके पुत्र हैं, सोम धर्मके, बुध चन्द्रके, गुरु और शुक्र प्रजापति भृगुके, शनि सूर्यके, राहु सिंहिकाके और केतु ब्रह्माजीके पुत्र हैं।

पृथ्वीको भूलोक कहते हैं। भूलोकके स्वामी अग्नि, भुवर्लोकके वायु और स्वर्लोकके स्वामी सूर्य हैं। मरुद्गण भुवर्लोकमें रहते हैं और रुद्र, अश्विनीकुमार, आदित्य, वसुगण तथा देवगण स्वर्लोकमें निवास करते हैं। चौथा महर्लोक है, जिसमें प्रजापतियोंसहित कल्पवासी रहते हैं। पाँचवें जनलोकमें भूमिदान करनेवाले तथा छठे तपोलोकमें ऋभु, सनत्कुमार तथा वैराज आदि ऋषि रहते हैं। सातवें सत्यलोकमें वे पुरुष रहते हैं, जो जन्म-मरणसे मुक्ति पा जाते हैं। इतिहास-पुराणके वक्ता तथा श्रोता भी उस लोकको प्राप्त करते हैं। इसे ब्रह्मलोक भी कहा गया है, इसमें न किसी प्रकारका विघ्न है न किसी प्रकारकी बाधा।

देव, दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, नाग, भूत, और विद्याधर—ये आठ देवयोनियाँ हैं। इस प्रकार इस व्योममें सातों लोक स्थित हैं। मरुत्, पितर, अग्नि, ग्रह और आठों देवयोनियाँ तथा मूर्त, अमूर्त सब देवता इसी व्योममें स्थित हैं। इसलिये जो भक्ति और श्रद्धासे व्योमका पूजन करता है, उसे सब देवताओंके पूजनका फल प्राप्त हो जाता है तथा वह सूर्यलोकको जाता है। अतः अपने कल्याणके लिये सदा व्योमका पूजन करना चाहिये।

महीपते! आकाश, ख, दिक्, व्योम, अन्तरिक्ष, नभ, अम्बर, पुष्कर, गगन, मेरु, विपुल, बिल, आपोछिद्र, शून्य, तमस्, रोदसी—व्योमके इतने नाम कहे गये हैं। लवण, क्षीर, दधि, घृत, मधु, इक्षु तथा सुस्वादु (जलवाला)—ये सात समुद्र हैं। हिमवान्, हेमकूट, निषध, नील, श्वेत, शृङ्गवान्—ये छः वर्षपर्वत हैं। इनके मध्य महाराजत नामक पर्वत है। माहेन्द्री, आग्नेयी, याम्या, नैर्ऋती, वारुणी, वायवी, सौम्या तथा ईशानी—ये देवनगरियाँ ऊपर

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

समाश्रित है। पृथ्वीके ऊपर लोकालोक पर्वत है। अनन्तर अण्डकपाल, इससे परे अग्नि, वायु, आकाश आदि भूत कहे गये हैं। इससे परे महान् अहंकार, अहंकारसे परे प्रकृति, प्रकृतिसे परे पुरुष और इस पुरुषसे परे ईश्वर है, जिससे यह सम्पूर्ण जगत् आवृत है। भगवान् भास्कर ही ईश्वर हैं, उनसे यह जगत् परिव्याप्त है। ये सहस्रों किरणवाले, महान् तेजस्वी, चतुर्बाहु एवं महाबली हैं।

भूर्लोक, भूवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपोलोक और सत्यलोक—ये सात लोक कहे गये हैं। भूमिके नीचे जो सात लोक हैं, वे इस प्रकार हैं—तल, सुतल, पाताल, तलातल, अतल, वितल और रसातल। काञ्चन मेरु पर्वत भूमण्डलके मध्यमें फैला हुआ चार रमणीय शृङ्गोंसे युक्त तथा सिद्ध-गन्धर्वोंसे सुसेवित है। इसकी ऊँचाई चौरासी हजार योजन है। यह सोलह हजार योजन भूमिमें नीचे प्रविष्ट है। इस प्रकार सब मिलाकर एक लाख योजन मेरुपर्वतका मान है। उसका सौमनस, नामका प्रथम शृङ्ग सुवर्णका है, ज्योतिष्क नामका द्वितीय शृङ्ग पद्मराग मणिका है। चित्र नामका तृतीय शृङ्ग सर्वधातुमय है और चन्द्रौजस्क नामक चतुर्थ शृङ्ग चाँदीका है। गाङ्गेय नामक प्रथम सौमनस शृङ्गपर भगवान् सूर्यका उदय होता है, सूर्योदयसे ही सब लोग देखते हैं, अतः उसका नाम उदयाचल है। उत्तरायण होनेपर सौमनस शृङ्गसे और दक्षिणायन होनेपर ज्योतिष्क शृङ्गसे भगवान् सूर्य उदित होते हैं। मेष और तुला-संक्रान्तियोंमें मध्यके दो शृङ्गोंमें सूर्यका उदय होता है। इस पर्वतके ईशानकोणमें ईश और अग्निकोणमें इन्द्र, नैर्ऋत्यकोणमें अद्रि और वायव्यकोणमें मरुत् तथा मध्यमें साक्षात् ब्रह्मा, ग्रह एवं नक्षत्र स्थित हैं। इसे व्योम कहते हैं। व्योममें सूर्यभगवान् स्वयं निवास करते हैं, अतः यह व्योम सर्वदेवमय और सर्वलोकमय है। राजन्! पूर्वकोणमें स्थित शृङ्गपर शुक्र हैं, दूसरे शृङ्गपर हेलिज (शनि), तीसरेपर कुबेर, चौथे शृङ्गपर सोम हैं। मध्यमें ब्रह्मा, विष्णु और शिव स्थित हैं। पूर्वोत्तर शृङ्गपर पितृगण और लोकपूजित गोपति महादेव निवास करते हैं। पूर्वाग्नेय शृङ्गपर शाण्डिल्य निवास करते हैं। अनन्तर महातेजस्वी हेलिपुत्र यम निवास करते हैं। नैर्ऋत्यकोणके शृङ्गमें महाबलशाली विरूपाक्ष निवास करते हैं। उसके बाद वरुण स्थित हैं, अनन्तर महातेजस्वी महाबली वीरमित्र निवास करते हैं। सभी देवोंके नमस्कार्य वायव्य शृङ्गका आश्रयण कर नरवाहन कुबेर निवास करते हैं। मध्यमें ब्रह्मा, नीचे अनन्त, उपेन्द्र और शंकर अवस्थित हैं। इसीको मेरु, व्योम और धर्म भी कहा जाता है। यह व्योमस्वरूप मेरु वेदमय नामसे प्रसिद्ध है। चारों शृङ्ग चारों वेदस्वरूप हैं। (अध्याय १२५-१२६)

साम्बद्वारा भगवान् सूर्यकी आराधना, कुष्ठरोगसे मुक्ति तथा सूर्यस्तवराजका कथन

राजा शतानीकने पूछा—मुने! साम्बने किस प्रकार भगवान् सूर्यकी आराधना की और उस भयंकर रोगसे कैसे मुक्ति पायी? इसे आप कृपाकर बतायें।

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! आपने बहुत उत्तम कथा पूछी है। इसका मैं विस्तारसे वर्णन करता हूँ, इसके सुननेसे सभी पाप दूर हो जाते हैं। नारदजीके द्वारा सूर्यभगवान्का माहात्म्य सुनकर साम्बने अपने पिता श्रीकृष्णचन्द्रके पास जाकर विनयपूर्वक प्रार्थना की—'भगवन्! मैं अत्यन्त

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

दारुण रोगसे ग्रस्त हूँ। वैद्योंद्वारा बहुत ओषधियोंका सेवन करनेपर भी मुझे शान्ति नहीं मिल रही है। अब आप आज्ञा दें कि मैं वनमें जाकर तपस्याद्वारा अपने इस भयंकर रोगसे छुटकारा प्राप्त करूँ।' पुत्रका वचन सुनकर भगवान् श्रीकृष्णने आज्ञा दे दी और साम्ब अपने पिताकी आज्ञाके अनुसार सिन्धुके उत्तरमें चन्द्रभागा नदीके तटपर लोकप्रसिद्ध मित्रवन नामके सूर्यक्षेत्रमें जाकर तपस्या करने लगे। वे उपवास करते हुए सूर्यकी आराधनामें तत्पर हो गये। उन्होंने इतना कठोर तप किया कि उनका अस्थिमात्र ही शेष रह गया। वे प्रतिदिन इस गुह्य स्तोत्रसे दिव्य, अव्यय एवं प्रकाशमान आदित्यमण्डलमें स्थित भगवान् भास्करकी स्तुति करने लगे—

प्रजापति परमात्मन्! आप तीनों लोकोंके नेत्र-स्वरूप हैं, सम्पूर्ण प्राणियोंके आदि हैं, अतः आदित्य नामसे विख्यात हैं। आप इस मण्डलमें महान् पुरुषरूपमें देदीप्यमान हो रहे हैं। आप ही अचिन्त्यस्वरूप विष्णु और पितामह ब्रह्मा हैं। रुद्र, महेन्द्र, वरुण, आकाश, पृथ्वी, जल, वायु, चन्द्र, मेघ, कुबेर, विभावसु, यमके रूपमें इस मण्डलमें देदीप्यमान पुरुषके रूपसे आप ही प्रकाशित हैं। यह आपका साक्षात् महादेवमय वृत्त अण्डके समान है। आप काल एवं उत्पत्तिस्वरूप हैं। आपके मण्डलके तेजसे सम्पूर्ण पृथ्वी व्याप्त हो रही है। आप सुधाकी वृष्टिसे सभी प्राणियोंको परिपुष्ट करते हैं। विभावसो! आप ही अन्तःस्थ म्लेच्छजातीय एवं पशु-पक्षीकी योनिमें स्थित प्राणियोंकी रक्षा करते हैं। गलित कुष्ठ आदि रोगोंसे ग्रस्त तथा अन्ध और बधिरोंको भी आप ही रोगमुक्त करते हैं। देव! आप शरणागतके रक्षक हैं। संसार-चक्र-मण्डलमें निमग्न निर्धन, अल्पायु व्यक्तियोंकी भी सर्वदा आप रक्षा करते हैं। आप प्रत्यक्ष दिखायी देते हैं। आप अपनी लीलामात्रसे ही सबका उद्धार कर देते हैं। आर्त और रोगसे पीड़ित मैं स्तुतियोंके द्वारा आपकी स्तुति करनेमें असमर्थ हूँ। आप तो ब्रह्मा, विष्णु और महेश आदिसे सदा स्तुत होते रहते हैं। महेन्द्र, सिद्ध, गन्धर्व, अप्सरा, गुह्यक आदि स्तुतियोंके द्वारा आपकी सदा आराधना करते रहते हैं। जब ऋक्, यजु और सामवेद तीनों आपके मण्डलमें ही स्थित हैं तो दूसरी कौन-सी पवित्र अन्य स्तुति आपके गुणोंका पार पा सकती है? आप ध्यानियोंके परम ध्यान और मोक्षार्थियोंके मोक्षद्वार हैं। अनन्त तेजोराशिसे सम्पन्न आप नित्य अचिन्त्य, अक्षोभ्य, अव्यक्त और निष्कल हैं। जगत्पते! इस स्तोत्रमें जो कुछ भी मैंने कहा है, इसके द्वारा आप मेरी भक्ति तथा दुःखमय परिस्थिति (कुष्टरोगकी बात)-को जान लें और मेरी विपत्तिको दूर करें*।

सूर्यभगवान्‌ने कहा—जाम्बवतीपुत्र! मैं तुम्हारी स्तुतिसे प्रसन्न हूँ, वत्स! मुझसे जो तुम चाहते हो वह कहो।

---

* आदिरेष हि भूतानामादित्य इति संज्ञितः। त्रैलोक्यचक्षुरेवात्र परमात्मा प्रजापतिः॥
एष वै मण्डले ह्यस्मिन् पुरुषो दीप्यते महान्। एष विष्णुरचिन्त्यात्मा ब्रह्मा चैष पितामहः॥
रुद्रो महेन्द्रो वरुण आकाशं पृथिवी जलम्। वायुः शशाङ्कः पर्जन्यो धनाध्यक्षो विभावसुः॥
य एष मण्डले ह्यस्मिन् पुरुषो दीप्यते महान्। एकः साक्षान्महादेवो वृत्रमण्डनिभः सदा॥
कालो ह्येष महाबाहुर्निबोधोत्पत्तिलक्षणः। य एष मण्डले ह्यस्मिंस्तेजोभिः पूरयन् महीम्॥
भ्राम्यते ह्यव्यवच्छिन्नो वातैर्योऽमृतलक्षणः। नातः परतरं किंचित् तेजसा विद्यते क्वचित्॥
पुष्णाति सर्वभूतानि एष एव सुधामृतैः। अन्तःस्थान् म्लेच्छजातीयांस्तिर्यग्योनिगतानपि॥
कारुण्यात् सर्वभूतानि पासि त्वं च विभावसो। श्वित्रकुष्ठ्यन्धबधिरान् पंगूंश्चापि तथा विभो॥
प्रपन्नवत्सलो देव कुरुते नीरुजो भवान्। चक्रमण्डलमग्नांश्च निर्धनाल्पायुषस्तथा॥

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanda Peeth

साम्बने कहा—भगवन्! आपके चरणोंमें मेरी दृढ़ भक्ति हो, यही वर चाहता हूँ।

सूर्यभगवान्‌ने कहा—ऐसा ही होगा! मैं तुमसे बहुत संतुष्ट हूँ, सुव्रत! द्वितीय वर माँगो।

साम्बने कहा—भगवन्! मेरे शरीरमें रहनेवाला यह मल—कुष्ठ आपकी कृपासे दूर हो जाय, गोपते! मेरा शरीर सर्वथा शुद्ध निर्मल हो जाय।

भगवान् सूर्यने कहा—ऐसा ही होगा।

भगवान् सूर्यके ऐसा कहते ही साम्बके शरीरसे कुष्ठरोग वैसे ही दूर हो गया जैसे सर्पके शरीरसे केंचुल। वह दिव्य रूपसम्पन्न हो गया। साम्ब भगवान् सूर्यको प्रणामकर उनके सम्मुख खड़े हो गये।

सूर्यदेवने कहा—साम्ब! प्रसन्न होकर मैं और भी वर देता हूँ। आजसे मेरा यह स्थान तुम्हारे नामसे प्रसिद्ध होगा। लोकमें तुम्हारी अक्षय कीर्ति होगी। जो व्यक्ति तुम्हारे नामसे मेरा स्थान बनायेगा, उसे सनातन लोक प्राप्त होगा। इस चन्द्रभागा नदीके तटपर मेरी स्थापना करो। मैं तुझे स्वप्नमें दर्शन देता रहूँगा। इतना कहकर सूर्यभगवान् प्रत्यक्ष दर्शन देकर अन्तर्धान हो गये।

इस साम्बकृत स्तोत्रको जो व्यक्ति भक्तिपूर्वक तीनों कालमें पढ़ता है अथवा सात दिनोंमें एक सौ इक्कीस बार पाठ और हवन करता है तो राज्यकी कामना करनेवाला राज्य, धनकी कामना करनेवाला धन प्राप्त कर लेता है और रोगसे पीड़ित व्यक्ति वैसे ही रोगमुक्त हो जाता है, जैसे साम्ब कुष्ठरोगसे मुक्त हो गये।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! तपस्याके समय रोगसे दुर्बल साम्बने सूर्यकी स्तुति उनके सहस्रनामसे की थी। उसे दुःखी देखकर स्वप्नमें भगवान् सूर्यने साम्बसे कहा—'साम्ब! सहस्रनामसे मेरी स्तुति करनेकी आवश्यकता नहीं है। मैं अपने अतिशय गोपनीय, पवित्र और इक्कीस शुभ नामोंको बताता हूँ। प्रयत्नपूर्वक उन्हें ग्रहण करो, उनके पाठ करनेसे सहस्रनामके पाठका फल प्राप्त होगा। मेरे इक्कीस नाम इस प्रकार हैं—

(१) विकर्तन (विपत्तियोंको काटने तथा नष्ट करनेवाले), (२) विवस्वान् (प्रकाश-रूप), (३) मार्तण्ड (जिन्होंने अण्डमें बहुत दिन निवास किया), (४) भास्कर, (५) रवि, (६) लोकप्रकाशक, (७) श्रीमान्, (८) लोकचक्षु, (९) ग्रहेश्वर, (१०) लोकसाक्षी, (११) त्रिलोकेश, (१२) कर्ता, (१३) हर्ता, (१४) तमिस्रहा (अन्धकारको नष्ट करनेवाले), (१५) तपन, (१६) तापन, (१७) शुचि (पवित्रतम), (१८) सप्ताश्ववाहन, (१९) गभस्तिहस्त (किरणें ही जिनके हाथस्वरूप हैं), (२०) ब्रह्मा और (२१) सर्वदेवनमस्कृत।*

साम्ब! ये इक्कीस नाम मुझे अतिशय प्रिय हैं। यह स्तवराजके नामसे प्रसिद्ध है। यह स्तवराज

प्रत्यक्षदर्शी त्वं देव समुद्धरसि लीलया। का मे शक्तिः स्तवैः स्तोतुमार्तोऽहं रोगपीडितः॥
स्तूयसे त्वं सदा देवैर्ब्रह्मविष्णुशिवादिभिः। महेन्द्रसिद्धगन्धर्वैरप्सरोभिः सगुह्यकैः॥
स्तुतिभिः किं पवित्रैर्वा तव देव समीरितैः। यस्य ते ऋग्यजुःसाम्नां त्रितयं मण्डलस्थितम्॥
ध्यानिनां त्वं परं ध्यानं मोक्षद्वारं च मोक्षिणाम्। अनन्ततेजसाक्षोभ्यो ह्यचिन्त्याव्यक्तनिष्कलः॥
यदयं व्याहृतः किंचित् स्तोत्रेऽस्मिञ्जगतः पतिः। आर्तिं भक्तिं च विज्ञाय तत्सर्वं ज्ञातुमर्हसि॥

(ब्राह्मपर्व १२७। १०—२३)

* वैकर्तनो विवस्वांश्च मार्तण्डो भास्करो रविः। लोकप्रकाशकः श्रीमाँल्लोकचक्षुर्ग्रहेश्वरः॥
लोकसाक्षी त्रिलोकेशः कर्ता हर्ता तमिस्रहा। तपनस्तापनश्चैव शुचिः सप्ताश्ववाहनः॥
गभस्तिहस्तो ब्रह्मा च सर्वदेवनमस्कृतः।

(ब्राह्मपर्व १२८। ५—७)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

शरीरको नीरोग बनानेवाला, धनकी वृद्धि करनेवाला और यशस्कर है एवं तीनों लोकोंमें विख्यात है। महाबाहो! इन नामोंसे उदय और अस्त दोनों संध्याओंके समय प्रणत होकर जो मेरी स्तुति करता है, वह सभी पापोंसे मुक्त हो जाता है। मानसिक, वाचिक और शारीरिक जो भी दुष्कृत हैं, वे सभी एक बार मेरे सम्मुख इसका जप करनेसे विनष्ट हो जाते हैं। यही मेरे लिये जपने योग्य तथा हवन एवं संध्योपासना है। बलिमन्त्र, अर्घ्यमन्त्र, धूपमन्त्र इत्यादि भी यही है। अन्नप्रदान, स्नान, नमस्कार, प्रदक्षिणामें यह महामन्त्र प्रतिष्ठित होकर सभी पापोंका हरण करनेवाला और शुभ करनेवाला है। यह कहकर जगत्पति भगवान् भास्कर कृष्णपुत्र साम्बको उपदेश देकर वहीं अन्तर्धान हो गये। साम्ब भी इस स्तवराजसे सप्ताश्ववाहन भास्करकी स्तुति कर नीरोग, श्रीमान् और उस भयंकर शारीरिक रोगसे सर्वथा मुक्त हो गये। (अध्याय १२७-१२८)

साम्बको सूर्य-प्रतिमाकी प्राप्ति

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! इस प्रकार साम्ब सूर्यनारायणसे वर प्राप्तकर अतिशय प्रसन्न हुए और वर-प्राप्तिको आश्चर्य मानते हुए अन्य तपस्वियोंके साथ समीपमें स्थित चन्द्रभागा नदीमें स्नान करनेके लिये गये। वहाँ वे स्नानकर श्रद्धाके साथ अपने हृदयमें मण्डलाकार भगवान् सूर्यकी भावना कर मनमें यह सोचने लगे कि 'सूर्यनारायणकी कैसी प्रतिमा हो और उसे किस प्रकार कहाँ स्थापित करूँ।' इस प्रकार विचार कर ही रहे थे कि उन्होंने देखा—चन्द्रभागा नदीके ऊपरसे एक अत्यन्त देदीप्यमान प्रतिमा बहती हुई चली आ रही है। प्रतिमा देखकर साम्बको यह निश्चय हो गया कि यह भगवान् सूर्यकी ही मूर्ति है। जैसी उन्होंने आज्ञा दी थी, वही यह सूर्य-प्रतिमा है, इसमें किसी प्रकारका संदेह नहीं। यह सोचकर नदीसे उस तेजसे चमकती हुई मूर्तिको निकालकर उन्होंने मित्रवन (मुल्तान)-में एक स्थानपर तपस्वियोंके साथ विधिपूर्वक उसकी स्थापना की। एक दिन साम्बने सूर्य-प्रतिमाको प्रणामकर पूछा—'नाथ! आपकी यह प्रतिमा किसने बनायी? इसकी आकृति बड़ी सुन्दर है।' आप कृपाकर बतायें।

प्रतिमा बोली—साम्ब! पूर्वकालमें मेरा रूप प्रचण्ड तेजोमय था। उससे व्याकुल होकर सभी देवताओंने प्रार्थना की कि 'आप अपना रूप सभी प्राणियोंके सहन करनेके योग्य बनायें, नहीं तो सभी लोग जल जायँगे।' मैंने महातपस्वी विश्वकर्माको आदेश दिया कि मेरे तेजको कम कर मेरा निर्माण करो। मेरा आदेश प्राप्त कर उन्होंने शाकद्वीपमें चक्रको घुमाकर मेरे तेजको खराद दिया। उसी विश्वकर्माने कल्पवृक्षके काष्ठसे यह मेरी सुलक्षणा प्रतिमा बनायी है। तुम्हारा उद्धार करनेके लिये मेरी आज्ञाके अनुसार विश्वकर्माने ही सिद्धसेवित हिमालयपर इसे निर्मितकर चन्द्रभागा नदीमें प्रवाहित कर दिया है। साम्ब! यह स्थान बड़ा शुभ है, सुन्दर है। यहाँ सदा मेरा सांनिध्य रहेगा। प्रातः मनुष्यगण इत चन्द्रभागाके तटपर मेरा सांनिध्य प्राप्त करेंगे। मध्याह्नमें कालप्रियमें (कालपीमें) और अनन्तर यहाँ प्रतिदिन मेरा दर्शन प्राप्त करेंगे। पूर्वाह्णमें ब्रह्मा, मध्याह्नमें विष्णु और अपराह्णमें शंकर सदा पूजा करेंगे। महाबाहो! इस प्रकार भगवान् सूर्यके ऐसा कहनेपर साम्ब अत्यन्त प्रसन्न हुए और भगवान् सूर्य भी अन्तर्धान हो गये। (अध्याय १२९)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

मन्दिर-निर्माण-योग्य भूमि एवं मन्दिरमें प्रतिमाओंके स्थानका निरूपण

राजा शतानीकने पूछा—मुने! साम्बने भगवान् सूर्यकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा किस प्रकार की? किसके कथनानुसार उन्होंने भगवान् आदित्यके प्रासादका निर्माण कराया।

सुमन्तु मुनि बोले—चन्द्रभागा नदीसे प्रतिमा प्राप्त करनेके बाद साम्बने देवर्षि नारदका स्मरण किया। स्मरण करते ही वे वहाँ उपस्थित हो गये। साम्बने विधिवत् उनका पूजन-सत्कार आदि करके उनसे पूछा—'महाराज! भगवान्के मन्दिरको जो बनवाता है तथा प्रतिमाकी जो प्रतिष्ठा करता है, उन दोनोंका क्या फल है?'

नारदजीने कहा—नरशार्दूल! जो रमणीय स्थानमें सूर्य-मन्दिरका निर्माण कराता है, वह व्यक्ति सूर्यलोकमें जाता है, इसमें संदेह नहीं।

साम्बने पूछा—सूर्य-मन्दिरका निर्माण किस प्रकार तथा किस स्थानपर कराना चाहिये? आप इसे बतायें।

नारद बोले—जहाँ जलराशि निरन्तर विद्यमान रहे, वहाँ मन्दिर बनवाना चाहिये अर्थात् सर्वप्रथम एक विशाल जलाशयका निर्माण कराना चाहिये। यश और धर्मकी अभिवृद्धिके लिये वहीं देवमन्दिरका निर्माण कराना चाहिये। उसके समीप उद्यान एवं पुष्पवाटिका भी लगवाने चाहिये। ब्राह्मण आदि वर्णोंके लिये जैसी भूमि वास्तुशास्त्रकी दृष्टिसे प्रासाद-निर्माणके लिये वर्णित है, वैसी ही भूमि देवप्रासादके लिये भी प्रशस्त मानी गयी है।

सूर्यनारायणका मन्दिर पूर्वाभिमुख बनवाना चाहिये, पूर्वकी ओर द्वार रखनेका स्थान न हो तो पश्चिमाभिमुख बनवाये। परंतु मुख्य पूर्वाभिमुख ही है। स्थानकी इस प्रकारसे कल्पना करे कि मुख्य मन्दिरसे दक्षिणकी ओर भगवान् सूर्यका स्नान-गृह और उत्तरकी ओर यज्ञशाला रहे। भगवान् शिव और मातृकाका मन्दिर उत्तराभिमुख, ब्रह्माका पश्चिम और विष्णुका उत्तर-मुख बनवाना चाहिये। भगवान् सूर्यके दाहिने पार्श्वमें निक्षुभा तथा बायें पार्श्वमें राज्ञीको स्थापित करना चाहिये। सूर्यनारायणके दक्षिणभागमें पिङ्गल, वामभागमें दण्डनायक, सम्मुख श्री और महाश्वेताकी स्थापना करनी चाहिये। देवगृहके बाहर अश्विनीकुमारोंका स्थान बनाना चाहिये। मन्दिरके दूसरे कक्षमें राज्ञ और श्रौष, तीसरे कक्षमें कल्माष और पक्षी, दक्षिणमें दण्ड और माठर, उत्तरमें लोकपूजित कुबेरको स्थापित करना चाहिये। कुबेरसे उत्तर रेवन्त एवं विनायककी स्थापना करनी चाहिये या जिस दिशामें उत्तम स्थान हो वहींपर उनकी स्थापना करे। दाहिनी एवं बायीं ओर अर्घ्य प्रदान करनेके लिये दो मण्डल बनवाये। उदयके समय दक्षिण मण्डलमें और अस्तके समय वाम मण्डलमें भगवान्को अर्घ्य दे। चक्राकार पीठके ऊपर स्नानगृहमें चार कलशोंसे भगवान् सूर्यकी प्रतिमाको सविधि स्नान कराये। स्नानके समय शङ्ख आदि मङ्गल वाद्य बजाने चाहिये। तीसरे मण्डलमें सूर्यनारायणकी पूजा करे। सूर्यनारायणके सामने दिण्डीकी स्थानक (खड़ी हुई) प्रतिमा स्थापित करनी चाहिये। सूर्यनारायणके सम्मुख समीपमें ही सर्वदेवमय व्योमकी रचना करनी चाहिये। मध्याह्नके समय वहाँ सूर्यको अर्घ्य देना चाहिये अथवा मध्याह्नमें अर्घ्य देनेके लिये चन्द्र नामक तृतीय मण्डल बनाये। प्रथम स्नान कराकर बादमें अर्घ्य दे। भगवान् सूर्यके समीप ही उचित स्थानपर पुराणका पाठ करनेके

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

लिये स्थान बनाना चाहिये। यह देवताओंके स्थापनका विधान है। गृहराज और सर्वतोभद्र—ये दो प्रासाद सूर्यनारायणको अतिशय प्रिय हैं।

(अध्याय १३०)

सात प्रकारकी प्रतिमा एवं काष्ठ-प्रतिमाके निर्माणोपयोगी वृक्षोंके लक्षण

नारदजी बोले—साम्ब! अब मैं विस्तारके साथ प्रतिमा-निर्माणका विधान बतलाता हूँ। भक्तोंके कल्याणकी अभिवृद्धिके लिये भगवान् सूर्यकी प्रतिमा सात प्रकारकी बनायी जा सकती है। सोना, चाँदी, ताम्र, पाषाण, मृत्तिका, काष्ठ तथा चित्रलिखित। इनमें काष्ठकी प्रतिमाके निर्माणका विधान इस प्रकार है—

नक्षत्र तथा ग्रहोंकी अनुकूलता एवं शुभ शकुन देखकर मङ्गलस्मरणपूर्वक काष्ठ-ग्रहण करनेके लिये वनमें जाकर प्रतिमोपयोगी वृक्षका चयन करना चाहिये। दूधवाले वृक्ष, कमजोर वृक्ष, चौराहे, देवस्थान, वल्मीक, श्मशान, चैत्य, आश्रम आदिमें लगे हुए वृक्ष तथा पुत्रक वृक्ष—जिसको किसी बिना पुत्रवाले व्यक्तिने पुत्रके रूपमें लगाया हो अथवा बाल वृक्ष, जिसमें बहुत कोटर हों, अनेक पक्षी रहते हों, शस्त्र, वायु, अग्नि, बिजली तथा हाथी आदिसे दूषित वृक्ष, एक-दो शाखावाले वृक्ष, जिनका अग्रभाग सूख गया हो ऐसे वृक्ष प्रतिमाके योग्य नहीं होते। महुआ, देवदारु, वृक्षराज चन्दन, बिल्व, आम्र, खदिर, अंजन, निम्ब, श्रीपर्ण (अग्निमन्थ), पनस (कटहल), सरल, अर्जुन और रक्तचन्दन—ये वृक्ष प्रतिमाके लिये उत्तम हैं। चारों वर्णोंके लिये भिन्न-भिन्न ग्राह्य काष्ठोंका विधान है।

अभिमत वृक्षके पास जाकर वृक्षकी पूजा करनी चाहिये। पवित्र स्थान, एकान्त, केश-अङ्गारशून्य, पूर्व और उत्तरकी ओर स्थित, लोगोंको कष्ट न देनेवाला, विस्तृत सुन्दर शाखाओं तथा पत्तोंसे समृद्ध, सीधा, व्रणशून्य तथा त्वचावाला वृक्ष शुभ होता है। स्वयं गिरे हुए या हाथीसे गिराये गये, शुष्क होकर या अग्निसे जले हुए और पक्षियोंसे रहित वृक्षोंका प्रतिमा-निर्माणमें उपयोग नहीं करना चाहिये। मधुमक्खीके छातेवाला वृक्ष भी ग्राह्य नहीं है। स्निग्ध पत्रसमन्वित, पुष्पित तथा फलित वृक्षोंका कार्तिक आदि आठ मासोंमें उत्तम मुहूर्त देखकर उपवास रहकर अधिवासन-कर्म करना चाहिये। वृक्षके नीचे चारों ओर लीपकर गन्ध, पुष्पमाला, धूप आदिसे यथाविधि वृक्षकी पूजा करे। अनन्तर गायत्रीमन्त्रसे अभिमन्त्रित जलसे प्रोक्षण करे। दो उज्ज्वल वस्त्र धारण कर वृक्षकी गन्ध-माल्यसे पूजा करे तथा उसके सामने कुशासनपर बैठकर देवदारुकी समिधासे अग्निमें आहुतियाँ दे, नमस्कार करे।

ॐ प्रजापतये सत्यसदाय नित्यं
श्रेष्ठान्तरात्मन् सचराचरात्मन्।
सांनिध्यमस्मिन् कुरु देव वृक्षे
सूर्यावृतं मण्डलमाविशेश्च नमः॥

(ब्राह्मपर्व १३१। २६)

'प्रजापतिसत्यस्वरूप इस वृक्षको नित्य नमस्कार है। श्रेष्ठान्तरात्मन्! सचराचरात्मन्! देव! इस वृक्षमें आप सांनिध्य करें। सूर्यावृत-मण्डल इसमें प्रविष्ट हो। आपको नमस्कार है।'

इस प्रकार वृक्षकी पूजा कर उसको सान्त्वना देते हुए कहे—'वृक्षराज! संसारके कल्याणके लिये आप देवालयमें चलें। देव! आप वहाँ छेदन और तापसे रहित होकर स्थित रहेंगे, समयपर धूप आदि प्रदानकर पुष्पोंके द्वारा संसार आपकी पूजा करेगा।'

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanda Peeth

वृक्षके मूलमें धूप-माल्य आदिसे कुठारका पूजन कर उसका सिर पूर्वकी ओर करके सावधानीसे स्थापित करे। अनन्तर मोदक, खीर आदि भक्ष्य द्रव्य तथा सुगन्धित पुष्प, धूप, गन्ध आदिसे वृक्षकी और देवता, पितर, राक्षस, पिशाच, नाग, सुरगण, विनायक आदिकी पूजा करके रात्रिमें वृक्षका स्पर्श कर यह कहे—'देवदेव! आप पूजामें देवोंके द्वारा परिकल्पित हैं। वृक्षराज! आपको नमस्कार है। यह विधिवत् की गयी पूजा आप ग्रहण करें। जो-जो प्राणी यहाँ निवास करते हैं, उनको भी मेरा नमस्कार है*।'

प्रभातकालमें पुनः उस वृक्षका पूजन करे तथा ब्राह्मण और भोजकको दक्षिणा देकर विशेषज्ञोंके द्वारा स्वस्तिवाचनपूर्वक वृक्षका छेदन करे। पूर्व-ईशान और उत्तरकी ओर वृक्ष कट करके गिरे तो अच्छा है। शाखाओंके इन दिशाओंमें गिरनेपर ही वृक्षका छेदन करे अन्यथा नहीं। वृक्षका नैर्ऋत्य, आग्नेय और दक्षिण दिशाओंमें गिरना शुभ नहीं है एवं वायव्य और पश्चिममें गिरना मध्यम है। पहले वृक्षके चारों ओरकी शाखाओंको काटनेके बाद वृक्षको कटवाये। वृक्षसे शाखाएँ सर्वथा अलग हो जायँ तथा गिरकर टूटें नहीं एवं शब्द भी नहीं हो तो उत्तम है। जिसके कटनेसे दो भाग हो जाय, जिस वृक्षसे मधुर द्रव, घी, तेल आदि निकले उसका परित्याग कर दे। इन दोषोंसे रहित अच्छा काल देखकर काष्ठका संग्रह करना चाहिये।

(अध्याय १३१)

सूर्य-प्रतिमाकी निर्माण-विधि

नारदजीने कहा—यदुशार्दूल! मैं सभी देवोंकी प्रतिमाका लक्षण विशेषरूपसे आदित्यकी प्रतिमाका लक्षण कहता हूँ। एक हाथ, दो हाथ, तीन हाथ अथवा साढ़े तीन हाथ लम्बी या देवालयके द्वारके प्रमाणके अनुसार भगवान् सूर्यकी प्रतिमाका निर्माण कराना चाहिये। एक हाथकी प्रतिमा सौम्य होती है, दो हाथकी धन-धान्य देती है, तीन हाथकी प्रतिमासे सभी कार्य सिद्ध होते हैं, साढ़े तीन हाथकी लम्बी प्रतिमाकी स्थापनासे राष्ट्रमें सुभिक्ष, कल्याण और आरोग्यकी प्राप्ति होती है। प्रतिमाके अग्रभाग, मध्यभाग और मूलभागमें सौम्य होनेपर उसको गान्धर्वी प्रतिमा कहते हैं। वह धन-धान्य प्रदान करती है। देवालयके द्वारका जितना विस्तार हो, उसके आठवें अंशके समान प्रतिमा बनवानी चाहिये।

भगवान् सूर्यकी प्रतिमा विशाल नेत्र, कमलके समान मुख, रक्तवर्णके बिम्बके समान सुन्दर ओठ, रत्नजटित मुकुटसे अलंकृत मस्तक, मणि-कुण्डल, कटक, अंगद, हार आदि अलंकारोंसे सुशोभित अभ्यङ्ग धारण किये हुए, हाथोंमें प्रफुल्लित कमल और सुवर्णकी माला लिये हुए अतिशय सुन्दर सभी शुभ लक्षणोंसे समन्वित बनवानी चाहिये।

इस प्रकारकी प्रतिमा प्रजाका कल्याण करनेवाली आरोग्य-प्रदायक तथा अभय प्रदान करनेवाली होती है। हीन या कम अङ्गवाली प्रतिमा अनिष्टकारक होती है। अतः प्रतिमा सीधी और सुडौल बनवानी चाहिये।

ब्रह्माजीकी मूर्ति हाथमें कमण्डलु धारण किये कमलासनपर विराजमान तथा चार मुखोंसे संयुक्त बनवानी चाहिये। कार्तिकेयकी प्रतिमा कुमार-स्वरूप, हाथमें शक्ति लिये, अतिशय सुन्दर बनवानी चाहिये। इनकी ध्वजा मयूर-मण्डित होनी चाहिये।

* अर्चासु देवदेव त्वं देवैश्च परिकल्पितः। नमस्ते वृक्ष पूजेयं विधिवत् परिगृह्यताम्॥ (ब्राह्मपर्व १३१। ३३)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

इन्द्रकी प्रतिमा चार दाँतोंसे युक्त सफेद दाँतोंवाले ऐरावत गजपर आरूढ़ तथा हाथमें वज्र धारण किये हुए बनवानी चाहिये। इस प्रकार देवोंकी प्रतिमा शुभ लक्षणोंसे युक्त और सुन्दर बनवानी चाहिये।

नारदजी बोले—साम्ब! भगवान् सूर्यकी इस प्रकारकी प्रतिमा बनवाकर ईशानकोणमें चार तोरण, पल्लव, पुष्पमाला, पताका आदिसे विभूषित कर फिर अधिवासनके लिये मण्डपका निर्माण करवाना चाहिये। काष्ठकी मूर्ति श्री, विजय, बल, यश, आयु और धन प्रदान करती है, मिट्टीकी प्रतिमा प्रजाका कल्याण करती है। मणिमयी प्रतिमा कल्याण और सुभिक्ष प्रदान करती है, सुवर्णकी प्रतिमा पुष्टि, चाँदीकी मूर्ति कीर्ति, ताम्रकी मूर्ति प्रजावृद्धि तथा पाषाणकी प्रतिमा विपुल भूमि लाभ कराती है। लोहे, शीशे एवं राँगेकी मूर्तियाँ अनिष्ट करनेवाली होती हैं, इसलिये इन धातुओंकी प्रतिमा नहीं बनवानी चाहिये।

साम्बने पूछा—नारदजी! भगवान् सूर्य सर्वदेवमय कहे गये हैं, यह उनका सर्वदेवमयत्व कैसा है? उसे कृपाकर बतलाइये।

नारदजीने कहा—साम्ब! तुमने बड़ी अच्छी बात पूछी है। अब मैं यह सब बता रहा हूँ। इसे ध्यानसे सुनो—

भगवान् सूर्य सर्वदेवमय हैं, उनके नेत्रोंमें बुध और सोम, ललाटपर भगवान् शंकर, सिरमें ब्रह्मा, कपालमें बृहस्पति, कण्ठमें एकादश रुद्र, दाँतोंमें नक्षत्र और ग्रहोंका निवास है। ओष्ठोंमें धर्म और अधर्म, जिह्वामें सर्वशास्त्रमयी महादेवी सरस्वती स्थित हैं। कर्णोंमें दिशाएँ और विदिशाएँ, तालुदेशमें ब्रह्मा और इन्द्र स्थित हैं। इसी प्रकार भ्रूमध्यमें बारहों आदित्य, रोमकूपोंमें सभी ऋषिगण, पेटमें समुद्र, हृदयमें यक्ष, किन्नर, गन्धर्व, पिशाच, दानव और राक्षसगण विराजमान हैं। भुजाओंमें नदियाँ, कक्षोंमें वृक्ष, पीठके मध्यमें मेरु, दोनों स्तनोंके बीचमें मङ्गल और नाभिमण्डलमें धर्मराजका निवास है। कटिप्रदेशमें पृथ्वी आदि, लिङ्गमें सृष्टि, जानुओंमें अश्विनीकुमार, ऊरुओंमें पर्वत, नखोंके मध्य सातों पाताल, चरणोंके बीच वन और समुद्रसहित भूमण्डल तथा दन्तान्तरोंमें कालाग्नि रुद्र स्थित हैं। इस प्रकार भगवान् सूर्य सर्वदेवमय तथा सभी देवताओंके आत्मा हैं। जैसे वायुसे विश्व व्याप्त है, वैसे ही चराचर जगत् इनसे परिव्याप्त है, क्योंकि वायु भी भगवान् सूर्यके प्रत्येक अङ्गोंमें ही स्थित रहता है। ऐसे ये भगवान् सूर्य सम्पूर्ण प्राणियोंपर अनुग्रह करनेके लिये निरन्तर तत्पर रहते हैं।

(अध्याय १३२-१३३)

सूर्य-प्रतिष्ठाका मुहूर्त और मण्डप बनानेका विधान

नारदजी बोले—साम्ब! भगवान् सूर्यकी स्थापनाके लिये प्रतिपदा, द्वितीया, चतुर्थी, पञ्चमी, दशमी, त्रयोदशी तथा पूर्णिमा—ये तिथियाँ प्रशस्त मानी गयी हैं। चन्द्रमा, बुध, गुरु और शुक्र—इन ग्रहोंके उदित एवं अनुकूल होनेपर भगवान् सूर्यकी प्रतिमाकी प्रतिष्ठा करनी चाहिये। सूर्यकी स्थापनामें तीनों उत्तरा, रेवती, अश्विनी, रोहिणी, हस्त, पुनर्वसु, पुष्य, श्रवण और भरणी—ये नक्षत्र प्रशस्त हैं। प्रतिष्ठाके लिये यज्ञभूमि भूसी, राख, केश आदिसे रहित एवं शुद्ध होनी चाहिये। उसमें बालू, कंकड़ एवं कोयले न हों। दस हाथ लम्बा-चौड़ा मण्डप बनवाना चाहिये। उसके चारों ओर वृक्ष, उद्यान, उपवन आदि होने चाहिये। उस मण्डपमें चार हाथ लम्बी-चौड़ी वेदीका निर्माण करे। नदीके

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

संगम-स्थानसे मिट्टी अथवा बालू लाकर वहाँ बिछाये। भलीभाँति मण्डपको गोबर आदिसे उपलिप्त करे, पूर्व दिशामें चतुरस्र, दक्षिण दिशामें अर्धचन्द्र, पश्चिम दिशामें वर्तुलाकार और उत्तर दिशामें पद्मके आकारवाले चार कुण्डोंका निर्माण करे। वट, पीपल, गूलर, बेल, पलाश, शमी अथवा चन्दनके द्वारा पाँच-पाँच हाथके खंभे लगाये। शुक्ल वस्त्र, पुष्पमाला, कुश आदिके द्वारा प्रत्येक खंभेको अलंकृत करे।

मण्डपके मध्यमें अलंकृत वेदीके ऊपर कुश बिछाकर पुष्पोंसे आच्छादित करे या ढककर प्रतिमाको रखे। मण्डपके आठों दिशाओंमें क्रमशः पीत, रक्त, कृष्ण, अञ्जनके समान नील, श्वेत, कृष्ण, हरित और चित्रवर्णकी आठ पताकाएँ आठ दिक्पालोंकी प्रसन्नताके लिये लगाये। सफेद और लाल चूर्णसे वेदीके ऊपर कमलकी आकृति बनाये। '**वेद्या वेदिः०**' (यजु० १९।१७) इस मन्त्रसे वेदीका स्पर्श करे। '**योगे योगेति०**' (यजु० ११।१४) इस मन्त्रसे उसपर पूर्वाग्र और उत्तराग्र कुशोंको बिछाये। वहाँ उत्तम बिछावन और दो तकियोंसे युक्त एक शय्या एवं विविध भक्ष्य पदार्थोंको मण्डपमें रखे। एक उत्तम श्वेत छत्र वहाँ स्थापित कर विचित्र दीपमालासे मण्डलको अलंकृत करे। (अध्याय १३४)

साम्बोपाख्यानके प्रसंगमें सूर्यकी अभिषेक-विधि

नारदजी बोले— अब मैं भगवान् सूर्यके स्नपनकी विधि बताता हूँ। वेदपाठी, पवित्र आचारनिष्ठ, शास्त्रमर्मज्ञ, सूर्यभक्त भोजक अथवा अन्य ब्राह्मणोंके साथ मण्डलके ईशानकोणमें एक हाथ लम्बा-चौड़ा और ऊँचा भद्रपीठ स्थापित कर देव-प्रतिमाको प्रासादमें लाये और प्रतिमाको उस पीठपर स्थापित करे। मार्गमें '**भद्रं कर्णेभिः०**' आदि माङ्गलिक मन्त्रोंकी ध्वनि होती रहे तथा भाँति-भाँतिके वाद्य बजते रहें। अनन्तर समुद्र, गङ्गा, यमुना, सरस्वती, चन्द्रभागा, सिन्धु, पुष्कर आदि तीर्थों, नदी, सरोवर, पर्वतीय झरनोंके जलसे भगवान् सूर्यको स्नान कराये। आठ ब्राह्मण और आठ भोजक सोनेके कलशोंके जलसे स्नान करायें। स्नानके जलमें रत्न, सुवर्ण, गन्ध, सर्वबीज, सर्वौषधि, पुष्प, ब्राह्मी, सुवर्चला (सूर्यमुखी), मुस्ता, विष्णुक्रान्ता, शतावरी, दूर्वा, मदार, हल्दी, प्रियंगु, वच आदि सभी ओषधियाँ डाले। कलशोंके मुखपर वट, पीपल और शिरीषके कोमल पल्लवोंको कुशके साथ रखे। भगवान् सूर्यको अर्घ्य देकर गायत्री-मन्त्रसे अभिमन्त्रित सोलह कलशोंसे स्नान कराये। सुवर्ण कलशके अभावमें चाँदी, ताँबा, मृत्तिकाके कलशोंसे ही स्नान कराना चाहिये। इसके अनन्तर पक्के ईंटोंसे बनी हुई वेदीके ऊपर कुश बिछाकर मूर्तिको दो वस्त्र पहनाकर स्थापित करना चाहिये। उस दिन व्रत रखे। मूर्ति स्थापित करनेके पश्चात् निम्न मन्त्रोंसे प्रतिमाका अभिषेक करे—

'देवश्रेष्ठ! ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि देवगण आकाश-गङ्गासे परिपूर्ण जलद्वारा आपका अभिषेक करें। दिवस्पते! भक्तिमान् मरुद्गण मेघजलसे परिपूर्ण द्वितीय कलशसे आपका अभिषेक करें। सुरोत्तम! विद्याधर सरस्वतीके जलसे परिपूर्ण तृतीय कलशके द्वारा आपका अभिषेक करें। देवश्रेष्ठ! इन्द्र आदि लोकपालगण समुद्रके जलसे परिपूर्ण चतुर्थ कलशसे आपका अभिषेक करें। नागगण कमलके परागसे सुगन्धित जलसे परिपूर्ण पञ्चम कलशसे आपका अभिषेक करें। हिमवान् एवं सुवर्णशिखरवाले सुमेरु आदि पर्वतगण दक्षिण-पश्चिममें स्थित छठे कलशके जलसे आपका अभिषेक करें। आकाशचारी

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सप्तर्षिगण पद्मपरागसे सुगन्धित सम्पूर्ण तीर्थ-जलोंसे परिपूर्ण सप्तम घटके द्वारा आपका आभिषेक करें। आठ प्रकारके मङ्गलसे समन्वित अष्टम कलशसे वसुगण आपका अभिषेक करें। हे देवदेव! आपको नमस्कार है*।'

इसी प्रकार एक ताम्रके पात्रमें पञ्चगव्य बनाकर स्नान कराये। वैदिक मन्त्रोंसे गोमूत्र, गोमय, दूध, दही, कुशोदक लेकर ताम्रके नवीन पात्रमें पञ्चगव्य बनाकर सूर्यनारायणको स्नान कराये। मन्त्रसे गन्धयुक्त जलसे स्नान कराये, अनन्तर शुद्धोदक-स्नान कराये तथा रक्त वस्त्र एवं अलंकारसे अलंकृत कर इस प्रकार आवाहन करे—

एह्येहि भगवन् भानो लोकानुग्रहकारक।
यज्ञभागं गृहाण त्वमग्निदेव नमोऽस्तु ते॥

'भगवन्! लोकानुग्रहकारक भानो! आप आयें, इस यज्ञभागको ग्रहण करें, भगवान् सूर्यदेव! आपको नमस्कार है।'

तदनन्तर सुवर्णपात्रके द्वारा सूर्यदेवको अर्घ्य प्रदान करें। पहले मिट्टीके कलशसे, अनन्तर ताम्र-कलशसे फिर रजत-कलशसे और अन्तमें सुवर्णके कलशसे मन्त्रोंद्वारा अभिषेक करे। सम्पूर्ण तीर्थोदक और सर्वौषधिसे युक्त शङ्खको सूर्यदेवके मस्तकपर भ्रमण कराये और उसके जलसे स्नान कराये, अनन्तर पुष्प और धूप देकर जल, दूध, घृत, शहद और इक्षुरससे स्नान कराये।

इस प्रकारसे सूर्यदेवको स्नान करानेवाला पुरुष अग्निष्टोम, ज्योतिष्टोम, वाजपेय, राजसूय और अश्वमेध-यज्ञके फलको प्राप्त करता है। जो स्नानके समय सूर्यदेवका भक्तिपूर्वक दर्शन करता है, वह भी पूर्वोक्त फल प्राप्त करता है। ऐसे स्थानमें स्नान कराना चाहिये जहाँ स्नानके जलका कोई लङ्घन न कर सके और स्नानके जल, दही, दूधको कुत्ता, कौआ आदि निन्दित जीव भक्षण न कर सकें।

इस प्रकारके स्नानविधिके सम्पादनके लिये जिस प्रकारके ब्राह्मण और भोजककी आवश्यकता होती है, उनका लक्षण सुनें—

वह व्यक्ति विकलाङ्ग अर्थात् न्यूनाधिक अङ्गवाला न हो। वेदादि-शास्त्रोंका ज्ञाता, सुन्दर, कुलीन और आर्यावर्त देशमें उत्पन्न हो। गुरुभक्त, जितेन्द्रिय, तत्त्ववेता और सूर्यसम्बन्धी शास्त्रोंका ज्ञाता हो। ऐसे श्रेष्ठ ब्राह्मणसे स्नान और प्रतिष्ठा करानी चाहिये। (अध्याय १३५)

भगवान् सूर्यकी प्रतिमाके अधिवासन और प्रतिष्ठाका विधान तथा फल

नारदजी बोले—साम्ब! अब मैं अधिवासनविधि कहता हूँ। पवित्र भूमिको लीपकर पाँच रंगोंसे चतुरस्र सुन्दर मण्डलकी रचना करे। पताका, ध्वज, तोरण, छत्र, पुष्पमाला आदिसे उसे अलंकृत

* देवास्त्वामभिषिञ्चन्तु ब्रह्मविष्णुशिवादयः। व्योमगङ्गाम्बुपूर्णेन कलशेन सुरोत्तम॥
मरुतश्चाभिषिञ्चन्तु भक्तिमन्तो दिवस्पते। मेघतोयाभिपूर्णेन द्वितीयकलशेन तु॥
सारस्वतेन पूर्णेन कलशेन सुरोत्तम। विद्याधराभिषिञ्चन्तु तृतीयकलशेन तु॥
शक्राद्या अभिषिञ्चन्तु लोकपालाः सुरोत्तमाः। सागरोदकपूर्णेन चतुर्थकलशेन तु॥
वारिणा परिपूर्णेन पद्मरेणुसुगन्धिना। पञ्चमेनाभिषिञ्चन्तु नागास्त्वां कलशेन तु॥
हिमवद्धेमकूटाद्या अभिषिञ्चन्तु चाचलाः। नैर्ऋतोदकपूर्णेन षष्ठेन कलशेन तु॥
सर्वतीर्थाम्बुपूर्णेन पद्मरेणुसुगन्धिना। सप्तमेनाभिषिञ्चन्तु ऋषयः सप्त खेचराः॥
वसवश्चाभिषिञ्चन्तु कलशेनाष्टमेन वै। अष्टमङ्गलयुक्तेन देवदेव नमोऽस्तु ते॥

(ब्राह्मपर्व १३५। २१—२८)

CC-0. In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

कर मण्डलमें कुशा बिछाये और सूर्यदेवकी मूर्ति स्थापित करे। भगवान् सूर्यका आवाहन कर उन्हें अर्घ्य दे, मधुपर्क तथा वस्त्र, यज्ञोपवीत आदिसे पूजन करे और अव्यङ्ग अर्पण करे। जिस प्रकार देवताओंको पवित्रक अर्पण किया जाता है, वैसे ही प्रतिवर्ष श्रावण मासमें नवीन अव्यङ्गकी रचना कर सूर्यनारायणको समर्पित करना चाहिये। इनका यह पवित्रक है। नवीन अव्यङ्गके समर्पणके समय ब्राह्मणोंको भोजन कराये। भगवान्‌की प्रतिमाको सुगन्धित द्रव्योंसे उपलिप्त कर पुष्पमाला चढ़ाये तथा धूप आदि दिखाये। '**नमः शम्भवाय०**' (यजु० १६।४१) इस मन्त्रसे भगवान्‌की प्रतिमाको शय्याके ऊपर शयन कराये। सम्पूर्ण कामनाओंकी पूर्तिके लिये इस प्रकार पाँच दिन, तीन दिन अथवा एक ही रात्रि प्रतिमाका अधिवासन करे*।

देवालयके ईशानकोणमें उत्तम स्थानके मध्यमें कुशा बिछाकर वहाँ शुक्ल वस्त्रोंसे सुसज्जित शय्या रखे। शय्याका सिरहाना पूर्वमुख रखा जाय। उसी शय्यापर भगवान् सूर्यकी प्रतिमाको शयन कराये। उनके दाहिने भागमें निक्षुभा, वाम भागमें राज्ञी और चरणोंके समीप दण्डनायक तथा पिङ्गलको स्थापित करे। उस रात्रिमें सूर्यनारायणके समीप जागरण करे, वन्दी-चारणसे स्तुति, नृत्य, गीत आदि उत्सव कराये। प्रभात होते ही ऋग्वेदके विधानसे प्रतिमाका उद्बोधन करे और स्वस्तिवाचनपूर्वक भगवान्‌की पूजा कर ब्राह्मण तथा भोजकोंको हविष्यान्न भोजन कराये तथा उन्हें दक्षिणा देकर प्रसन्न करे। अनन्तर मन्दिरके गर्भगृहमें पिण्डिकाके ऊपर सात अश्वोंसे युक्त सुवर्णका रथ स्थापित कर सूर्यनारायणको अर्घ्य देकर मङ्गल वाद्योंके साथ जलधारा गिराये। फिर उत्तम मुहूर्त और स्थिर लग्नमें प्रतिमाकी स्थापना करे। प्रतिमाका मुख नीचे-ऊपर या अगल-बगल, तिरछा न हो, वरन् सीधा और सम रहे। भगवान् सूर्यकी प्रतिमाके दक्षिणभागमें और वामभागमें क्रमशः निक्षुभा और राज्ञीकी प्रतिमा स्थापित करे। अनन्तर मोदक, शष्कुली, पायस, कृशर आदिसे इन्द्रादि दस दिक्पालोंका आवाहन तथा पूजन कर उन्हें बलि समर्पित करे।

इसके अनन्तर स्तुतियों तथा विविध उपचारोंसे सूर्यदेवका पूजन कर ब्राह्मणों और भोजकोंको भोजन कराये और उन्हें दक्षिणा दे। इस प्रकार भक्तोंद्वारा भक्तिपूर्वक प्रतिमाकी स्थापना किये जानेपर, वह उनकी सभी प्रकार कल्याण, मङ्गल और सुख-समृद्धिकी वृद्धि करती है और उसमें भगवान् सूर्यका नित्य सांनिध्य रहता है। सूर्यकी स्थापना करनेवाला व्यक्ति मोक्ष प्राप्त करता है और उसे सात जन्मोंतक आधि-व्याधियाँ भी नहीं सतातीं। तीन दिनोंतक प्रतिष्ठाके उत्सवोंमें सम्मिलित रहनेवाला व्यक्ति सूर्यलोकको जाता है। सूर्यनारायणकी प्रतिमाकी स्थापना करनेसे दस अश्वमेध तथा सौ वाजपेय-यज्ञोंका फल प्राप्त होता है। मन्दिरकी ईंट जबतक चूर्ण नहीं हो जाती, तबतक मन्दिर बनवानेवाला पुरुष स्वर्ग-सुख भोगता है। सूर्य-मन्दिरके जीर्णोद्धार करनेका पुण्य इससे भी अधिक है। जो पुरुष मन्दिरका निर्माण कराकर प्राणियोंकी सृष्टि, स्थिति एवं प्रलयके हेतुभूत सुरश्रेष्ठ भगवान् सूर्यकी प्रतिमा स्थापित करता है, वह संसारके सब सुखोंको भोगकर सौ कल्पोंतक सूर्यलोकमें निवास करता है। मन्दिरमें इतिहास-पुराणका पाठ भी करना चाहिये।

इसी प्रकार अन्य देवताओंकी प्रतिमाओंका भी शय्याधिवास तथा उद्बोधन करे और शुभ मुहूर्तमें उन प्रतिमाओंको यथास्थान पिण्डिकापर स्थापित कर पूजन करे। (अध्याय १३६-१३७)

* पाञ्चरात्र-आगमों तथा विविध प्रतिष्ठा-ग्रन्थोंमें अधिवासनकी विस्तृत विधियाँ निर्दिष्ट हैं।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

ध्वजारोपणका विधान और फल

नारदजी बोले—साम्ब! अब मैं ब्रह्माजीद्वारा वर्णित ध्वजारोपणकी विधि बतलाता हूँ। पूर्वकालमें देवता और असुरोंमें जो भीषण युद्ध हुआ, उसमें देवताओंने अपने-अपने रथोंपर जिन-जिन चिह्नोंकी कल्पना की, वे ही उनके ध्वज कहलाये। उनका लक्षण इस प्रकार है—ध्वजका दण्ड सीधा, व्रणरहित और प्रासादके व्यासके बराबर लम्बा होना चाहिये अथवा चार, आठ, दस, सोलह या बीस हाथ लम्बा होना चाहिये। ध्वजाका दण्ड बीस हाथसे अधिक लम्बा न हो और सम पर्वोंवाला हो। उसकी गोलाई चार अङ्गुल होनी चाहिये।

ध्वजके ऊपर देवताको सूचित करनेवाला चिह्न बनवाना चाहिये। भगवान् विष्णुके ध्वजपर गरुड, शिवजीकी ध्वजापर वृष, ब्रह्माजीकी ध्वजापर पद्म, सूर्यदेवकी ध्वजापर व्योम, सोमकी पताकापर नर, बलदेवकी पताकापर फालसहित हल, कामदेवकी पताकापर मकरध्वज, इन्द्रकी ध्वजापर हस्ती, दुर्गाकी ध्वजापर सिंह, उमादेवीकी ध्वजापर गोधा, रैवतकी ध्वजापर अश्व, वरुणकी ध्वजापर कच्छप, वायुकी ध्वजापर हरिण, अग्निकी ध्वजापर मेष, गणपतिकी ध्वजापर मूषकका तथा ब्रह्मर्षियोंकी पताकापर कुशका चिह्न बनाना चाहिये। जिस देवताका जो वाहन हो, वही ध्वजापर भी अङ्कित रहता है।

विष्णुकी ध्वजाका दण्ड सोनेका और पताका पीतवर्णकी होनी चाहिये, वह गरुड़के समीप रखनी चाहिये। शिवजीका ध्वजदण्ड चाँदीका और श्वेत वर्णकी पताका वृषके समीप स्थापित करे। ब्रह्माका ध्वजदण्ड ताँबेका और पद्मवर्णकी पताका कमलके समीप रखे। सूर्यनारायणका ध्वजदण्ड सुवर्णका और व्योमके नीचे पँचरंगी पताका होनी चाहिये, जिसमें किंकिणी लगी रहे एवं पुष्पमालाओंसे संयुक्त हो। इन्द्रका ध्वजदण्ड सोनेका और हस्तीके समीप अनेक वर्णकी पताका होनी चाहिये। यमका ध्वजदण्ड लोहेका और महिषके समीप कृष्णवर्णकी पताका रखनी चाहिये। कुबेरका ध्वजदण्ड मणिमय और मनुष्य-पादके समीप रक्त वर्णकी पताका रखे। बलदेवका ध्वजदण्ड चाँदीका और तालवृक्षके नीचे श्वेतवर्णकी पताका रखनी चाहिये। कामदेवका ध्वजदण्ड त्रिलौह (सोना, चाँदी और ताँबा-मिश्रित)-का और मकरके समीप रक्तवर्णकी पताका स्थापित करनी चाहिये। कार्तिकेयका ध्वजदण्ड त्रिलौहका और मयूरके समीप चित्रवर्णकी पताका एवं गणपतिका ध्वजदण्ड ताम्रका अथवा हस्तिदन्तका एवं मूषकके समीप शुक्लवर्णकी पताका और मातृकाओंके ध्वजदण्ड अनेक रूपोंके तथा अनेक वर्णोंकी अनेक पताकाएँ होनी चाहिये। रेवन्तकी पताका अश्वके समीप लालवर्णकी, चामुण्डाका ध्वजदण्ड लौहका और मुण्डमालाके समीप नीले वर्णकी ध्वजा होनी चाहिये। गौरीका ध्वजादण्ड ताम्रका और इन्द्रगोप (बीरबहूटी कीट)-के समान अतिशय रक्तवर्णकी ध्वजा होनी चाहिये। अग्निका ध्वजदण्ड सुवर्णका और मेषके समीप अनेक वर्णकी पताका होनी चाहिये। वायुका ध्वजदण्ड लौहका और हरिणके समीप कृष्णवर्णकी पताका होनी चाहिये। भगवतीका ध्वजदण्ड सर्वधातुमय, उसके ऊपर सिंहके समीप तीन रंगकी पताका होनी चाहिये।

इस प्रकार ध्वजका पहिले निर्माण कर उसका अधिवासन करे। लक्षणके अनुसार वेदीका निर्माण करे, कलशकी स्थापना कर सर्वौषधि-जलसे ध्वजको स्नान कराये। वेदीके मध्यमें उसे खड़ाकर सभी उपचारोंसे उसकी पूजा करे और उसे पुष्पमाला पहिनाये, दिक्पालोंको बलि देकर एक राततक अधिवासन करे। दूसरे दिन भोजन कराकर शुभ

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

मुहूर्तमें स्वस्तिवाचन आदि मङ्गल-कृत्य सम्पन्न कर ध्वजको मन्दिरके ऊपर आरूढ़ करे। ध्वजारोहणके समय अनेक प्रकारके वाद्योंको बजाये, ब्राह्मणगण वेद-ध्वनि करें। इस प्रकार देवालयपर ध्वजारोहण कराना चाहिये। ध्वजारोहण करानेवालेकी सम्पत्तिकी सदा वृद्धि होती रहती है और वह परम गतिको प्राप्त करता है। ध्वजरहित मन्दिरमें असुर निवास करते हैं, अतः ध्वजरहित मन्दिर नहीं रखना चाहिये। ध्वजारोहणके समय इन मन्त्रोंको पढ़ना चाहिये—

एह्येहि भगवन् देव देववाहन वै खग॥
श्रीकरः श्रीनिवासश्च जय जैत्रोपशोभित।
व्योमरूप महारूप धर्मात्मंस्त्वं च वै गतेः॥
सांनिध्यं कुरु दण्डेऽस्मिन् साक्षी च ध्रुवतां व्रज।
कुरु वृद्धिं सदा कर्तुः प्रासादास्यार्कवल्लभ॥
ॐ एह्येहि भगवन्नीश्वरविनिर्मित उपरिचरवायुमार्गानुसारिञ्छ्रीनिवास रिपुध्वंस यक्षनिलय सर्वदेवप्रियं कुरु सांनिध्यं शान्तिं स्वस्त्ययनं च मे। भयं सर्वविघ्ना व्यपसरन्तु॥

(ब्राह्मपर्व १३८। ७३—७६)

स्वच्छ दण्डमें पताकाको प्रतिष्ठित करे तथा पताकाका दर्शन करे। इस प्रकार भक्तिपूर्वक जो रविका ध्वजारोपण करता है, वह श्रेष्ठ भोगोंको भोगकर सूर्यलोकको प्राप्त करता है।

(अध्याय १३८)

साम्बोपाख्यानमें मगोंका वर्णन

साम्बने कहा—नारदजी! आपकी कृपासे मुझे सूर्यभगवान्‌का प्रत्यक्ष दर्शन प्राप्त हुआ, उत्तम रूप भी प्राप्त हुआ, किंतु मेरा मन चिन्तासे आकुल है, इस मूर्तिका पूजन और रक्षण कौन करेगा? इसे आप बतानेकी कृपा करें।

नारदजी बोले—साम्ब! इस कार्यको कोई भी ब्राह्मण स्वीकार नहीं करेगा, क्योंकि देवपूजा अर्थात् देवधनसे अपना निर्वाह करनेवाले ब्राह्मण देवलक कहे जाते हैं। जो लोग लोभवश देवधन और ब्राह्मणधनको ग्रहण करते हैं, वे नरकमें जाते हैं, अतः कोई भी ब्राह्मण देवताका पूजक नहीं बनना चाहता। तुम भगवान् सूर्यकी शरणमें जाओ और उन्हींसे पूछो कि कौन उनका विधि-विधानसे पूजन करेगा? अथवा राजा उग्रसेनके पुरोहितसे कहो, सम्भव है कि वे इस कार्यको स्वीकार कर लें।

नारदजीकी इस बातको सुनकर जाम्बवतीपुत्र साम्ब उग्रसेनके पुरोहित गौरमुखके पास गये और उन्होंने उन्हें सादर प्रणामकर कहा—'महाराज! मैंने सूर्यभगवान्‌का एक विशाल मन्दिर बनवाया है, उसमें समस्त परिवार तथा परिच्छदों एवं पत्नियोंसहित उनकी प्रतिमा स्थापित की है और अपने नामसे वहाँ एक नगर भी बसाया है। आपसे मेरा यह विनम्र निवेदन है कि आप उन्हें ग्रहण करें।'

गौरमुखने कहा—साम्ब! मैं ब्राह्मण हूँ और आप राजा हैं। आपके द्वारा दिये गये इस प्रतिग्रहको लेनेपर मेरा ब्राह्मणत्व नष्ट हो जायगा। दान लेना ब्राह्मणका धर्म है, किंतु देवप्रतिग्रह ब्राह्मणको नहीं लेना चाहिये। आप यह दान किसी मगको दे दें, वही सूर्यदेवकी पूजाका अधिकारी है।

साम्बने पूछा—महाराज! मग कौन हैं? कहाँ रहते हैं? किसके पुत्र हैं? इनका क्या आचार है। आप कृपाकर बतायें।

गौरमुख बोले—मग भगवान् सूर्य (अग्नि) तथा निक्षुभाके पुत्र हैं। पूर्वजन्ममें निक्षुभा महर्षि ऋग्जिह्वकी अत्यन्त सुन्दर पुत्री थी। एक बार उससे अग्निका उल्लङ्घन हो गया। फलस्वरूप

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भगवान् सूर्य (अग्निस्वरूप) रुष्ट हो गये। बादमें अग्निरूप भगवान् सूर्यके द्वारा निक्षुभाका जो पुत्र हुआ, वही मग कहलाया। भगवान् सूर्यके वरदानसे ये ही अग्निवंशमें उत्पन्न अव्यङ्गको धारण करनेवाले मग सूर्यके परम भक्त हुए और सूर्यकी पूजाके लिये नियुक्त हुए। भगवान् सूर्यकी पूजा करनेवाले मग शाकद्वीपमें निवास करते हैं, आप भगवान् सूर्यके पूजकके रूपमें उन्हें प्राप्त करनेके लिये शाकद्वीप जायँ।

अनन्तर साम्बने द्वारका जाकर अपने पिता भगवान् श्रीकृष्णको सब समाचार सुनाया। फिर वे उनकी आज्ञा प्राप्तकर गरुडपर सवार हो शीघ्र ही शाकद्वीप पहुँच गये। वहाँ जाकर उन्होंने अतिशय तेजस्वी महात्मा मगोंको सूर्यभगवान्की आराधनामें संलग्न देखा। साम्बने उन्हें सादर प्रणामकर उनकी प्रदक्षिणा की।

साम्बने कहा—आपलोग धन्य हैं। आप सबका दर्शन सबके लिये कल्याणकारी है, आपलोग सदा भगवान् सूर्यकी आराधनामें लगे हुए हैं। मैं भगवान् श्रीकृष्णका पुत्र हूँ, मेरा नाम साम्ब है। मैंने चन्द्रभागा नदीके तटपर सूर्यदेवकी मूर्तिकी स्थापना की है। उनकी आज्ञाके अनुसार उनकी विधिवत् आराधनाके निमित्त शाकद्वीपसे जम्बूद्वीपमें ले जानेके लिये मैं आपकी सेवामें उपस्थित हुआ हूँ। मेरी सविनय प्रार्थना है कि आपलोग कृपाकर जम्बूद्वीपमें पधारें और भगवान् सूर्यकी पूजा करें।

मगोंने कहा—'साम्ब! इस बातकी जानकारी भगवान् सूर्यने हमें पहले ही दे दी है।'

यह सुनकर साम्ब बहुत प्रसन्न हुए और गरुडपर उन्हें बैठाकर वहाँसे मित्रवन (मूलस्थान—मुल्तान) ले आये। सूर्यभगवान् मगोंको वहाँ उपस्थित देखकर बहुत प्रसन्न हुए और साम्बसे बोले—'साम्ब! अब तुम चिन्ता छोड़ दो, ये मग मेरी विधिवत् पूजा सम्पन्न करेंगे।'

इस प्रकार साम्बने शाकद्वीपसे अव्यङ्ग धारण करनेवाले मगोंको लाकर धन-धान्यसे परिपूर्ण इस साम्बपुरको उन्हें समर्पित कर दिया। वे सब भगवान् सूर्यकी सेवामें तत्पर हो गये और साम्ब भी सूर्यदेव एवं मगोंको प्रणामकर आनन्दचित्तसे द्वारका लौट आये। (अध्याय १३९—१४१)

अव्यङ्गका लक्षण और उसका माहात्म्य

एक बार साम्बने महर्षि व्याससे मगोंद्वारा धारण किये जानेवाले अव्यङ्गके* विषयमें जिज्ञासा की।

व्यासजीने कहा—साम्ब! मैं तुम्हें अव्यङ्गके विषयमें बताता हूँ, उसे सुनो! देवता, ऋषि, नाग, गन्धर्व, अप्सरा, यक्ष और राक्षस ऋतु-क्रमसे भगवान् सूर्यके रथके साथ रहते हैं। यह रथ वासुकि नामक नागसे बँधा रहता है। किसी समय वासुकि नागका कंचुक (केंचुल) उतरकर गिर पड़ा। नागराज वासुकिके शरीरसे उत्पन्न उस निर्मोक (केंचुल)-को भगवान् सूर्यने सुवर्ण और रत्नोंसे अलंकृतकर अपने मध्य भागमें धारण कर लिया। इसीलिये भगवान् सूर्यके भक्त अपने देवकी प्रसन्नताके लिये अव्यङ्ग धारण करते हैं। उसके धारण करनेसे भोजक पवित्र हो जाते हैं और उनपर सूर्यभगवान्का अनुग्रह भी होता है।

इस अव्यङ्गको सर्पके केंचुलकी तरह मध्यमें पोला अर्थात् खाली रखना चाहिये। यह एक वर्णका होना चाहिये। कपासके सूतसे बना अव्यङ्ग दो सौ अङ्गुलका उत्तम, एक सौ बीस अङ्गुलका मध्यम और एक सौ आठ अङ्गुलका

* अहेरङ्गात् समुत्पन्नो ह्यव्यङ्गस्तु ततः स्मृतः॥ (ब्राह्मपर्व १४२। १५)

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanda Peeth

कनिष्ठ होता है, अतः इससे छोटा नहीं होना चाहिये। यज्ञोपवीतकी तरह आठवें वर्षमें अव्यङ्ग धारण करना चाहिये। भोजकोंके लिये यह मुख्य संस्कार है। इसके धारण करनेसे वह सभी क्रियाओंका अधिकारी होता है। यह अव्यङ्ग सर्वदेवमय, सर्ववेदमय, सर्वलोकमय और सर्वभूतमय है। इसके मूलमें विष्णु, मध्यमें ब्रह्मा और अन्तमें शशाङ्कमौलि भगवान् शिव निवास करते हैं। इसी तरह ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद क्रमशः मूल, मध्य और अग्रभागमें रहते हैं, अथर्ववेद ग्रन्थिमें स्थित रहता है। पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश और भूर्लोक, भुवर्लोक तथा स्वर्लोक आदि सातों लोक अव्यङ्गमें निवास करते हैं। सूर्यभक्त भोजकको सभी समय अव्यङ्ग धारणकर भगवान् सूर्यकी उपासना करनी चाहिये।

(अध्याय १४२)

साम्बोपाख्यानमें भगवान् सूर्यको अर्घ्य प्रदान करने और धूप दिखानेकी महिमा

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! इस प्रकार व्यासजीके द्वारा अव्यङ्गके विषयमें जानकारी प्राप्त कर साम्ब नारदजीके पास वापस लौट आये और उन्होंने उनसे सब वृत्तान्त बताकर पूछा—'देवर्षे! भोजकोंको भगवान् सूर्यको स्नान, अर्घ्य, आचमन, धूप आदि किस प्रकार समर्पित करना चाहिये?' इसका आप कृपाकर वर्णन करें।

नारदजी बोले—साम्ब! संक्षेपमें मैं वह विधि बता रहा हूँ, सावधान होकर सुनो। सर्वप्रथम शौचादिसे निवृत्त होकर आचमनपूर्वक नदीमें या जलाशय आदिमें स्नान करना चाहिये। अनन्तर स्वर्णदान कर तीन बार आचमन करे। शुद्ध वस्त्र पहनकर पवित्री धारणकर पूर्वाभिमुख या उत्तराभिमुख हो आचमन करना चाहिये। तदनन्तर दो बार मार्जन और तीन बार अभ्युक्षण करे। आचमनके बिना की गयी क्रिया निष्फल होती है एवं इसके बिना पुरुष शुद्ध भी नहीं होता। वेदमें कहा गया है कि देवता पवित्रताको ही चाहते हैं। आचमन करनेके बाद मौन होकर देवालयमें जाना चाहिये। आसनपर बैठकर प्राणायाम कर सिरको कपड़ेसे आच्छादित करे तथा विविध पुष्पोंसे सूर्यभगवान्‌की पूजा करे। व्याहृतिपूर्वक गायत्री-मन्त्रसे गुग्गुलका धूप दे। फिर भगवान् सूर्यके मस्तकपर पुष्पाञ्जलि अर्पित करे।

रक्त चन्दन, पद्म, करवीर, कुंकुम आदिको जलमें मिलाकर ताम्रके पात्रसे भगवान् सूर्यको अर्घ्य देना चाहिये। अर्घ्यपात्रको हाथमें उठाकर भगवान् सूर्यका आवाहन करे तथा दोनों जानुओंपर बैठकर भगवान् सूर्यका अपने हृदयमें ध्यान करते हुए नीचे लिखे मन्त्रसे अर्घ्य प्रदान करे—

एहि सूर्य सहस्रांशो तेजोराशे जगत्पते।
अनुकम्पय मां देव गृहाणार्घ्यं दिवाकर॥

तदनन्तर इस प्रकार प्रार्थना करे—

अर्चितस्त्वं यथाशक्त्या मया भक्त्या विभावसो।
ऐहिकामुष्मिकीं नाथ कार्यसिद्धिं ददस्व मे॥

(ब्राह्मपर्व १४३। ४७)

तीनों काल स्नानकर इस प्रकार जो भगवान् सूर्यकी आराधना करता है और धूप देता है, वह अश्वमेध-यज्ञका फल प्राप्त करता है और उसे धन, पुत्र तथा आरोग्यकी भी प्राप्ति हो जाती है एवं अन्तमें वह भगवान् सूर्यमें लीन हो जाता है। उत्तम पुष्पोंके न मिलनेपर पत्रोंसे ही पूजन करे। धूप ही दे या भक्तिपूर्वक जल ही सूर्यको समर्पित करे। यदि यह भी न हो सके तो प्रणाम ही करे। प्रणाम करनेमें असमर्थ हो तो मानसी पूजा करे।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

यह विधि द्रव्यके अभावमें करनी चाहिये, द्रव्य रहनेपर विधिपूर्वक सभी सामग्रियोंसे पूजन करे। भक्तिपूर्वक सूर्यभगवान्‌की पूजा देखनेवालेको भी अश्वमेध-यज्ञका फल मिलता है और सूर्यलोककी प्राप्ति होती है। धूप-दानके समय सूर्यका दर्शन करनेपर उत्तम गति प्राप्त होती है। (अध्याय १४३)

सूर्यमण्डलस्थ पुरुषका वर्णन

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! एक बार व्यासजी शङ्ख-चक्र-गदाधारी नारायण भगवान् श्रीकृष्णके दर्शनके लिये द्वारका आये। महातेजस्वी श्रीकृष्णने पाद्य, अर्घ्य, आचमन आदिसे उनका पूजन कर आसनपर उन्हें बैठाया और प्रणाम कर साम्बद्वारा लाये गये भोजकोंकी महिमा तथा उनकी सूर्यभक्तिके विषयमें जिज्ञासा प्रकट की।

भगवान् वेदव्यास बोले—भोजक भगवान् सूर्यके अनन्य उपासक हैं और अन्तमें ये भगवान् सूर्यकी दिव्य तेजस्वी कलामें प्रविष्ट होते हैं। भगवान् भास्करकी तीन कलाएँ हैं। सूर्यनारायणकी प्रथम कला अग्निमें स्थित है, उससे सभी कर्मोंकी सिद्धि होती है। दूसरी प्रकाशिका कला आकाशमें स्थित है। तीसरी कला सूर्यमण्डलमें है। सवितादेवका यह मण्डल अजर एवं अव्यय है। इस मण्डलके मध्यमें सदसदात्मक वह परमात्मा पुरुषरूपमें स्थित है। वह पुरुष क्षर-अक्षररूपमें है, इसको महासूर्य कहते हैं। इसके निष्कल और सकल दो भेद हैं। तत्त्वोंके साथ सभी भूतोंमें अवस्थित वह परमात्मा सकल कहा जाता है और तत्त्वहीन होनेपर निष्कल। तृण, गुल्म, लता, वृक्ष, सिंह, वृक, हाथी, पक्षी, देवता, सिद्ध, मनुष्य, जल-जन्तु आदि सभीकी अन्तरात्मामें वह व्याप्त है। जब वह परमात्मा दूसरी कलामें स्थित होता है, तब वृष्टि आदि करता है। तीसरी तैजस कलामें स्थित होकर अपने भक्तोंको मोक्ष देता है, जिस मोक्षपदको प्राप्तकर वह परम शान्ति प्राप्त करता है।

वह परमात्मा ओंकारस्वरूप है, ओंकारकी साढ़े तीन मात्राएँ हैं, इनमें अर्धमात्रा मकारका जो ध्यान करता है, उसको सदसदात्मक ज्ञान होता है। सूर्यनारायणका रूप मकार है, मकारका ध्यान करनेसे ही ये मग कहे जाते हैं। धूप, माल्य आदिसे सूर्यनारायणका पूजन कर वे विविध पदार्थोंका भोजन कराते हैं, अतः उनकी भोजक संज्ञा है। (अध्याय १४४)

भगवान् व्यासद्वारा योग-ज्ञानका वर्णन

भगवान् श्रीकृष्णने कहा—महामुने! कृपाकर आप भोजकोंके सभी ज्ञानोंकी उपलब्धिका वर्णन करें।

व्यासजीने कहा—यह शरीर अस्थियोंपर ही खड़ा है, स्नायुओंसे बँधा, चमड़ेसे ढका एवं रक्त-मांससे उपलिप्त है। मल-मूत्र आदि दुर्गन्धयुक्त पदार्थोंसे भरा है। यह समस्त रोगोंका घर है और इसमें (भीतर) वृद्धावस्था और शोक छिपे हैं, जो अपने-अपने समयपर प्रकट होते रहते हैं। यह शरीर रजोगुण आदि गुणोंसे भरा है, अनित्य है और इसमें भूतसंघोंका आवास बना है। अतः इसमें आसक्तिका सर्वथा परित्याग कर देना चाहिये*।

* अस्थिस्थूलं स्नायुयुतं मांसशोणितलेपनम्। चर्मावनद्धं दुर्गन्धिपूर्णं मूत्रपुरीषयोः॥
जराशोकसमाविष्टं रोगायतनमातुरम्। रजस्वलमनित्यं च भूतावासमिमं त्यजेत्॥ (ब्राह्मपर्व १४५। २-३)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

वृक्षोंके नीचे निवास करना, भोजनके लिये मिट्टीका भिक्षापात्र रखना, साधारण वस्त्र पहनना और किसीसे सहायता न लेना तथा सभी प्राणियोंमें समभाव रखना—यही जीवन्मुक्त पुरुषके लक्षण हैं।

जैसे तिलमें तैल, गायमें दूध, काष्ठमें अग्नि स्थित है, वैसे ही परमात्मा समस्त प्राणियोंमें स्थित हैं। ऐसा समझकर उनकी प्राप्तिका उपाय करना चाहिये। प्रथम प्रमथन स्वभाववाले तथा चञ्चल मनको प्रयत्नपूर्वक वशमें कर बुद्धि और इन्द्रियोंको वैसे ही रोकना चाहिये, जैसे पिंजरेमें पक्षियोंको रोका जाता है। इन संयत इन्द्रियोंके द्वारा इस शरीरको अमृतकी धाराके समान तृप्ति होती है[१]। प्राणायामसे शारीरिक दोष, धारणासे पूर्वजन्मार्जित तथा वर्तमानतकके सभी पाप, प्रत्याहारसे संसर्गजनित दोष एवं ध्यानसे जैविक दोषोंका त्यागकर ईश्वरीय गुणोंको प्राप्त करना चाहिये। जैसे आगके तापमें रखनेसे धातुओंके दोष दग्ध हो जाते हैं, वैसे ही प्राणायामके द्वारा साधकके इन्द्रियजनित दोष दग्ध हो जाते हैं। जैसे एक हाथसे दूसरे हाथको दबाया जाता है, वैसे ही अपनी शुद्ध बुद्धिके द्वारा मनको एवं चित्तको शुद्ध कर पवित्र भावनाओंके द्वारा दुर्व्यसनोंको शान्तकर मन-बुद्धिको अत्यन्त पवित्र कर लेना चाहिये। अतः चित्तकी शुद्धिके लिये प्रयास करना चाहिये। चित्तकी शुद्धि होनेसे शुभ और अशुभ कर्मोंका ज्ञान होता है। शुभ और अशुभ कर्मोंसे छुटकारा प्राप्त कर साधक निर्द्वन्द्व, निर्मम, निष्परिग्रह और निरहंकार होकर मोक्षको प्राप्त कर लेता है[२]।

सूर्यका पूर्वाह्णमें रक्तवर्ण, ऋग्वेदस्वरूप तथा राजसरूप होता है। मध्याह्नमें शुक्लवर्ण, यजुर्वेद-स्वरूप एवं सात्त्विक रूप होता है। सायंकालमें कृष्णवर्ण, सामवेदस्वरूप तथा तामसरूप होता है। इन तीनोंसे भिन्न ज्योतिःस्वरूप, सूक्ष्म और निरञ्जनस्वरूप चतुर्थ स्वरूप है। पद्मासनमें बैठकर सुषुम्णा नाडी-मार्गमें चित्तको स्थिर कर प्रणवसे पूरक, कुम्भक और रेचकरूप प्राणायाम कर पैरके अँगूठेके अग्रभागसे लेकर मस्तकपर्यन्त न्यास करे। नाभिमें अग्निका, हृदयमें चन्द्रमाका और मस्तकमें अग्निशिखाका न्यास करना चाहिये। इन सबसे ऊपर सूर्यमण्डलका न्यास करे—यह चतुर्थ स्थान है, इस स्थानको मोक्षकी इच्छा करनेवाले पुरुषको अवश्य जानना चाहिये। ऋषिगण सूर्यभगवान्‌के इसी तुरीय स्थानमें मनको लीनकर मुक्त हो जाते हैं। मग भी इसी स्थानका ध्यान कर मोक्षके भागी होते हैं। इस ज्ञानको सुनाकर भगवान् वेदव्यास बदरिकाश्रमकी ओर चले गये। (अध्याय १४५)

१-तिले तैलं गवि क्षीरं काष्ठे पावकसंततिः। उपायं चिन्तयेदस्य धिया धीरः समाहितः॥
प्रमाथि च प्रयत्नेन मनः संयम्य चञ्चलम्। बुद्धीन्द्रियाणि संयम्य शकुनानिव पंजरे॥ (ब्राह्मपर्व १४५।५-६)

२-इन्द्रियैर्नियतैर्देहीं धाराभिरिव तृप्यते। सततममृतस्यैव जनार्दन महामते॥
प्राणायामैर्दहेद्दोषान् धारणाभिश्च किल्बिषम्। प्रत्याहारेण संसर्गान् ध्यानेनानीश्वरान् गुणान्॥
ध्यायमानस्य दह्यन्ते चान्ते दोषा यथाग्निना। तथेन्द्रियकृता दोषा दह्यन्ते प्राणनिग्रहात्॥
चितं चित्तेन संशोध्य भावं भावेन शोधयेत्। मनस्तु मनसा शोध्य बुद्धिं बुद्ध्या तु शोधयेत्॥
चित्तस्यातिप्रसादेन भाति कर्म शुभाशुभम्।
शुभाशुभविनिर्मुक्तो निर्द्वन्द्वो निष्परिग्रहः। निर्ममो निरहंकारस्ततो याति परां गतिम्॥
(ब्राह्मपर्व १४५।७—११)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

उत्तम एवं अधम भोजकोंके लक्षण

राजा शतानीकने पूछा—मुने! भगवान् सूर्यकी पूजा करनेवाले भोजक दिव्य, उनसे उत्पन्न एवं उन्हें अत्यन्त प्रिय हैं। इसलिये वे पूज्य हुए किंतु वे अभोज्य कैसे कहलाते हैं, इस विषयमें आप बतलायें?

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! मैं इस विषयमें भगवान् वासुदेव तथा कृतवर्माके द्वारा हुए संवादको अत्यन्त संक्षेपमें बतला रहा हूँ। किसी समय नारद और पर्वत—ये दोनों मुनि साम्बपुर गये। वहाँ उन्होंने भोजकोंके यहाँ भोजन किया, अनन्तर वे दोनों विमानपर आरूढ़ हो द्वारकापुरीमें आ गये। उनके विषयमें कृतवर्माको शंका हुई कि सूर्यके पूजक होनेसे भोजकोंका अन्न अग्राह्य है, फिर नारद तथा पर्वत—इन दोनोंने उनका अन्न कैसे ग्रहण किया? इसपर वासुदेवने कृतवर्मासे कहा—जो भोजक अव्यङ्ग धारण नहीं करते और बिना अव्यङ्गके तथा बिना स्नान किये भगवान् सूर्यकी पूजा करते हैं और शूद्रका अन्न ग्रहण करते हैं तथा देवार्चाका परित्याग कर कृषि-कार्य करते हैं, जिनके जातकर्मादि संस्कार नहीं हुए हैं, शङ्ख धारण नहीं करते, मुण्डित नहीं रहते—वे भोजकोंमें अधम हैं। ऐसे भोजकद्वारा किये गये देवार्चन, हवन, स्नान, तर्पण, दान तथा ब्राह्मण-भोजन आदि सत्कर्म भी निष्फल होते हैं। इसीसे अशुचि होनेके कारण वे अभोज्य कहे गये हैं। भगवान् सूर्यके नैवेद्य, निर्माल्य, कुंकुम आदि शूद्रोंके हाथ बेचनेवाले, भगवान् सूर्यके धनको अपहृत करनेवाले भोजक उन्हें प्रिय नहीं हैं तथा वे भोजकोंमें अधम हैं। जो भोजक भगवान्‌को भोग लगाये बिना भोजन कर लेते हैं, उनका वह भोजन उन्हें नरक प्राप्त करानेवाला बन जाता है। अतः भगवान् सूर्यको अर्पण करके ही नैवेद्य भक्षण करना चाहिये, इससे शरीरकी शुद्धि होती है।

वासुदेवने पुनः बतलाया—कृतवर्मन्! भोजकोंकी प्रियताके विषयमें भगवान् सूर्यने अरुणको जो बतलाया, उसे आप सुनें—

जो भोजक पर-स्त्री तथा पर-धनका हरण करते हैं, देवताओं तथा वेदोंके निन्दक हैं, वे मुझे अप्रिय हैं, उनके द्वारा की गयी पूजा तथा प्रदान किये गये अर्घ्यको मैं ग्रहण नहीं करता। जो भगवती महाश्वेताका यजन नहीं करते एवं सूर्य-मुद्राओंको नहीं जानते तथा मेरे पार्षदोंका नाम नहीं जानते, वे मेरी पूजा करनेके अधिकारी नहीं हैं और न मेरे प्रिय हैं।

इसके विपरीत देव, द्विज, मनुष्य, पितरोंकी पूजा करनेवाले, मुण्डित सिरवाले, अव्यङ्ग धारण करनेवाले, शङ्ख-ध्वनि करनेवाले, क्रोधरहित, तीनों कालमें स्नान एवं पूजन करनेवाले भोजक मुझे अत्यन्त प्रिय हैं एवं मेरे पूजनके अधिकारी हैं। जो रविवारके दिन षष्ठी तिथि पड़नेपर नक्तव्रत तथा सप्तमी एवं संक्रान्तिमें उपवास करते हैं एवं मुझमें विशेष भक्ति रखते हुए मेरे भक्त ब्राह्मणोंकी पूजा करते हैं तथा देव, ऋषि, पितर, अतिथि और भूत-यज्ञ—इन पाँचोंका अनुष्ठान करते हैं, एकभुक्त होकर सूर्यपूजा करते हैं तथा सांवत्सरिक, पार्वण, एकोद्दिष्ट आदि श्राद्ध सम्पन्न करते हैं और उन तिथियोंमें दान देते हैं, वे भोजक मुझे अत्यन्त प्रिय हैं तथा जो भोजक माघ मासकी सप्तमीको करवीर-पुष्प, रक्त चन्दन, मोदकका नैवेद्य, गुग्गुल, धूप, दूध, शङ्खादि वाद्य-ध्वनि, पताका तथा छत्रादिसे मेरी पूजा करते हैं, घृतकी आहुति देकर हवन

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth

करते हैं तथा पुराणवाचक ब्राह्मणोंकी पूजा करते हैं, वे मुझे प्रिय हैं। इतना कहकर भगवान् सूर्यदेव सुमेरु गिरिकी ओर बढ़ गये।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! अधिक कहनेसे क्या लाभ, क्योंकि जैसे वेदसे श्रेष्ठ अन्य कोई शास्त्र नहीं, गङ्गाके समान कोई नदी नहीं, अश्वमेधके समान कोई यज्ञ नहीं, पुत्र-प्राप्तिके समान कोई सुख नहीं, माताके समान कोई आश्रय नहीं और भगवान् सूर्यके समान कोई देवता नहीं, वैसे ही भोजकोंके समान भगवान् सूर्यके अन्य कोई प्रिय नहीं हैं।

(अध्याय १४६-१४७)

भगवान् सूर्यके कालात्मक चक्रका वर्णन

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! एक बार महातेजस्वी साम्बने अपने पिता भगवान् श्रीकृष्णके हाथमें ज्वाला-मालाओंसे प्रदीप्त सुदर्शनचक्रको देखकर पूछा—'देव! आपके हाथमें जो यह सूर्यके समान चक्र दिखलायी दे रहा है, यह आपको कैसे प्राप्त हुआ तथा भगवान् सूर्यके चक्रको कमलकी उपमा कैसे दी गयी है? इसे आप बतायें।'

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—महाबाहो! तुमने अच्छी बात पूछी है, इसे मैं संक्षेपमें बतला रहा हूँ। मैंने अत्यन्त श्रद्धापूर्वक दिव्य हजार वर्षोंतक भगवान् सूर्यकी आराधना कर इस चक्रको प्राप्त किया है। भगवान् भास्कर आकाशमें विचरण करते रहते हैं, जिनके रथ-चक्रके नाभिमण्डलमें चन्द्र आदि ग्रह अवस्थित हैं। अरोंमें द्वादश आदित्य बतलाये गये हैं, पृथ्वी आदि तत्त्व मार्गमें पड़नेवाले तत्त्व हैं, इन तत्त्वोंसे यह कालात्मक चक्र व्याप्त है। भगवान् सूर्यने अपने इस चक्रके समान ही दूसरा चक्र मुझे प्रदान किया है।

इस कमलरूप चक्रके षड्दल ही छः ऋतुएँ हैं। कमलके मध्यमें जो पुरुष अधिष्ठित हैं, वे ही भगवान् सूर्य हैं। जो भूत, भविष्य तथा वर्तमान तीन काल कहे गये हैं, वे चक्रकी तीन नाभियाँ हैं। बारह महीने अरे तथा पक्ष परिधियाँ हैं, नेमियाँ दक्षिणायन तथा उत्तरायण दो अयन हैं, नक्षत्र, ग्रह तथा योग आदि भी इसी चक्रमें अवस्थित हैं। स्थूल और सूक्ष्मके भेदसे यह चक्र सर्वत्र व्याप्त है।

दुष्टोंका दमन करनेके लिये मैंने इस चक्रको आराधनाके द्वारा भगवान् सूर्यसे प्राप्त किया है। इसलिये ग्रहों और तत्त्वोंसे समन्वित इस चक्रकी मैं निरन्तर पूजा करता रहता हूँ। जो चक्रमें स्थित भगवान् सूर्यकी भक्तिपूर्वक पूजा करता है, वह तेजमें भगवान् सूर्यके समान हो जाता है। सप्तमीको जो भगवान् सूर्यका चक्र अङ्कित कर उनकी रक्तचन्दन, करवीर-पुष्प, कुंकुम, रक्त कमल, धूप, दीप, नैवेद्य चामर, छत्र एवं फल आदिसे पूजा करता है तथा विविध नैवेद्योंका भोग लगाता है, पुण्य कथाओंका श्रवण करता है, वह अपनी सम्पूर्ण कामनाओंको प्राप्त कर लेता है। इसी प्रकार जो संक्रान्ति तथा ग्रहण आदिमें चक्रकी पूजा करता है, उसके ऊपर सभी ग्रह प्रसन्न हो जाते हैं, वह सम्पूर्ण रोगों और दुःखोंसे रहित हो जाता है तथा समस्त ऐश्वर्योंसे युक्त होकर चिरजीवी होता है। (अध्याय १४८)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सूर्यचक्रका निर्माण और सूर्य-दीक्षाकी विधि

साम्बने पूछा—भगवन्! भगवान् सूर्यके चक्रका और उसमें स्थित पद्मका कितने विस्तारमें किस प्रकार निर्माण करना चाहिये तथा नेमि, अर और नाभिका विभाग किस प्रकार करना चाहिये।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—साम्ब! चक्र चौंसठ अङ्गुलका और नेमि आठ अङ्गुलकी बनानी चाहिये। नाभिका विस्तार भी आठ अङ्गुलका होना चाहिये और पद्म नाभिका तीन गुना अर्थात् चौबीस अङ्गुलका होना चाहिये। कमलमें नाभि, कर्णिका और केसर भी बनाने चाहिये। नाभिसे कमलकी ऊँचाई अधिक होनी चाहिये। वहींपर द्वारके कोणमें कमल-पुष्पके मुखकी कल्पना करनी चाहिये। ब्रह्मा, विष्णु, शिव और इन्द्रके लिये चार द्वारोंकी कल्पना करनी चाहिये। द्वारोंको बनानेके पश्चात् ब्रह्मा आदि देवताओंका उनके नाम-मन्त्रोंसे भक्तिपूर्वक आवाहन कर पूजन करना चाहिये।

अर्क-मण्डलकी पूजाके लिये इस यज्ञ-क्रियाके अनुरूप दीक्षित होना चाहिये, भगवान् सूर्यने इसे मुझसे पूर्वकालमें कहा था।

साम्बने पूछा—भगवन्! सूर्यचक्र-यज्ञके लिये देवताओंने किन मन्त्रोंको कहा है? तथा यज्ञके स्वरूप और क्रमको भी आप बतानेकी कृपा करें।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—सौम्य! सूर्यनारायणके चक्रमें कमल बनाकर पूर्वकी भाँति हृदयमें स्थित भगवान् सूर्यका 'खखोल्क' नामसे कमलकी कर्णिका-दलोंमें नाममन्त्रपूर्वक चतुर्थ्यन्त विभक्ति और क्रिया लगाते हुए '**नमः**' लगाकर अङ्गन्यास एवं हृदयादि न्यास तथा पूजन करना चाहिये। हवन करते समय नामके अन्तमें 'स्वाहा' शब्दका प्रयोग करना चाहिये। यथा—'**ॐ खखोल्काय स्वाहा।**' '**ॐ खखोल्काय विद्महे दिवाकराय धीमहि। तन्नः सूर्यः प्रचोदयात्॥**' इन चौबीस अक्षरोंवाली सूर्यगायत्रीका जप सभी कर्मोंमें करना चाहिये, अन्यथा कर्मोंका फल प्राप्त नहीं होता। यह सूर्यगायत्री ब्रह्मगोत्रवाली सर्वतत्त्वमयी तथा परम पवित्र है एवं भगवान् सूर्यको अत्यन्त प्रिय है, इसलिये प्रयत्नपूर्वक मन्त्रके ज्ञान और कर्मकी विधिको जानना चाहिये। इससे अभीष्ट मनोरथ सिद्ध होता है।

साम्बने पूछा—भगवन्! आदित्य-मण्डलमें किसकी, किस कार्यके लिये और कैसी दीक्षा होनी चाहिये? इसे बतायें।

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और कुलीन शूद्र, पुरुष अथवा स्त्री भी सूर्य-मण्डलमें दीक्षाके अधिकारी हैं। सूर्यशास्त्रके जाननेवाले सत्यवादी, शुचि, वेदवेत्ता ब्राह्मणको गुरु बनाना चाहिये और भक्तिपूर्वक उन्हें प्रणाम करना चाहिये। षष्ठी तिथिमें पूर्वोक्त विधिके अनुसार अग्नि-स्थापन कर विधिपूर्वक सूर्य तथा अग्निकी पूजा करके हवन करना चाहिये। तदनन्तर गुरु पवित्र शिष्यको कुशों और अक्षतोंके द्वारा उसके प्रत्येक अङ्गमें सूर्यकी भावना कर उसका स्पर्श करे। शिष्य वस्त्रादिसे अलंकृत होकर पुष्प, अक्षत, गन्ध आदिसे भगवान् सूर्यकी पूजा करे तथा बलि भी दे। आदित्य, वरुण, अग्नि आदिका अपने हृदयमें ध्यान करे। घी, गुड़, दधि, दूध, चावल आदि रखकर तीन बार जलसे अग्निको सिंचितकर अग्निमें पुनः हवन करे। उसके बाद गुरु शिष्टाचारस्वरूप शिष्यको दातून दे। वह दातून दूधवाले वृक्षका हो और उसकी लम्बाई बारह अङ्गुल होनी चाहिये। दातून करनेके पश्चात् उसे पूर्व-दिशामें फेंक देना चाहिये, उस दिशामें देखे नहीं। पूर्व, पश्चिम और ईशान कोणकी ओर मुख

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

करके दातून करना शुभ होता है और अन्य दिशाओंमें दातून करना अशुभ माना गया है।

निन्दित दिशामें दन्तधावनसे जो दोष लगता है, उसकी शान्तिके लिये पूजन-अर्चन करना चाहिये। पुनः गुरु शिष्यके अङ्गोंका स्पर्श करे। सूर्यगायत्रीका जपपूर्वक उसके आँखोंका स्पर्श करे। इन्द्रियसंयमके लिये शिष्यसे संकल्प कराये। तदनन्तर आशीर्वाद देकर उसे शयन करनेकी आज्ञा दे। दूसरे दिन आचमनकर सूर्यको प्रातःकाल नमस्कारकर अग्नि-स्थापन करे और हवन करे। स्वप्नमें कोई शुभ संवाद सुने अथवा दिनमें यदि कोई अशुभ लक्षण दिखायी पड़े तो सूर्यनारायणको एक सौ आहुति दे। स्वप्नमें यदि देवमन्दिर, अग्नि, नदी, सुन्दर उद्यान, उपवन, पत्र, पुष्प, फल, कमल, चाँदी आदि और वेदवेत्ता ब्राह्मण, शौर्यसम्पन्न राजा, धनाढ्य क्षत्रिय, सेवामें संलग्न कुलीन शूद्र, तत्त्वको जाननेवाला, सुन्दर भाषण देनेवाला अथवा उत्तम वाहनपर सवार, वस्त्र, रत्न आदिकी प्राप्ति, वाहन, गाय, धान्य आदि उपकरण अथवा समृद्धिकी प्राप्ति आदि स्वप्नमें दिखायी दे तो उस स्वप्नको शुभ मानना चाहिये। शुभ कर्म दिखायी पड़े तो सब कार्य शुभ ही होते हैं। अनिष्टकारक स्वप्न दिखायी पड़नेपर सप्तमीको सूर्यचक्र लिखकर सूर्यदेवकी पूजा करनी चाहिये। ब्राह्मणों तथा गुरुको संतुष्ट करना चाहिये। आदित्यमण्डल पवित्र और सभीको मुक्ति प्रदान करनेवाला है। इसलिये अपने मनमें ही आदित्यमण्डलका ध्यान कर एक सौ आहुति देनी चाहिये। इस क्रमसे दीक्षा-विधि और मन्त्रका अनुसरण करते हुए आदित्यमण्डलपर पुष्पाञ्जलि प्रदान करे। इससे व्यक्तिके कुलका उद्धार हो जाता है। सूर्यप्रोक्त पुराणादिका श्रवण करना चाहिये। पूजनके बाद विसर्जन करे। सूर्यका दर्शन करनेके पश्चात् ही भोजन करना चाहिये। प्रतिमाकी छायाका और न ही ग्रह-नक्षत्र-योग और तिथिका लङ्घन करना चाहिये। सूर्य अयन, ऋतु, पक्ष, दिन, काल, संवत्सर आदि सभीके अधिपति हैं और वे सभीके पूज्य तथा नमस्कार करने योग्य हैं। सूर्यकी स्तुति, वन्दना और पूजा सदा करनी चाहिये। मन, वाणी और कर्मसे देवताओंकी निन्दाका परित्याग करना चाहिये। हाथ-पाँव धोकर, सभी प्रकारके शोकको त्यागकर शुद्ध अन्तःकरणसे सूर्यको नमस्कार करना चाहिये। इस प्रकार संक्षेपसे मैंने सूर्य-दीक्षाकी विधिको कहा है, जो सुखभोग और मुक्तिको प्रदान करनेवाली है। (अध्याय १४९)

भगवान् आदित्यकी सप्तावरण-पूजन-विधि

भगवान् श्रीकृष्ण बोले—वत्स! अब मैं दिवाकर भगवान् सूर्यनारायणकी पूजा-विधि बतलाता हूँ। एक वेदीपर अष्टदल-कमलयुक्त मण्डल बनाकर उसमें कालचक्रकी कल्पना करनी चाहिये। उसे बारह अरोंसे युक्त होना चाहिये। ये ही सर्वात्मा, सभी देवताओंमें श्रेष्ठ, उज्ज्वल किरणोंसे युक्त खखोल्क नामक भगवान् सूर्यदेव हैं। इसमें हजार किरणोंसे युक्त चतुर्बाहु भगवान् सूर्यकी पूजा करनी चाहिये। इनके पश्चिममें अरुण, दक्षिणमें निक्षुभा देवी, दक्षिणमें ही रेवन्त तथा उत्तरमें पिंगलकी पूजा करनी चाहिये और वहीं संज्ञाकी भी पूजा करनी चाहिये। अग्निकोणमें लेखककी, नैर्ऋत्यमें अश्विनीकुमारोंकी और वायव्यकोणमें वैवस्वत मनुकी तथा ईशानकोणमें लोकपावनी देवी यमुनाकी पूजा करनी चाहिये। द्वितीय आवरणमें पूर्वमें आकाशकी, दक्षिणमें देवीकी, पश्चिममें गरुडकी और उत्तरमें नागराज ऐरावतकी पूजा शुभ होती है। अग्निकोणमें हेलि, नैर्ऋत्यकोणमें प्रहेलि, वायव्यमें

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

उर्वशी और ईशानकोणमें विनतादेवीकी पूजा करनी चाहिये। तृतीयावरणमें पूर्वमें शुक्र, पश्चिममें शनि, उत्तरमें बृहस्पति, ईशानमें बुध और मण्डलके अग्निकोणमें चन्द्रमाकी पूजा करनी चाहिये। नैर्ऋत्यकोणमें राहु तथा वायव्यकोणमें केतुकी पूजा करनी चाहिये। चौथे आवरणमें लेखक, शाण्डिलीपुत्र, यम, विरूपाक्ष, वरुण, वायुपुत्र, ईशान तथा कुबेर आदिकी उन-उनकी दिशाओंमें पूजा करनी चाहिये। पाँचवें आवरणमें पूर्वादि क्रमसे महाश्वेता, श्री, ऋद्धि, विभूति, धृति, उन्नति, पृथ्वी तथा महाकीर्ति आदि देवियोंकी पूजा करनी चाहिये तथा इन्द्र, विष्णु, अर्यमा, भग, पर्जन्य, विवस्वान्, अर्क, त्वष्टा आदि द्वादश आदित्योंकी पूजा छठे आवरणमें करनी चाहिये। सिर, नेत्र, अस्त्र-शस्त्रसे युक्त रथसहित सूर्यकी सातवें आवरणमें पूजा करनी चाहिये। यक्ष, गन्धर्व, मासाधिपति तथा संवत्सर आदिकी भी पूजा करनी चाहिये। इसके बाद भगवान् भास्करका पुष्प, गन्ध आदिसे विधिपूर्वक पूजन कर—'**ॐ खखोल्काय नमः**' इस मूल मन्त्रसे अपने अङ्गोंका स्पर्श अर्थात् हृदयादिन्यास करते हुए पूजन करना चाहिये। जो व्यक्ति भक्तिपूर्वक इस विधिसे सूर्यकी नित्य अथवा दोनों पक्षोंकी सप्तमीके दिन पूजन करता है, वह परमपदको प्राप्त कर लेता है। (अध्याय १५०)

सौरधर्मका वर्णन

राजा शतानीकने पूछा—मुने! भगवान् सूर्यका माहात्म्य कीर्तिवर्धक और सभी पापोंका नाशक है। मैंने भगवान् सूर्यनारायणके समान लोकमें किसी अन्य देवताको नहीं देखा। जो भरण-पोषण और संहार भी करनेवाले हैं वे भगवान् सूर्य किस प्रकार प्रसन्न होते हैं, उस धर्मको आप अच्छी तरह जानते हैं। मैंने वैष्णव, शैव, पौराणिक आदि धर्मोंका श्रवण किया है। अब मैं सौरधर्मको जानना चाहता हूँ। इसे आप मुझे बतायें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! अब आप सौरधर्मके विषयमें सुनें।

यह सौरधर्म सभी धर्मोंमें श्रेष्ठ और उत्तम है। किसी समय स्वयं भगवान् सूर्यने अपने सारथि अरुणसे इसे कहा था। सौरधर्म अन्धकाररूपी दोषको दूरकर प्राणियोंको प्रकाशित करता है और यह संसारके लिये महान् कल्याणकारी है। जो व्यक्ति शान्तचित्त होकर सूर्यकी भक्तिपूर्वक पूजा करता है, वह सुख और धन-धान्यसे परिपूर्ण हो जाता है। प्रातः, मध्याह्न और सायं—त्रिकाल अथवा एक ही समय सूर्यकी उपासना अवश्य करनी चाहिये। जो व्यक्ति सूर्यनारायणका भक्तिपूर्वक अर्चन, पूजन और स्मरण करता है, वह सात जन्मोंमें किये गये सभी प्रकारके पापोंसे मुक्त हो जाता है। जो भगवान् सूर्यकी सदा स्तुति, प्रार्थना और आराधना करते हैं, वे प्राकृत मनुष्य न होकर देवस्वरूप ही हैं। षोडशाङ्ग-पूजन-विधिको स्वयं सूर्यनारायणने कहा है, वह इस प्रकार है—

प्रातः स्नान कर शुद्ध वस्त्र धारण करना चाहिये। जप, हवन, पूजन, अर्चनादि कर सूर्यको प्रणाम करके भक्तिपूर्वक ब्राह्मण, गाय, पीपल आदिकी पूजा करनी चाहिये। भक्तिपूर्वक इतिहास-पुराणका श्रवण और ब्राह्मणोंको वेदाभ्यास करना चाहिये। सबसे प्रेम करना चाहिये। स्वयं पूजनकर लोगोंको पुराणादि ग्रन्थोंकी व्याख्या सुनानी चाहिये। मेरा नित्य-प्रति स्मरण करना चाहिये। इस प्रकारके उपचारोंसे जो अर्चन-पूजन-विधि बतायी गयी है, वह सभी प्रकारके लोगोंके लिये उत्तम है। जो कोई इस प्रकारसे भक्तिपूर्वक मेरा पूजन करता है, वही

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanta Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

मुनि, श्रीमान्, पण्डित और अच्छे कुलमें उत्पन्न है। जो कोई पत्र, पुष्प, फल, जल आदि जो भी उपलब्ध हो उससे मेरी पूजा करता है उसके लिये न मैं अदृश्य हूँ और न वह मेरे लिये अदृश्य है। मुझे जो व्यक्ति जिस भावनासे देखता है, मैं भी उसे उसी रूपमें दिखायी पड़ता हूँ। जहाँ मैं स्थित हूँ, वहीं मेरा भक्त भी स्थित होता है। जो मुझ सर्वव्यापीको सर्वत्र और सम्पूर्ण प्राणियोंमें स्थित देखता है, उसके लिये मैं उसके हृदयमें स्थित हूँ और वह मेरे हृदयमें स्थित है। सूर्यकी पूजा करनेवाला व्यक्ति बड़े-बड़े राजाओंपर विजय प्राप्त कर लेता है। जो व्यक्ति मनसे मेरा निरन्तर ध्यान करता रहता है, उसकी चिन्ता मुझे बराबर बनी रहती है कि कहीं उसे कोई दुःख न होने पाये। मेरा भक्त मुझको अत्यन्त प्रिय है। मुझमें अनन्य निष्ठा ही सब धर्मोंका सार है। (अध्याय १५१)

ब्रह्मादि देवताओंद्वारा भगवान् सूर्यकी स्तुति एवं वर-प्राप्ति

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! भगवान् सूर्यकी भक्ति, पूजा और उनके लिये दान करना तथा हवन करना सबके वशकी बात नहीं है तथा उनकी भक्ति और ज्ञान एवं उसका अभ्यास करना भी अत्यन्त दुर्लभ है। फिर भी उनके पूजन-स्मरणसे इसे प्राप्त किया जा सकता है। सूर्य-मन्दिरमें सूर्यकी प्रदक्षिणा करनेसे वे सदा प्रसन्न रहते हैं। सूर्यचक्र बनाकर पूजन एवं सूर्यनारायणका स्तोत्र-पाठ करनेवाला व्यक्ति इच्छित फल एवं पुण्य तथा विषयोंका परित्याग कर भगवान् सूर्यमें अपने मनको लगा देनेवाला मनुष्य निर्भीक होकर उनकी निश्चल भक्ति प्राप्त कर लेता है।

राजा शतानीकने पूछा—द्विजश्रेष्ठ! मुझे भगवान् सूर्यकी पूजन-विधि सुननेकी बड़ी ही अभिलाषा है। मैं आपके ही मुखसे सुनना चाहता हूँ। कृपाकर कहिये कि सूर्यकी प्रतिमा स्थापित करनेसे कौन-सा पुण्य और फल प्राप्त होता है तथा सम्मार्जन करने और गन्ध आदिके लेपनसे किस पुण्यकी प्राप्ति होती है। आरती, नृत्य, मङ्गल-गीत आदि कृत्योंके करनेसे कौन-सा पुण्य प्राप्त होता है। अर्घ्यदान, जल एवं पञ्चामृत आदिसे स्नान, कुश, रक्त पुष्प, सुवर्ण, रत्न, गन्ध, चन्दन, कपूर आदिके द्वारा पूजन, गन्धादि-विलेपन, पुराण-श्रवण एवं वाचन, अव्यङ्ग-दान और व्योमरूपमें भगवान् सूर्य तथा अरुणकी पूजा करनेसे जो फल प्राप्त होता है, वह बतलानेकी कृपा करें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! प्रथम आप भगवान् सूर्यके महनीय तेजके विषयमें सुनें। कल्पके प्रारम्भमें ब्रह्मादि देवगण अहंकारके वशीभूत हो गये। तमरूपी मोहने उन्हें अपने वशमें कर लिया। उसी समय उनके अहंकारको दूर करनेके लिये एक महनीय तेज प्रकट हुआ, जिससे यह सम्पूर्ण विश्व व्याप्त हो गया। अन्धकार-नाशक तथा सौ योजन विस्तारयुक्त वह तेजःपुञ्ज आकाशमें भ्रमण कर रहा था। उसका प्रकाश पृथ्वीपर कमलकी कर्णिकाकी भाँति दिखलायी दे रहा था। यह देख ब्रह्मादि देवगण परस्पर इस प्रकार विचार करने लगे—हमलोगोंका तथा संसारका कल्याण करनेके लिये ही यह तेज प्रादुर्भूत हुआ है। यह तेज कहाँसे प्रादुर्भूत हुआ, इस विषयमें वे कुछ न जान सके और इस तेजने सभी देवगणोंको आश्चर्यचकित कर दिया। तेजाधिपति उन्हें दिखायी भी नहीं पड़े। ब्रह्मादि देवताओंने उनसे पूछा—देव! आप कौन हैं, कहाँ हैं, यह तेजकी कैसी शक्ति है? हम सभी लोग आपका दर्शन करना चाहते हैं। उनकी प्रार्थनासे प्रसन्न हो भगवान् सूर्यनारायण अपने विराट्-रूपमें प्रकट हो गये।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

उस महनीय तेज:स्वरूप भगवान् भास्करकी देवगण पृथक्-पृथक् वन्दना करने लगे।

ब्रह्माजीकी स्तुतिका भाव इस प्रकार है[१]—हे देवदेवेश! आप सहस्रों किरणोंसे प्रकाशमान हैं। कोणवल्लभ! आप संसारके लिये दीपक हैं, आपको नमस्कार है। अन्तरिक्षमें स्थित होकर सम्पूर्ण विश्वको प्रकाशित करनेवाले भगवान् भास्कर, विष्णु, कालचक्र, अमित तेजस्वी, सोम, काल, इन्द्र, वसु, अग्नि, खग, लोकनाथ तथा एकचक्रवाले रथसे युक्त—ऐसे नामोंवाले आपको नमस्कार है। आप अमित तेजस्वी एवं संसारके कल्याण तथा मङ्गलकारक हैं, आपका सुन्दर रूप अन्धकारको नष्ट करनेवाला है, आप तेजकी निधि हैं, आपको नमस्कार है। आप धर्मादि चतुर्वर्गस्वरूप हैं तथा अमित तेजस्वी हैं, क्रोध-लोभसे रहित हैं, संसारकी स्थितिमें कारण हैं, आप शुभ एवं मङ्गलस्वरूप हैं तथा शुभ एवं मङ्गलके प्रदाता हैं, आप परम शान्तस्वरूप हैं तथा ब्राह्मण एवं ब्रह्मरूप हैं, ऐसे हे परब्रह्म परमात्मा जगत्पते! आप मेरे ऊपर प्रसन्न होइये, आपको नमस्कार है।

ब्रह्माजीके बाद शिवजीने महातेजस्वी सूर्यनारायणको प्रणामकर उनकी स्तुति की—

विश्वकी स्थितिके कारण-स्वरूप भगवान् सूर्यदेव! आपकी जय हो। अजेय, हंस, दिवाकर, महाबाहु, भूधर, गोचर, भाव, खग, लोकप्रदीप, जगत्पति, भानु, काल, अनन्त, संवत्सर तथा शुभानन! आपकी जय हो। कश्यपके आनन्दवर्धन, अदितिपुत्र, सप्ताश्ववाहन, सप्तेश, अन्धकारको दूर करनेवाले, ग्रहोंके स्वामी, कान्तीश, कालेश, शंकर, धर्मादि चतुर्वर्गके स्वामी! आपकी जय हो। वेदाङ्गरूप, ग्रहरूप, सत्यरूप, सुरूप, क्रोधादिके विनाशक, कल्माषपक्षिरूप तथा यतिरूप! आपकी जय हो। प्रभो! आप विश्वरूप, विश्वकर्मा, ओंकार, वषट्कार, स्वाहाकार तथा स्वधारूप हैं और आप ही अश्वमेधरूप, अग्नि एवं अर्यमारूप हैं, संसाररूपी सागरसे मोक्ष दिलानेवाले हे जगत्पते! मैं संसार-सागरमें डूब रहा हूँ, मुझे अपने हाथका अवलम्बन दीजिये, आपकी जय हो[२]।

भगवान् विष्णुने सूर्यनारायणको श्रद्धा और

१-नमस्ते देवदेवेश सहस्रकिरणोज्ज्वल । लोकदीप नमस्तेऽस्तु नमस्ते कोणवल्लभ ॥
भास्कराय नमो नित्यं खखोल्काय नमो नमः । विष्णवे कालचक्राय सोमायामिततेजसे ॥
नमस्ते पञ्चकालाय इन्द्राय वसुरेतसे । खगाय लोकनाथाय एकचक्ररथाय च ॥
जगद्धिताय देवाय शिवायामिततेजसे । तमोघ्नाय सुरूपाय तेजसां निधये नमः ॥
अर्थाय कामरूपाय धर्मायामिततेजसे । मोक्षाय मोक्षरूपाय सूर्याय च नमो नमः ॥
क्रोधलोभविहीनाय लोकानां स्थितिहेतवे । शुभाय शुभरूपाय शुभदाय शुभात्मने ॥
शान्ताय शान्तरूपाय शान्तयेऽस्मासु वै नमः । नमस्ते ब्रह्मरूपाय ब्राह्मणाय नमो नमः ॥
ब्रह्मदेवाय ब्रह्मरूपाय ब्रह्मणे परमात्मने । ब्रह्मणे च प्रसादं वै कुरु देव जगत्पते ॥ (ब्राह्मपर्व १५३।५०—५७)

२-जय भाव जयाजेय जय हंस दिवाकर । जय शम्भो महाबाहो खग गोचर भूधर ॥
जय लोकप्रदीपाय जय भानो जगत्पते । जय कालजयानन्त संवत्सर शुभानन ॥
जय देवादितेः पुत्र कश्यपानन्दवर्धन । तमोघ्न जय सप्तेश जय सप्ताश्ववाहन ॥
ग्रहेश जय कान्तीश जय कालेश शङ्कर । अर्थकामेश धर्मेश जय मोक्षेश शर्मद ॥
जय वेदाङ्गरूपाय ग्रहरूपाय वै नमः । सत्याय सत्यरूपाय सुरूपाय शुभाय च ॥
क्रोधलोभविनाशाय कामनाशाय वै जय । कल्माषपक्षिरूपाय यतिरूपाय शम्भवे ॥
विश्वाय विश्वरूपाय विश्वकर्माय वै जय । जयोंकार वषट्कार स्वाहाकार स्वधामय ॥
जयाश्वमेधरूपाय चाग्निरूपार्यमाय च । संसारार्णवपीताय मोक्षद्वारप्रदाय च ॥
संसारार्णवमग्नस्य मम देव जगत्पते । हस्तावलम्बनो देव भव त्वं गोपतेऽद्भुत ॥ (ब्राह्मपर्व १५३।६०—६८)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भक्तिपूर्वक प्रणाम कर उनकी स्तुति की, भाव इस प्रकार है—

भूतभावन देवदेवेश! आप दिवाकर, रवि, भानु, मार्तण्ड, भास्कर, भग, इन्द्र, विष्णु, हरि, हंस, अर्क—इन रूपोंमें प्रसिद्ध हैं, आपको नमस्कार है। लोकगुरो! आप विभु, त्रिनेत्रधारी, त्र्यक्षरात्मक, त्र्यङ्गात्मक, त्रिमूर्ति, त्रिगति हैं, आप छः मुख, चौबीस पाद तथा बारह हाथवाले हैं, आप समस्त लोकों तथा प्राणियोंके अधिपति हैं, देवताओं तथा वर्णोंके भी आप ही अधिपति हैं, आपको नमस्कार है। जगत्स्वामिन्! आप ही ब्रह्मा, रुद्र, प्रजापति, सोम, आदित्य, ओंकार, बृहस्पति, बुध, शुक्र, अग्नि, भग, वरुण, कश्यपात्मज हैं। आपसे ही यह सम्पूर्ण चराचर जगत् व्याप्त है, देवता, असुर तथा मानव आदि सभी आपसे ही उत्पन्न हैं, अनघ! कल्पके आरम्भमें संसारकी उत्पत्ति, पालन एवं संहारके लिये ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव उत्पन्न हुए हैं, आपको नमस्कार है। प्रभो! आप ही वेदरूप, दिवसस्वरूप, यज्ञ एवं ज्ञानरूप हैं। किरणोज्ज्वल! भूतेश! गोपते! संसारमें निमग्न हुए हमपर आप प्रसन्न होइये, आप वेदान्त एवं यज्ञ-कलात्मक रूप हैं, आपकी जय हो, आपको नित्य नमस्कार है*।

ब्रह्मादि देवताओंकी स्तुतिसे भगवान् सूर्य बहुत ही प्रसन्न हुए और उन्होंने ब्रह्मा, विष्णु तथा महादेवको अपनी अखण्ड भक्ति तथा अपना अनुग्रह प्राप्त करनेका वर प्रदान करते हुए कहा—हे विष्णो! आप देव, दानव, यक्ष, राक्षस, गन्धर्व आदि सभीपर विजय प्राप्त कर अजेय रहेंगे। सम्पूर्ण संसारका पालन करते हुए आपकी मेरे ऊपर अचल भक्ति बनी रहेगी। ब्रह्मा भी इस जगत्की सृष्टि करनेमें समर्थ होंगे और मेरे प्रसादसे शंकर भी इस संसारका संहार कर सकेंगे, इसमें कोई संदेह नहीं है। मेरी पूजाके फलस्वरूप आपलोग ज्ञानियोंमें उत्कृष्ट स्थान प्राप्त कर लेंगे।

भगवान् सूर्यके इन वचनोंको सुनकर महादेवजी बोले—भगवन्! हमलोग आपकी आराधना किस प्रकार करें, उसे आप बतायें। हमें आपकी परम पूजनीय मूर्ति तो दिखायी नहीं दे रही है, केवल प्रकाशकी आकृति और मात्र तेज ही दिखायी पड़ रहा है, यह तेज आकारविहीन होनेके कारण हृदयमें स्थान नहीं पा रहा है। जबतक मन किसी विषय-वस्तुमें नहीं लगता, तबतक किसी भी व्यक्तिकी भक्ति या इच्छा उस विषय-वस्तुको प्राप्त करनेकी नहीं होती। जबतक भक्ति उत्पन्न नहीं होगी, तबतक पूजन आदि करनेमें कोई भी समर्थ नहीं होगा। इसलिये आप साकाररूपमें प्रकट हों, जिससे कि हमलोग उस साकाररूपका पूजन-अर्चन कर सिद्धिको प्राप्त करनेमें समर्थ हो जायँ।

---

* नमामि देवदेवेशं भूतभावनमव्ययम्। दिवाकरं रविं भानुं मार्तण्डं भास्करं भगम्॥
इन्द्रं विष्णुं हरिं हंसमर्कं लोकगुरुं विभुम्। त्रिनेत्रं त्र्यक्षरं त्र्यङ्गं त्रिमूर्तिं त्रिगतिं शुभम्॥
षण्मुखाय नमो नित्यं त्रिनेत्राय नमो नमः। चतुर्विंशतिपादाय नमो द्वादशपाणये॥
नमस्ते भूतपतये लोकानां पतये नमः। देवानां पतये नित्यं वर्णानां पतये नमः॥
त्वं ब्रह्मा त्वं जगन्नाथो रुद्रस्त्वं च प्रजापतिः। त्वं सोमस्त्वं तथादित्यस्त्वमोंकारक एव हि॥
बृहस्पतिर्बुधस्त्वं हि त्वं शुक्रस्त्वं विभावसुः। यमस्त्वं वरुणस्त्वं हि नमस्ते कश्यपात्मज॥
त्वया ततमिदं सर्वं जगत्स्थावरजङ्गमम्। त्वत्त एव समुत्पन्नं सदेवासुरमानुषम्॥
ब्रह्मा चाहं च रुद्रश्च समुत्पन्नो जगत्पते। कल्पादौ तु पुरा देव स्थितये जगतोऽनघ॥
नमस्ते वेदरूपाय अहोरूपाय वै नमः। नमस्ते ज्ञानरूपाय यज्ञाय च नमो नमः॥
प्रसीदास्मासु देवेश भूतेश किरणोज्ज्वल।
संसारार्णवमग्नानां प्रसादं कुरु गोपते। वेदान्ताय नमो नित्यं नमो यज्ञकलाय च॥

(ब्राह्मपर्व १५३। ७१—८०)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भगवान् सूर्यने कहा—महादेवजी! आपने बड़ी अच्छी बात पूछी है—आप दत्तचित्त होकर सुनें। इस जगत्में मेरी चार प्रकारकी मूर्तियाँ हैं जो सम्पूर्ण संसारको व्यवस्थित करती हुई सृजन, पालन, पोषण तथा संहार आदिमें प्रत्येक समय संलग्न रहती हैं। मेरी प्रथम मूर्ति राजसी मूर्ति है, जो ब्राह्मी शक्तिके नामसे प्रसिद्ध है, वह कल्पके आदिमें संसारकी सृष्टि करती है। द्वितीय सात्त्विकी मूर्ति विष्णुस्वरूपिणी है, जो संसारका पालन और दुष्टोंका विनाश करती है। तृतीय मूर्ति तामसी है, जो भगवान् शंकरके नामसे विख्यात है, वह हाथमें त्रिशूल धारण किये कल्पके अन्तमें विश्व-सृष्टिका संहार करती है। मेरी चतुर्थ मूर्ति सत्त्वादि गुणोंसे अतीत तथा उत्तम है, वह स्थित रहते हुए भी दिखायी नहीं पड़ती। उस अदृश्य शक्तिके द्वारा यह समस्त संसार विस्तारको प्राप्त हुआ है। ओंकार ही मेरा स्वरूप है। यह सकल तथा निष्कल और साकार एवं निराकार दोनों रूपोंमें है। यह सम्पूर्ण संसारमें व्याप्त रहते हुए भी सांसारिक कर्म-फलोंसे लिप्त नहीं रहती, जलमें पद्मपत्रकी भाँति अलिप्त रहती है। यह प्रकाश आपलोगोंके अज्ञानको दूर करने तथा संसारमें प्रकाश करनेके लिये उत्पन्न हुआ है। आपलोग मेरे इस अस्पृष्ट (निर्लिप्त) रूपकी आराधना करें।

कल्पके अन्तमें मेरे आकाशरूपमें सभी देवताओंका लय हो जाता है। उस समय केवल आकाशरूप ही रहता है[१]। पुनः मुझसे ही ब्रह्मादि देवगण तथा चराचर उत्पन्न होते हैं। हे त्रिलोचन! मैं सम्पूर्ण जगत्में व्याप्त हूँ। इसलिये मेरे व्योमरूपकी आराधना आपसहित ब्रह्मा, विष्णु भी करें। त्रिलोचन! आप गन्धमादनपर दिव्य सहस्र वर्षोंतक तपस्या करके परम शुभ षडङ्ग-सिद्धिको प्राप्त करें। जनार्दन! आप मेरे व्योमरूप[२]की श्रद्धा और भक्तिपूर्वक आराधना कलापग्राममें निवास कर करें। जगत्पति ब्रह्मा भी अन्तरिक्षमें जाकर लोकपावन पुष्करतीर्थमें मेरी आराधना करें। इस प्रकार आराधना करनेके पश्चात् कदम्बके समान गोलाकार, रश्मिमालासे युक्त मेरी मूर्तिका आपलोग दर्शन करेंगे।

इस प्रकार सूर्यनारायणके वचनको सुनकर भगवान् विष्णुने उन्हें प्रणाम कर कहा—देव! हम सभी लोग उत्तम सिद्धि प्राप्त करनेके लिये आपके परम तेजस्वी व्योमरूपका पूजन-अर्चन कर किस विधिसे आराधना करें। परमपूजित! कृपया आप उस विधिको बतलाकर मुझसहित ब्रह्मा और शिवपर दया कीजिये, जिससे हमलोगोंको परम सिद्धि प्राप्त होनेमें कोई विघ्न-बाधा न पहुँच सके।

भगवान् सूर्य बोले—देवताओंमें श्रेष्ठ वासुदेव! आप शान्तचित्त होकर सुनिये। आपका प्रश्न उचित ही है। मेरे अनुपम व्योमरूपकी आपलोग आराधना करें। मेरी पूजा मध्याह्नकालमें भक्तिपूर्वक सदैव करनेसे इच्छित भक्तिकी प्राप्ति हो जाती है। भगवान् सूर्यके इस वाक्यको सुनकर ब्रह्मादि देवताओंने प्रणामकर कहा—'देव! आप धन्य हैं, हमलोगोंको आपने अपने तेजसे प्रकाशित किया है, हमलोग कृतकृत्य हो गये। आपके दर्शनमात्रसे ही सभी लोगोंको ज्ञान प्राप्त हुआ है तथा तम, मोह, तन्द्रा आदि सभी क्षणमात्रमें ही दूर हो गये हैं। हमलोग

१-अन्य पुराणों तथा सांख्य, वेदान्त आदि दर्शनोंके अनुसार आकाशका मनस्तत्त्वमें, मनका अहंतत्त्वमें और अहंका महत्तत्त्वमें, महत्तत्त्वका अव्यक्त-तत्त्वमें और अव्यक्तका सत्-तत्त्वमें लय होता है, जो संकल्प-विकल्पमें शून्य होता है और पुनः सृष्टिके समय सत्-तत्त्वमें कलनाके साथ अव्यक्त, महत्, मन, अहंकारके बाद आकाशकी उत्पत्ति होती है।

२-योगवासिष्ठमें सबको व्योमके ही अन्तर्गत स्थित मानकर हृद्-व्योम-उपासना (दहर-उपासना)-का निर्देश है और ब्रह्मसूत्रके 'आकाशस्तल्लिङ्गात्' इस सूत्रमें आकाश शब्दका अर्थ परमात्मा माना गया है।

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Shanda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

आपके ही तेजके प्रभावसे उत्पत्ति, पालन और संहार करते हैं। अब आप व्योमके पूजन-विधिको बतानेकी कृपा करें।'

भगवान् आदित्यने कहा—आपलोग सत्य ही कह रहे हैं, जो मैं हूँ वही आपलोग भी हैं अर्थात् आपलोगोंके स्वरूपमें मैं ही स्थित हूँ। अहंकारी, विमूढ, असत्य, कलहसे युक्त लोगोंके कल्याणके लिये तथा आपलोगोंके अन्धकार अर्थात् तम-मोहादिकी निवृत्तिके लिये मैंने तेजोमय स्वरूप प्रकट किया, इसलिये अहंकार, मान, दर्प आदिका परित्याग कर श्रद्धा-भक्तिपूर्वक निरन्तर आपलोग मेरी आराधना करें। इससे मेरे सकल-निष्कल उत्तम स्वरूपका दर्शन प्राप्त होगा और मेरे दर्शनसे सभी सिद्धियाँ प्राप्त हो जायँगी। इतना कहकर सहस्रकिरण भगवान् सूर्य देवताओंके देखते-देखते अन्तर्धान हो गये। भगवान् भास्करके तेजस्वी रूपका दर्शन कर ब्रह्मा, विष्णु और शिव सभी आश्चर्यचकित होकर परस्पर कहने लगे—'ये तो अदिति-पुत्र सूर्यनारायण हैं। ये महातेजस्वी लोकोंको प्रकाशित करनेवाले सूर्यनारायण हैं, इन्होंने हम सभी लोगोंको महान् अन्धकाररूपी तमसे निवृत्त किया है। हम अपने-अपने स्थानपर चलकर इनकी पूजा करें, जिससे इनके प्रसादसे हमें सिद्धि प्राप्त हो सके।'

उस व्योमरूपकी श्रद्धा-भक्तिपूर्वक पूजन करनेके लिये ब्रह्माजी पुष्करक्षेत्रमें, भगवान् विष्णु शालग्राममें और वृषध्वज शंकर गन्धमादन पर्वतपर चले गये। वहाँ मान, दर्प तथा अहंकारका परित्याग कर ब्रह्माजी चार कोणसे युक्त व्योमकी, भगवान् विष्णु चक्रमें अङ्कित व्योमकी और शिव अग्निरूपी तेजसे अभिभूत व्योमवृत्तकी सदा भक्तिपूर्वक पूजा करने लगे। ब्रह्मादि देवता गन्ध, माला, नृत्य, गीत आदिसे दिव्य सहस्र वर्षोंतक सूर्यनारायणकी पूजा कर उनकी अचल भक्ति और प्रसन्नता-प्राप्तिके लिये उत्तम तपस्यामें तत्पर हो गये।

सुमन्तु मुनि बोले—महाराज! देवताओंके पूजनसे प्रसन्न हो वे एक रूपसे ब्रह्माके पास, एक रूपसे शंकरके पास तथा एक रूपसे विष्णुके पास गये एवं अपने चतुर्थ रूपसे रथारूढ हो आकाशमें स्थित रहे। भगवान् सूर्यने अपने योगबलसे पृथक्-पृथक् उन्हें दर्शन दिया। दिव्य रथपर आरूढ सूर्यदेवने अपने अद्भुत योगबलसे देखा कि चतुर्मुख ब्रह्माजी कमलमुख-व्योमकी पूजामें अत्यन्त श्रद्धा-भक्तिसे नतमस्तक हैं। यह देखकर ब्रह्माजीसे भगवान् सूर्यदेवने कहा—'सुरश्रेष्ठ! देखो, मैं वर देनेके लिये उपस्थित हूँ।' यह सुनकर ब्रह्माजी हर्षसे प्रफुल्लित हो उठे और हाथ जोड़कर उनके कमलमुखको देखकर अति विनम्रभावसे प्रणाम कर प्रार्थना करने लगे—

'देवेश! आप प्रसन्न हैं तो मेरे ऊपर कृपा कीजिये। देव! आपके अतिरिक्त मेरे लिये अन्य कोई गति नहीं है।'

भगवान् सूर्य बोले—जैसा आप कह रहे हैं, उसमें विचार करनेकी कोई बात नहीं है। आप कारणरूपसे मेरे प्रथम पुत्रके रूपमें उत्पन्न हों। अब आप वर माँगिये, मैं वर देनेके लिये ही आया हूँ।

ब्रह्माजीने कहा—भगवन्! यदि आप मेरे ऊपर प्रसन्न हैं तो मुझे उत्तम वर दें, जिससे मैं सृष्टि कर सकूँ।

भगवान् आदित्यने कहा—जगत्पति चतुर्मुख ब्रह्मन्! आपको मेरे प्रसादसे सिद्धि प्राप्त हो जायगी और आप इस जगत्के सृष्टिकर्ता होंगे।

ब्रह्माजीने कहा—जगन्नाथ! मेरा निवास किस स्थानपर होगा।

भगवान् सूर्य बोले—जिस स्थानपर मेरा महद्-व्योम-पृष्ठ शृंगसे युक्त उत्तम रूप रहेगा, वहीं

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

कदम्ब-रूपमें आप नित्य स्थित रहेंगे। पूर्व दिशामें इन्द्र, अग्निकोणमें शाण्डिलीसुत अग्नि, दक्षिणमें यम, नैर्ऋत्यकोणमें निर्ऋति, पश्चिममें वरुण और वायव्यकोणमें वायु तथा उत्तर दिशामें कुबेरका निवास रहेगा। ईशानकोणमें शंकर और आपका तथा मध्यमें विष्णुका निवास रहेगा।

ब्रह्माजीने कहा—देव! आज मैं कृतकृत्य हो गया, जो कुछ भी मुझे चाहिये, वह सब प्राप्त हो गया।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! इस प्रकार भगवान् आदित्य ब्रह्माजीको वर प्रदानकर उनके साथ गन्धमादन पर्वतपर गये, वहाँ उन्होंने देखा—भूत-भावन शिव तीव्र तपस्यामें संलग्न हैं। वे तेजसे युक्त व्योमका पूजन कर रहे हैं। इस प्रकार शिवद्वारा पूजन-अर्चनको देखकर भगवान् भास्कर प्रसन्न हो गये।

सूर्यभगवान्ने कहा—भीम! मैं तुमसे अति प्रसन्न हूँ। वत्स! वर माँगो! मैं वर देनेके लिये उपस्थित हूँ। इसपर महादेवजीने साष्टाङ्ग प्रणाम कर स्तुति की और कहा—'देव! आप मुझपर कृपा करें। आप जगत्पति हैं। संसारका उद्धार करनेवाले हैं। मैं आपके अंशसे आपके पुत्रके रूपमें उत्पन्न हुआ हूँ, आप वही करें जो एक पिता अपने पुत्रके लिये करता है।' यह वचन सुनकर भगवान् सूर्य बोले—'शंकर! जो तुम कह रहे हो, उसमें कोई भी संदेह नहीं है। मेरे ललाटसे तुम पुत्र-रूपमें उत्पन्न हुए हो। जो तुम्हारे मनमें हो वह वर माँगो।'

महादेवजीने कहा—भगवन्! यदि आप मेरे ऊपर संतुष्ट हैं तो मुझे अपनी अचल भक्ति प्रदान करें, जिससे यक्ष, गन्धर्व, देव, दानव आदिपर मैं विजय प्राप्त कर सकूँ और युगके अन्तमें प्रजाका संहार कर सकूँ। देव! मुझे उत्तम स्थान प्रदान करें। भगवान् सूर्यने 'ऐसा ही होगा' कहकर कहा कि इसी प्रकार तुम मेरे परम व्योमरूपकी पूजा प्रतिदिन करते रहो और यही परम तेजस्वी व्योम तुम्हारा शस्त्र—त्रिशूल होगा।

सुमन्तु मुनि बोले—महाराज! तदनन्तर भगवान् सूर्य भगवान् विष्णुको वर देने शालग्राम (मुक्तिनाथ-क्षेत्र) गये। वहाँ उन्होंने देखा कि वे कृष्णाजिन धारणकर शान्तचित्त हो परम उत्कृष्ट तप कर रहे हैं और हृदयमें भगवान् सूर्यका ध्यान कर रहे हैं. भगवान् भास्करने अति प्रसन्न होकर कहा—'विष्णो! मैं आ गया हूँ, मुझे देखो।' भगवान् विष्णुने उन्हें सिर झुकाकर प्रणाम किया और कहा—'जगन्नाथ! आप मेरी रक्षा करें। मेरे ऊपर दया करें। मैं आपका द्वितीय पुत्र हूँ। पिता अपने पुत्रपर जैसी कृपादृष्टि रखता है, उसी प्रकार आप भी मेरे ऊपर दया-दृष्टि बनाये रखें।'

भगवान् सूर्य बोले—महाबाहो! मैं तुम्हारी श्रद्धा-भक्तिसे संतुष्ट हो गया हूँ। जो कुछ भी इच्छा हो, माँग लो। मैं वर प्रदान करनेके लिये ही आया हूँ।

विष्णुभगवान्ने कहा—भगवन्! मैं आज कृतकृत्य हो गया। मेरे समान कोई भी धन्य नहीं है, क्योंकि आप संतुष्ट होकर मुझे स्वयं वर देने आ गये। आप अपनी अचल भक्ति और शत्रुको पराजित करनेकी शक्ति मुझे प्रदान करें तथा जैसे मैं संसारका पालन कर सकूँ ऐसा वर प्रदान करें। मुझे इस प्रकारका स्थान दें जिससे कि मैं सभी लोकोंमें यशस्वी, बल, वीर्य, यश और सुखसे सम्पन्न हो सकूँ।

भगवान् सूर्य बोले—'तथास्तु' महाबाहो! तुम ब्रह्माके छोटे और शिवके बड़े भ्राता हो, तुम्हें सभी देवता नमस्कार करेंगे। तुम मेरे परम भक्त और परम प्रिय हो, इसलिये तुम्हारी मुझमें अचल

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

भक्ति रहेगी। जिस व्योमरूपका तुमने अर्चन किया है, यह व्योम ही तुम्हारे लिये चक्ररूपमें अस्त्र-शस्त्रका कार्य करेगा। यह सभी आयुधोंमें उत्तम एवं दुष्टोंका विनाशक है। समस्त लोक इसे नमस्कार करते हैं।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! इस प्रकार भगवान् भास्कर भगवान् विष्णुको वर प्रदानकर अपने लोकको चले गये और ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकरने भगवान् सूर्यनारायणकी पूजा कर सृष्टि, पालन और संहार करनेकी शक्ति प्राप्त की। यह आख्यान अति पवित्र, पुण्य और सभी प्रकारके पापोंका नाशक है। यह तीन देवोंका उपाख्यान है और तीन देवता इस लोकमें पूजित हैं। यह तीन स्तोत्रोंसे युक्त तथा धर्म, अर्थ और कामका साधन है। यह धर्म, स्वर्ग, आरोग्य, धन-धान्यको प्रदान करनेवाला है। जो व्यक्ति इस आख्यानको प्रतिदिन सुनता है अथवा जो इन तीन स्तोत्रोंका पाठ करता है, वह आग्नेय विमानपर आरूढ होकर भगवान् सूर्यके परमपदको प्राप्त कर लेता है। पुत्रहीन पुत्र, निर्धन धन, विद्यार्थी विद्या प्राप्तकर तेजमें सूर्यके समान, प्रभामें उनके किरणोंके समान हो जाता है और अनन्तकालतक सुख भोगकर ज्ञानियोंमें उत्तम स्थानको प्राप्त करता है।

(अध्याय १५२—१५६)

सौर-धर्म-निरूपणमें सूर्यावतारका कथन

शतानीकने पूछा—ब्रह्मन्! जिन तेजस्वी भगवान् सूर्यनारायणने ब्रह्माजीको वर प्रदान किया, देवताओं और पृथ्वीको उत्पन्न किया, जो ब्रह्मादि देवताओंको प्रकाशित करनेवाले तथा समस्त जगत्के पालक, महाभूतोंसहित चौदह लोकोंके स्रष्टा, पुराणोंमें तेजरूपसे स्थित एवं पुराणोंकी आत्मा हैं तथा अग्निमें स्वयं स्थित हैं, जिनके सहस्रों सिर, सहस्रों नेत्र तथा सहस्रों चरण हैं, जिनके मुखसे लोकपितामह ब्रह्मा, वक्षःस्थलसे भगवान् विष्णु और ललाटसे साक्षात् भगवान् शिव उत्पन्न हुए हैं, जो विघ्नोंके विनाशक एवं अन्धकारनाशक, लोककी शान्तिके लिये जो अग्नि, वेदि, कुशा, स्रुवा, प्रोक्षणी, व्रत आदिको उत्पन्न कर इनके द्वारा हव्य-भाग ग्रहण करते हैं, जो युगके अनुरूप कर्मोंके विभाजन तथा क्षण, काल, काष्ठ, मुहूर्त, तिथि, मास, पक्ष, संवत्सर, ऋतु, कालयोग, विविध प्रमाण और आयुके उत्पादक तथा विनाशक हैं एवं परमज्योति और परम तपस्वी हैं, जो अच्युत तथा परमात्माके नामसे जाने जाते हैं, वे ही महर्षि कश्यपके यहाँ पुत्रके रूपमें कैसे अवतरित हुए?

ब्रह्मादि जिनकी उपासना करते हैं तथा वेद-वेत्ताओंमें जो उत्तम और देवताओंमें प्रभु विष्णु हैं, जो सौम्योंमें सौम्य और अग्निमें तेजःस्वरूप हैं, मनुष्योंमें मनरूपसे तथा तपस्वियोंमें तप-रूपसे विद्यमान हैं, जो विग्रहोंमें विग्रह हैं, जो देवताओं और मनुष्योंसहित समस्त लोकोंको उत्पन्न करनेवाले हैं, वे देवोंके देव भगवान् सूर्य किसलिये अदितिके गर्भसे स्वयं उत्पन्न हुए? ब्रह्मन्! इस विषयमें मुझे महान् आश्चर्य हो रहा है, भगवान् सूर्यकी उत्पत्तिसे आश्चर्यचकित होकर ही मैंने आपसे उनके आख्यानको पूछा है। महामुने! भगवान् सूर्यके बल-वीर्य, पराक्रम, यश और उज्ज्वलित तेजका आप वर्णन करें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! आपने भगवान् भास्करकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें बहुत ही जटिल प्रश्न पूछा है। मैं अपनी सामर्थ्यके अनुसार कह रहा हूँ। आप उसे श्रद्धा-भक्तिपूर्वक सुनें।

जो भगवान् सूर्य सहस्रों नेत्रोंवाले, सहस्रों

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

किरणोंसे युक्त और सहस्रों सिर तथा सहस्रों हाथवाले हैं, सहस्रों मुकुटोंसे सुशोभित तथा सहस्रों भुजाओंसे युक्त एवं अव्यय हैं, जो सभी लोकोंके कल्याण एवं सभी लोकोंको प्रकाशित करनेके लिये अनेक रूपोंमें अवतरित होते हैं, वही भगवान् सूर्य कश्यपद्वारा अदितिके गर्भसे पुत्ररूपमें उत्पन्न हुए। महाराज! कश्यप और अदितिसे जो-जो पुत्र उत्पन्न होते थे, वे उसी क्षण मर जाते थे। इस पुत्र-विनाशको देखकर पुत्र-शोकसे दुःखी माता अदिति व्याकुल हो अपने पति महर्षि कश्यपके पास गयीं। अदितिने देखा कि महर्षि कश्यप अग्निके समान तेजस्वी, दण्ड धारण किये कृष्ण मृगचर्मपर आसीन तथा वल्कल धारण किये हुए भगवान् भास्करके सदृश देदीप्यमान हो रहे हैं। इस प्रकारसे उन्हें स्थित देखकर अदितिने प्रार्थना करते हुए कहा—'देव! आप इस तरह निश्चिन्त होकर क्यों बैठे हैं? मेरे पुत्र उत्पन्न होते ही मृत्युको प्राप्त होते जा रहे हैं। अदितिके इस वचनको सुनकर ऋषियोंमें उत्तम कश्यपजी ब्रह्मलोक गये और उन्होंने अदितिकी बातें ब्रह्माजीको बतलायीं।'

ब्रह्माजीने कहा—पुत्र! हमें भगवान् भास्करके परम दुर्लभ स्थानपर चलना चाहिये। यह कहकर ब्रह्मा कश्यप और अदितिके साथ विमानपर आरूढ होकर सूर्यदेवके भवनको गये। उस समय सूर्यलोककी सभामें कहीं वेद-ध्वनि हो रही थी, कहीं यज्ञ हो रहा था। ब्राह्मण वेदकी शिक्षा दे रहे थे। अठारह पुराणोंके ज्ञाता, विद्याविशारद, मीमांसक, नैयायिक, वेदान्तविद्, लोकायतिक आदि सभी सूर्यकी उपासनामें लगे हुए थे। विद्वान् ब्राह्मण जप, तप, हवन आदिमें संलग्न थे। उस सभामें रश्मिमाली भगवान् दिवाकरको महर्षि कश्यप आदिने देखा। देवताओंके गुरु बृहस्पति, असुरोंके गुरु शुक्राचार्य आदि भी वहींपर भगवान् सूर्यकी उपासना कर रहे थे। दक्ष, प्रचेता, पुलह, मरीचि, भृगु, अत्रि, वसिष्ठ, गौतम, नारद, अन्तरिक्ष तेज, पृथ्वी, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध, प्रकृति विकृति, अङ्ग-उपाङ्गोंसहित चारों वेद और लव ऋतु, संकल्प, प्रणव आदि बहुत-से मूर्तिमान् होक भगवान् भास्करकी स्तुति-उपासना कर रहे थे अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष, द्वेष, हर्ष, मोह, मत्सर मान, वैष्णव, माहेश्वर, सौर, मारुत, विश्वकर्मा तथ अश्विनीकुमार आदि सुन्दर-सुन्दर वचनोंसे भगवान सूर्यका गुणगान कर रहे थे।

ब्रह्माजीने भगवान् भास्करसे निवेदन किया—भगवन्! आप देवमाता अदितिके गर्भसे उत्पन्न होकर लोकका कल्याण कीजिये। इस त्रैलोक्यको अपने तेजसे प्रकाशित कीजिये। देवताओंको शरण दीजिये। असुरोंका विनाश एवं अदिति-पुत्रोंकी रक्षा कीजिये।

भगवान् सूर्यने कहा—आप जैसा कह रहे हैं, वैसा ही होगा। प्रसन्न होकर महर्षि कश्यप देवी अदितिके साथ अपने आश्रममें चले आये और ब्रह्माजी भी अपने लोकको चले गये।

सुमन्तु मुनि बोले—महाराज! कालान्तरमें भगवान् सूर्य अदितिके गर्भसे उत्पन्न हुए, जिससे तीनों लोकोंमें सुख छा गया और दैत्योंका विनाश हो गया, देवताओंकी वृद्धि हुई तथा उनके प्रभावसे सभी लोगोंमें परम आनन्द व्याप्त हो गया।

इस प्रकार देवमाता अदितिके गर्भसे भगवान सूर्यके जन्म ग्रहण करनेपर आकाशमें दुन्दुभियाँ बजने लगीं, गन्धर्वगण गान करने लगे। द्वादशात्म भगवान् सूर्यकी सभी देवगण, ऋषि-महर्षि तथ दक्ष प्रजापति आदि स्तुति करने लगे। उस समय एकादश रुद्र, अश्विनीकुमार, आठों वसु, महाबली गरुड, विश्वेदेव, साध्य, नागराज वासुकि तथ अन्य बहुत-से नाग और राक्षस भी हाथ जोड़े खड़े थे। पितामह ब्रह्मा भी स्वयं पृथ्वीपर आये

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

और सभी देवता एवं ऋषि-महर्षियोंसे बोले—'देवर्षिगण! जिस प्रकार बालकरूपमें उत्पन्न होकर ये सभीको देख रहे हैं, उसी प्रकार ये लोकेश्वर श्रीमान् और विवस्वान्-रूपमें विख्यात होंगे। देव, दानव, यक्ष, गन्धर्व आदिके जो कारण हैं वे ही आदिदेव भगवान् आदित्य हैं।' इस प्रकार कहकर पितामह ब्रह्माने देवताओं और ऋषियोंसहित उन्हें नमस्कार कर विधिपूर्वक उनकी अर्चना की तत्पश्चात् वे अपने-अपने लोकोंको चले गये।

वेदोंद्वारा गेय तथा इन्द्रादि बारह नामोंसे युक्त भगवान् सूर्यको पुत्ररूपमें प्राप्तकर महर्षि कश्यप अदितिके साथ परम संतुष्ट हो गये एवं सारा विश्व हर्षसे व्याप्त हो गया तथा सभी राक्षस भयभीत हो गये।

भगवान् सूर्य बोले—महर्षे! आपके पुत्र नष्ट हो जाते थे, इसलिये गर्भकी सिद्धिके लिये मैं आपके यहाँ पुत्ररूपमें उत्पन्न हुआ हूँ।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! इस प्रकार भगवान् भास्करकी आराधना करके ब्रह्माजीने सृष्टि करनेका वर प्राप्त किया और कश्यपमुनिने भी भगवान् भास्करको प्रसन्नकर उन्हें पुत्ररूपमें प्राप्त कर लिया।

(अध्याय १५७—१५९)

ब्रह्मादि देवताओंद्वारा सूर्यके विराट्-रूपका दर्शन

महाराज शतानीकने कहा—मुने! आपने भगवान् सूर्यके अद्भुत चरित्रका वर्णन किया है, जिनका पूजन ब्रह्मा आदि देवता प्रतिदिन विधिपूर्वक करते रहते हैं तथा जिस ब्रह्मकी ब्रह्मा, विष्णु, शिव और सभी देवता आराधना करते रहते हैं, उसे आप बतायें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! एक बार भगवान् विष्णु और ब्रह्माजी हिमाचलपर गये। वहाँ उन्होंने देखा कि भगवान् शिव सिरपर अर्धचन्द्र धारण किये भगवान् विवस्वान्की पूजा कर रहे हैं। ब्रह्मा और विष्णुको वहाँ आये देखकर शिवजीने उन्हें प्रणाम किया और विधिपूर्वक उनकी पूजा की तथा उनसे कहा—'भगवन्! आपलोगोंने भगवान् सूर्यकी आराधना कर उनके किस स्वरूपका दर्शन किया है। मुझे उनके परम रूपको जाननेकी बड़ी ही अभिलाषा है, उसे आप बतायें।'

इसपर वे दोनों बोले—हमलोगोंने भी उस परम अद्भुत रूपको नहीं देखा है। हमें उस परम अद्भुत रूपकी आराधनाके लिये सुवर्णके समान उज्ज्वल पवित्र उदयगिरिपर एक साथ चलना चाहिये। अनन्तर तीनों देव तीव्र गतिसे पर्वतश्रेष्ठ उदयाचलपर गये और वहाँ भगवान् सूर्यनारायणकी विधिपूर्वक आराधना करने लगे। सहस्रों दिव्य वर्षतक पद्मासन लगाकर ब्रह्माजी निश्चलरूपसे स्थिर हो, ऊपर हाथ करके त्रिलोचन भगवान् शङ्कर और सिर नीचे करके पञ्चाग्निका सेवन करते हुए भगवान् विष्णु सूर्यदेवका दर्शन प्राप्त करनेके लिये कठोर तप करने लगे। ब्रह्मा, विष्णु और शिवजीके उत्तम तपसे संतुष्ट हो भगवान् सूर्यनारायणने प्रकट होकर उनसे कहा—'आपलोग क्या चाहते हैं? मैं आपलोगोंसे संतुष्ट हूँ और वर देनेके लिये उपस्थित हुआ हूँ।'

उन्होंने कहा—गोपते! हमलोग आपके दर्शनसे कृतकृत्य हो गये हैं। पहले ही आपकी आराधना करके हमलोगोंने शुभ वरोंको प्राप्त कर लिया है। आपकी दयासे हमलोग उत्पत्ति, स्थिति और विनाश करनेमें समर्थ हैं, इसमें किसी प्रकारका संशय नहीं है, किंतु देवदेवेश! हमलोग आपके परम दुर्लभ रूपका दर्शन करना चाहते हैं।

उनके वचनोंको सुनकर लोकपूजित भगवान्

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

सूर्यने उन्हें अपना परम दुर्लभ तेजस्वी अद्भुत विराट्-रूप दिखलाया। इनके अनेक सिर तथा अनेक मुख हैं, सभी देव तथा सभी लोक उसमें स्थित हैं। पृथ्वी पैर, स्वर्ग सिर, अग्नि नेत्र, पैरकी अँगुलियाँ पिशाच, हाथकी अँगुलियाँ गुह्यक, विश्वेदेव जंघा, यज्ञ कुक्षि, अप्सरागण केश तथा तारागण ही इनके रोमरूपमें हैं। दसों दिशाएँ इनके कान और दिक्पालगण इनकी भुजाएँ हैं। वायु नासिका, प्रसाद ही क्षमा तथा धर्म ही मन है। सत्य इनकी वाणी, देवी सरस्वती जिह्वा, ग्रीवा महादेवी अदिति और तालु वीर्यवान् रुद्र हैं। स्वर्गका द्वार नाभि, वैश्वानर अग्नि मुख, भगवान् ब्रह्मा हृदय और उदर महर्षि कश्यप हैं, पीठ आठों वसु तथा सभी संधियाँ मरुद्देव हैं। समस्त छन्द दाँत एवं ज्योतियाँ निर्मल प्रभा हैं। महादेव रुद्र प्राण, कुक्षियाँ समुद्र हैं। इनके उदरमें गन्धर्व और नाग हैं। लक्ष्मी, मेधा, धृति, कान्ति तथा सभी विद्याएँ इनके कटिदेशमें स्थित हैं। इनका ललाट ही परमात्माका परमपद है। दो स्तन, दो कुक्षि और चार वेद ये आठ ही इनके यज्ञ हैं।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! सर्वदेवमय भगवान् सूर्यके इस विराट् रूपको देखकर ब्रह्मा, शिव और भगवान् विष्णु परम विस्मित हो गये। उन्होंने बड़ी श्रद्धासे भगवान् सूर्यको प्रणाम किया।

भगवान् सूर्यने कहा—देवो! आप सबकी कठिन तपस्यासे प्रसन्न होकर आप सबके कल्याणके लिये मैंने योगियोंके द्वारा समाधिगम्य अपने इस विराट्-रूपको दिखलाया है। इसपर वे बोले—भगवन्! आपने जो कहा है, उसमें कोई भी संदेह नहीं है। इस विराट्-रूपका दर्शन पाना योगियोंके लिये भी दुर्लभ है। आपकी आराधना करने तथा आपका दर्शन करनेपर कुछ अप्राप्य नहीं है। आपके समान इस लोकमें दूसरा कोई देव नहीं है।

राजन्! ब्रह्मादि देवता परम उत्कृष्ट इस रूपका दर्शन कर हर्षित हो गये और उन्होंने भगवान् सूर्यका पूजन-आराधन कर परम सिद्धि प्राप्त की।

(अध्याय १६०)

सूर्योपासनाका फल

शतानीकने पूछा—मुने! आपने भगवान् सूर्यके विषयमें जो कहा, वह सत्य ही है, संसारके मूल कारण तथा परम दैवत भगवान् सूर्य ही हैं, सभीको यही तेज प्रदान करते हैं। भगवान् सूर्यनारायणके पूजनसे जो फल प्राप्त होता है, आप उसे बतलानेकी कृपा करें।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! जो व्यक्ति सर्वदेवमय भगवान् सूर्यकी प्रतिष्ठा कर पूजन करता है, वह अमरत्व तथा भगवान् सूर्यका सामीप्य प्राप्त कर लेता है। जो व्यक्ति भगवान् सूर्यका तिरस्कार कर सभी देवताओंका पूजन करता है, उस व्यक्तिके साथ भाषण करनेवाला व्यक्ति भी नरकगामी होता है। जो व्यक्ति श्रद्धा-भक्तिपूर्वक सूर्यदेवकी प्रतिष्ठा कर पूजन-अर्चन करता है, उसे यज्ञ, तप, तीर्थ-यात्रा आदिकी अपेक्षा कोटि गुना अधिक फल प्राप्त होता है तथा उसके मातृकुल, पितृकुल एवं स्त्रीकुल—इन तीनोंका उद्धार हो जाता है और वह इन्द्रलोकमें पूजित होता है तथा वहाँ ज्ञानयोगके आश्रयणसे वह मुक्ति प्राप्त कर लेता है अथवा जो राज्य चाहता है वह दूसरे जन्ममें सप्तद्वीपवती वसुमतीका राजा होता है। जो व्यक्ति मिट्टीका सर्वदेवमय व्योम बनाकर भगवान् सूर्यका पूजन-अर्चन करता है, वह तीनों लोकोंमें पूजित एवं इस लोकमें धन-

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

धान्यसे परिपूर्ण होकर अन्तमें सूर्यलोकको प्राप्त कर लेता है।

जो व्यक्ति भगवान् सूर्यके पिष्टमय व्योमकी रचना कर गन्ध, धूप, पुष्प, माला, चन्दन, फल आदि उपचारोंसे पूजा करता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो जाता है और कोई क्लेश नहीं पाता। वह भगवान् सूर्यके समान प्रतापपूर्ण हो अव्यय पदको प्राप्त करता है। अपनी शक्तिके अनुसार भक्तिपूर्वक भगवान् सूर्यका मन्दिर निर्माण करानेवाला स्वर्णमय विमानपर आरूढ होकर भगवान् सूर्यके साथ विहार करता है। यदि साधन-सम्पन्न होनेपर भी श्रद्धा-भक्तिसे शून्य होकर मन्दिर आदिका निर्माण करता है तो उसे कोई फल नहीं होता। इसलिये अपने धनका तीन भाग करना चाहिये, उसमेंसे दो भाग धर्म तथा अर्थोपार्जनमें व्यय करे और एक भागसे जीवन-यापन करे। धन-सम्पत्तिसे सम्पन्न रहनेपर भी यदि कोई बिना भक्तिके अपना सर्वस्व भगवान् सूर्यके लिये अर्पण कर दे, तब भी वह धर्मका भागी नहीं होता, क्योंकि इसमें भक्तिकी ही प्रधानता है*। मानव संसारमें दुःख और शोकसे व्याकुल होकर तबतक भटकता है, जबतक भगवान् सूर्यकी पूजा नहीं करता। संसारमें आसक्त प्राणियोंको भगवान् सूर्यके अतिरिक्त और कौन ऐसा देवता है जो बन्धनसे छुटकारा दिला सके। (अध्याय १६१-१६२)

विभिन्न पुष्पोंद्वारा सूर्य-पूजनका फल

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! अमित तेजस्वी भगवान् सूर्यको स्नान कराते समय 'जय' आदि माङ्गलिक शब्दोंका उच्चारण करना चाहिये तथा शङ्ख, भेरी आदिके द्वारा मङ्गल-ध्वनि करनी चाहिये। तीनों संध्याओंमें वैदिक ध्वनियोंसे श्रेष्ठ फल होता है। शङ्ख आदि माङ्गलिक वाद्योंके सहारे नीराजन करना चाहिये। जितने क्षणोंतक भक्त नीराजन करता है, उतने युग सहस्र वर्ष वह दिव्यलोकमें प्रतिष्ठित होता है। भगवान् सूर्यको कपिला गौके पञ्चगव्यसे और मन्त्रपूत कुशयुक्त जलसे स्नान करानेको ब्रह्मस्नान कहते हैं। वर्षमें एक बार भी ब्रह्मस्नान करानेवाला व्यक्ति सभी पापोंसे मुक्त होकर सूर्यलोकमें प्रतिष्ठित होता है।

जो पितरोंके उद्देश्यसे शीतल जलसे भगवान् सूर्यको स्नान कराता है, उसके पितर नरकोंसे मुक्त होकर स्वर्ग चले जाते हैं। मिट्टीके कलशकी अपेक्षा ताम्र-कलशसे स्नान कराना सौ गुना श्रेष्ठ होता है। इसी प्रकार चाँदी आदिके कलशद्वारा स्नान करानेसे और अधिक फल प्राप्त होता है। भगवान् सूर्यके दर्शनसे स्पर्श करना श्रेष्ठ है और स्पर्शसे पूजा श्रेष्ठ है तथा घृतस्नान कराना उससे भी श्रेष्ठ है। इस लोक और परलोकमें प्राप्त होनेवाले पापोंके फल भगवान् सूर्यको घृतस्नान करानेसे नष्ट हो जाते हैं एवं पुराण-श्रवणसे सात जन्मोंके पाप दूर हो जाते हैं।

एक सौ पल (लगभग छः किलो बीस ग्राम) प्रमाणसे (जल, पञ्चामृत आदिसे) स्नान कराना 'स्नान' कहलाता है। पचीस पल (लगभग डेढ़ किलो)-से स्नान कराना 'अभ्यङ्ग-स्नान' कहलाता है और दो हजार पल (लगभग एक सौ चौबीस किलो)-से स्नान करानेको 'महास्नान' कहते हैं।

जो मानव भगवान् सूर्यको पुष्प-फलसे युक्त अर्घ्य प्रदान करता है, वह सभी लोकोंमें पूजित होता है और स्वर्गलोकमें आनन्दित होता है। जो

* सर्वस्वमपि यो दद्यादर्के भक्तिविवर्जितः। न तेन धर्मभागी स्याद्भक्तिरेवात्र कारणम्॥ (ब्राह्मपर्व १६२। २९)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

अष्टाङ्ग अर्घ—जल, दूध, कुशका अग्रभाग, घी, दही, मधु, लाल कनेरका फूल तथा लाल चन्दन—बनाकर भगवान् सूर्यको निवेदित करता है, वह दस हजार वर्षतक सूर्यलोकमें विहार करता है। यह अष्टाङ्ग अर्घ भगवान् सूर्यको अत्यन्त प्रिय है*।

बाँसके पात्रसे अर्घ-दान करनेसे सौ गुना फल मिट्टीके पात्रसे होता है, मिट्टीके पात्रसे सौ गुना फल ताम्रके पात्रसे होता है और पलाश एवं कमलके पत्तोंसे अर्घ देनेपर ताम्रपात्रका फल प्राप्त होता है। रजतपात्रके द्वारा अर्घ प्रदान करना लाख गुना फल देता है। सुवर्णपात्रके द्वारा दिया गया अर्घ कोटि गुना फल देनेवाला होता है। इसी प्रकार स्नान, अर्घ, नैवेद्य, धूप आदिका क्रमशः विभिन्न पात्रोंकी विशेषतासे उत्तरोत्तर श्रेष्ठ फल प्राप्त होता है।

धनिक या दरिद्र दोनोंको समान ही फल मिलता है, किंतु जो भगवान् सूर्यके प्रति भक्ति-भावनासे सम्पन्न रहता है, उसे अधिक फल मिलता है। वैभव रहनेपर भी मोहवश जो पूर्व विधि-विधानके साथ पूजन आदि नहीं करता, वह लोभसे आक्रान्त-चित्त होनेके कारण उसका फल नहीं प्राप्त कर पाता। इसलिये मन्त्र, फल, जल तथा चन्दन आदिसे विधिपूर्वक सूर्यकी पूजा करनी चाहिये। इससे वह अनन्त फलको प्राप्त करता है। इस अनन्त फल-प्राप्तिमें भक्ति ही मुख्य हेतु है। भक्तिपूर्वक पूजा करनेसे वह सौ दिव्य कोटि वर्ष सूर्यलोकमें प्रतिष्ठित होता है।

राजन्! सूर्यको भक्तिपूर्वक तालपत्रका पंखा समर्पित करनेवाला दस हजार वर्षतक सूर्यलोकमें निवास करता है। मयूर-पंखका सुन्दर पंखा सूर्यको समर्पित करनेवाला सौ कोटि वर्षोंतक सूर्यलोकमें निवास करता है।

नरश्रेष्ठ! हजारों पुष्पोंसे कनेरका पुष्प श्रेष्ठ है, हजारों बिल्वपत्रोंसे एक कमल-पुष्प श्रेष्ठ है। हजारों कमल-पुष्पोंसे एक अगस्त्य-पुष्प श्रेष्ठ है, हजारों अगस्त्य-पुष्पोंसे एक मोंगरा-पुष्प श्रेष्ठ है, सहस्र कुशाओंसे शमीपत्र श्रेष्ठ है तथा हजार शमी-पत्रोंसे नीलकमल श्रेष्ठ है। सभी पुष्पोंमें नीलकमल ही श्रेष्ठ है। लाल कनेरके द्वारा जो भगवान् सूर्यकी पूजा करता है, वह अनन्त कल्पोंतक सूर्यलोकमें सूर्यके समान श्रीमान् तथा पराक्रमी होकर निवास करता है। चमेली, गुलाब, विजय, श्वेत मदार तथा अन्य श्वेत पुष्प भी श्रेष्ठ माने गये हैं। नाग-चम्पक, सदाबहार-पुष्प, मुद्गर (मोंगरा) ये सब समान ही माने गये हैं। गन्धयुक्त किंतु अपवित्र पुष्पोंको देवताओंपर नहीं चढ़ाना चाहिये। गन्धहीन होते हुए भी पवित्र कुशादिकोंको ग्रहण करना चाहिये। पवित्र पुष्प सात्त्विक पुष्प हैं और अपवित्र पुष्प तामसी हैं। रात्रिमें मोंगरा और कदम्बका पुष्प चढ़ाना चाहिये। अन्य सभी पुष्पोंको दिनमें ही समर्पित करना चाहिये। अधखिले पुष्प तथा अपक्व पदार्थ भगवान् सूर्यको नहीं चढ़ाने चाहिये। फलोंके न मिलनेपर पुष्प, पुष्प न मिलनेपर पत्र और इनके अभावमें तृण, गुल्म और औषध भी समर्पित किये जा सकते हैं। इन सबके अभावमें मात्र भक्तिपूर्वक पूजन-आराधनसे भगवान् प्रसन्न हो जाते हैं। जो माघ मासके कृष्णपक्षमें सुगन्धित मुक्ता-पुष्पोंद्वारा सूर्यकी पूजा करता है, उसे अनन्त फल प्राप्त होता है। संयतचित्त होकर करवीर-पुष्पोंसे पूजा करनेवाला सभी पापोंसे रहित हो सूर्यलोकमें प्रतिष्ठित होता है।

* आपः क्षीरं कुशाग्राणि घृत दधि तथा मधु। रक्तानि करवीराणि तथा रक्तं च चन्दनम्॥
अष्टाङ्ग एष अर्घो वै ब्रह्मणा परिकीर्तितः। सततं प्रीतिजननो भास्करस्य नराधिप॥
(ब्राह्मपर्व १६३। ३७-३८)

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

अगस्त्यके पुष्पोंसे जो एक बार भी भक्तिपूर्वक सूर्यकी पूजा करता है, वह दस लाख गोदानका फल प्राप्त करता है और उसे स्वर्ग प्राप्त होता है।

मालती, रक्त कमल, चमेली, पुंनाग, चम्पक, अशोक, श्वेत मन्दार, कचनार, अंधुक, करवीर, कल्हार, शमी, तगर, कनेर, केसर, अगस्त्य, बक तथा कमल-पुष्पोंद्वारा यथाशक्ति भगवान् सूर्यकी पूजा करनेवाला कोटि सूर्यके समान देदीप्यमान विमानसे सूर्यलोकको प्राप्त करता है अथवा पृथ्वी या जलमें उत्पन्न पुष्पोंद्वारा श्रद्धापूर्वक पूजन करनेवाला सूर्यलोकमें प्रतिष्ठित होता है।

(अध्याय १६३)

सूर्यषष्ठी-व्रतकी महिमा

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! अब आप भगवान् सूर्यको अत्यन्त प्रिय सूर्यषष्ठी-व्रतके विषयमें सुनें। सूर्यषष्ठी-व्रत करनेवालेको जितेन्द्रिय एवं क्रोधरहित होकर अयाचित-व्रतका पालन करते हुए भगवान् सूर्यकी पूजामें तत्पर रहना चाहिये। व्रतीको अल्प और सात्त्विक-भोजी तथा रात्रिभोजी होना चाहिये। स्नान एवं अग्निकार्य करते रहने चाहिये और अधःशायी होना चाहिये। मध्याह्नमें देवताओंद्वारा, पूर्वाह्णमें ऋषियोंद्वारा, अपराह्णमें पितरोंद्वारा और संध्यामें गुह्यकोंद्वारा भोजन किया जाता है। अतः इन सभी कालोंका अतिक्रमण कर सूर्यव्रतीके भोजनका समय रात्रि ही माना गया है। मार्गशीर्ष मासके कृष्ण पक्षकी षष्ठीसे यह व्रत आरम्भ करना चाहिये। इस दिन भगवान् सूर्यकी 'अंशुमान्' नामसे पूजा करनी चाहिये तथा रात्रिमें गोमूत्रका प्राशन कर निराहार हो विश्राम करना चाहिये। ऐसा करनेवाला व्यक्ति अतिरात्र-यज्ञका फल प्राप्त करता है। इसी प्रकार पौषमें भगवान् सूर्यकी 'सहस्रांशु' नामसे पूजा करे तथा घृतका प्राशन करे, इससे वाजपेययज्ञका फल प्राप्त होता है। माघ मासमें कृष्ण पक्षकी षष्ठीको रात्रिमें गोदुग्ध-पान करे। सूर्यकी पूजा 'दिवाकर' नामसे करे, इससे महान् फल प्राप्त होता है। फाल्गुन मासमें 'मार्तण्ड' नामसे पूजाकर, गोदुग्धका पान करनेसे अनन्त कालतक सूर्यलोकमें प्रतिष्ठित होता है। चैत्र मासमें भास्करकी 'विवस्वान्' नामसे भक्तिपूर्वक पूजाकर हविष्य-भोजन करनेवाला सूर्यलोकमें अप्सराओंके साथ आनन्द प्राप्त करता है। वैशाख मासमें 'चण्डकिरण' नामसे सूर्यकी पूजा करनेसे दस हजार वर्षोंतक सूर्यलोकमें आनन्द प्राप्त करता है। इसमें पयोव्रती होकर रहना चाहिये। ज्येष्ठ मासमें भगवान् भास्करकी 'दिवस्पति' नामसे पूजा कर गो-शृङ्गका जल-पान करना चाहिये। ऐसा करनेसे कोटि गोदानका फल प्राप्त होता है। आषाढ़ मासके कृष्ण पक्षकी षष्ठीको 'अर्क' नामसे सूर्यकी पूजा कर, गोमयका प्राशन करनेसे सूर्यलोककी प्राप्ति होती है। श्रावण मासमें 'अर्यमा' नामसे सूर्यका पूजन कर दुग्ध-पान करे, ऐसा करनेवाला सूर्यलोकमें दस हजार वर्षोंतक आनन्दपूर्वक रहता है। भाद्रपद मासमें 'भास्कर' नामसे सूर्यकी पूजा कर पञ्चगव्य-प्राशन करे, इससे सभी यज्ञोंका फल प्राप्त होता है। आश्विन मासके कृष्ण पक्षकी षष्ठीमें 'भग' नामसे सूर्यकी पूजा करे, इसमें एक पल गोमूत्रका प्राशन करनेसे अश्वमेध-यज्ञका फल प्राप्त होता है। कार्तिक मासके कृष्ण पक्षकी षष्ठीको 'शक्र' नामसे सूर्यकी पूजाकर दूर्वाङ्कुरका एक बार भोजन करनेसे राजसूय-यज्ञका फल प्राप्त होता है।

वर्षके अन्तमें सूर्य-भक्तिपरायण ब्राह्मणोंको मधुसंयुक्त पायसका भोजन कराये तथा यथाशक्ति स्वर्ण और वस्त्रादि समर्पित करे। भगवान् सूर्यके

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

लिये काले रंगकी दूध देनेवाली गाय देनी चाहिये। जो इस व्रतका एक वर्षतक निरन्तर विधिपूर्वक सम्पादन करता है, वह सभी पापोंसे विनिर्मुक्त हो जाता है एवं सभी कामनाओंसे पूर्ण होकर शाश्वत कालतक सूर्यलोकमें आनन्दित रहता है।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! इस कृष्ण-षष्ठी-व्रतको भगवान् सूर्यने अरुणसे कहा था। यह व्रत सभी पापोंका नाश करनेवाला है। भक्तिपूर्वक भगवान् भास्करकी पूजा करनेवाला मनुष्य अमित तेजस्वी भगवान् भास्करके अमित स्थानको प्राप्त करता है।

(अध्याय १६४)

उभयसप्तमी-व्रतका वर्णन

सुमन्तु मुनिने कहा—राजन्! अब मैं आपको धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इस चतुर्वर्गकी प्राप्ति करानेवाले भगवान् सूर्यके उत्तम व्रतको बतलाता हूँ। पौष मासके उभयपक्षकी सप्तमियोंको जो शालि (धान) गेहूँके आटेसे बने पक्वान्न तथा दूधका रात्रिमें भोजन करता है और जितेन्द्रिय रहता है, सत्य बोलता है तथा दिनभर उपवास करता है, तीनों संध्याओंमें भगवान् सूर्य तथा अग्निकी उपासना करता है, सभी भोग-पदार्थोंका परित्याग कर भूमिपर शयन करता है, मास बीतनेपर सप्तमीको घृतादिके द्वारा भगवान् सूर्यको स्नान कराता है तथा उनकी पूजा करता है, नैवेद्यमें मोदक, पका दूध तथा पक्वान्न निवेदित करता है, आठ ब्राह्मणोंको भोजन कराता है और भगवान्को कपिला गाय निवेदित करता है, वह कोटि सूर्योंके समान देदीप्यमान उत्तम विमानमें आरूढ होकर भगवान् अंशुमालीके परम स्थानको प्राप्त करता है। कपिला गौके तथा उसकी संततियोंके शरीरमें जितने रोम हैं, उतने हजार युग वर्षोंतक वह सूर्यलोकमें प्रतिष्ठा प्राप्त करता है। अपने इक्कीस कुलोंके साथ वह यथेच्छ भोगोंका उपभोग कर अन्तमें ज्ञानयोगका समाश्रयण कर मुक्त हो जाता है।

राजन्! इस प्रकार मैंने आपको इस संसार-समुद्रसे पार उतारनेवाले सौरधर्ममें मोक्ष-क्रमके उपाय बतलाये। यह विद्वानोंके लिये समाश्रयणीय है।

इसी प्रकार अन्य महीनोंमें (माघसे मार्गशीर्षतक) निर्दिष्ट नियमोंका पालन करते हुए व्रत और भगवान् सूर्यकी पूजा करनेसे विभिन्न कामनाओंकी पूर्ति होती है तथा सूर्यलोककी प्राप्ति होती है।

कुरुनन्दन! अहिंसा, सत्य-वचन, अस्तेय, शान्ति, क्षमा, ऋजुता, तीनों कालोंमें स्नान तथा हवन, पृथ्वी-शयन, रात्रिभोजन—इनका पालन सभी व्रतोंमें करना चाहिये। इन गुणोंका आश्रयणकर उत्तम व्रतका आचरण करनेवाले व्यक्तिके सभी पाप और भय नष्ट हो जाते हैं एवं रोगोंका नाश हो जाता है और सभी कामनाओंके अनुरूप फलकी प्राप्ति होती है। इस प्रकारका सूर्यव्रती व्यक्ति अमित तेजस्वी होकर सूर्यलोकको प्राप्त कर लेता है।

(अध्याय १६५)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

निक्षुभार्क-सप्तमी तथा निक्षुभार्क-चतुष्टय-व्रत-माहात्म्य-वर्णन

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! जो स्त्री उत्तम पुत्रकी आकाङ्क्षा रखती है, उसे निक्षुभार्क नामका व्रत करना चाहिये। यह व्रत स्त्री एवं पुरुषमें परस्पर प्रीतिवर्धक, अवियोगकारक और धर्म, अर्थ तथा कामका साधक है। इस व्रतको षष्ठी, सप्तमी, संक्रान्ति या रविवारके दिन करना चाहिये। भगवान् सूर्यके सहित उनकी पत्नी महादेवी निक्षुभाकी द्यौ-रूपमें कांस्य, रजत तथा सुवर्णकी सुन्दर प्रतिमा बनवाये। उसे घृतादिसे स्नान कराकर गन्ध-माल्यादि तथा वस्त्रोंसे अलंकृत करे। अनन्तर प्रतिमा स्थापित किये उस वितान और छत्रसे शोभित पात्रको सिरपर रखकर भगवान् सूर्यके मन्दिरमें ले जाय। उस प्रतिमाको एक वेदीपर स्थापित करे और प्रदक्षिणापूर्वक उसे नमस्कार कर क्षमा-याचना करे एवं उपवास रहकर हविके द्वारा हवन करे। फिर सूर्य-भक्त ब्राह्मणोंको शुक्ल वस्त्र पहनाकर भोजन कराये। इस व्रतको करनेवाला व्यक्ति देदीप्यमान महायानसे सूर्यलोकमें सूर्यभक्तोंके साथ आनन्द प्राप्त करता है, फिर वह अनन्त वर्षोंतक विष्णुलोकमें आनन्दमय जीवन व्यतीत करता है।

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! जो स्त्री सौभाग्यकी आकाङ्क्षासे संयतेन्द्रिय होकर षष्ठी अथवा सप्तमीको एक वर्षतक भोजन नहीं करती और वर्षके अन्तमें निक्षुभा तथा सूर्यकी प्रतिमा बनाकर विधिपूर्वक स्नानादि पूर्वोक्त क्रियाएँ करती है, वह पूर्वोक्त फलोंको प्राप्त करती है तथा चारों द्वारोंसे सुशोभित स्वर्णमय यानके द्वारा रमणीय सूर्यलोकमें जाकर सभी फलोंको प्राप्तकर सौर आदि सभी लोकोंमें अभीप्सित फलका उपभोग कर इस लोकमें जन्म ग्रहण करती है तथा राजाको पतिरूपमें प्राप्त करती है।

इसी प्रकार जो नारी कृष्ण पक्षकी सप्तमीको उपवास कर वर्षके अन्तमें शालिके चूर्णसे सुन्दर निक्षुभार्ककी प्रतिमाका निर्माण करके पीत रंगकी मालासे और पीत वस्त्रोंसे उनकी पूजा करती है तथा ये सभी कर्म सूर्यको निवेदित करती है, वह हाथी-दाँतके समान कान्तिवाले महायानसे सातों लोकोंमें गमनकर, सौ करोड़ वर्षतक सूर्यलोकमें प्रतिष्ठित होती है। नरश्रेष्ठ! सौर आदि लोकोंमें भोगोंका उपभोगकर क्रमशः इस लोकमें जन्म ग्रहण करती तथा अभीप्सित धन-धान्य-समन्वित मनोऽनुकूल पतिको प्राप्त करती है*।

जो दृढवती नारी माघ मासके कृष्ण पक्षकी सप्तमीको सभी भोगोंका परित्याग कर एक वर्षतक प्रत्येक सप्तमीको उपवास करती और वर्षके अन्तमें गन्धादि पदार्थ निक्षुभार्कको निवेदित करती है तथा मगकी स्त्रियोंको भोजन कराती है, वह गन्धर्वसे सुशोभित विचित्र दिव्य महायानद्वारा सूर्यलोकमें जाकर अनेक सहस्र वर्षोंतक निवास करती है। वहाँ यथेष्ट सभी भोगोंका उपभोग कर इस लोकमें आनेपर राजाको पतिरूपमें वरण करती है।

राजन्! जो स्त्री पाप और भयका नाश करनेवाले इस निक्षुभार्क-व्रतको करती है, वह परमपदको प्राप्त करती है। एक वर्षतक परम श्रद्धाके साथ

* चतुर्वर्गचिन्तामणि (हेमाद्रि)-के व्रत-खण्डमें भविष्यपुराणके नामसे निक्षुभार्क-चतुष्टय नामक इस व्रतका संग्रह हुआ है। उपलब्ध भविष्यपुराणमें पाठका कुछ अंश कम है, जिसे हेमाद्रिके आधारपर यहाँ दिया जा रहा है—

जो नारी एक वर्षतक संयतेन्द्रिय होकर सप्तमीको निराहार व्रत रखती है और जिसकी कणिकाएँ सुवर्णकी हों ऐसे चाँदीके कमलको, पिष्टमय गजका निर्माणकर उसकी पीठपर स्थापित कर वर्षान्तमें उसका दान करती है, उसके सभी पाप नष्ट हो जाते हैं। शेष पूजन पूर्वोक्त विधिसे ही करना चाहिये। इससे वह पुरुषरूपसे सभी सौरादि लोकोंमें भ्रमण करते हुए पृथ्वीलोकमें आकर कुलीन तथा रूपसम्पन्न महाबली राजाको पतिरूपमें प्राप्त करती है।

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

इस व्रतको सम्पन्न कर वर्षान्तमें भोजक-दम्पतिको भोजन कराये और गन्ध-माल्य, सुन्दर वस्त्र आदिसे उनकी पूजा करे। ताम्रमय पात्रमें हीरेसे अलंकृत निक्षुभार्ककी सुवर्णमयी प्रतिमा भोजक-दम्पतिको निवेदित करे। देवी निक्षुभा भोजकी हैं और अर्क भोजक हैं। अतः उन दोनोंकी विधिवत् श्रद्धापूर्वक पूजा करनी चाहिये।

(अध्याय १६६-१६७)

कामप्रद स्त्री-व्रतका वर्णन

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! जो स्त्री कार्तिक मासके दोनों पक्षोंकी षष्ठी एवं सप्तमी तिथियोंमें क्षमा, अहिंसा आदि नियमोंका पालन कर, संयतेन्द्रिय होती हुई एकभुक्त रहती एवं उपवास करती है और गुड़-घीसे युक्त शालि-अन्न श्रद्धाके साथ भगवान् सूर्यको अर्पित करती है तथा करवीरके पुष्प और घृतके साथ गुग्गुल निवेदित करती है, वह स्त्री इन्द्रनीलके समान सार्वकालिक विमानपर बैठकर दस लाख वर्षोंतक सूर्यलोकमें आनन्दमय जीवन व्यतीत करती है। सभी लोकोंके भोगोंको भोगकर क्रमशः इस लोकमें आकर जन्म ग्रहण करती तथा अभीप्सित पतिको प्राप्त करती है। इस प्रकार वर्षभरके सभी व्रतोंकी विधि समान कही गयी है। एक समय भोजन और उपवासका समान ही फल होता है। क्षमा, सत्य, दया, दान, शौच, इन्द्रियनिग्रह, सूर्यपूजा, अग्निहवन, संतोष तथा अचौर्यव्रत—ये दस सभी व्रतोंके लिये सामान्य (आवश्यक) धर्म (अङ्ग) हैं।

इसी तरह मार्गशीर्ष आदि मासोंमें निर्दिष्ट नियमोंका पालन करते हुए सूर्यकी पूजा करनेसे अभ्युदयकी प्राप्ति होती है, साथ ही सहस्रों वर्षोंतक सूर्यलोकका सुख भोगकर वह नारी अन्तमें राजपत्नी बनती है।

जो कोई भी पुरुष या स्त्री अथवा नपुंसक भक्तिपूर्वक भगवान् सूर्यकी उपासना करते हैं वे सभी अपने मनोऽनुकूल फल प्राप्त करते हैं।

(अध्याय १६८)

भगवान् सूर्यके निमित्त गृह एवं रथ आदिके दानका माहात्म्य

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! अपने वित्तके अनुसार मिट्टी, लकड़ी, पत्थर तथा पके हुए ईंटोंसे जो मठ या गृहका निर्माण कर उसे सभी उपकरणोंसे युक्त करके भगवान् सूर्यके लिये समर्पित करता है, वह सभी कामनाओंको प्राप्त कर लेता है। माघ मासमें तन्द्रारहित होकर एक-भुक्तव्रत करे और मासके अन्तमें एक रथका निर्माण करे जो विचित्र वस्त्रसे सुशोभित, चार श्वेत अश्वोंसे अलंकृत, श्वेत ध्वज, पताका एवं छत्र, चामर, दर्पणसे युक्त हो। उस रथपर ढाई सेर चावलके चूर्णसे सूर्यकी प्रतिमाका निर्माण कर उसे संज्ञा देवीके साथ रथके पिछले भागमें (जहाँ रथी बैठता है) स्थापित कर शङ्ख, भेरी आदि ध्वनियोंके साथ रात्रिमें राजमार्गमें उस रथको घुमाकर क्रमशः धीरे-धीरे सूर्य-मन्दिरमें ले जाय। वहाँ जागरण एवं पूजा करे तथा दीपक एवं दर्पण आदिसे अलंकृत कर रात्रि व्यतीत करे। प्रातः मधु, क्षीर और घृतसे उस प्रतिमाको स्नान कराकर दीन, अन्ध एवं अनाथोंको अपनी शक्तिके अनुसार भोजन कराकर दक्षिणा दे और संवाहनसे युक्त रथ भगवान् भास्करको निवेदित करे तथा अपने बन्धुओंके साथ भोजन करे।

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

मन्त्र और धर्मसे समन्वित अपने सभी व्रतोंमें श्रेष्ठ यह सूर्यरथ-व्रत समस्त कामनाओं तथा अर्थकी सिद्धि करनेवाला है। सभी व्रतोंके पुण्य और सभी यज्ञोंके फल इसी व्रतके करनेसे प्राप्त हो जाते हैं। जो भगवान् सूर्यके निमित्त एक सवत्सा गौ दान करता है, वह सप्तद्वीपवती वसुन्धराके दानका फल प्राप्त करता है।

(अध्याय १६९-१७०)

सौर-धर्ममें सदाचरणका वर्णन

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! अब मैं सौरधर्मसे सम्बद्ध सदाचारोंका संक्षेपमें वर्णन करता हूँ। सूर्य-उपासकको भूखे-प्यासे, दीन-दुःखी, थके हुए, मलिन तथा रोगी व्यक्तिका अपनी शक्तिके अनुसार पालन और रक्षण करना चाहिये, इससे सम्पूर्ण कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं। पतित, नीच तथा चाण्डाल और पक्षी आदि सभी प्राणियोंको अपनी शक्तिके अनुसार दी गयी थोड़ी भी वस्तु करुणाके कारण दिये जानेसे अक्षय-फल प्रदान करती है, अतः सभी प्राणियोंपर दया करनी चाहिये। जो मधुर वाणी बोलता है, उसे इस लोक तथा परलोकमें सभी सुख प्राप्त होते हैं। अमृत प्रवाहित करनेवाली प्रिय वाणी चन्दनके स्पर्शके समान शीतल होती है। धर्मसे युक्त वाणी बोलनेवालेको अक्षय सुखकी प्राप्ति होती है[१]। प्रिय वाणी स्वर्गका अचल सोपान है, इसकी तुलनामें दान, पूजन, अध्यापन आदि सब व्यर्थ हैं। अतिथिके आनेपर सादर उससे कुशल-प्रश्न करना चाहिये और यात्राके समय 'आपका मार्ग मङ्गलमय हो, आपको सभी कार्यके साधक सुख नित्य प्राप्त हों'—ऐसा कहना चाहिये। सभी समय ऐसे आशीर्वादात्मक वचन बोलने चाहिये। नमस्कारात्मक वाक्यमें 'स्वस्ति', मङ्गल-वचन तथा सभी कर्मोंमें 'आपका नित्य कल्याण हो', ऐसा कहना चाहिये। इस प्रकारके आचरणोंका अनुष्ठान करके व्यक्ति सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त होकर सूर्यलोकमें प्रतिष्ठित होता है। मनुष्योंको जैसी भक्ति भगवान् सूर्यमें हो वैसी ही भक्ति सूर्यभक्तोंके प्रति भी रखनी चाहिये। किसीके द्वारा आक्रोश करने या ताडित होनेपर जो न आक्रोश करता है, न ताड़न करता है, वाणीमें अधिकार होनेके कारण ऐसा क्षमाशील एवं शान्त व्यक्ति सदा दुःखसे रहित होता है। सभी तीर्थोंमें क्षमा सबसे श्रेष्ठ है, इसलिये सभी क्रियाओंमें क्षमा धारण करना चाहिये। ज्ञान, योग, तप एवं यज्ञ-दानादि सत्क्रियाएँ क्रोधी व्यक्तिके लिये व्यर्थ हो जाती हैं, इसलिये क्रोधका परित्याग कर देना चाहिये[२]। अप्रिय वाणी मर्म, अस्थि, प्राण तथा हृदयको जलानेवाली होती है, इसलिये अप्रिय वाणीका कभी प्रयोग नहीं करना चाहिये। क्षमा, दान, तेजस्विता, सत्य, शम, अहिंसा—ये सब भगवान् सूर्यकी कृपासे ही प्राप्त होते हैं।

सुमन्तु मुनि पुनः बोले—महाराज! अब आप आदित्यसम्मत सौर-धर्मको पुनः सुनें। यह सौर-धर्म पापनाशक, भगवान् सूर्यको प्रिय तथा परम पवित्र है। यदि मार्गमें कहीं रविकी पूजा-अर्चा

१-न हीदृक् स्वर्गयानाय यथा लोके प्रियं वचः। इहामुत्र सुखं तेषां वाग्येषां मधुरा भवेत्॥
अमृतस्यन्दिनीं वाचं चन्दनस्पर्शशीतलाम्। धर्माविरोधिनीमुक्त्वा सुखमक्षय्यमाप्नुयात्॥ (ब्राह्मपर्व १७१। ३८-३९)

२-सर्वेषामेव तीर्थानां क्षान्तिः परमपूजिता। तस्मात्पूर्वं प्रयत्नेन क्षान्तिः कार्या क्रियासु वै॥
ज्ञानयोगतपो यस्य यज्ञदानानि सत्क्रिया। क्रोधनस्य वृथा यस्मात् तस्मात् क्रोधं विवर्जयेत्॥ (ब्राह्मपर्व १७१। ४७-४८)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

होती देखे तो यह समझना चाहिये कि वहाँ भगवान् सूर्यदेव स्वयं प्रत्यक्ष उपस्थित हैं। भगवान् सूर्यका मन्दिर देखकर वहाँ भगवान् सूर्यको नमस्कार करके ही वहाँसे आगे जाना चाहिये। देव-पर्व, उत्सव, श्राद्ध तथा पुण्य दिनोंमें विधिपूर्वक भगवान् सूर्यकी पूजा करनी चाहिये। देवगण तथा पितृगण सूर्यका आश्रयण करके ही स्थित हैं। भगवान् सूर्यके प्रसन्न होनेपर निःसंदेह सभी प्रसन्न हो जाते हैं। सौर-धर्मके अनुष्ठानसे ज्ञान प्राप्त होता है तथा उससे वैराग्य। ज्ञान और वैराग्यसे सम्पन्न व्यक्तिकी सूर्ययोगमें प्रवृत्ति होती है। सूर्यके योगसे वह सर्वज्ञ एवं परिपूर्ण हो जाता है तथा अपनी आत्मामें अवस्थित होकर सूर्यके समान स्वर्गमें आनन्द-लाभ करता है।

ब्रह्मचर्य, तप, मौन, क्षमा तथा अल्पाहार—ये तपस्वियोंके पाँच विशिष्ट गुण हैं। भाग्य या अन्य विशिष्ट मार्गसे तथा न्यायपूर्वक प्राप्त धन गुणवान् व्यक्तिको देना ही दान है। हजारों सस्य-राशियोंको उत्पन्न करनेवाली जल-युक्त उर्वरा भूमिका दान भूमिदान कहा जाता है। सभी दोषोंसे रहित, कुलीन अलंकृता कन्या निर्धन विद्वान् द्विजको देना कन्यादान कहा जाता है। मध्यम या उत्तम नवीन वस्त्रका दान वस्त्रदान कहा जाता है। एक मासमें दो सौ चालीस ग्रासोंका[१] भक्षण करना चान्द्रायण[२]-व्रत कहलाता है। सभी शास्त्रोंके ज्ञाता तथा तपस्यापरायण जितेन्द्रिय ऋषियों एवं देवोंसे सेवित जल-स्थान तीर्थ कहा जाता है। सूर्यसम्बन्धी स्थानोंको पुण्य-क्षेत्र कहा जाता है। उन सूर्यसम्बन्धी क्षेत्रोंमें मरनेवाला व्यक्ति सूर्य-सायुज्यको प्राप्त करता है। तीर्थोंमें दान-देनेसे, उद्यान लगाने एवं देवालय, धर्मशाला आदि बनवानेसे अक्षय फल प्राप्त होता है। क्षमा एवं निःस्पृहता, दया, सत्य, दान, शील, तप तथा अध्ययन—इन आठ अङ्गोंसे युक्त व्यक्ति श्रेष्ठ पात्र कहा जाता है। भगवान् सूर्यमें भक्ति, क्षमा, सत्य, दसों इन्द्रियोंका विनिग्रह तथा सभीके प्रति मैत्रीभाव रखना सौर-धर्म है।

जो भक्तिपूर्वक भविष्यपुराण लिखवाता है, वह सौ कोटि युग वर्षोंतक सूर्यलोकमें प्रतिष्ठित होता है। जो सूर्यमन्दिरका निर्माण करवाता है, उसे उत्तम स्थानकी प्राप्ति होती है।

(अध्याय १७१-१७२)

सौर-धर्मकी महिमाका वर्णन, ब्रह्माकृत सूर्य-स्तुति

राजा शतानीकने कहा—ब्राह्मणश्रेष्ठ! आप सौर-धर्मका पुनः विस्तारसे वर्णन कीजिये।

सुमन्तु मुनि बोले—महाबाहो! तुम धन्य हो, इस लोकमें सौर-धर्मका प्रेमी तुम्हारे समान अन्य कोई भी राजा नहीं है। इस सम्बन्धमें मैं आपको प्राचीन कालमें गरुड एवं अरुणके बीच हुए संवादको पुनः प्रस्तुत कर रहा हूँ। आप इसे ध्यानपूर्वक सुनें।

अरुणने कहा—खगश्रेष्ठ! यह सौर-धर्म अज्ञान-सागरमें निमग्न समस्त प्राणियोंका उद्धार करनेवाला

१-शुक्ल पक्षमें प्रतिदिन एक-एक ग्रासकी वृद्धि तथा कृष्ण पक्षमें एक-एक ग्रासकी न्यूनताके नियमका पालन करनेसे दो सौ चालीस ग्रास एक मासमें होते हैं।

२-चान्द्रायणके मुख्य तीन भेद हैं—यव-मध्य, पिपीलिका-मध्य और शिशु-चान्द्रायण। यव-मध्यमें शुक्ल पक्षकी प्रतिपदासे आरम्भ कर पूर्णिमाको पंद्रह ग्राससे लेकर क्रमशः घटाते हुए अमावास्याको समाप्त कर दिया जाता है। पिपीलिकामें पूर्णिमाको प्रारम्भ कर कृष्ण पक्षमें क्रमशः एक-एक ग्रास घटाते हुए अमावास्याको उपवास कर फिर पूर्णिमाको पूरा किया जाता है और शिशु या सामान्य चान्द्रायणमें प्रतिदिन आठ ग्रास लिया जाता है। इस प्रकार तीस दिनोंमें दो सौ चालीस ग्रास हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

है। पक्षिराज! जो लोग भक्तिभावसे भगवान् सूर्यका स्मरण-कीर्तन और भजन करते हैं, वे परमपदको प्राप्त होते हैं। खगाधिप! जिसने इस लोकमें जन्म ग्रहणकर इन देवेश भगवान् भास्करकी उपासना नहीं की, वह संसारके क्लेशोंमें ही निमग्न रहता है। मनुष्य-जीवन परम दुर्लभ है, इसे प्राप्त कर जिसने भगवान् सूर्यका पूजन किया, उसीका जन्म लेना सफल है। जो श्रद्धा-भक्तिसे भगवान् सूर्यका स्मरण करता है, वह कभी किसी प्रकारके दुःखका भागी नहीं होता।

जिन्हें महान् भोगोंके सुख-प्राप्तिकी कामना है तथा जो राज्यासन पाना चाहते हैं अथवा स्वर्गीय सौभाग्य-प्राप्तिके इच्छुक हैं एवं जिन्हें अतुल कान्ति, भोग, त्याग, यश, श्री, सौन्दर्य, जगत्की ख्याति, कीर्ति और धर्म आदिकी अभिलाषा है, उन्हें सूर्यकी भक्ति करनी चाहिये।

जो परम श्रद्धा-भावसे भगवान् सूर्यकी आराधना करता है, वह सभी पापोंसे मुक्त हो जाता है। विविध आकारवाली डाकिनियाँ, पिशाच और राक्षस अथवा कोई भी उसे कुछ भी पीड़ा नहीं दे सकते। इसके अतिरिक्त कोई भी जीव उसे नहीं सता सकते। सूर्यकी उपासना करनेवाले मनुष्यके शत्रुगण नष्ट हो जाते हैं और उन्हें संग्राममें विजय प्राप्त होती है। वीर! वह नीरोग होता है। आपत्तियाँ उसका स्पर्शतक नहीं कर पातीं। सूर्योपासक मनुष्यकी धन, आयु, यश, विद्या और सभी प्रकारके कल्याण-मङ्गलकी अभिवृद्धि होती रहती है, उसके सभी मनोरथ पूर्ण हो जाते हैं।

ब्रह्माजीने भगवान् सूर्यकी आराधना कर ब्राह्म-पदकी प्राप्ति की थी। देवोंके ईश भगवान् विष्णुने विष्णुत्व-पदको सूर्यके अर्चनसे ही प्राप्त किया है। भगवान् शंकर भी भगवान् सूर्यकी आराधनासे ही जगन्नाथ कहे जाते हैं तथा उनके प्रसादसे ही उन्हें महादेवत्व-पद प्राप्त हुआ है एवं उनकी ही आराधनासे एक सहस्र नेत्रोंवाले इन्द्रने भी इन्द्रत्वको प्राप्त किया है। मातृवर्ग, देवगण, गन्धर्व, पिशाच, उरग, राक्षस और सभी सुरोंके नायक भगवान् सूर्यकी सदा पूजा किया करते हैं। यह समस्त जगत् भगवान् सूर्यमें ही नित्य प्रतिष्ठित है। जो मनुष्य अन्धकारनाशक भगवान् सूर्यकी पूजा नहीं करता, वह धर्म, अर्थ, काम और मोक्षका अधिकारी नहीं है। पक्षिश्रेष्ठ! आपत्तिग्रस्त होनेपर भी भगवान् सूर्यकी पूजा सदा करणीय है। जो मनुष्य भगवान् सूर्यकी पूजा नहीं करता, उसका जीवन व्यर्थ है। प्रत्येक व्यक्तिको देवाधिदेव भगवान् सूर्यकी पूजा-उपासना करके ही भोजन करना चाहिये। जो सूर्यभक्त हैं, वे समस्त द्वन्द्वोंके सहन करनेवाले, वीर, नीति-विधि-युक्तचित्त, परोपकारपरायण तथा गुरुकी सेवामें अनुरक्त रहते हैं। वे अमानी, बुद्धिमान्, असक्त, अस्पर्धावाले, निःस्पृह, शान्त, स्वात्मानन्द, भद्र और नित्य स्वागतवादी होते हैं। सूर्यभक्त अल्पभाषी, शूर, शास्त्रमर्मज्ञ, प्रसन्नमनस्क, शौचाचारसम्पन्न और दाक्षिण्ययुक्त होते हैं।

सूर्यके भक्त दम्भ, मत्सरता, तृष्णा एवं लोभसे वर्जित हुआ करते हैं। वे शठ और कुत्सित नहीं होते। जिस प्रकार कमलका पत्र जलसे निर्लिप्त रहता है, उसी प्रकार सूर्यभक्त मनुष्य विषयोंमें कभी लिप्त नहीं होते। जबतक इन्द्रियोंकी शक्ति क्षीण नहीं होती, तबतक भगवान् सूर्यकी आराधना सम्पन्न कर लेनी चाहिये; क्योंकि मानव असमर्थ होनेपर इसे नहीं कर सकता और यह मानव-जीवन यों ही व्यर्थ चला जाता है। भगवान् सूर्यकी पूजाके समान इस जगत्में अन्य कोई भी धर्मका कार्य नहीं है। अतः देवदेवेश भगवान् सूर्यका पूजन करे। जो मानव भक्तिपूर्वक शान्त, अज, प्रभु, देवदेवेश सूर्यकी पूजा किया करते हैं,

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

वे इस लोकमें सुख प्राप्त करके परम पदको प्राप्त हो जाते हैं। सर्वप्रथम ब्रह्माजीने अपने परम प्रहृष्ट अन्तरात्मासे भगवान् सूर्यकी पूजा कर अञ्जलि बाँधकर जो स्तोत्र* कहा था, उसका भाव इस प्रकार है—

'षडैश्वर्यसम्पन्न, शान्त-चित्तसे युक्त, देवोंके मार्ग-प्रणेता एवं सर्वश्रेष्ठ श्रीभगवान् सूर्यको मैं सदा प्रणाम करता हूँ। जो देवदेवेश शाश्वत, शोभन, शुद्ध, दिवस्पति, चित्रभानु, दिवाकर और ईशोंके भी ईश हैं, उनको मैं प्रणाम करता हूँ। समस्त दु:खोंके हर्ता, प्रसन्नवदन, उत्तमाङ्ग, वरके स्थान, वर-प्रदाता, वरद तथा वरेण्य भगवान् विभावसुको मैं प्रणाम करता हूँ। अर्क, अर्यमा, इन्द्र, विष्णु, ईश, दिवाकर, देवेश्वर, देवरत और विभावसु नामधारी भगवान् सूर्यको मैं प्रणाम करता हूँ।' इस स्तुतिका जो नित्य श्रवण करता है, वह परम कीर्तिको प्राप्तकर सूर्यलोकको प्राप्त करता है।

(अध्याय १७३-१७४)

सौर-धर्ममें शान्तिक कर्म एवं अभिषेक-विधि

गरुडजीने पूछा—अरुण! जो आधि-व्याधिसे पीड़ित एवं रोगी, दुष्ट ग्रह तथा शत्रु आदिसे उत्पीडित और विनायकसे गृहीत हैं, उन्हें अपने कल्याणके लिये क्या करना चाहिये? आप इसे बतलानेकी कृपा करें।

अरुणजी बोले—विविध रोगोंसे पीड़ित, शत्रुओंसे संतप्त व्यक्तियोंके लिये भगवान् सूर्यकी आराधनाके अतिरिक्त अन्य कोई भी कल्याणकारी उपाय नहीं है, अत: ग्रहोंके घात और उपघातके नाशक, सभी रोगों एवं राज-उपद्रवोंको शमन करनेवाले भगवान् सूर्यकी आराधना करनी चाहिये।

गरुडजीने पूछा—द्विजश्रेष्ठ! ब्रह्मवादिनीके शापसे मैं पंखविहीन हो गया हूँ, आप मेरे इन अङ्गोंको देखें। मेरे लिये अब कौन-सा कार्य उपयुक्त है? जिससे मैं पुन: पंखयुक्त हो जाऊँ।

अरुणजी बोले—गरुड! तुम शुद्ध-चित्तसे अन्धकारको दूर करनेवाले जगन्नाथ भगवान् भास्करकी पूजा एवं हवन करो।

गरुडजीने कहा—मैं विकलाङ्ग होनेसे भगवान् सूर्यकी पूजा एवं अग्निकार्य करनेमें असमर्थ हूँ। इसलिये मेरी शान्तिके लिये अग्निका कार्य आप सम्पादित करें।

अरुणजी बोले—विनतानन्दन! महाव्याधिसे प्रपीडित होनेके कारण तुम इसके सम्पादनमें समर्थ नहीं हो, अत: मैं तुम्हारे रोगकी शान्तिके लिये पावकार्चन (अग्निहोम) करूँगा। यह लक्ष-होम सभी पापों, विघ्नों तथा व्याधियोंका नाशक, महापुण्यजनक, शान्ति प्रदान करनेवाला, अपमृत्यु-निवारक, महान् शुभकारी तथा विजय प्रदान करनेवाला है। यह सभी देवोंको तृप्ति प्रदान करनेवाला तथा भगवान् सूर्यको अत्यन्त प्रिय है।

इस पावकार्चनमें सूर्य-मन्दिरके अग्निकोणमें गोमयसे भूमिको लीपकर अग्निकी स्थापना करे

* भगवन्तं भगकरं शान्तचित्तमनुत्तमम्। देवमार्गप्रणेतारं प्रणतोऽस्मि रविं सदा॥
शाश्वतं शोभनं शुद्धं चित्रभानुं दिवस्पतिम्। देवदेवेशमीशेशं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम्॥
सर्वदु:खहरं देवं सर्वदु:खहरं रविम्। वराननं वराङ्गं च वरस्थानं वरप्रदम्॥
वरेण्यं वरदं नित्यं प्रणतोऽस्मि विभावसुम्। अर्कमर्यमणं चेन्द्रं विष्णुमीशं दिवाकरम्॥
देवेश्वरं देवरतं प्रणतोऽस्मि विभावसुम्। य इदं शृणुयान्नित्यं ब्रह्मणोक्तं स्तवं परम्।
स हि कीर्तिं परां प्राप्य पुन: सूर्यपुरं व्रजेत्॥ (ब्राह्मपर्व १७४। ३६—४०)

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

और सर्वप्रथम दिक्पालोंको आहुति प्रदान करे[१]।

खगश्रेष्ठ! इस प्रकार विधिपूर्वक आहुतियाँ प्रदान करनेके अनन्तर '**ॐ भूर्भुवः स्वाहा**' इसके द्वारा लक्ष हवनका सम्पादन करे। सौर-महाहोममें यही विधि कही गयी है। भगवान् भास्करके उद्देश्यसे इस अग्निकार्यको करे। यह सभी लोकोंकी सभी प्रकारकी शान्तिके लिये उपयोगी है।

हवनके अनन्तर शान्तिके लिये निर्दिष्ट मन्त्रोंका पाठ करते हुए अभिषेक करना चाहिये। सर्वप्रथम ग्रहोंके अधिपति भगवान् सूर्य तथा सोमादि ग्रहोंसे शान्तिकी प्रार्थना करे[२]।

'रक्त कमलके समान नेत्रोंवाले, सहस्र

१- आरक्तदेहरूपाय रक्ताक्षाय महात्मने । धराधराय शान्ताय सहस्राक्षशिराय च॥
'अधोमुखाय श्वेताय स्वाहा'—इससे प्रथम आहुति दे।
चतुर्मुखाय शान्ताय पद्मासनगताय च ॥ पद्मवर्णाय वेधाय कमण्डलुधराय च।
'ऊर्ध्वमुखाय स्वाहा'—इससे द्वितीय आहुति दे।
हेमवर्णाय देहाय ऐरावतगजाय च । सहस्राक्षशरीराय पूर्वदिश्युन्मुखाय च॥
देवाधिपाय चेन्द्राय विहस्ताय शुभाय च।
'पूर्ववदनाय स्वाहा'—इससे तृतीय आहुति दे।
दीप्ताय व्यक्तदेहाय ज्वालामालाकुलाय च । इन्द्रनीलाभदेहाय सर्वारोग्यकराय च॥
यमाय धर्मराजाय दक्षिणाशामुखाय च।
'कृष्णाम्बरधराय स्वाहा'—इससे चौथी आहुति दे।
नीलजीमूतवर्णाय रक्ताम्बरधराय च । मुक्ताफलशरीराय पिङ्गाक्षाय महात्मने॥
शुक्लवस्त्राय पीताय दिव्यपाशधराय च।
'पश्चिमाभिमुखाय स्वाहा'—इससे पाँचवीं आहुति दे।
कृष्णपिङ्गलनेत्राय वायव्याभिमुखाय च । नीलध्वजाय वीराय तथा चेन्द्राय वेधसे॥
'पवनाय स्वाहा'—इस मन्त्रसे छठी आहुति दे।
गदाहस्ताय सूर्याय चित्रस्रग्भूषणायच ॥ महोदराय शान्ताय स्वाहाधिपतये तथा।
'उत्तराभिमुखाय महादेवप्रियाय स्वाहा'—इससे सातवीं आहुति दे।
श्वेताय श्वेतवर्णाय चित्राक्षायमहात्मने । शान्ताय शान्तरूपाय पिनाकवरधारिणे॥
'ईशानाभिमुखायेशाय स्वाहा'—इससे आठवीं आहुति दे। (ब्राह्मपर्व १७५। १८—३२)
[यह दश दिक्पाल-होम प्रतीत होता है, किंतु पाठकी गड़बड़ीसे आग्नेय तथा नैर्ऋत्यकोणकी आहुतियोंका स्वरूप अस्पष्ट है]

२- शान्त्यर्थं सर्वलोकानां ततः शान्तिकमाचरेत् । सिन्दूरासनरक्ताभो रक्तपद्माभलोचनः॥
सहस्रकिरणो देवः सप्ताश्वरथवाहनः । गभस्तिमाली भगवान् सर्वदेवनमस्कृतः॥
करोतु ते महाशान्तिग्रहपीडानिवारिणीम्। त्रिचक्ररथमारूढ अपां सारमयं तु यः॥
दशाश्ववाहनो देव आत्रेयश्चामृतस्रवः । शीतांशुरमृतात्मा च क्षयवृद्धिसमन्वितः।
सोमः सौम्येन भावेन ग्रहपीडां व्यपोहतु॥
पद्मरागनिभो भौमो मधुपिङ्गललोचनः । अङ्गारकोऽग्निसदृशो ग्रहपीडां व्यपोहतु॥
पुष्परागनिभेनेह देहेन परिपिङ्गलः । पीतमाल्याम्बरधरो बुधः पीडां व्यपोहतु॥
तप्तगैरिकसंकाशः सर्वशास्त्रविशारदः । सर्वदेवगुरुर्विप्रो ह्यथर्वणवरो मुनिः॥
बृहस्पतिरिति ख्यात अर्थशास्त्रपरश्चयः । शान्तेन चेतसा सोऽपि परेण सुसमाहितः॥
ग्रहपीडां विनिर्जित्य करोतु तवशान्तिकम् । सूर्यार्चनपरो नित्यं प्रसादाद्भास्करस्य तु॥
हिमकुन्देन्दुवर्णाभो दैत्यदानवपूजितः । महेश्वरस्ततो धीमान् महासौरो महामतिः॥
सूर्यार्चनपरो नित्यं शुक्रःशुक्लनिभस्तदा । नीतिशास्त्रपरो नित्यं ग्रहपीडां व्यपोहतु॥
नानारूपधरोऽव्यक्त अविज्ञातगतिश्चयः । नोत्पत्तिर्जायते यस्य नोदयपीडितैरपि॥
एकचूलो द्विचूलश्च त्रिशिखःपञ्चचूलकः । सहस्रशिररूपस्तु चन्द्रकेतुरिव स्थितः॥
सूर्यपुत्रोऽग्निपुत्रस्तु ब्रह्मविष्णुशिवात्मकः । अनेकशिखरः केतुः स ते पीडां व्यपोहतु॥
एते ग्रहा महात्मानः सूर्यार्चनपराःसदा । शान्तिं कुर्वन्तु ते हृष्टाः सदाकालं हितेक्षणाः॥
(ब्राह्मपर्व १७५। ३६—५०)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

किरणोंवाले, सात अश्वोंसे युक्त रथपर आरूढ, सिन्दूरके समान रक्त आभावाले, सभी देवताओंद्वारा नमस्कृत भगवान् सूर्य ग्रहपीडा निवारण करनेवाली महाशान्ति आपको प्रदान करें। शीतल किरणोंसे युक्त, अमृतात्मा, अत्रिके पुत्र चन्द्रदेव सौम्यभावसे आपकी ग्रहपीडा दूर करें। पद्मरागके समान वर्णवाले, मधुके समान पिङ्गल नेत्रवाले, अग्निसदृश अङ्गारक, भूमिपुत्र भौम आपकी ग्रहपीडा दूर करें। पुष्परागके समान आभायुक्त, पिङ्गल वर्णवाले, पीत माल्य तथा वस्त्र धारण करनेवाले बुध आपकी पीडा दूर करें। तप्त स्वर्णके समान आभायुक्त, सर्वशास्त्रविशारद, देवताओंके गुरु बृहस्पति आपकी ग्रहपीडा दूर कर आपको शान्ति प्रदान करें। हिम, कुन्दपुष्प तथा चन्द्रमाके समान स्वच्छ वर्णवाले, दैत्य तथा दानवोंसे पूजित, सूर्यार्चनमें तत्पर रहनेवाले, महामति, नीतिशास्त्रमें पारङ्गत शुक्राचार्य आपकी ग्रहपीडा दूर करें। विविध रूपोंको धारण करनेवाले, अविज्ञात-गतियुक्त, सूर्यपुत्र शनैश्चर, अनेक शिखरोंवाले केतु एवं राहु आपकी पीडा दूर करें। सर्वदा कल्याणकी दृष्टिसे देखनेवाले तथा भगवान् सूर्यकी नित्य अर्चना करनेमें तत्पर ये सभी ग्रह प्रसन्न होकर आपको शान्ति प्रदान करें।'

तदनन्तर ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश—इन त्रिदेवोंसे इस प्रकार शान्तिकी प्रार्थना करे[१]—

'पद्मासनपर आसीन, पद्मवर्ण, पद्मपत्रके समान नेत्रवाले, कमण्डलुधारी, देव-गन्धर्वोंसे पूजित, देवशिरोमणि, महातेजस्वी, सभी लोकोंके स्वामी, सूर्यार्चनमें तत्पर चतुर्मुख, दिव्य ब्रह्म शब्दसे सुशोभित ब्रह्माजी आपको शान्ति प्रदान करें। पीताम्बर धारण करनेवाले, शङ्ख, चक्र, गदा तथा पद्म धारण करनेवाले चतुर्भुज, श्यामवर्णवाले, यज्ञस्वरूप, आत्रेयीके पति और सूर्यके ध्यानमें तल्लीन माधव मधुसूदन विष्णु आपको नित्य शान्ति प्रदान करें। चन्द्रमा एवं कुन्दपुष्पके समान उज्ज्वल वर्णवाले, सर्पादि विशिष्ट आभरणोंसे अलंकृत, महातेजस्वी, मस्तकपर अर्धचन्द्र धारण करनेवाले, समस्त विश्वमें व्याप्त, श्मशानमें रहनेवाले, दक्ष-यज्ञ विध्वंस करनेवाले, वरणीय, आदित्यके देहसे सम्भूत, वरदानी, देवाधिदेव तथा भस्म धारण करनेवाले महेश्वर आपको शान्ति प्रदान करें।'

तदनन्तर सभी मातृकाओंसे शान्तिके लिये प्रार्थना करे[२]—

१- पद्मासनः पद्मवर्णः पद्मपत्रनिभेक्षणः । कमण्डलुधरः श्रीमान् देवगन्धर्वपूजितः ॥
चतुर्मुखो देवपतिः सूर्यार्चनपरः सदा।
सुरज्येष्ठो महातेजाः सर्वलोकप्रजापतिः । ब्रह्मशब्देन दिव्येन ब्रह्मा शान्तिं करोतु ते ॥
पीताम्बरधरो देव आत्रेयीदयितः सदा । शङ्खचक्रगदापाणिः श्यामवर्णश्चतुर्भुजः ॥
यज्ञदेहः क्रमो देव आत्रेयीदयितः सदा । शङ्खचक्रगदापाणिर्माधवो मधुसूदनः ॥
सूर्यभक्तान्वितो नित्यं विगतिर्विगतत्रयः । सूर्यध्यानपरो नित्यं विष्णुः शान्तिं करोतु ते ॥
शशिकुन्देन्दुसंकाशो विश्रुताभरणैरिह । चतुर्भुजो महातेजाः पुष्पार्धकृतशेखरः ॥
चतुर्मुखो भस्मधरः श्मशाननिलयः सदा । गोत्रारिर्विश्वनिलयस्तथा च क्रतुदूषणः ॥
वरो वरेण्यो वरदो देवदेवो महेश्वरः । आदित्यदेहसम्भूतः स ते शान्तिं करोतु वै ॥
(ब्राह्मपर्व १७६। १—८)

२- पद्मरागप्रभा देवी चतुर्वदनपङ्कजा । अक्षमालार्पितकरा कमण्डलुधरा शुभा ॥
ब्रह्माणी सौम्यवदना आदित्याराधने रता । शान्तिं करोतु सुप्रीता आशीर्वादपरा खग ॥
महाश्वेतेति विख्याता आदित्यदयिता सदा । हिमकुन्देन्दुसदृशा महावृषभवाहिनी ॥
त्रिशूलहस्ताभरणा विश्रुताभरणा सती । चतुर्भुजा चतुर्वक्त्रा त्रिनेत्रा पापनाशिनी।
वृषध्वजार्चनरता रुद्राणी शान्तिदा भवेत् ॥
मयूरवाहना देवी सिन्दूरारुणविग्रहा । शक्तिहस्ता महाकाया सर्वालंकारभूषिता ॥

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

'पद्मरागके समान आभावाली, अक्षमाला एवं कमण्डलु धारण करनेवाली, आदित्यकी आराधनामें तथा आशीर्वाद देनेमें तत्पर, सौम्यवदनवाली ब्रह्माणी प्रसन्न होकर तुम्हें शान्ति प्रदान करें। हिम, कुन्द-पुष्प तथा चन्द्रमाके समान वर्णवाली, महावृषभपर आरूढ, हाथमें त्रिशूल धारण करनेवाली, आश्चर्यजनक आभरणोंसे विश्रुत, चतुर्भुजा चतुर्वक्त्रा तथा त्रिनेत्रधारिणी पापोंका नाश करनेवाली, वृषभध्वज शंकरकी अर्चनामें तत्पर, महाश्वेता नामसे विख्यात आदित्यदयिता रुद्राणी आपको शान्ति प्रदान करें। सिन्दूरके समान अरुण विग्रहवाली, सभी अलंकारोंसे विभूषित, हाथमें शक्ति धारण करनेवाली, सूर्यकी अर्चनामें तत्पर, महान् पराक्रमशालिनी, वरदायिनी, मयूरवाहिनी देवी कौमारी आपको शान्ति प्रदान करें। गदा एवं चक्रको धारण करनेवाली, पीताम्बरधारिणी, सूर्यार्चनमें नित्य तत्पर रहनेवाली, असुरमर्दिनी, देवताओंके द्वारा पूजित चतुर्भुजा देवी वैष्णवी आपको नित्य शान्ति प्रदान करें। ऐरावतपर आरूढ, हाथमें वज्र धारण करनेवाली, महाबलशालिनी, सिद्ध-गन्धर्वोंसे सेवित, सभी अलंकारोंसे विभूषित, चित्र-विचित्र अरुणवर्णवाली, सर्वत्रलोचना देवी इन्द्राणी आपको शान्ति प्रदान करें। वराहके समान नासिकावाली, श्रेष्ठ वराहपर आरूढ, विकटा, शंख, चक्र तथा गदा धारण करनेवाली, श्यामावदाता, तेजस्विनी, प्रतिक्षण भगवान् सूर्यकी आराधना करनेवाली, वरदायिनी देवी वाराही आपको शान्ति प्रदान करें।

क्षाम-कटि-प्रदेशवाली, मांसरहित कंकाल-स्वरूपिणी, कराल-वदना, भयंकर तलवार, घंटा, खट्वाङ्ग और वरमुद्रा धारण करनेवाली, क्रूर, लाल-पीले नेत्रोंवाली, गजचर्मधारिणी, गोश्रुताभरणा, प्रेतस्थानमें निवास करनेवाली, देखनेमें भयंकर परंतु

सूर्यभक्ता महावीर्या सूर्यार्चनरता सदा । कौमारी वरदा देवी शान्तिमाशु करोतु ते ॥
गदाचक्रधरा श्यामा पीताम्बरधरा खग । चतुर्भुजा हि सा देवी वैष्णवी सुरपूजिता ॥
सूर्यार्चनपरा नित्यं सूर्यैकगतमानसा । शान्तिं करोतु ते नित्यं सर्वासुरविमर्दिनी ॥
ऐरावतगजारूढा वज्रहस्ता महाबला । सर्वत्रलोचना देवी वर्णतः कर्बुरारुणा ॥
सिद्धगन्धर्वनमिता सर्वालंकारभूषिता । इन्द्राणी ते सदा देवी शान्तिमाशु करोतु वै ॥
वराहघोणा विकटा वराहवरवाहिनी । श्यामावदाता या देवी शङ्खचक्रगदाधरा ॥
तेजयन्तीति निमिषान् पूजयन्ती सदा रविम् । वाराही वरदा देवी तव शान्तिं करोतु वै ॥
अर्धकोशा कटीक्षामा निर्मांसा स्नायुबन्धना । करालवदना घोरा खड्गघण्टोद्गता सती ॥
कपालमालिनी क्रूरा खट्वाङ्गवरधारिणी । आरक्ता पिङ्गनयना गजचर्मावगुण्ठिता ॥
गोश्रुताभरणा देवी प्रेतस्थाननिवासिनी । शिवारूपेण घोरेण शिवरूपभयंकरी ॥
चामुण्डा चण्डरूपेण सदा शान्तिं करोतु ते ॥
चण्डमुण्डकरा देवी मुण्डदेहगता सती । कपालमालिनी क्रूरा खट्वाङ्गवरधारिणी ॥
आकाशमातरो देव्यस्तथान्या लोकमातरः । भूतानां मातरः सर्वास्तथान्याः पितृमातरः ॥
वृद्धिश्राद्धेषु पूज्यन्ते यास्तु देव्यो मनीषिभिः । मात्रे प्रमात्रे तन्मात्रे इति मातृमुखास्तथा ॥
पितामही तु तन्माता वृद्धा या चपितामही । इत्येतास्तु पितामह्यः शान्तिं ते पितृमातरः ॥
सर्वा मातृमहादेव्यः सायुधा व्यग्रपाणयः । जगद्व्याप्य प्रतिष्ठन्त्यो बलिकामा महोदयाः ॥
शान्तिं कुर्वन्तु ता नित्यमादित्याराधने रताः । शान्तेन चेतसा शान्त्यः शान्तये तव शान्तिदा ॥
सर्वावयवमुख्येन गात्रेण च सुमध्यमा । पीतश्यामातिसौम्येन स्निग्धवर्णेन शोभना ॥
ललाटतिलकोपेता चन्द्ररेखार्धधारिणी । चित्राम्बरधरा देवी सर्वाभरणभूषिता ॥
वरा स्त्रीमयरूपाणां शोभा गुणसुसम्पदाम् । भावनामात्रसंतुष्टा उमा देवी वरप्रदा ॥
साक्षादागत्य रूपेण शान्तेनामिततेजसा । शान्तिं करोतु ते प्रीता आदित्याराधने रता ॥

(ब्राह्मपर्व १७७। १—२५)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

शिवस्वरूपा, हाथमें चण्ड-मुण्डके कपाल धारण किये हुए तथा कपालकी माला पहने चन्द्ररूपिणी देवी चामुण्डा तुम्हें शान्ति प्रदान करें[१]—

आकाशमातृकाएँ, लोकमातृकाएँ तथा अन्य लोकमातृकाएँ, भूतमातृकाएँ, अन्य पितृ-मातृकाएँ, वृद्धि-श्राद्धोंमें जिनकी पूजा होती है वे पितृमातृकाएँ, माता, प्रमाता, वृद्धप्रमाता—ये मातृ-मातृकाएँ, शान्त चित्तसे आपको शान्ति प्रदान करें। ये सभी मातृकाएँ अपने हाथोंमें आयुध धारण करती हैं और संसारको व्याप्त करके प्रतिष्ठित रहती हैं तथा भगवान् सूर्यकी आराधनामें तत्पर रहती हैं। सुन्दर अङ्ग-प्रत्यङ्गवाली तथा सुन्दर कटि-प्रदेशवाली, पीत एवं श्याम वर्णवाली, स्निग्ध आभावाली, तिलकसे सुशोभित ललाटवाली, अर्धचन्द्ररेखा धारण करनेवाली, सभी आभरणोंसे विभूषित, चित्र-विचित्र वस्त्र धारण करनेवाली, सभी स्त्रीस्वरूपोंमें गुण और सम्पत्तियोंके कारण सर्वश्रेष्ठ शोभावाली, आदित्यकी आराधनामें तत्पर, केवल भावनामात्रसे संतुष्ट होनेवाली वरदायिनी भगवती उमादेवी अपने अमित तेजस्वी एवं शान्त-रूपसे प्रत्यक्ष प्रकट होकर प्रसन्न हो आपको शान्ति प्रदान करें।'

अनन्तर कार्तिकेय, नन्दीश्वर, विनायक, भगवान् शंकर, जगन्माता, पार्वती, चण्डेश्वर, ऐन्द्री आदि दिशाएँ, दिशाओंके अधिपति, लोकपालोंकी नगरियाँ, सभी देवता, देवी सरस्वती तथा भगवती अपराजितासे इस प्रकार शान्तिकी प्रार्थना करे[२]—

१-ये सात विश्वमाताएँ कही गयी हैं। शारदातिलकके षष्ठ पटलमें इन सातोंके साथ ही भगवती महालक्ष्मीको भी विश्वमाता कहा गया है।

२- अबलो बालरूपेण खट्वाङ्गशिखिवाहनः। पूर्वेण वदनः श्रीमांस्त्रिशिखः शक्तिसंयुतः॥
कृत्तिकायाश्च रुद्रस्य चाङ्गोद्भूतः सुरार्चितः। कार्तिकेयो महातेजा आदित्यवरदर्पितः॥
शान्तिं करोतु ते नित्यं बलं सौख्यं च तेजसा॥
आत्रेयो बलवान् देव आरोग्यं च खगाधिप। श्वेतवस्त्रपरीधानस्त्र्यक्षः कनकसुप्रभः॥
शूलहस्तो महाप्राज्ञो नन्दीशो रविभावितः। शान्तिं करोतु ते शान्तो धर्मे च मतिमुत्तमाम्॥
धर्मेतरावुभौ नित्यमचलः सम्प्रयच्छतु। महोदरो महाकायः स्निग्धाञ्जनसमप्रभः॥
एकदंष्ट्रोत्कटो देवो गजवक्त्रो महाबलः। नागयज्ञोपवीतेन नानाभरणभूषितः॥
सर्वार्थसम्पदुद्धारो गणाध्यक्षो वरप्रदः।
भीमस्य तनयो देवो नायकोऽथ विनायकः। करोतु ते महाशान्तिं भास्करार्चनतत्परः॥
इन्द्रनीलनिभस्त्र्यक्षो दीप्तशूलायुधोद्यतः। रक्ताम्बरधरः श्रीमान् कृष्णाङ्गो नागभूषणः॥
पापापनोदमतुलमलक्ष्यो मलनाशनः। करोतु ते महाशान्तिं प्रीतः प्रीतेन चेतसा॥
वराम्बरधरा कन्या नानालंकारभूषिता। त्रिदशानां च जननी पुण्या लोकनमस्कृता॥
सर्वसिद्धिकरा देवी प्रसादपरमास्पदा। शान्तिं करोतु ते माता भुवनस्य खगाधिप॥
स्निग्धश्यामेन वर्णेन महामहिषमर्दिनी। धनुश्चक्रप्रहरणा खड्गपट्टिशधारिणी॥
आतर्जन्यायतकरा सर्वोपद्रवनाशिनी। शान्तिं करोतु ते दुर्गा भवानी च शिवा तथा॥
अतिसूक्ष्मो ह्यतिक्रोधस्त्र्यक्षो भृङ्गिरिटिर्महान्।
सूर्यात्मको महावीरः सर्वोपद्रवनाशनः। सूर्यभक्तिपरो नित्यं शिवं ते सम्प्रयच्छतु॥
प्रचण्डगणसैन्येशो महाघण्टाक्षधारकः। अक्षमालार्पितकरश्चाथ चण्डेश्वरो वरः॥
चण्डपापहरो नित्यं ब्रह्महत्याविनाशनः।
शान्तिं करोतु ते नित्यमादित्याराधने रतः। करोतु च महायोगी कल्याणानां परम्पराम्॥
आकाशमातरो दिव्यास्तथान्या देवमातरः।
सूर्यार्चनपरा देव्यो जगद्व्याप्य व्यवस्थिताः। शान्तिं कुर्वन्तु ते नित्यं मातरः सुरपूजिताः॥
ये रुद्रा रौद्रकर्माणो रौद्रस्थाननिवासिनः। मातरो रुद्ररूपाश्च गणानामधिपाश्च ये॥
विघ्नभूतास्तथा चान्ये दिग्विदिक्षु समाश्रिताः।
सर्वे ते प्रीतमनसः प्रतिगृह्णन्तु मे बलिम्। सिद्धिं कुर्वन्तु ते नित्यं भयेभ्यः पान्तु सर्वतः॥

Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi
In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth

खट्वाङ्ग धारण किये हुए, शक्तिसे युक्त, मयूरवाहन, कृत्तिका और भगवान् रुद्रसे उद्भूत, समस्त देवताओंसे अर्चित तथा आदित्यसे वरप्राप्त भगवान् कार्तिकेय अपने तेजसे आपको बल, सौख्य एवं शान्ति प्रदान करें। हाथमें शूल एवं श्वेत वस्त्र धारण किये हुए, स्वर्ण-आभायुक्त, भगवान् सूर्यकी आराधना करनेवाले, तीन नेत्रोंवाले नन्दीश्वर आपको धर्ममें उत्तम बुद्धि, आरोग्य एवं शान्ति प्रदान करें। चिकने अञ्जनके समान आभायुक्त, महोदर तथा महाकाय नित्य अचल आरोग्य प्रदान करें। नाना आभूषणोंसे विभूषित नागको यज्ञोपवीतके रूपमें धारण किये हुए, समस्त अर्थ-सम्पत्तियोंके उद्धारक, एकदन्त, उत्कट-स्वरूप, गजवक्त्र, महाबलशाली, गणोंके अध्यक्ष, वरप्रदाता, भगवान् सूर्यकी अर्चनामें

ऐन्द्रादयो गणा ये तु वज्रहस्ता महाबलाः । हिमकुन्देन्दुसदृशा नीलकृष्णाङ्गलोहिताः ॥
दिव्यान्तरिक्षा भौमाश्च पातालतलवासिनः । ऐन्द्राः शान्तिं प्रकुर्वन्तु भद्राणि च पुनः पुनः ॥
आग्नेय्यां ये भृताः सर्वे ध्रुवहत्यानुषङ्गिणः । सूर्यानुरक्ता रक्ताभा जपासुमनिभास्तथा ॥
विरक्तलोहिता दिव्या आग्नेय्यां भास्करादयः । आदित्याराधनपरा आदित्यगतमानसाः ॥
शान्तिं कुर्वन्तु ते नित्यं प्रयच्छन्तु बलिं मम।
भयादित्यसमा ये तु सततं दण्डपाणयः । आदित्याराधनपराः शं प्रयच्छन्तु ते सदा ॥
ऐशान्यां संस्थिता ये तु प्रशान्ताः शूलपाणयः । भस्मोद्धूलितदेहाश्च नीलकण्ठा विलोहिताः ॥
दिव्यान्तरिक्षा भौमाश्च पातालतलवासिनः । सूर्यपूजाकरा नित्यं पूजयित्वांशुमालिनम् ॥
ततः सुप्रीतमनसो लोकपालैः समन्विताः । शान्तिं कुर्वन्तु मे नित्यं शं प्रयच्छन्तु पूजिताः ॥
अमरावती पुरी नाम पूर्वभागे व्यवस्थिता । विद्याधरगणाकीर्णा सिद्धगन्धर्वसेविता ॥
रत्नप्राकाररुचिरा महारत्नोपशोभिता।
तत्र देवपतिः श्रीमान् वज्रपाणिर्महाबलः । गोपतिर्गोसहस्रेण शोभमानेन शोभते ॥
ऐरावतगजारूढो गैरिकाभो महाद्युतिः । देवेन्द्रः सततं हृष्ट आदित्याराधने रतः ॥
सूर्यज्ञानैकपरमः सूर्यभक्तिसमन्वितः । सूर्यप्रणामः परमां शान्तिं तेऽद्य प्रयच्छतु ॥
आग्नेयदिग्विभागे तु पुरी तेजस्वती शुभा । नानादेवगणाकीर्णा नानारत्नोपशोभिता ॥
तत्र ज्वालासमाकीर्णो दीप्ताङ्गारसमद्युतिः । पुरगो दहनो देवो ज्वलनः पापनाशनः ॥
आदित्याराधनरत आदित्यगतमानसः । शान्तिं करोतु ते देवस्तथा पापपरिक्षयम् ॥
वैवस्वती पुरी रम्या दक्षिणेन महात्मनः । सुरासुरशताकीर्णा नानारत्नोपशोभिता ॥
तत्र कुन्देन्दुसंकाशो हरिपिङ्गललोचनः । महामहिषमारूढः कृष्णस्रग्वस्त्रभूषणः ॥
अन्तकोऽथ महातेजाः सूर्यधर्मपरायणः । आदित्याराधनपरः क्षेमारोग्ये ददातु ते ॥
नैर्ऋते दिग्विभागे तु पुरी कृष्णेति विश्रुता । महारक्षोगणाशौचपिशाचप्रेतसंकुला ॥
तत्र कुन्दनिभो देवो रक्तस्रग्वस्त्रभूषणः । खड्गपाणिर्महातेजाः करालवदनोज्ज्वलः ॥
रक्षेन्द्रो वसते नित्यमादित्याराधने रतः । करोतु मे सदा शान्तिं धनं धान्यं प्रयच्छतु ॥
पश्चिमे तु दिशो भागे पुरी शुद्धवती सदा । नानाभोगिसमाकीर्णा नानाकिन्नरसेविता ॥
तत्र कुन्देन्दुसंकाशो हरिपिङ्गललोचनः । शान्तिं करोतु मे प्रीतः शान्तः शान्तेन चेतसा ॥
यशोवती पुरी रम्या ऐशानीं दिशमाश्रिता।
नानागणसमाकीर्णा नानाकृतशुभालया । तेजःप्रकारपर्यन्ता अनौपम्या सदोज्ज्वला ॥
तत्र कुन्देन्दुसंकाशश्चाम्बुजाक्षो विभूषितः।
त्रिनेत्रः शान्तरूपात्मा अक्षमालाधराधरः । ईशानः परमो देवः सदा शान्तिं प्रयच्छतु ॥
भूलोके तु भुवर्लोके निवसन्ति च ये सदा । देवादेवाः शुभायुक्ताः शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा ॥
जनलोके महर्लोके परलोके गताश्च ये । ते सर्वे मुदिता देवाः शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा ॥
सरस्वती सूर्यभक्ता शान्तिदा विदधातु मे।
चारुचामीकरस्था या सरोजकरपल्लवा । सूर्यभक्त्याश्रिता देवी विभूतिं ते प्रयच्छतु ॥
हारेण सुविचित्रेण भास्वत्कनकमेखला । अपराजिता सूर्यभक्ता करोतु विजयं तव ॥

(ब्राह्मपर्व १७८। १—४८)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

तत्पर, शंकरपुत्र विनायक आपको महाशान्ति प्रदान करें। इन्द्रनीलके समान आभावाले, त्रिनेत्रधारी, प्रदीप्त त्रिशूल धारण करनेवाले, नागोंसे विभूषित, पापोंको दूर करनेवाले तथा अलक्ष्य रूपवाले, मलोंके नाशक भगवान् शंकर प्रसन्नचित्तसे आपको महाशान्ति प्रदान करें। नाना अलंकारोंसे विभूषित, सुन्दर वस्त्रोंको धारण करनेवाली, देवताओंकी जननी, सारे संसारसे नमस्कृत, समस्त सिद्धियोंकी प्रदायिनी, प्रसाद-प्राप्तिकी एकमात्र स्थान जगन्माता भगवती पार्वती आपको शान्ति प्रदान करें। स्निग्ध श्यामल वर्णवाली, धनुष-चक्र, खड्ग तथा पट्टिश आयुधोंको धारण की हुई, सभी उपद्रवोंका नाश करनेवाली, विशाल बाहुओंवाली, महामहिष-मर्दिनी भगवती भवानी दुर्गा आपको शान्ति प्रदान करें। अत्यन्त सूक्ष्म, अतिक्रोधी, तीन नेत्रोंवाले, महावीर, सूर्यभक्त भृंगिरिटि आपका नित्य कल्याण करें। विशाल घण्टा तथा रुद्राक्ष-माला धारण किये हुए, ब्रह्महत्यादि उत्कट पापोंका नाश करनेवाले, प्रचण्डगणोंके सेनापति, आदित्यकी आराधनामें तत्पर महायोगी चण्डेश्वर आपको शान्ति एवं कल्याण प्रदान करें। दिव्य आकाश-मातृकाएँ, अन्य देव-मातृकाएँ, देवताओंद्वारा पूजित मातृकाएँ जो संसारको व्याप्त करके अवस्थित हैं और सूर्यार्चनमें तत्पर रहती हैं, वे आपको शान्ति प्रदान करें। रौद्र कर्म करनेवाले तथा रौद्र स्थानमें निवास करनेवाले रुद्रगण, अन्य समस्त गणाधिप, दिशाओं तथा विदिशाओंमें जो विघ्नरूपसे अवस्थित रहते हैं, वे सभी प्रसन्नचित्त होकर मेरे द्वारा दी गयी इस बलि (नैवेद्य)-को ग्रहण करें। ये आपको नित्य सिद्धि प्रदान करें और आपकी भयोंसे रक्षा करें।

हाथोंमें वज्र लिये हुए, महाबलशाली, सफेद, नीले, काले तथा लाल वर्णवाले, पृथ्वी, आकाश, पाताल तथा अन्तरिक्षमें रहनेवाले ऐन्द्रगण निरन्तर आपका कल्याण करें और शान्ति प्रदान करें। आग्नेय दिशामें रहनेवाले निरन्तर ज्वलनशील, जपाकुसुमके समान लाल तथा लोहित वर्णवाले, हाथमें निरन्तर दण्ड धारण करनेवाले सूर्यके भक्त भास्कर आदि मेरे द्वारा दिये गये बलि (नैवेद्य)-को ग्रहण करें और आपको नित्य शान्ति एवं कल्याण प्रदान करें। ईशानकोणमें अवस्थित शान्ति-स्वभावयुक्त, त्रिशूलधारी, अङ्गोंमें भस्म धारण किये हुए, नीलकण्ठ, रक्तवर्णवाले, सूर्य-पूजनमें तत्पर, अन्तरिक्ष, आकाश, पृथ्वी तथा स्वर्गमें निवास करनेवाले रुद्रगण आपको नित्य शान्ति एवं कल्याण प्रदान करें।

रत्नोंके प्राकारों एवं महारत्नोंसे शोभित, विद्याधर एवं सिद्ध-गन्धर्वोंसे सुसेवित पूर्वदिशामें अवस्थित अमरावती नामवाली नगरीमें महाबली, वज्रपाणि, देवताओंके अधिपति इन्द्र निवास करते हैं। वे ऐरावतपर आरूढ एवं स्वर्णकी आभाके समान प्रकाशमान हैं, सूर्यकी आराधनामें तत्पर तथा नित्य प्रसन्न-चित्त रहनेवाले हैं, वे परम शान्ति प्रदान करें। विविध देवगणोंसे व्याप्त, भाँति-भाँतिके रत्नोंसे शोभित, अग्निकोणमें अवस्थित तेजस्वती नामकी पुरी है, उसमें स्थित जलते हुए अंगारोंके समान प्रकाशवाले, ज्वालमालाओंसे व्याप्त, निरन्तर ज्वलन एवं दहनशील, पापनाशक, आदित्यकी आराधनामें तत्पर अग्निदेव आपके पापोंका सर्वथा नाश करें एवं शान्ति प्रदान करें। दक्षिण दिशामें संयमनीपुरी स्थित है, वह नाना रत्नोंसे सुशोभित एवं सैकड़ों सुरासुरोंसे व्याप्त है, उसमें रहनेवाले हरित-पिङ्गल नेत्रोंवाले महामहिषपर आरूढ, कृष्ण वस्त्र एवं मालासे विभूषित, सूर्यकी आराधनामें तत्पर महातेजस्वी यमराज आपको क्षेम एवं आरोग्य प्रदान करें। नैर्ऋत्यकोणमें स्थित कृष्णा नामकी पुरी है, जो महान् रक्षोगण, प्रेत

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

तथा पिशाच आदिसे व्याप्त है, उसमें रहनेवाले रक्त माला और वस्त्रोंसे सुशोभित हाथमें तलवार लिये, करालवदन, सूर्यकी आराधनामें तत्पर राक्षसोंके अधिपति निर्ऋतिदेव शान्ति एवं धन-धान्य प्रदान करें। पश्चिम दिशामें शुद्धवती नामकी नगरी है, वह अनेक किंनरोंसे सेवित तथा भोगिगणोंसे व्याप्त है। वहाँ स्थित हरित तथा पिङ्गल वर्णके नेत्रवाले वरुणदेव प्रसन्न होकर आपको शान्ति प्रदान करें। ईशान-कोणमें स्थित यशोवती नामकी अनुपम पुरीमें रहनेवाले त्रिनेत्रधारी शान्तात्मा रुद्राक्ष-मालाधारी परमदेव ईशान (भगवान् शंकर) आपको नित्य शान्ति प्रदान करें। भूः, भुवर्, महर् एवं जन आदि लोकोंमें रहनेवाले प्रसन्नचित्त देवता आपको शान्ति प्रदान करें।

सूर्यभक्ता सरस्वती आपको शान्ति प्रदान करें। हाथमें कमल धारण करनेवाली तथा सुन्दर स्वर्ण-सिंहासनपर अवस्थित, सूर्यकी आराधनामें तत्पर भगवती महालक्ष्मी आपको ऐश्वर्य प्रदान करें और आदित्यकी आराधनामें तल्लीन, विचित्र वर्णके सुन्दर हार एवं कनकमेखला धारण करनेवाली सूर्यभक्ता भगवती अपराजिता आपको विजय प्रदान करें।'

इसके अनन्तर सत्ताईस नक्षत्रों, मेषादि द्वादश राशियों, सप्तर्षियों, महातपस्वियों, ऋषियों, सिद्धों, विद्याधरों, दैत्येन्द्रों तथा अष्ट नागोंसे शान्तिकी प्रार्थना करे*।

---

* कृत्तिका परमा देवी रोहिणी च वरानना। श्रीमन्मृगशिरा भद्रा आर्द्रा चाप्यपरोज्ज्वला॥
पुनर्वसुस्तथा पुष्य आश्लेषा च तथाधिप। सूर्यार्चनरता नित्यं सूर्यभावानुभाविताः॥
अर्चयन्ति सदा देवमादित्यं सुरते सदा। नक्षत्रमातरो ह्येताः प्रभामालाविभूषिताः॥
मघा सर्वगुणोपेता पूर्वा चैव तु फाल्गुनी। स्वाती विशाखा वरदा दक्षिणां दिशमाश्रिताः॥
अर्चयन्ति सदा देवमादित्यं सुरपूजितम्। तवापि शान्तिकं द्योतं कुर्वन्तु गगनोदिताः॥
अनुराधा तथा ज्येष्ठा मूलं सूर्यपुरःसरा। पूर्वाषाढा महावीर्या आषाढा चोत्तरा तथा॥
अभिजिन्नाम नक्षत्रं श्रवणं च बहुश्रुतम्। एताः पश्चिमतो दीप्ता राजन्ते चानुमूर्तयः॥
भास्करं पूजयन्त्येताः सर्वकालं सुभाविताः। शान्तिं कुर्वन्तु ते नित्यं विभूतिं च महर्द्धिकाम्॥
धनिष्ठा शतभिषा तु पूर्वभाद्रपदा तथा॥
उत्तराभाद्रपदेवत्यौ चाश्विनी च महामते। भरणी च महादेवी नित्यमुत्तरतः स्थिताः॥
सूर्यार्चनरता नित्यमादित्यगतमानसाः। शान्तिं कुर्वन्तु ते नित्यं विभूतिं च महर्द्धिकाम्॥
मेषो मृगाधिपः सिंहो धनुर्दीप्तिमतां वरः। पूर्वेण भासयन्त्येते सूर्ययोगपराः शुभाः॥
शान्तिं कुर्वन्तु ते नित्यं भक्त्या सूर्यपदाम्बुजे। वृषः कन्या च परमा मकरश्चापि बुद्धिमान्॥
एते दक्षिणभागे तु पूजयन्ति रविं सदा। भक्त्या परमया नित्यं शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा॥
मिथुनं च तुला कुम्भः पश्चिमे च व्यवस्थिताः। जपन्त्येते सदाकालमादित्यं ग्रहनायकम्॥
शान्तिं कुर्वन्तु ते नित्यं खखोल्कज्ञानतत्पराः। सगन्धोदकपुष्पाभ्यां ये स्मृता सततं बुधैः॥
ऋषयः सप्त विख्याता ध्रुवान्ताः परमोज्ज्वलाः। भानुप्रसादात् सम्पन्नाः शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा॥
कश्यपो गालवो गार्ग्यो विश्वामित्रो महामुनिः। मुनिर्दक्षो वसिष्ठश्च मार्कण्डः पुलहः क्रतुः॥
नारदो भृगुरात्रेयो भारद्वाजश्च वै मुनिः। वाल्मीकिः कौशिको वात्स्यः शाकल्योऽथ पुनर्वसुः॥
शालंकायन इत्येते ऋषयोऽथ महातपाः। सूर्यध्यानैकपरमाः शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा॥
मुनिकन्या महाभागा ऋषिकन्याः कुमारिकाः। सूर्यार्चनरता नित्यं शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा॥
सिद्धाः समृद्धतपसो ये चान्ये वै महातपाः। विद्याधरा महात्मानो गरुडश्च त्वया सह॥
आदित्यपरमा ह्येते आदित्याराधने रताः। सिद्धिं ते सम्प्रयच्छन्तु आशीर्वादपरायणाः॥
नमुचिर्दैत्यराजेन्द्रः शंकुकर्णो महाबलः। महानाथोऽथ विख्यातो दैत्यः परमवीर्यवान्॥
ग्रहाधिपस्य देवस्य नित्यं पूजापरायणाः। बलं वीर्यं च ते ऋद्धिमारोग्यं च ब्रुवन्तु ते॥
महाढ्यो यो हयग्रीवः प्रह्लादः प्रभयान्वितः। अग्रिमुखो महान् दैत्यः कालनेमिर्महाबलः॥

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

'परमश्रेष्ठ कृत्तिका, वरानना रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य तथा आश्लेषा (पूर्व दिशामें रहनेवाली) ये सभी नक्षत्र-मातृकाएँ सूर्यार्चनमें रत हैं और प्रभा-मालासे विभूषित हैं। मघा, पूर्वा तथा उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा—ये दक्षिण दिशाका आश्रय ग्रहण कर भगवान् सूर्यकी पूजा करती रहती हैं। आकाशमें उदित होनेवाली ये नक्षत्र-मातृकाएँ आपको शान्ति प्रदान करें। पश्चिम दिशामें रहनेवाली अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा तथा उत्तराषाढ़ा, अभिजित् एवं श्रवण—ये नक्षत्र-मातृकाएँ निरन्तर भगवान् भास्करकी पूजा करती रहती हैं, ये आपको वर्धनशील ऐश्वर्य एवं शान्ति प्रदान करें। उत्तर दिशामें अवस्थित धनिष्ठा, शतभिष, पूर्व तथा उत्तरभाद्रपद, रेवती, अश्विनी एवं भरणी नामकी नक्षत्र-मातृकाएँ नित्य सूर्यकी पूजा करती रहती हैं, ये आपको नित्य वर्धनशील ऐश्वर्य एवं शान्ति प्रदान करें।

पूर्व दिशामें अवस्थित तथा भगवान् सूर्यके चरणकमलोंमें भक्तिपूर्वक आराधना करनेवाली मेष, सिंह और धनु राशियाँ आपको नित्य शान्ति प्रदान करें। दक्षिण दिशामें स्थित रहनेवाली, भगवान् सूर्यकी अर्चना करनेवाली वृष, कन्या तथा मकर राशियाँ परमा भक्तिके साथ आपको शान्ति प्रदान करें। पश्चिम दिशामें स्थित एवं निरन्तर ग्रहनायक भगवान् आदित्यकी आराधना करनेवाली मिथुन, तुला तथा कुम्भ राशियाँ आपको नित्य शान्ति प्रदान करें। [कर्क, वृश्चिक तथा मीन राशियाँ जो उत्तर दिशामें स्थित रहती हैं तथा भगवान् सूर्यकी भक्ति करती हैं, आपको शान्ति प्रदान करें।]

भगवान् सूर्यके अनुग्रहसे सम्पन्न ध्रुव-मण्डलमें रहनेवाले सप्तर्षिगण आपको शान्ति प्रदान करें। कश्यप, गाल्व, गार्ग्य, विश्वामित्र, दक्ष, वसिष्ठ, मार्कण्डेय, क्रतु, नारद, भृगु, आत्रेय, भारद्वाज, वाल्मीकि, कौशिक, वात्स्य, शाकल्य, पुनर्वसु

एते दैत्या महात्मानः सूर्यभावेन भाविताः । तुष्टिं बलं तथाऽरोग्यं प्रयच्छन्तु सुरारयः ॥
वैरोचनो हिरण्याक्षस्तुर्वसुश्च सुलोचनः । मुचुकुन्दो मुकुन्दश्च दैत्यो रैवतकस्तथा ॥
भावेन परमेणेमं यजन्ते सततं रविम् । सततं च शुभात्मानः पुष्टिं कुर्वन्तु ते सदा ॥
दैत्यपत्न्यो महाभागा दैत्यानां कन्यकाः शुभाः । कुमारा ये च दैत्यानां शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा ॥
आरक्तेन शरीरेण रक्तान्तायतलोचनाः । महाभागाः कृताटोपाः शङ्खाद्याः कृतलक्षणाः ॥
अनन्तो नागराजेन्द्र आदित्याराधने रतः । महापापविषं हत्वा शान्तिमाशु करोतु ते ॥
अतिपीतेन देहेन विस्फुरद्भोगसम्पदा । तेजसा चातिदीप्तेन कृतस्वस्तिकलाञ्छनः ॥
नागराट् तक्षकः श्रीमान् नागकोट्या समन्वितः । करोतु ते महाशान्तिं सर्वदोषविषापहाम् ॥
अतिकृष्णेन वर्णेन स्फुरिताधिकमस्तकः । कण्ठरेखात्रयोपेतो घोरदंष्ट्रायुधोद्यतः ॥
कर्कोटको महानागो विषदर्पबलान्वितः । विषशस्त्राग्निसंतापं हत्वा शान्तिं करोतु ते ॥
पद्मवर्णः पद्मकान्तिः फुल्लपद्मायतेक्षणः । ख्यातः पद्मो महानागो नित्यं भास्करपूजकः ॥
स ते शान्तिं शुभं शीघ्रमचलं सम्प्रयच्छतु । श्यामेन देहभारेण श्रीमत्कमललोचनः ॥
विषदर्पबलोन्मत्तो ग्रीवायां रेखयान्वितः । शङ्खपालश्रिया दीप्तः सूर्यपादाब्जपूजकः ॥
महाविषं गरश्रेष्ठं हत्वा शान्तिं करोतु ते । अतिगौरेण देहेन चन्द्रार्धकृतशेखरः ॥
दीपभागे कृताटोपशुभलक्षणलक्षितः ।
कुलिको नाम नागेन्द्रो नित्यं सूर्यपरायणः । अपहृत्य विषं घोरं करोतु तव शान्तिकम् ॥
अन्तरिक्षे च ये नागा ये नागाः स्वर्गसंस्थिताः । गिरिकन्दरदुर्गेषु ये नागा भुवि संस्थिताः ॥
पाताले ये स्थिता नागाः सर्वे यत्र समाहिताः । सूर्यपादार्चनासक्ताः शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा ॥
नागिन्यो नागकन्याश्च तथा नागकुमारकाः । सूर्यभक्ताः सुमनसः शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा ॥
य इदं नागसंस्थानं कीर्तयेच्छृणुयात् तथा । न तं सर्पा विहिंसन्ति न विषं क्रमते सदा ॥

(ब्राह्मपर्व १७९। १—४४)

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

तथा शालंकायन—ये सभी सूर्य-ध्यानमें तत्पर रहनेवाले महातपस्वी ऋषिगण आपको शान्ति प्रदान करें। सूर्यकी आराधनामें तत्पर ऋषि तथा मुनिकन्याएँ, जो निरन्तर आशीर्वाद प्रदान करनेमें तत्पर रहती हैं, आपको नित्य सिद्धि प्रदान करें।

भगवान् सूर्यकी पूजामें तत्पर दैत्यराजेन्द्र नमुचि, महाबली शङ्कुकर्ण, पराक्रमी महानाथ—ये सभी आपके लिये बल, वीर्य एवं आरोग्यकी प्राप्तिके लिये निरन्तर कामना करें। महान् सम्पत्तिशाली हयग्रीव, अत्यन्त प्रभाशाली प्रह्लाद, अग्निमुख, कालनेमि—ये सभी सूर्यकी आराधना करनेवाले दैत्य आपको पुष्टि, बल और आरोग्य प्रदान करें। वैरोचन, हिरण्याक्ष, तुर्वसु, सुलोचन, मुचुकुन्द, मुकुन्द तथा रैवतक—ये सभी सूर्यभक्त आपको पुष्टि प्रदान करें। दैत्यपत्नियाँ, दैत्यकन्याएँ तथा दैत्यकुमार—ये सभी आपकी शान्तिके लिये कामना करें।

नागराजेन्द्र अनन्त, अत्यन्त पीले शरीरवाले, विस्फुरित फणवाले, स्वस्तिक-चिह्नसे युक्त तथा अत्यन्त तेजसे उद्दीप्त नागराज तक्षक, अत्यन्त कृष्णवर्णवाले, कण्ठमें तीन रेखाओंसे युक्त, भयंकर आयुधरूपी दंष्ट्रसे समन्वित तथा विषके दर्पसे बलान्वित महानाग कर्कोटक, पद्मके समान कान्तिवाले, कमलके पुष्पके समान नेत्रवाले, पद्मवर्णके महानाग पद्म, श्यामवर्णवाले, सुन्दर कमलके समान नेत्रवाले, विषरूपी दर्पसे उन्मत्त तथा ग्रीवामें तीन रेखावाले शोभासम्पन्न महानाग शंखपाल, अत्यन्त गौर शरीरवाले, चन्द्रार्धकृत-शेखर, सुन्दर फणोंसे युक्त नागेन्द्र कुलिक (और नागराज वासुकि) सूर्यकी आराधना करनेवाले—ये सभी अष्टनाग महाविषको नष्ट करके आपको निरन्तर अचल महाशान्ति प्रदान करें। अन्तरिक्ष, स्वर्ग, गिरिकन्दराओं, दुर्गों तथा भूमि एवं पातालमें रहनेवाले, भगवान् सूर्यके अर्चनमें आसक्त समस्त नागगण और नागपत्नियाँ, नागकन्याएँ तथा नागकुमार सभी प्रसन्नचित्त होकर आपको सदा शान्ति प्रदान करें।'

जो इस नाग-शान्तिका श्रवण या कीर्तन करता है, उसे सर्पगण कभी भी नहीं काटते और विषका प्रभाव भी उनपर नहीं पड़ता।

तदनन्तर गङ्गादि पुण्य नदियों, यक्षेन्द्रों, पर्वतों, सागरों, राक्षसों, प्रेतों, पिशाचों, अपस्मारादि ग्रहों, सभी देवताओं तथा भगवान् सूर्यसे शान्तिकी कामनाके लिये इस प्रकार प्रार्थना करनी चाहिये*—

* गङ्गा पुण्या महादेवी यमुना नर्मदा नदी । गौतमी चापि कावेरी वरुणा देविका तथा॥
सर्वग्रहपतिं देवं लोकेशं लोकनायकम्।
पूजयन्ति सदा नद्यः सूर्यसद्भावभाविताः । शान्तिं कुर्वन्तु ते नित्यं सूर्यध्यानैकमानसाः॥
निरञ्जना नाम नदी शोणश्चापि महानदः । मन्दाकिनी च परमा तथा संनिहिता शुभा॥
एताश्चान्याश्च बहवो भुविदिव्यन्तरिक्षके । सूर्यार्चनरता नद्यः कुर्वन्तु तव शान्तिकम्॥
महावैश्रवणो देवो यक्षराजो महर्षिकः । यक्षकोटिपरीवारो यक्षासंख्येयसंयुतः॥
महाविभवसम्पन्नः सूर्यपादार्चने रतः । सूर्यध्यानैकपरमः सूर्यभावेन भावितः॥
शान्तिं करोतु ते प्रीतः पद्मपत्रायतेक्षणः । मणिभद्रो महायक्षो मणिरत्नविभूषितः॥
मनोहरेण हारेण कण्ठलग्नेन राजते।
यक्षिणीयक्षकन्याभिः परिवारितविग्रहः । सूर्यार्चनसमासक्तः करोतु तव शान्तिकम्॥
सुचिरो नाम यक्षेन्द्रो मणिकुण्डलभूषितः । ललाटे हेमपटलप्रबद्धेन विराजते॥
बहुयक्षसमाकीर्णो यक्षैर्नमितविग्रहः । सूर्यपूजापरो युक्तः करोतु तव शान्तिकम्॥
पाञ्चिको नाम यक्षेन्द्रः कण्ठाभरणभूषितः । कुक्कुटेन विचित्रेण बहुरत्नान्वितेन तु॥
यक्षवृन्दसमाकीर्णो यक्षकोटिसमन्वितः । सूर्यार्चनपरः श्रीमान् करोतु तव शान्तिकम्॥
धृतराष्ट्रो महातेजा नानायक्षाधिपः खग । दिव्यपट्टः शुक्लच्छत्रो मणिकाञ्चनभूषितः॥

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

'ग्रहाधिपति भगवान् सूर्यकी नित्य आराधना करनेवाली पुण्यतोया गङ्गा, महोदेवी यमुना, नर्मदा, गौतमी, कावेरी, वरुणा, देविका, निरञ्जना तथा मन्दाकिनी आदि नदियाँ और महानद शोण, पृथ्वी, स्वर्ग एवं अन्तरिक्षमें रहनेवाली नदियाँ आपको नित्य शान्ति प्रदान करें। यक्षराज कुबेर, महायक्ष मणिभद्र, यक्षेन्द्र सुचिर, पाञ्चिक, महातेजस्वी धृतराष्ट्र, यक्षेन्द्र विरूपाक्ष, कञ्जाक्ष तथा अन्तरिक्ष एवं स्वर्गमें रहनेवाले समस्त यक्षगण, यक्षपत्नियाँ, यक्षकुमार तथा यक्षकन्याएँ जो सभी सूर्यकी आराधनामें तत्पर रहते हैं—ये आपको शान्ति प्रदान करें, नित्य कल्याण, बल, सिद्धि भी शीघ्र प्रदान करें एवं मङ्गलमय बनायें।

भगवान् सूर्यकी आराधना करनेवाले सभी पर्वत, ऋद्धि प्रदान करनेवाले वृक्ष, सभी सागर तथा पवित्रारण्य आपको शान्ति प्रदान करें। पृथ्वी, अन्तरिक्ष, स्वर्ग तथा पातालमें निवास करनेवाले एवं भगवान् सूर्यकी आराधना करनेवाले महाबलशाली और कामरूप सभी राक्षस, प्रेत, पिशाच एवं सभी दिशाओंमें अवस्थित अपस्मारग्रह तथा ज्वरग्रह आदि आपको नित्य शान्ति प्रदान करें।

जिन भगवान् सूर्यके दक्षिण भागमें विष्णु, वाम भागमें शंकर और ललाटमें ब्रह्मा सदा स्थित रहते हैं, ये सभी देवता उन भगवान् सूर्यके तेजसे सम्पन्न होकर आपको शान्ति प्रदान करें तथा सौर-धर्मको जाननेवाले समस्त देवगण

सूर्यभक्तः सूर्यरतः सूर्यपूजापरायणः । सूर्यप्रसादसम्पन्नः करोतु तव शान्तिकम्॥
विरूपाक्षश्च यक्षेन्द्रः श्वेतवासा महाद्युतिः । नानाकाञ्चनमालाभिरुपशोभितकन्धरः ॥
सूर्यपूजापरो भक्तः कञ्जाक्षः कञ्जसंनिभः । तेजसादित्यसंकाशः करोतु तव शान्तिकम्॥
अन्तरिक्षगता यक्षा ये यक्षाः स्वर्गगामिनः । नानारूपधरा यक्षाः सूर्यभक्ता दृढव्रताः॥
तद्भक्तास्तद्गतमनसः सूर्यपूजासमुत्सुकाः । शान्तिं कुर्वन्तु ते हृष्टाः शान्ताः शान्तिपरायणाः॥
यक्षिण्यो विविधाकारास्तथा यक्षकुमारकाः । यक्षकन्या महाभागाः सूर्याराधनतत्पराः॥
शान्तिं स्वस्त्ययनं क्षेमं बलं कल्याणमुत्तमम् । सिद्धिं चाशु प्रयच्छन्तु नित्यं च सुसमाहिताः॥
पर्वताः सर्वतः सर्वे वृक्षाश्चैव महर्द्धिकाः । सूर्यभक्ताः सदा सर्वे शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा॥
सागराः सर्वतः सर्वे गृहारण्यानि कृत्स्नशः । सूर्यस्याराधनपराः कुर्वन्तु तव शान्तिकम्॥
राक्षसाः सर्वतः सर्वे घोररूपा महाबलाः । स्थलजा राक्षसा ये तु अन्तरिक्षगताश्च ये॥
पाताले राक्षसा ये तु नित्यं सूर्यार्चने रताः । शान्तिं कुर्वन्तु ते सर्वे तेजसा नित्यदीपिताः॥
प्रेताः प्रेतगणाः सर्वे ये प्रेताः सर्वतोमुखाः । अतिदीप्ताश्च ये प्रेता ये प्रेता रुधिराशनाः॥
अन्तरिक्षे च ये प्रेतास्तथा ये स्वर्गवासिनः । पाताले भूतले वापि ये प्रेताः कामरूपिणः॥
एकचक्ररथो यस्य यस्तु देवो वृषध्वजः । तेजसा तस्य देवस्य शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा॥
ये पिशाचा महावीर्या वृद्धिमन्तो महाबलाः । नानारूपधराः सर्वे सर्वे च गुणवत्तराः॥
अन्तरिक्षे पिशाचा ये स्वर्गे ये च महाबलाः । पाताले भूतले ये च बहुरूपा मनोजवाः॥
यस्याहं सारथिर्वीर यस्य त्वं तुरगः सदा । तेजसा तस्य देवस्य शान्तिं कुर्वन्तु तेऽञ्जसा॥
अपस्मारग्रहाः सर्वे सर्वे चापि ज्वरग्रहाः । ये च स्वर्गस्थिताः सर्वे भूमिगा ये ग्रहोत्तमाः॥
पाताले तु ग्रहा ये च ये ग्रहाः सर्वतो गताः । दक्षिणे किरणे यस्य सूर्यस्य न स्थितो हरिः॥
हरो यस्य सदा वामे ललाटे कञ्जजः स्थितः । तेजसा तस्य देवस्य शान्तिं कुर्वन्तु ते सदा॥
इति देवादयः सर्वे सूर्ययज्ञविधायिनः । कुर्वन्तु जगतः शान्तिं सूर्यभक्तेषु सर्वदा॥
जय सूर्याय देवाय तमोहन्त्रे विवस्वते । जयप्रदाय सूर्याय भास्कराय नमोऽस्तु ते॥
ग्रहोत्तमाय देवाय जय कल्याणकारिणे । जय पद्मविकाशाय बुधरूपाय ते नमः॥
जय दीप्तिविधानाय जय शान्तिविधायिने । तमोघ्नाय जयायैव अजिताय नमो नमः॥
जयार्क जय दीप्तीश सहस्रकिरणोज्ज्वल । जय निर्मितलोकस्त्वमजिताय नमो नमः॥
गायत्रीदेहरूपाय सावित्रीदयिताय च । धराधराय सूर्याय मार्तण्डाय नमो नमः॥

(ब्राह्मपर्व १८०। १—३९)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

संसारके सूर्यभक्तों एवं सभी प्राणियोंको सर्वदा शान्ति प्रदान करें।

अन्धकार दूर करनेवाले तथा जय प्रदान करनेवाले विवस्वान् भगवान् भास्करकी सदा जय हो। ग्रहोंमें उत्तम तथा कल्याण करनेवाले, कमलको विकसित करनेवाले भगवान् सूर्यकी जय हो, ज्ञानस्वरूप भगवान् सूर्य! आपको नमस्कार है। शान्ति एवं दीप्तिका विधान करनेवाले, तमोहन्ता भगवान् अजित! आपको नमस्कार है, आपकी जय हो। सहस्र-किरणोज्ज्वल, दीप्तिस्वरूप, संसारके निर्माता आपको बार-बार नमस्कार है, आपकी जय हो। गायत्रीस्वरूपवाले, पृथ्वीको धारण करनेवाले सावित्री-प्रिय मार्तण्ड भगवान् सूर्यदेव! आपको बार-बार नमस्कार है, आपकी जय हो।'

सुमन्तु मुनि बोले—राजन्! इस विधानसे अरुणके द्वारा वैनतेय गरुडके कल्याणके लिये शान्ति-विधान करते ही वे सुन्दर पंखोंसे समन्वित हो गये। वे तेजमें बुधके समान देदीप्यमान और बलमें विष्णुके समान हो गये। राजन्! देवाधिदेव सूर्यके प्रसादसे सुपर्णके सभी अवयव पूर्ववत् हो गये।

राजन्! इसी प्रकार अन्य रोगग्रस्त मानवगण इस अग्निकार्यसे (सौरी-शान्तिसे) नीरोग हो जाते हैं। इसलिये इस शान्ति-विधानको प्रयत्नपूर्वक करना चाहिये। ग्रहोपघात, दुर्भिक्ष, सभी उत्पातोंमें तथा अनावृष्टि आदिमें लक्ष-होमसमन्वित सौरसूक्तसे यत्नपूर्वक पूजन कर एवं वारुणसूक्तसे प्रसन्नचित्त हो घी, मधु, तिल, यव एवं मधुके साथ पायससे हवन एवं शान्ति करे और सावधान हो बलि (नैवेद्य) प्रदान करे। ऐसा करनेसे देवतागण मनुष्योंके कल्याणकी कामना करते हैं एवं उनके लिये लक्ष्मीकी वृष्टि करते हैं। जो मनुष्य भगवान् दिवाकरका ध्यान कर इस शान्ति-अध्यायको पढ़ता या सुनता है, वह रणमें शत्रुपर विजयी हो परम सम्मानको प्राप्त कर एकच्छत्र शासक होकर सदा आनन्दमय जीवन व्यतीत करता है। वह पुत्र-पौत्रोंसे प्रतिष्ठित होकर आदित्यके समान तेजस्वी एवं प्रभासमन्वित व्याधिशून्य जीवन-यापन करता है। वीर! जिसके कल्याणके उद्देश्यसे इस शान्तिकाध्याय (शान्तिकल्प)-का पाठ किया जाता है, वह वात-पित्त, कफजन्य रोगोंसे पीड़ित नहीं होता एवं उसकी न तो सर्पके दंशसे मृत्यु होती है और न अकालमें मृत्यु होती है। उसके शरीरमें विषका प्रभाव भी नहीं होता एवं जड़ता, अन्धत्व, मूकता भी नहीं होती। उत्पत्ति-भय नहीं रहता और न किसीके द्वारा किया गया अभिचार-कर्म सफल होता है। रोग, महान् उत्पात, महाविषैले सर्प आदि सभी इसके श्रवणसे शान्त हो जाते हैं। सभी गङ्गादि तीर्थोंका जो विशेष फल है, उसका कई गुना फल इस शान्तिकाध्यायके श्रवणसे प्राप्त होता है और दस राजसूय एवं अन्य यज्ञोंका फल भी उसे मिलता है। इसे सुननेवाला सौ वर्षतक व्याधिरहित नीरोग होकर जीवनयापन करता है। गोहत्यारा, कृतघ्न, ब्रह्मघाती, गुरुतल्पगामी और शरणागत, दीन, आर्त, मित्र तथा विश्वासी व्यक्तिके साथ घात करनेवाला, दुष्ट, पापाचारी, पितृघातक एवं मातृघातक सभी इसके श्रवणसे निःसंदेह पापमुक्त हो जाते हैं। यह अग्निकार्य अतिशय उत्तम एवं परम पुण्यमय है।

(अध्याय १७५—१८०)

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

विविध स्मृति-धर्मों तथा संस्कारोंका वर्णन

राजा शतानीकने कहा—ब्रह्मन्! पाँच प्रकारके जो स्मृति आदि धर्म हैं, उन्हें जाननेकी मुझे बड़ी ही अभिलाषा है। कृपापूर्वक आप उनका वर्णन करें।

सुमन्तुजी बोले—महाराज! भगवान् भास्करने अपने सारथि अरुणसे जिन पाँच प्रकारके धर्मोंको बतलाया था, मैं उनका वर्णन कर रहा हूँ, आप उन्हें सुनें।

भगवान् सूर्यने कहा—गरुडाग्रज! स्मृतिप्रोक्त धर्मका मूल सनातन वेद ही है। पूर्वानुभूत ज्ञानका स्मरण करना ही स्मृति है। स्मृत्यादि धर्म पाँच प्रकारके होते हैं। इन धर्मोंका पालन करनेसे स्वर्ग और मोक्षकी प्राप्ति होती है तथा इस लोकमें सुख, यश और ऐश्वर्यकी प्राप्ति होती है। पहला वेद-धर्म है। दूसरा है आश्रम-धर्म अर्थात् ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास। तीसरा है वर्णाश्रम-धर्म अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। चौथा है गुणधर्म और पाँचवाँ है नैमित्तिक धर्म—ये ही स्मृत्यादि पाँच प्रकारके धर्म कहे गये हैं। वर्ण और आश्रमधर्मके अनुसार अपने कर्तव्योंका निर्वाह करते हुए कर्मोंको सम्पादित करना ही वर्णाश्रम और आश्रमधर्म कहलाता है। जिस धर्मका प्रवर्तन गुणके द्वारा होता है, वह गुणधर्म कहलाता है। किसी निमित्तको लेकर जो धर्म प्रवर्तित होता है, उसे नैमित्तिक धर्म कहते हैं। यह नैमित्तिक धर्म जाति, द्रव्य तथा गुणके आधारपर होता है।

निषेध और विधिरूपमें शास्त्र दो प्रकारके होते हैं। स्मृतियाँ पाँच प्रकारकी हैं—दृष्ट-स्मृति, अदृष्ट-स्मृति, दृष्टादृष्ट-स्मृति, अनुवाद-स्मृति और अदृष्टादृष्ट-स्मृति। सभी स्मृतियोंका मूल वेद ही है। स्मृतिधर्मके साधन-स्थान ब्रह्मावर्त, मध्यक्षेत्र, मध्यदेश, आर्यावर्त तथा यज्ञिय आदि देश हैं। सरस्वती और दृषद्वती (कुरुक्षेत्रके दक्षिण सीमाकी एक नदी) इन दो देव-नदियोंके बीचका जो देश है वह देव-निर्मित देश ब्रह्मावर्त नामसे कहा जाता है। हिमाचल और विन्ध्यपर्वतके बीचके देशको जो कुरुक्षेत्रके पूर्व और प्रयागके पश्चिममें स्थित है, उसे मध्यदेश कहा जाता है। पूर्व-समुद्र तथा पश्चिम-समुद्र, हिमालय तथा विन्ध्याचल पर्वतके बीचके देशको आर्यावर्तदेश कहा जाता है। जहाँ कृष्णसार मृग (कस्तूरी मृग) विचरण करते हैं और स्वभावतः निवास करते हैं, वह यज्ञियदेश है। इनके अतिरिक्त दूसरे अन्य देश म्लेच्छदेश हैं जो यज्ञ आदिके योग्य नहीं हैं। द्विजातियोंको चाहिये कि विचारपूर्वक इन देशोंमें निवास करें।

भगवान् आदित्यने पुनः कहा—खगराज! अब मैं आश्रमधर्म बतला रहा हूँ। ब्रह्मचर्याश्रम-धर्म, गृहस्थाश्रम-धर्म, वानप्रस्थाश्रम-धर्म और संन्यासाश्रम-धर्म—क्रमसे इन चार प्रकारसे जीवन-यापन करनेको आश्रमधर्म कहा जाता है। एक ही धर्म चार प्रकारसे विभक्त हो जाता है। ब्रह्मचारीको गायत्रीकी उपासना करनी चाहिये। गृहस्थको संतानोत्पत्ति और ब्राह्मण, देव आदिकी पूजा करनी चाहिये। वानप्रस्थीको देवव्रत-धर्मका और संन्यासीको नैष्ठिक धर्मका पालन करना चाहिये। इन चारों आश्रमोंके धर्म वेदमूलक हैं। गृहस्थको ऋतुकालमें मन्त्रपूर्वक गर्भाधान-संस्कार करना चाहिये। तीसरे मासमें पुंसवन तथा छठे अथवा सातवें मासमें सीमन्तोन्नयन-संस्कार करना चाहिये। जन्मके समय जातकर्म-संस्कार करना चाहिये। जातक (शिशु)-को स्वर्ण, घी, मधुका मन्त्रोंद्वारा प्राशन कराना चाहिये। जन्मसे दसवें, ग्यारहवें या बारहवें दिन शुभ मुहूर्त, तिथि, नक्षत्र, योग आदि

In Public Domain. Digitized by Sarvagya Sharda Peeth
Hinduism Discord Server https://dsc.gg/dharma | MADE WITH LOVE BY Avinash/Shashi

देखकर नामकरण-संस्कार करना चाहिये। शास्त्रानुसार छठे मासमें अन्नप्राशन करना चाहिये। सभी द्विजाति बालकोंका चूडाकरण-संस्कार एक वर्ष अथवा तीसरे वर्षमें करना चाहिये। ब्राह्मण-बालकका आठवें वर्षमें, क्षत्रियका ग्यारहवें और वैश्यका बारहवें वर्षमें यज्ञोपवीत-संस्कार करना उत्तम होता है। गुरुसे गायत्रीकी दीक्षा ग्रहण कर वेदाध्ययन करना चाहिये। विद्याध्ययनके पश्चात् गुरुकी आज्ञा प्राप्तकर गृहस्थाश्रममें प्रवेश करना चाहिये और गुरुको यथेष्ट सुवर्णादि देकर प्रसन्न करना चाहिये। गृहस्थाश्रममें प्रवेश कर अपने समान वर्णवाली उत्तम गुणोंसे युक्त कन्यासे विवाह करना चाहिये। जो कन्या माता-पिताके कुलसे सात पीढ़ीतककी न हो और समान गोत्रकी न हो ऐसी अपने वर्णकी कन्यासे विवाह करना चाहिये।

विवाह आठ प्रकारके होते हैं—ब्राह्म, दैव, आर्ष, प्राजापत्य, आसुर, गान्धर्व, राक्षस और पैशाच। वर और कन्याके गुण-दोषको भलीभाँति परखनेके बाद ही विवाह करना चाहिये। कन्याएँ अवस्था-भेदसे चार प्रकारकी होती हैं। जिनके नाम इस प्रकार हैं—गौरी, नग्निका, देवकन्या तथा रोहिणी। सात वर्षकी कन्या गौरी, दस वर्षकी नग्निका, बारह वर्षकी देवकन्या तथा इससे अधिक आयुकी कन्या रोहिणी (रजस्वला) कहलाती है। निन्दित कन्याओंसे विवाह नहीं करना चाहिये। द्विजातियोंको अग्निके साक्ष्यमें विवाह करना चाहिये। स्त्री-पुरुषके परस्पर मधुर एवं दृढ़ सम्बन्धोंसे धर्म, अर्थ और कामकी उत्पत्ति होती है और वही मोक्षका कारण भी है। (अध्याय १८१-१८२)

श्राद्धके विविध भेद तथा वैश्वदेव-कर्मकी महिमा

भगवान् सूर्यने अनूरु (अरुण)-से कहा— अरुण! द्विजमात्रको विधिपूर्वक पञ्चमहायज्ञ—भूतयज्ञ, पितृयज्ञ, ब्रह्मयज्ञ, दैवयज्ञ और मनुष्ययज्ञ करना चाहिये। बलिवैश्वदेव करना भूतयज्ञ, तर्पण करना पितृयज्ञ, वेदका अध्ययन और अध्यापन करना ब्रह्मयज्ञ, हवन करना देवयज्ञ तथा घरपर आये हुए अतिथिको सत्कारपूर्वक भोजन आदिसे संतुष्ट करना मनुष्ययज्ञ कहा जाता है।

श्राद्ध बारह प्रकारके होते हैं—नित्य-श्राद्ध, नैमित्तिक-श्राद्ध, काम्य-श्राद्ध, वृद्धि-श्राद्ध, सपिण्डन-श्राद्ध, पार्वण-श्राद्ध, गोष्ठ-श्राद्ध, शुद्धि-श्राद्ध, कर्माङ्ग-श्राद्ध, दैविक श्राद्ध, औपचारिक श्राद्ध तथा सांवत्सरिक श्राद्ध। तिल, व्रीहि (धान्य), जल, दूध, फल, मूल, शाक आदिसे पितरोंकी संतुष्टिके लिये प्रतिदिन श्राद्ध करना चाहिये। जो श्राद्ध प्रतिदिन किया जाता है, वह नित्य-श्राद्ध है। एकोद्दिष्ट श्राद्धको नैमित्तिक-श्राद्ध कहते हैं। इस श्राद्धको विधिपूर्वक सम्पन्न कर अयुग्म (विषम संख्या) ब्राह्मणोंको भोजन कराना चाहिये। जो श्राद्ध कामनापरक किया जाता है, वह काम्य-श्राद्ध है। इसे पार्वण-श्राद्धकी विधिसे करना चाहिये। वृद्धिके लिये जो श्राद्ध किया जाता है, उसे वृद्धि-श्राद्ध कहते हैं। ये सभी श्राद्धकर्म पूर्वाह्ण-कालमें उपवीती होकर करने चाहिये। सपिण्डन-श्राद्धमें चार पात्र बनाने चाहिये। उनमें गन्ध, जल और तिल छोड़ना चाहिये। प्रेत-पात्रका जल पितृ-पात्रमें छोड़े। इसके लिये **'ये समानाः०'** (यजु० १९। ४५-४६) मन्त्रोंका पाठ करना चाहिये। स्त्रीका भी एकोद्दिष्ट-श्राद्ध करना चाहिये। अमावास्या तथा किसी पर्वपर जो श्राद्ध किया जाता है, उसे पार्वण-श्राद्ध कहते हैं। गौओंके लिये किया जानेवाला श्राद्ध-कर्म गोष्ठ-श्राद्ध कहा जाता है। पितरोंकी तृप्तिके लिये, सम्पत्ति और सुखकी प्राप्ति-हेतु तथा

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth

COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES
FIND ALL AT HTTPS://DSC.GG/DHARMA
Made with
By
Avinash/Shashi
[creator of hinduism server]
KAPWING

COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES
FIND ALL AT HTTPS://DSC.GG/DHARMA
Made with
By
Avinash/Shashi
[creator of hinduism server]
KAPWING

विद्वानोंकी संतुष्टिके निमित्त जो ब्राह्मणोंको भोजन कराया जाता है, वह शुद्ध्यर्थ-श्राद्ध है। गर्भाधान, सीमन्तोन्नयन तथा पुंसवन-संस्कारोंके समय किया गया श्राद्ध कर्माङ्ग-श्राद्ध है। यात्रा आदिके दिन देवताके उद्देश्यसे घीके द्वारा किया गया हवनादि कार्य दैविक श्राद्ध कहलाता है। शरीरकी वृद्धि, शरीरकी पुष्टि तथा अश्ववृद्धिके निमित्त किया गया श्राद्ध औपचारिक श्राद्ध कहलाता है। सभी श्राद्धोंमें सांवत्सरिक श्राद्ध सबसे श्रेष्ठ है। इसे मृत व्यक्तिकी तिथिपर करना चाहिये। जो व्यक्ति सांवत्सरिक श्राद्ध नहीं करता, उसकी पूजा न मैं ग्रहण करता हूँ, न विष्णु, ब्रह्मा, रुद्र एवं अन्य देवगण ही ग्रहण करते हैं। इसलिये प्रयत्नपूर्वक प्रत्येक वर्ष मृत व्यक्तिकी तिथिपर सांवत्सरिक श्राद्ध करना चाहिये। जो व्यक्ति माता-पिताका वार्षिक श्राद्ध नहीं करता, वह घोर तामिस्र नामक नरकको प्राप्त करता है और अन्तमें सूकर-योनिमें उत्पन्न होता है।

अरुणने पूछा—भगवन्! जो व्यक्ति माता-पिताकी मृत्युकी तिथि, मास और पक्षको नहीं जानता, उस व्यक्तिको किस दिन श्राद्ध करना चाहिये? जिससे वह नरकभागी न हो?

भगवान् आदित्यने कहा—पक्षिराज अरुण! जो व्यक्ति माता-पिताके मृत्युके दिन, मास और पक्षको नहीं जानता, उस व्यक्तिको अमावास्याके दिन सांवत्सरिक नामक श्राद्ध करना चाहिये। जो व्यक्ति मार्गशीर्ष और माघमें पितरोंके उद्देश्यसे विशिष्ट भोजनादिद्वारा मेरी पूजा-अर्चना करता है, उसपर मैं अति प्रसन्न होता हूँ और उसके पितर भी संतुष्ट हो जाते हैं। पितर, गौ तथा ब्राह्मण—ये मेरे अत्यन्त इष्ट हैं। अतः विशेष भक्तिपूर्वक इनकी पूजा करनी चाहिये।

वेद-विक्रयद्वारा और स्त्रीद्वारा प्राप्त किया गया धन पितृकार्य और देव-पूजनादिमें नहीं लगाना चाहिये। वैश्वदेव कर्मसे हीन और भगवान् आदित्यके पूजनसे हीन वेदवेत्ता ब्राह्मणको भी निन्द्य समझना चाहिये। जो वैश्वदेव किये बिना ही भोजन कर लेता है वह मूर्ख नरकको प्राप्त करता है, उसका अन्न-पाक व्यर्थ है। प्रिय हो या अप्रिय, मूर्ख हो या विद्वान्, वैश्वदेव कर्मके समय आया हुआ व्यक्ति अतिथि होता है और वह अतिथि स्वर्गका सोपानरूप होता है। जो बिना तिथिका विचार किये ही आता है उसे अतिथि कहते हैं। वैश्वदेव-कर्मके समय जो न तो पहले कभी आया हो और न ही उसके पुनः आनेकी सम्भावना हो तो उस व्यक्तिको अतिथि जानना चाहिये। उसे साक्षात् विश्वेदेवके रूपमें ही समझना चाहिये। (अध्याय १८३-१८४)

मातृ-श्राद्धकी संक्षिप्त विधि

भगवान् आदित्यने कहा—अरुण! रात्रिमें श्राद्ध नहीं करना चाहिये। रात्रिमें किया गया श्राद्ध राक्षसी श्राद्ध कहा जाता है। दोनों संध्याओंमें और सूर्यके अस्त होनेपर भी श्राद्ध करना निषिद्ध है।

अरुणने पूछा—भगवन्! माताका श्राद्ध किस प्रकार करना चाहिये और माता किन्हें माना गया है? नान्दीमुख-पितरोंका पूजन किस प्रकार करना चाहिये, इन्हें मुझे बतानेकी कृपा करें।

भगवान् आदित्यने कहा—खगशार्दूल! मैं मातृ-श्राद्धकी विधि बतला रहा हूँ, उसे सुनिये।

मातृ-श्राद्धमें पूर्वाह्ण-कालमें आठ विद्वान् ब्राह्मणोंको भोजन कराना चाहिये तथा एक और अन्य नवम सर्वदैवत्य ब्राह्मणको भी भोजन देना चाहिये। इस प्रकार नौ ब्राह्मणोंको भोजन कराना

In Public Domain. Digitzed by Sarvagya Sharda Peeth